शंकरदेव तथा माधवदेव के विशिष्ट संदर्भ में असमिया और हिंदी वैष्णव काव्य

का

तुलनात्मक अध्ययन

(सोलहवीं शती)

(Comparative Study of Hindi and Assamese Vaishnavite poetry with special reference to Shankerdeva and Madhawadeva)

[16th A.D.]



शोध-प्रबंध

लेखक

वावजी शुक्त, एम० ए०

प्रयाग-विश्वविद्यालय श्रक्तूबर, १६६०

विषय- स्वी =======

	पृश्च-संखा
मिमका	
मूमिका संदेत-पत्र	
प्रशम अध्याय २००० १०००	
रेतिहासिक पृष्ठभूमि	
नृतिया राजा	१
वामता राज्य	?
कीच राज्य	3
व्णाशिष-अन्य जा ति षा ं	8
नारी	Ä
घा गिक राह्न री लता	Ę
निष्णुं मृति	৩
: साहित्यक पृष्ठभूमि	
चार्यपद	
ज्नुवाद जोर रूपांतर- माध्न कंदति	3
हरिलर विप्र	SA
हम धरस्वती	63
कविरत्न सरस्वती	38
रुड़ कंडलि	50
सम्वेत गान- बोजापा लि	
पीतांबर सवि	55
दुगनिर कायस्थ	Sñ
मानस पूजा के गीत	२६

मनकर और दूगितर	२ ७
:गः धार्मिक पृष्ट्समि	55
देवी तथा शिवपूजा	35
नमारू पूना	30
नामस्य वे पीठ	35
लौलाचार वया हुमारी पूजा	38
िष्णुं मालात्मा	3 <i>ŭ</i>
निन्णु पूजा	3 &- 3 0
िक्तीय अध्याग •••••••	30° 80°
कः शंगरदेव का जीवनवृत	3⊏∕
शंगरदेव के पूर्वण	3 E
जन्म	38
माता-पिता की मृत्यू	४१
. विवाह	85
पत्नी की मृत्यु	85
प्रथम तीर्थयाचा	83
शंकरदेव तथा चैतना का सादगतकार	८४
पुनिवाह ना प्रस्तान	४६
ध्रमिप्र चा र	80
मिन प्रदीप तथा रुक्तिगणी हरण की रचना	४८
भागवत	38
कीर्तन घोषा ,तथा पाणेल मर्दन की रचना	A &
गुणमाला	ñ.5
माध्व मिलन, की तैन घाणा की लण्ड रचना	. 73
मंडितों द्वारा विरोध	¥3
मदन गौपाल मूर्ति का नि माण	A8

दिहंगिया राजा का न्याय	४५
कीर्तन घोषा	पूट
चैतन्य का कामल्प वागमन	ీ ၀
कबीर के मठ में इंसर्देव	६१
ज्गनाथ दीत्र में	£ 5
पाटवाउसी की लोर	£3
कीच राज्य समा में उंत्रदेव	ર્ફ્ છુ
कवि चंद्र	έų
राज्यासाद मं योगी	ફ 9
मृदावनीया वस्त्र,रामविषय नाट -वरगीत	Ę.
शंकरदेव का तिरोमाव	êE -00
:सः माध्वदेव का जीवन वृत्त	७१
जन्म	92
हरसिंग बरा का संगत्याग,	
नोंघा पी दिल पुत्र और पिता -	७३
घाघरि माजि के घर-माध्य का कृष्णि लायें	७४

वाडुंका में माधव की शिला	७५
कन्या को जौरीन्य पहनाना	७५
माघन को संग्रहणी	७ई
शंकरदेव के लाथ तर्क	190
माध्य कृष्णा भिवत का उपदेश	19 C
माघन की कृष्ण पूला	9 E
माध्व का व्यवसाय स्थाग	⊏0
जोरोन पहनाई गई कन्या का त्याग	
शृतर-माध्य-संबंध	E 8
बंदी माध्य	c 2
माधव की भवत प्रीति	E 3
तीर्थयात्रा तथा भक्त सेवा	ದನಿ
माघन का मूर्ति दर्शन	EŲ
ईंश्वर को सिद्धान्त अपैण करना	
दोत्री में धर्म प्रचार-	Ξ9
न्तुरारि मट्टाचार्य से माध्व की फेंट	D)
कामास्या में नीलकंड से तर्क	Con Co.
गोसांई घर का निर्माण,	
रामविष्य यात्रा अभिनय -	37
शंगर देव तिथि महोत्सव	3=
दामोदर गुरु के साथ मनमद	03
विजयपुर में माधव बंदी	93
माध्य की मुनित, लुंदरी में वास	53

.

माधन का कामरूप त्याग	£3
वीरनारायण तौर उनकी माता	
का शरण "म मिलका की रचना-	83
घोषा रत्न	ья
राजा द्वारा माध्व के मत का विचार	83
माधा के विरुद्ध वीरु का लिम्योग	23
महापुरु णिया-राजमी	23
माघवदेव का तिरोमाव	209-33
तृतीय अध्याय	603-155
वसिया और सिनी वेष्णव काव्य	१०१
कः संगरिव की स्वनारं	
मागवत .	505
वनादि पतन्रगुणमाला	१०४
की तैन	१०५
ध्यान वर्णन	१०६
हर मो हन	१०७
श्रामंतक हरण , कंस वध	309
बिप्रपुत्र जानयन और दामौदर विप्रो- स्थान	११०
रु निमणी हरण नाव्य	११२
बपैत हलान	863
वरगीत	११६
नाटक	388
रामविजय,पारिजात ःर्षा	850
पत्नी प्रसाद्र केलि गौपाल रु विमणी-	
हरण	858

र: र:

खः गाधनदेव की रचनारं	१२४
नामधौषा	85 ñ
जान्दिकांड	१२६
राम्सूय यज्ञ, तथा नाटक	8 5 0
न रगीत	830
नागम ल्लिका	१३१
नामधोषा का महत्व	833-830
:गः राम सरस्वती की स्वनाएं	
जा दि पर्व	१३६
मिणिनंद लो ब	880
ीचय पर्वे, बाल युंज वध, वधासुर वध, गहिषा-	
दानव वध्र विल्यान भोदा	१४१
यटासुर वष, िंघू बात्रा	१४३ - १८ ४
: मिंदी वेष्णाव काव्य	
बूरदास दी रचनाएं	88 6
नंददास की रचनाएं	१४६
कुंभनदास,कृष्णदारा की रचनाएं	28E
गौविंदस्वामी, हीतस्वामी, मरमानन्द की रचनाएं	६तं०
चत्में जनास की रचनासं, कित हरिवंश की नाणी,	
सेवक जी की वाणी	४ ५४
व्यास जी तथा सूरदास मनमौहन की वाणी	6 7.5
श्रीम्टु हरिव्यास, पर्श्वराम तथा स्वामी हरिदास की-	
र्चनारं	१५३
विहारिनदेव तथा भीरा की रचनाएं	. १५४

चतुर्ध सध्याय

विनय वन्दना लीला गान	र्थ इ
नाम स्नरण	840
दीनता वर्णन	१६ं३
इन्द्रेव की मल्गा	१६०
उतार की प्रार्थना	१०३
वंदना	୧୯୬
वाल लीला-प्रभात जागरण	۶ ८ २
नशोदा के साथ रेख	१८३
रौदन	१८५
माखनती ला	१८६
माखन चौरी	وحد
स्तान न क्रना	१व्ह
वन में भोजन	१८६
गोचारण लीला	0.39
वंशीवादन	98 7
काली दमन लीला	\$ 38
रास लीला	y. 39
जलके लि	२० १
मूषण का लोना	505
होली	505
होत तीता	503
म्थ्रा तीता	
अपूर केसाथ कृष्ण का मधुरा गमन	508
जल में कुष्णा दश्ने, रजक वघ	50A
माली पर कृपा, कुंव्या उद्धार, कंस वध	२०६

उग्रीन को राज्यदान	90 9
उत्त को प्रज मेजना	20 ≈
नंद यशोदा को उत्स का सान्त्वना दान	305
गोपी उत्त लंबाद	305
बुळ्या रमण, जूर गृत गमन	२१०
जरामंघ, कालग्रान, मुनकुंडनध	540
द्वारका लीला	
रु विभूणी हरण	२११
रु निमणी का प्रमुख पत्र	२ १२
गौरी पूजन	568
विवाह	5 68
सुंदामा दारिह्य मंगन	588
स्यमंतक हरण	८ ६त
गुल्यमामा का मान, नरकासूर हा वष	२१६
कुरु दौत्र में मिलन	२१६-२१७
ल्मी वर्णन	382-085
शरद तर्णान	288-350
पंचम अध्याय	229-2 2 2 2 2
ई श्वर	555
ब्रह्म	558
प्रकृति	२ २७
जीव	55€

238
२३३
५३ त
735
२५१
रुट्रपू
२४६
२४६
58⊏
385
5,15
57.3
<i>5</i> ሺ8
र्गेह

असमिया वैष्णव साहित्य में शांत रत की प्रधानता- २ ६० शांत रस २६३-२६४

ण छ अध्याय ••••••	250/0-	3000
----------------------	--------	------

ध्व निपरिवर्तन	d35
विप्रकर्ण	ラ 遵守
वचन	260
कारक रचना	50 8
वलींका रक	5/3 8
वर्मका रक	503
कर्ण कार्क	908
संप्रदान कारक	50 A
क्पादान कार्क	0 05
संबंध कार्क	२७८

अधिकरण कार्क	250
खीनाम	२८१
ततमपुरुष सर्वनाय के कारकीय प्रयोग	२८२
मध्यम्पुर जावनाम के वारकीय प्रयोग	२व0
पुरु णयाचक तथा निरुवाचक दूरवती	
- की त्य रक्ता	SE 3
निश्चयवाची निकटवती	300
लंबम वाचन	308
प्रश्नवाचक	305-368

क्रिया

काल रचना	365
वतीमान काल	385
विधि	3 & ñ
भूतकाल	380-382
मविष्यत काल	

पुत्यय

उपलंहार परिशिष्ट 326 - ३४६.



मु मि का

सौतहतीं स्ती के पूर्वार्ध में ही असिमया वैच्याव काव्य-घारा असम में प्रवाहित होने लगी- असम के गिरि प्रांतर के निवासी काव्य का रसास्वादन करने लगे, काव्य, भी तुनाटक जादि का गान, तथा अमिनय ने ही सर्वसाघारण को वैच्याव मत की और आकि किया। असिमया और हिंदी वैच्याव काव्य का आदि मौत एक हैं, हिंदी लिए दोनों भाषाओं के काव्य में अधिक समानता दृष्टिगौबर होती है, असिमया वैच्याव काव्य मूल के अधिक निकट है, हिंदी कवियों ने स्वतंत्र प्रयोग भी किए हैं। प्रस्तुत प्रबंध में शंकरदेव तथा माध्वदेव के विशिष्ट संदर्भ में असिमया तथा वैच्याव काव्य का तुलनात्मक अध्ययन बंदित किया गया है। शंकरदेव तथा माध्वदेव के जीवन, काव्य, दर्शन, तथा माष्ट्रा का वालोचनात्मक विश्लेष्टाण प्रतिपादित किया गया है - प्रसंगानुसार हिंदी वैच्याव काव्य के विविध क्यों की तुलना भी की गयी है। मुक्ते इस प्रकार की कोई भी रचना नहीं प्राप्त हुई जिसमें इस विशिष्ट दृष्टिकोण से दो माष्ट्राओं के काव्य का अध्ययन किया गया हो। मुक्ते स्वयं अपनामार्ग प्रशस्त करना पढ़ा है। प्रस्तुत शोध-पबंध के सात अध्याय है।

प्रथम अध्याय में कामरूप असम प्रदेश की राजनैतिक, सामाजिक, रेतिहासिक, साहित्यक प्राच्या में कामरूप असम प्रदेश की राजनैतिक, सामाजिक, रेतिहासिक, साहित्यक प्राच्या प्रथमि दी गयी है। तेरख्वी शती के पश्चात् कामरूप अनेक चुँड असकत, दुंबैत, राज्यों में विमक्त हो गया, कौ हैं मी शासक हतना कुशल तथा योग्य न था जो हन राज्यों में की संगठित कर सशकत राष्ट्र का निर्माण करता। चूितया, कहारी, मूह्यां कामतापुर के राजा सदेव ही युद्ध किया करते हैं । समाज में वणित्रम धम की आदर कि दृष्टि से देखा जाता था। कामाख्या की पूजा वाममागी विधि से आरंम हुई -कौला-चार की वृद्धि हुई जिससे देश में तांत्रिकों ने निरिष्ठ जनों का वाच्यात्मिक शौषण किया- नरवित जेसी मीषण प्रक्रियाबों का तत्कालीन समाज में प्रवलन था- देव-मंदिरां की सेविकाएं सदेव कामुक मोग विसास लिप्सा में रत रह कर समाज के नव-युवकों को पथप्रष्ट करती थीं। कुमारी पूजा द्वारा लोगों को स्वगं प्राप्ति का लोम दिखाया जाता था। माध्य कंदिल ने संस्कृत रामायण का असमिया में रूपान्तर किया। शंकरदेव के पूर्व हरितर विप्र, हेमसरस्वती, कविरत्न सरस्वती, रुद्ध कंदिल पीताम्बर

कवि दुर्गविर मनकर बादि ने असमिया में काट्य रचना की । विशवतः माध्व कंदित की काट्य शैली तथा माजा का प्रमाव शंकरदेव पर पढ़ा ।

द्वितीय बच्चाय में शंकरदेव तथा माध्यदेव की जीवन संबंधी समस्त घटनाओं की प्रामाणिकता पर विचार किया गया है। प्रस्तुत प्रबंध में अब तक प्रकाशित तथा अप्रकाशित पुस्तकों से सहायता ली गयी है। रामानन्द द्विज्रमूषण द्विज्र पूनाराम महत, देत्थारि के गूरु चरित और कथा गुरु चरित में वर्णित क घटनाओं, विवरणों का आधार पर पंo लक्षीनांथ वेज़ वरुवा ने शंकरदेव गुन्थ लिखा। इसके पश्चात् सत्रों की विश्रंस्तित सामग्री का समन्वय कर उन्होंन श्री शहरदेव बारु शीमाध्य-देव गुन्थ का प्रणायन किया । डा० वाणीकांत काकति ने अंग्रेजी में शंकरदेव पुस्तक की रचना की थी। सर्वप्रथम रामचरण ठाकुर ने शंकरदेव की जीवनी पर तेसनी उठाई आञ्चर्य है कि उन्हीं के पुत्र ने पिता से सुनकर कथा को लिपिकड़ किया । चरित -लेखकों ने बहुचा इन महापुरु जो के जीवन की अनेक महत्वपूर्ण घटनाओं को भी आगे पील कर दिया है, जिससे जीवन वृत के अध्ययन से अधिक कठिनाई होती है। डा॰ महेश्वर नेजोग ने 'श्री श्री शंकरदेव' नामक गवेषाणात्मक ग्रंथ में अनेक तथ्यों की परीचा की है। महापुरुष माध्वदेवं की प्रामाणिक जीवनी का असमिया साहित्य में लमाव है, असमिया के किसी भी प्रतिष्ठित विज्ञान ने इस कवि के जीवन पर ग्रंथ नहीं लिखा गया। लेखक ने अनेक चरित पुस्तकों का अध्ययन कर उनकी परीचा कर केवल प्रामाणिक तथ्यों को प्रस्तूत प्रवंघ में स्थान दिया है।

तृतीय बच्चाय में असिया तथा हिंदी वेच्णव-काच्य का संदिएत परिचय दिया गया है। शंकरंदव हारा प्रणीत मागवत, अनादिपतन मिनत प्रदीप, जिलाहतन, कंसवथ उरजावणंन, रु विभणी हरण काच्य, बरगीत आदि काच्यों के भ्रोतों सहित उनकी विशेषाता स्पष्ट की गयी है। माध्यदेव के समस्त ग्रन्थों की समीदाा इस अध्याय में दी गयी है। राम सरस्वती के प्रत्येक ग्रंथ का सूदम परिचय दिया गया है। सोलह्वीं शती के हिंदी वेच्णाव कवियों के काच्य ग्रन्थों का संदिएत परिचय दिया गया है। सोलह्वीं

चतुंथे अध्याय में शंकरदेव, माध्वदेव, सूरदास तथा तुलसीदास की विनय-मिन्निक वंदना और आत्म निवदन का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया । श्रीकृष्ण की वृज् म्युरा तथा द्वारका लीला कीभी तुलनात्मक लालक्ष्मना की गई है। वर्षा तथा शरद ऋते के वर्णन की सामान्य विश्वातालों को प्रकाशित किया गया है।

पंचम अध्याय में अविभिया तथा हिंदी के वैष्णाव कवियों के दाशैनिक विजान्तों का प्रतिपादन किया गया है। ईश्वर, ईश्वर-जीव अमेद, ईश्वर जीव का मेद, ब्रल, प्रकृति अवतार माया, आदि की विशव आलोचना तुलनात्मक ढंग से की गयी है। मिक्त के मेद, नवधा मिक्त अव्यक्ति हैं। मिक्त, प्रेमलकाणा मिक्त रस की समीदाा अविभिया तथा हिंदी वैष्णाव काव्य के लाधार पर की गयी है।

व्या तरिण के कथाय में शंकरदेव तथा माध्वदेव की भाषा का भाषा वैज्ञानिक तथा व्या तरिण के कथायन किया गया है। तूर दास तथा तुंलति दात धारा प्रयुक्त माषा के प्रयोगों के साथ इनकी भाषा का तुंलनात्मक विवेचन किया गयाहै। ब्रज्जुलि, ध्वनि परितर्तन, वचन तथा लिंग के प्रयोग, कारकीय प्रयोग, काल तथा प्रत्यय वादि का तुंलनात्मक विश्लेषणा हुंजा है।

उपसंहार में असिया तथा हिंदी वैष्णव काव्य की समानताओं का संजिप्त सार अंकित किया गया है।

पूज्य हाक्टर घीरेन्द्र वर्मा एम०ए०, डि० लिट्०, मू० तथ्यदा, िंदी विभाग, प्रयागविश्व विधालय ने उस शौध-प्रबंध का निर्देशन किया है उसके लिए उन पंक्तियों का लखक अत्यन्त जामारी है। जिल्ही प्रदेश के असमिया माका। तथा साहित्य के प्रकाण्ड पंडितों तथा गवेषाकों ने मी मुंके प्रत्येक प्रकार की सुविधा प्रदान की, जिसके फल स्वरूप यह प्रबंध पूर्ण को सका है। गौहाटी विश्वविधालय के असमिया विभाग के अध्यदा ता० विरिंचकुमार जरुवा ने जादि से अंत तक प्रबंध को पढ़ा और अपनी सम्मित दी, जिसका प्रयोग उस प्रबंध में किया गया है - उनकी सहायता के विना यह कार्य संमव न था। गौहाटी विश्वविधालय के प्रोफ सर डा० महश्वर नेवोग, डा० सत्येन्द्र शर्मा, श्रीमती प्रीति वरुवा, असमिया साहित्य के समालोचक प्रोफ सर प्रमोदनंद्र मृहाचार्य, श्री निर्मल प्रमा बरदलों इ लदी ही रादास, अतुलनंद्र बरुवा, विश्ववारायण शास्त्री तथा पं० मनोरंजन रंजन शास्त्री ने मेरी सर्वाधिक सहायकता की। बरदीवा, कमलावारी वास्तिवाट, गडुम्र, बर्पटा तथा पाटवारसी के

मूदिव गोस्वामी ने सत्र की आवश्यक्ता प्राचीन पाथियों के उपयोग की आज्ञा दी।
श्री मूदेव गोस्वामी ने पत्र पात ही तीन पुस्तक मेरे नाम मेज दी ं में इन समस्त
महानुभावों के प्रति वृत्तज्ञता प्रकाश करता हूं। डा॰ सूर्यकुमार मुख्यां, भूतपूर्व,
बुत्तपति गोहाटी विश्वविद्यालय, ने इस शोध-प्रबंध के कुंक अध्यायों को सुना और
इस प्रयास की सराहना की। उन्हीं के शब्द में यहां उद्ध्रत कररहा हूं - इस प्रकार
के गवेषणात्मक शोध-प्रवंधों द्वारा असम का संबंध शेषा भारत से अधिक धनिष्ट
होगा, तिंदी के विद्वान क्यम के महापुरु वा शंकरदेव तथा माध्वदेव के जीवन और
साहित्य का परिचय प्राप्त कर सकेंगे - आप का यह प्रयास भारतीय सकता का

लालजी शुक्ल

00500

संकेत-पत्र

ब॰ प॰	•	अनुरागं पदावली		
बञ्च०सं०	-	अष्टहाप जीर वल्लम संप्रदाय		
न० सू०	-	सूरसागर -सं० धीरेन्द्र वर्गा		
सू० सा ०	-	सूरसागर- नागरी प्रचारिणी समा		
सू०वि०प०	-	सूर विनय पत्रिका		
सू०मा०	-	सूर की माणा		
तुं० मा०	elle.	तुलसीदास की भाषा		
कृ०बा०मा०	-	श्रीकृष्ण बाल माधुरी		
वि० प०	400.	विनय पत्रिका		
रा०च०मा०	sites	रामचरितमा नस		
वर्ष्युरुद्रTo	**	सूरदास		
वव्यवद्या है।	466 0	क्समर वैष्णव दर्शनर्-रूपरेखा		
व ्पा •	***	बनादि पतन		
क् भार	****	क्या भागवत		
उ०ल०कागुं०च०	***	कथा गुरु चरित -संपादक उपेन्द्र तेसारु		
का ०पुं०	•	का लिका पुराण		
कुं०दौ०	•	कुरु दोत्र		
ना०घी०	-	नामधोषा		
निवनव	•	निमि नवसिद्धांवाद		
म०र०	-	मिकत रत्नाकर		
म० प्रः	-	मितत प्रदीप		
গৃত ৰত্বীত	-	बरगीत - शंकरदेव		
माञ्चली ०	***	बरगीत -माध्वदेव		
नं० ना०	•	वंकीया नाट- होत		

बंब वि
 माठ वा
 माघनदेवर वाक्यामृत
 शंव वा
 शंकरदेव खाक्यामृत
 रांव्यावमावव
 शंकरदेव खाक्यामृत
 गुंक वि
 गुंक वि
 गुंक विरत

A. E. A. L. - Assert of Early Assertable to the tenter A. F. D. Assertable its Farmation & Tooks ment A. G. J. A. L. - Assertable of ment and origin of Assertable - Language

D. D. B. L. - Origin & Development of the made han purge

4444



शंकरदेव तथा माध्वदेव के जीवन काल की राजनीतिक स्थिति का चित्रण अहीम बुरु जी में मिलता है। असम देश के सुबनश्री और स्सिंग नदी के पूर्वी भाग में चूरिया राजा राज्य करते थे, दिलाण अंवल के बोड़ों स्वतंत्र थे। ब्रह्मचुत्र के दिलाणी तट पर कालारी राज्य था, इसका विस्तार वर्तमान नवगांव तक था, कभी कभी उनसे अहोमोंकी मुटमेड़ जीती थी। कालिरियों के पश्चिम और चृतियों के उत्तर में मुंडयां प्रधान रहते थे, रेजपन कार्य के लिए वे स्वतंत्र थे, जब कभी बाहरी शत्त्र इन पर आक्रमण करता था, ये एक साथ उसका प्रतिरोध करते थे। कामरूप राज्य और मुंडयों द्वारा प्रशासित चीत्र की सीमा समय समय पर परिवर्तित होती थी, पराक्रमी शासक इन्हें लपन अधीन करते थे किन्तुं इसके पश्चात् वे पुन: स्वतंत्र हो जाते थे। कौच राजाओं ने संकोश और वरनदी के मध्य के अनक सरदारों का दमन किया। कौचों को भी मुंडयों कहा जाता है किन्तुं उनका संबंध उपयुक्त मुंख्यों से नहीं है। तरहवीं शती के आरम्म से ही चूरिया राजा सदिया में राज्य करते थे, अहोमों और उनक मध्य सदेव युद्ध होता था। सोलहवीं शती के प्रारम्भ में अहोमों ने उन्हें पराजित किया और उनका राज्य अपने राज्य में मिला लिया।

चूनियों का धर्म निलंडाण था। व काली किविमिन्न स्वरूपों की पूजा देउरी की सहायता द्वारा करते थे, उन्हें ब्राह्मण की आवश्यकता न थी। वे केवाह लाति रूप की उपासना करते थे जिसके लिए नर्वाल दी जाती थी। वहीमों के दमन के पश्चात भी देउरी इस अमानुष्मिक कृत्य को करते रह किन्तुं उन्हें इस कार्य के लिए जब व व्यक्ति मिली थे जिन्हें प्राणदण्ड दिया जाता था। इनके अभाव में, एक ऐसे कवील से व्यक्ति विले के लिए चुन जाते थे जिन्हें बूह्व सुविधाएं प्राप्त थीं। बिल दिय जाने के पूर्व उस मनुष्य को खूब खिलाया पिलाया जाता था जिससे वह देवी के स्वाद के अनुकूल हो, और इसके पश्चात् सिदया के ताम मंदिर में अथवा जाति के अन्य तीर्थ में उसकी बिल दी जाती थी। त्रिपुरी कहारि, कोच, जयंतियां और असम की वन्य जातियों में नर्विल की प्रथा थी- इस प्रकार यह सर्लतापूर्वक देवा जा सकता है कि तांत्रिकों ने कैसे इस विधान को मान लिया।

?-yout-History of Assam. 90 3= ?- 中記 90 80 3- 中記 90 82 कामता राज्य : इत बातोच्य कात में ब्रब्युंत्र उपत्यका का पश्चिमी मान निर्वाण सीमा पश्चिम में करताया नदी तक थी, कामता राज्य के नाम से प्रस्थात था। स्वा तनता है कि प्राचीन कामरूप का नाम परिवर्तित हो कामता हो गया था। मुंबलमान इतिहास-कारों ने कामरूप और कामता शब्द का प्रयोग पर्याचनाची रूप में किया है किन्तू कहीं कहीं इनके प्रयोग में मिन्तता भी मिलती है। एंको घा के पश्चिम और पूर्व का दीत्र पृथक शासकों द्वारा शासित हुं हो है, कोच शासन के उत्तराई काल में इस राज्य के कई मांग हो चुंके थ।

वरों मुंबयां की एक किंवदंती में यह वर्णन गिलता है कि दुंलेंन नारायण कामता के राजा थ। यह का मत है कि यदि हम इसका विश्वास भी करें तो दुंलेंनारायण का राजत्व काल तरहवीं शती का अन्तिम भाग होगा। अहोम बुरंजी में अहोमों और कामता के राजा के युंद का वर्णन गिलताहै जिसमें वाच्य होकर कामता के शासक को अपनी पुती का विवाह अहोम राजा से करना पड़ा।

कामता वंश के अंतिम शासक नीलांबर का घटनावत विवरण मिलता है। निवंश की उत्पत्ति के संबंधमें येट कहते हैं कि इनका संबंध किया जाति से था, यह कहना वसंमव है। इनका बहुत अंश अब विभिन्न समूहों में समा गया है, इनमें से जिनकी उपाधि के नाम बन्थ जाति के हैं वे अपने कायस्थ कहते हैं। हुसेनशाह ने इनके अंतिम राजा को परास्त किया सिंहासनाहद होने के पश्चात् नीलांबर ने हिन्दू धर्म गृहण किया बार अपने पुरान गुरु के मंत्री नियुक्त किया। कहा जाता है कि मिथिला से ब्रालणों को भी बुलाया। घरता नदी के बांस तट पर कामतापुर इनके राज्य की राजधानी थी किन्तुं इनका वास्तविक शासन प्राचीन कामहूप राज्य के सक होटे से माग पर था जिसकी परिधि १८ मील से अधिक नहीं थी। चीनी बार बमी राजप्रासादों की मांति यहां का राजप्रासाद नगर के मध्य में अवस्थित था।

गौड़ दश के मुसलमान शासक हुसेन शाह न १४६ ८ में कामतापुर पर जाज़मण किया। इस युद्ध में षाड़मंत्र के कारण नीलाम्बर बंदी हुआ और उसे गौड़ से जान का निश्चय हुआ किन्तुं मार्ग में ही नीलाम्बर मार्ग गया। इसके पश्चात् उसके संबंध में कोई सूधप्रश्व विवरण नहीं मिलता है।

१- वही

वि० ४४

२- वही

Do 87

कई वर्ष पश्चात श्रहोम राज्या को श्वरतगत करने के लिए शाक्रमण किया जिसके फल स्वरूप सम्पूर्ण मुसलमान रोना का विनाश हुशा श्रीर कुछ दिन पूर्व विजित राजा भी हाथ घोना पड़ा।

मुसलमानों के बले जाने पर देश में कोई राजा न धा, छोटे छोटे सर्दार शासन कर रहे थे। विश्वसिंह के प्रादुर्भाव के पूर्व यह स्थिति कुछ वर्षी तक थी। कोच राज्य : अनेक प्राचीन पोथियों में कोच राजाओं का वर्णन मिलता है, दरं राजा वंशावली इनमें प्रमुख है। राजा परी दित की मृत्यु के पश्चात का कोई विवरण इसमें नहीं है और यह इसी राज कुल के राजा लक्ष्मीना रायण कोर से संबंधित है। यह साची पत्र पर असमिया इंदों में लिखी गई है, ऐसा विश्वास किया जाता है कि सक प्रसिद्ध लेखक ने इसका संकलन १ ८०६ में किया।

ग्वालपाड़ा जनपद के अंतर्गत बूंटाघाट मंडल के चिकनग्राम के हरिया मंडल नामक मेंच या कोच कोच राजाओं के आदि पुरुष हैं। वे इस मंडल के बारह कोचों के प्रधान थे। उन्होंने हीरा और जीरा नामक दो बहनों से विवाह किया। इनके दो पुत्र हुए। विशु की मां का नाम हीरा था। विशु अदम्य साहसी था उसने अनेक प्रधान मुख्यों को पराजित किया। फूलगुरी और बिजनी के अन्य प्रमुख प्रधानों का दमन कर घीरे घीरे उसने अपने राजा का विस्तार पश्चिम में करतीया और पूर्व में बरनदी तक किया। वह लगमा १५१५ ई० तक पूर्ण रूप से शवितशाली हो गया।

ब्राइमणों ने यह जात किया उसके जाति के लोग जा त्रिय थे, ये लोग यमदिशन के पुत्र परशुराम के मय से सूक्त त्याग कर माग गए थे , विशु को हरिया मंडल का पुत्र न मान कर उसे शिव का पुत्र माना गया, किंतु यह कहा गया कि शिव ने स्वयं हरिया मंडल के रूप में हीरा जो पार्वेती की अवतार थीं, से मोग किया । बिशु ने अपना नाम विश्वसिंह रस लिया और उसके माई शिशु का नाम शिवसिंह हो गया हस जाति के समर्थक ने अपने पुराने पद का त्याग किया और राजवंशी कहलाने लो । विश्वसिंह हिन्दू धर्म के महान पोष्ट्रक थे । उन्होंने शिव तथा दुर्गों की पूजा की, पुरों हितों, ज्यो ति श्रियों और विष्णु के उपासकों को दान दिया । कामस्था मंदिर का नवनिर्माण करा कर उनकी पूजा आरंम की -- काशी और कन्नों से अनेक ब्राइमणों को अपने राज्य में बुलाया ।

१ - वही पु० ४४

र- वही पु० ४५

३ - वही पृ० ४७

समाज

वणित्रम : कामरूप के राजाओं ने भी वणित्रम धर्म की व्यवस्था की सुरत्ता की-समाज ब्राइमण, ता क्रिय, वैश्य तथा शुद्ध, चार वणों में विभाजित था । मास्कर वर्मन की
निधिपुर दान पत्र में यह लेख मिलता है कि इन्होंने प्राचीन वर्ण बात्म धर्म की
व्यवस्था को अवकिण किया । इन्द्रपाल के संबंधा में कहा जाता है कि पृथ्वी धन
धान्य से परिपूर्ण थी और कामधोनु की मांति वह समस्त फलों को देता है क्यों कि
वार बाम और चार वणों के विभाजन का पालन विधि पूर्वक होता था।

गुप्त साम्राज्य के पतन के पश्चात कामक्ष्म राज्य में अनेक ब्राह्मणा पांच की शती के उचराई में आए। कामक्ष्म के राजाओं ने विद्वानों और मिन्नि पंडितों, आचार्यों और संतों का आदर किया, इसके फलस्वरुप अधिक लोग आस्कर्भ आकर्णित हुए। मध्यदेश के एक ब्राह्मणा को राजा धर्मपाल ने मूमिदान अग्रहार के क्ष्म में दिया। अधिकांश ब्राह्मणा यजुर्वेदी थे। निधिपुर के दान पत्र में इप्पन गोलों का उत्लेख मिलता है। ब्राह्मणों का मुख्य कर्तव्य वेदाध्ययन था।

अन्य जातियां: शुनांकर पाठक के दान पत्र में प्रत्थान कलश नामक वैद्य का नाम मिलता है। समाज में इस सुमुदाय के व्यक्तियों को आदरणीय स्थान प्राप्त था। डा० कृष्ण शास्त्री के अनुसर वैद्य ब्राइनणों माने जाते थे। बलवर्मन के दान पत्र में मिष्ठाक का उत्लेख मिलता है। उषाण के अनुसार ब्राइनण और दान्त्रिय कन्या के संयोग से उत्पन्न मिष्ठाक की उपाध्न वैद्य थी। वैद्य आयुर्वेद के आठ मार्गों का अध्ययन करता था और शत्य विकित्सा द्वारा धन उपाजित करता था। कायस्थ और कितता इस प्रांत की प्रमुख जातिल्थीं। जिनके हाथ का पानी ब्राइनण भी पीते थे। कितताओं को कायस्थों के समकदा समक्ता जाता था। मार्टिन का विश्वास है ये लोग कोच जाति के पुरोहित थे।

१ - अवकीणी वणात्रिम धर्म प्रविभाग्य निर्मितो । २५ पंक्ति

[?] Dr. B. K. Borne-Cultural History of Assam - 41112

३- वही पु० १०५

४ - प्रस्थान कलश नामना कविनागोवण मानवे द्येन रचित प्रशस्ति: ।

⁴⁻Dr. B. K. Burna-Cultural History of Assum 4011.

किताओं में विश्व विवाह और पूर्ण क्यत्क कन्याओं का विवाह प्रवित था जब कि ब्राइमणों में विश्व विवाह विजित है और किशोरी कन्याओं का विवाह होता है। कोच जाति के लोग मंगोलीय कुल के हैं और उनकी संख्या एस राज्य में श्रधिक है। योगिनी तंत्र में कोचों को कुवाच कहा गया है। गेट का मत है कि असम में कोच नाम किशी जाति विशेषा का बोधक नहीं है किन्तु यह एक हिन्दू जाति का नाम है जिसमें करारी, गारो, हाजांग, लालुंग, मिकिर श्रादि जातियों के धर्म परिवर्तित व्यक्ति हैं।

दैक्त गणक नाम से प्रसिद्ध है । कृहदाशमी पुराण के अनुसार दैक्तों की उत्पत्ति शाकद्वीपी पिता और वैस्थ माला से हुई । असम के गणक ग्रहों की पूजा करते हैं । कुछ शिलालेखों में कैवलों का वर्णन मिलता है स्सा लगता है कि ये लोग भी इस प्रांत की प्रमुख जाति के थे । तेजपुर के शिलालेख के अनुसार एक कैवर्त निक्यों के तट पर राज्य कर लेता था ।

कुंमकार, तंतुवाय, नौकी, दांड़ी जाति के लोग भी असम में थे। डोम और चांडाल जाति के लोग अन्त्यज माने जाते थे।

नारी: इस काल की नारियां अत्यन्त आकर्षक लावण्यमयी तथा स्नेहमयी होती थी।
मातृत्व वैवाहिक जीवन का उद्देश्य प्रा, हर्जावर्मन की माता जीवदा की तुलना युवि च्छर
के माता कुंती से की गई है। निध्नानपुर के ताम्र पत्र के अनुसार महेन्द्रवर्मन की माता
यज्ञवती यज्ञ के काच्छ के तुत्य थीं जिनसे अग्नि उत्पन्न होती थी ब्राह्मणों की पत्नियां
पति के देहांत के पश्चात सती होती थी, इसका उत्सेह योगिनी तंत्र में मिलता है।
योगिनी तंत्र में अधुनीमव नगर की सुंद्रस्थिं की कमनीयता और शारी रिक सींदर्थ का विवरण प्राप्त होता है। अधुनीमव जेसे पवित्र नगर की रमणियां प्रसन्न रहती थी, मध्य माग
दिशा था, कमललीचन कानों तक विस्तृत थे उरीज उन्नत एवं कठोर थे, कटि पतली थी, चंद्र

१ - ,वही पु० ११३

२ - वही पु० ११४

३ - वहीं ० पृ० ११५

के समान कपोल वमकते थे और कंठ में हार सुशोमित थे। किंकिनी और नूपुर से मध्युर ध्वान निकलती थी। बढ़गांव के दान पत्र में वैश्याओं का भी विवरण मिलता है। अक्षम के देव मंदिरों में वैश्याओं को नाचने के लिए नियुक्त किया जाता था। हाटकेश्वर शिव के मंदिर की वैश्याओं को वाणमाल ने उपहार दिया, इसका विवरण तेजपुर के दान पत्र में दिया गया है। मंदिरों के कार्य में लगी नारियां नटी अथवा हा लुकंगना नाम से प्रस्थात हैं। डा० काकति का मत है कि डलुकंगना शब्द रचना आ दिश्व है। डलू का अर्थ मंदिर और अंगना का अर्थ नारी होता है। वामर डुलाना वैवता के लिए हार तैयार करना, उनके सम्मुख नृत्य गान करना ही नटी का कार्य था। नाना प्रकार के सुन्दर आकृष्णण से सुसज्जित नटी अनेक व्यक्तियों को मोहित करती थी।

भाष्कर वर्षन ने उत्सका के पात्र हर्ण को उपहार स्वरूप मेजा था। यो गिनी तंत्र के अनुसार कामेश्यरी की पूजा सुरा, मांस और रुप्तिर से की जाती है। असम की अन्य जातियां लाओ पानी अर्थात चावल की मिदरा का भोग देवताओं को लगाती हैं। लोग ताम्बूल कन्नी अथवा पककी सुपारी के साथ साते थे। हर्ण चरित और मुसलमान इतिहासकारों के विवरण में ताम्बूल साने का वर्णन मिलता है असमिया समाज में आगंतुक को सर्वप्रथम ताम्बूल - पान मेंट किया जाता है। सासी जाति के लोग मृतक की अर्थी पर ताम्बूल रखते थे।

घार्मिक सहनशीलता : इ्वेनसांग के अनुसार अतम में सेकड़ों देवताओं के मंदिर थे, इनके अतिरिवत अन्य सम्प्रदायों के भी पूजागृह थे। इस काल में ब्राइमणा धर्म की नाना सनस्त्र शासाओं का विवरण शिलालेल तथा मूर्तियों में मिलता है। विभिन्न धर्मसम्प्रदाय के अनुयायियों में भी एक इस्पता थी। राजाओं ने विभिन्न मतावलंकियों को सम्यक संरत्ताणा दिया। एक चीनी मिद्दाक ने भाष्कर वर्षन के संबंधा में मत प्रकट किया कि वे बुद्ध मतावलंकी न थे किन्तु विद्वान अमणों का आदर करते थे। राजा धर्मपाल ने शिव और विष्णु दोनों देवताओं के प्रति श्रृद्धा माव प्रकट किया है। राजा वेषदेव ने अपने को परममहरवर और परम- वैष्णाव कहा है। वल्लम देव ने गणेश और भागवत वासुदेव

१- वहीं पु० १२०

२ - वहीं ० पु० १२५

३- वहीं ० पु०१६४

की उपासना की । वनमाल का नाम यथिप वेष्णाव लगता है किन्तु वे शिवीपासक थे। यथिप इंद्रपाल के शिलालेखों की प्रशस्ति में वे पशुपति प्रशाधिनाथ के मनत प्रतित होते हैं, उनके ताम्रपत्रों पर शंक, चक्र पद्म और गरु हु, वेष्णाव प्रतिक भी शंकित हैं।

विष्णुमूर्ति: विष्णु की प्राचीनतम मूर्ति देशोपानी में प्राप्त हुई लिपि में यह शंकित है कि यह नारायण की मूर्ति है। दी जित ने लिपि के शाधार पर इसे ६ वीं शती की कृति कहा है। मुख और होठ की निवली श्राकृति उत्तर गुप्त काल की मूर्तिकला की नमूना जान पढ़ती है। मूर्ति का दाहिना हाथ और पैर टूटे हुए हैं और सिर के पी है का भाग नष्ट हो गया है। करु पर के बांसं हाथ में शंख और नीचे के हाथ में गदा

: है। कौस्तुम्,शीवत्प,यत्तोपनीत वनमाला बादि चिन्छ उत्कीण किर गए हैं। नवगांव जिले केगोसाई जूरी के मग्नावरीका में सम्मंग : किरीट मुक्ट है, कानों में विच्णु की एक यूसरी मूर्ति प्राप्त हुई है। मूर्ति के मस्तक पर किरीट मुक्ट है, कानों में पात्र कुंडल जड़े हैं बौर गले में दो हार हैं एक में कौस्तुम जुड़ा है। इनके दाहिने लदमी और बाएं सरस्वती, किरीट- मुक्ट बौर पात्र कुंडल से अलंकृत सड़ी हैं।

स्ति जिनंग मुदी में तही है किन्तु इसकी यह विशेषाता है कि इसके चारों हाथों में कोई मी वस्तु विष्णु ने नहीं लिया है -- सिंहासन के चारों किनारों पर तोते हैं जिस पर मूर्ति विराजमान है । इस मूर्ति को 'मकराकृत कुंडल, मुकुट तथा चंदन से मलंकृत किया गया है । इस मूर्ति को 'मकराकृत कुंडल, मुकुट तथा चंदन से मलंकृत किया गया है । इस प्रतिमा के दोनों बोर दो सुंदरियां सही हैं, एक हाथ में कली और कृपाण है और दूसरी नृत्य मुद्री में है । यह प्रतिमा ११ वीं सती की मूर्ति क्या की नमूना है । विष्णु गोहाठी के मुकेश्वर मंदिर के प्रमुख देवता हैं, यह विशाल मूर्ति विष्णु जनादेन के नाम से प्रत्यात है । देवता व्रजपर्यक मुद्री में वेठाए हुए हैं, इनके दिलाण पारवे में सूर्य और गणेश और वाम पारवें में शिव और दशमुणी दुर्गा की मूर्ति है । इस पंचायतन् के प्रमुख देव

१ - वहीं पु०१६६

२ - वही पुरु १ वा

३ - वही पु०१८८

विष्णु हैं। गौहाटी के उवेशी शिला पर उत्कीर्ण मूर्तियां प्रधान हिन्दू देवताओं की हैं। विष्णु और उनके दस अवतारों के अतिरिक्त सूर्य, ये गणेश, शिव और देवी उत्कीर्ण हैं। उत्तर गौहाटी के अश्वकांत देवालय की विष्णु नूर्ति उत्कृष्ट मूर्ति कला का नमूना है। एक कन्क्रम, एक मेढक, और शैवाली अनंत का जाआर हैं जिसके उत्पर विष्णु श्यन कर रहे हैं। विष्णु की नामि से उत्पन्न कमल पर ब्रह्मा विराजमान हैं, महाम्या, और मध्य और कैटम राषास एक और खड़े हैं। नाग कन्यार दो पंक्तियों में हाथ जोड़ कर घुटनों के बल खड़ी हैं। वाराह तथा नृसिंह अवतार स्त्रम की मी कुक् प्रतिमार अपन प्रांत में प्राप्त हुई हैं।

राम तथा कृष्ण की पृथक मूर्तियां भी मिली हैं राम मिलत का प्रवार इस प्रदेश में आदि काल में हो नुका था । गोलाघाट के देवपर्वत के मग्नावशेषा में राम, लक्ष्मण के चिन्ह निले हैं । कामत्या मंदिर के पश्चिमी द्वार पर वेणु गोपाल कृष्ण की आकृति दिताई देती है । उनके गले में मणियों की माल है किट में काछनी है । चारद्वार के मंदिर के संवहर में वंशी घर कृष्ण मुरली बजाते हुए दो सुंदरियों द्वारा घरे हैं ।

चार्यपद

न्सके पूर्व हम वैष्णव साहित्य के पूर्ववर्ती साहित्य पर विचार करें हमें वार्य या नार्यपद की और ध्यान देना होगा जिनकी कुछ ध्यन्यात्मक और रचनात्मक विशेषणताएं आध्यनिक असम्या तक में अट्ट रूप से मिलती हैं। नार्यवार्य विनस्त्रय की बौदहवीं स्त्री के अंत की पांडुलिप में मूल प्रतिलिस के ५० वार्य में से केवल ४७ प्राप्त हैं -- इसका उद्धार महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने नेपाल से १६०% में विध्या था। सिद्धों में से रेड सिद्ध कवियों ने इसकी रचना की है, जिनकी पूजा महायान सम्प्रदाय के नेपाल और तिब्बत के बौद्ध करते हैं। डाठ गासत्त्रिसी का कथन है कि गूल तोब और व्यां बावसे व्यान इतन में सिद्ध मीन नाथ को कामरूप का महुवा कुहा गया है। तारा नाथ ने भी सिद्ध मिन को पूर्वभारत कामरूप का महुवा कहा है। कामरूपी बौती के दो तुक मिन

^{? -} att o yo est - ero yurstie Jales of humi farinth - 1944

नाथ के संस्कृत टीका चार्य में मिसते हैं।

कहन्ति गुरु पारमाधेरा बाटा । करम कुरंगा सामाधिका पाछा ।। क्मल विकासिला कहिला णा जामारा। क्मल मध्यु पिबिकी घोषे न मामरा ।।

प्राचीन ऋस या कामरूप का संबंध्य परवर्ती बौद धर्म के ब्र बज़यसन और सहजकान सम्प्रदाय और सिद्धपुरु वाँ से था । डा० सुनीति कुनार चटर्जी का मत है कि इस किता की माजा पर प्राचीन बंगाली, शौरसेनी अपग्रंश , और किहीं संस्कृत और साहित्यिक प्राकृत का प्रमाव पड़ा है । किन्तु डा० व्लाक का कहना है । इस इन्हें प्राच्य संस्करण कह सकते हैं क्यों कि यह पूर्व के पाठ में मिलती हैं, किन्तु यह ऐसा नहीं है जब हम पूर्वी आध्यानिक माजाओं का इसे आधार मानते हैं । डा० काकति के अनुसार बुद्धे गान औ दोहा और कृष्णा कीतन की माजा प्राचीन बंगाली और ऋसमिया आदि काल की माजा है और जो पूर्व मागधी अपग्रंश की बोलियों से प्रभावित हैं ।

रामायण : इस काल के अत्यन्त महत्चपूर्ण किव माध्य कंदित हैं। रामायण के उत्तर कांड की रक्ता करते समय शंकरदेव ने अपने पूर्व किव की बंदना की है। शंकरदेव ने माध्यव कंदित को अनुपन किव कहा है, शिवतशाली हाथी की तुलाा में शक्त के समान हैं। इसके पूर्व किय ने अपने को राजकादि कंदाल कक्षा है, माध्यव कंदाल उसका दूतरा नाम है, वह ब्रिटिनिश राम नाम का रमरण करता है ब्रन्थ स्थानों पर उसने बर्ग को माध्यव कंदाल किया है। इसमें सदैह नहीं कि वह प्रस्थात प्राप्तण थे और किराज उनकी किय ब्रेष्ठ होने के कारण उपाधिन श्रीर संवद यह उपाधित उन्हें विद्वानों की सभा अथवा उनके ब्राप्त्य दाला राजा प्रतास की गई की वेदाल जेता की सभा अथवा उनके ब्राप्त्य दाला राजा प्रतास की गई की वेदाल उपाधित ब्रह्म असनिया कियों की है : रुद्धवंदिल अनंत कंदाल , तीचार कंदाल, किनाथ कंदाल; और उन ब्राइमणों की है जो ब्रह्म राज दरजार द्वारा विदेशों में भेजे जाते थे : रुद्धवंदिल, माध्यव कंदाल, सागर कंदाल, चंद्र कंदाल, इत्यादि जिनका वर्णन रेलिशासिक हैतों में है: सभी कंदाल किया प्रस्थात विद्धान थे और विदेशी द्वावासों को भी विद्धानों की जावश्यकता थी। ब्रन्त कंदाल ने कहा है कि उन्होंने इस नाम को शास्त्रार्थ द्वारा प्राप्त किया : तकते लामिला नाम अनंत कंदाल: ब्रह्मान किया जा रहता है कि केदिल का अर्थ तार्किक अथवा शास्त्री है जो शास्त्रार्थ में माग लेते थे और यह किसी प्रकार की वंश परंपरागत उपाधित नहीं है। नवगांव जिलातंत्रीत कंदाल नामक स्थान से इस अंदाल का कोई संबंध नहीं है, किन्तु यह निश्चित है कुछ कंदाल इस स्थान से थे।

साध्य कंदाित ने कहा है कि उन्होंने वराहराज महा माणिक्य की प्रार्थना पर लोक रंजन की दृष्टि से रामायण की पत्र में रचना की ।

यभी तक भी महामणिक्य का काल और स्थान निधारित करना संभव नहीं हुआ। माध्यव चंद्र बरदले जिन्होंने सबंद्रथम रामायण का प्रकाशन किया है, अपनी मूमिका में उन्होंने लिखा है कि भी महामणिक्य क्यंतपुर :क्यंतिया: के तीन कदारी राजा विक्य माणिक्य, अन माणिक्य और यश माणिक्य में से एक होंगे। क्यंतपुर के कहारी राजा 'वाराहराज' के नाम से प्रसिद्ध थे, और वे 'ज्यंतपुरेश्वर' की उपाध्य से, बढ़े राज्य, जिसका विस्तार वर्तमान नवगांव जिला तक था, पर १२ वीं शती से १४ वीं शती तक

राज्य विधा । इससे बढ़कर बरदले ने वाराह का संबंधा बोरो या बोड़ो के पाठ से जोड़ना चाहा है । अंत में उन्होंने लिसा है कि कंदिल का रामायण चौदहवीं या पंद्रहवीं सती की कृति है और किव स्वयं वर्तमान नवगांव जिले का था । किन्तु सर एडवर गैट ने विजय माणिवय और धानमाणिवय का कृमश: :१५६६-८०: और १५६६-१६०५: राजत्व काल माना है । यह काल कंदिल के आज्यदाता ी महामाणिवय का नहीं हो सकता क्यों कि यह किव शंकरदेव को पूर्ववर्ती था :१४४६-१५६८: ।

पंडित हैमनंद्र गोस्वामी लिखते हैं महामणितय वाराही राजाओं में से धा और उसने चौदहवीं शती के मध्य में डीमापुर में राज्य किया । प्राचीन ब्रहोम बुरुजी में, महामणिक्य के प्रपोत्र के प्रपोत्र वाराही राजा डेट सिंह हिंग्या बहोम राजा के समकातीन थे। दूसरे स्थान पर उन्होंने लिखा है कि वराही हिन्दू कहारियों के शंग थे। महोमों के माने के पूर्व वाराही राजा ब्रह्मपुत्र के दिया के विस्तृत जंबल पर शासन करते थे और उनकी राजधानी सदिया के निकट सौनापुर थी । कनकलाल करु आ गो स्थामी से सहमत होते पुष्ट हुए मंदलि को चीदहनीर शती के उधराई का व्यक्ति मानते हैं और कहते हैं कि संभव है कि दाराही राजाओं ने कपिती की उपत्यका पर शासन किया हो । का लिराम मेशी माध्यव कंदलि को भौदहवीं सती के मध्य का व्यक्ति मानते हैं और ी महामणिक्य को त्रिपुरा का राजा स्वीकार करते हैं । एक महामाणिक्य ने त्रिपुरा में १३६६- १४०६ तक शासन दिया था । उसके बुक् पूर्वजों ने कपिसी उपत्यका पर शासन क्या और कालांतर में श्री धर्म भाषाक्य के दो असमिया ब्राइमण , कुश्वर और वाणेश्वर ने त्रिपुरा राज-माला की रचना की । डा० वाणीकांत कांकति ने ी महा माणिक्य को प्रयंतपुर का कहारी राजा माना है और कंदलि को मध्य असम का व्यक्ति कड़ा है। ये कैंदलि की भाषा के आधार पर उन्हें चौदहवीं शती का व्यक्ति मानते हैं। जंदांश की भाषा में मूल रूप के कई नमूने मिलते हैं। काभरूप के दो पाल राजा, उन्त्रपाल और अमैपाल ने वाराइ राजा की उपाधि ती और अपने को जिच्छा के शूकर

^{*} K.L. Burna - Early History of Remaining 160 341.
* A.G.O. A.L. Introduction 40 xel.

^{*} A.F.D. Fo 23-28.

श्वतार और पृथ्वी का संतान कहा है। यह उनके ताम्रपात्र क्वान पर शंकित है। वोड़ो जाति की एक शासा वाराही या बाराही के नाम से प्रसिद्ध है।

कथागुरु चरित में गुरु राधा श्राचार्य, जो शंकरदेव के श्रध्यापन का निरीत्तण करने श्राये थे, उनका नाम महेन्द्र कंदलि के स्थान पर माध्य कंदलि दिया गया। यह माध्य कंदलि रामायण के रचयिता हो सकते हैं।

अभाग्यवश्रमाध्यव कंदलि के रामायण की समस्त प्रतियों में आदि कांड और उधर कांड नहीं मिलता है। यह नहीं कहा जा सकता कि किव ने पहले इन कांडों का अनुवाद नहीं किया होगा। अत: यह स्पष्ट है कि माध्यव कंदित का रामायण आध्यानक भारतीय माणाओं का प्रयम रामायण है। उन्होंने श्री महामाणिक्य के आदेश और प्रक्ष सप्त कांड रामायण के अनुवाद का उत्लेख :सात कांड रामायण पदबंध्ये निवंध्यातो: लंका कांड के अंत में किया है। कथागुरु चरित में यह विव रण मिलता है कि अनंत कंदित ने माध्यव कंदित के कार्य को शेषा करना चाहा, माध्यवदेव और शंकर्तव ने अन्य: आदि और उपस्कांड की रचना पन में की और प्राचीन कृति को नव जीवन प्रवान किया।

माध्य कंदाल ने अभी पर्दों को अने आ अवताता राजा और दर्जारियों को सुनाया और समय समय पर परिपतिन कर :माध्य बोलंत रेला बालोट हिमना, यहीं रहने दें: जिस प्रकार जोता सुनना चाहते थे तस प्रकार सुनाते थे माध्य कंदाल ने अत्यन्त दुढ़ता और योग्यता से संस्कृत के स्तोक का अनुवाद किया है है। सदैय ही कंदाल मूल रचना से बंधो रहें, कहीं कहीं संदित करने के लिये और अन्य सामग्री को बाहर रखने के लिये और महामाणिक्य के कहने पर कहीं कहीं थोड़ा रस मी निलाया है, जिस प्रकार से दूध को अध्यक स्वादिष्ट बनाने के लिये उसमें भी हाल देते हैं।

[.] Ny of the media minimum.

सात वांड रामायण पदवं ने निवं ि लो लेम परिषि सरौ प्युत महामणिक्यर वोले काक रस दिलो दिलो, दुग्धक मथिले पेन धृत । २५

३- महाश्रष्टि वात्मिकिये रामायण करिस्ता : सामाते जानिका येन वेद । २६

माध्य और व्यापकता में, जंदित ने वात्मी कि की कृति को वेद के समान बतलाया है। और इस संबंध में दायित्वपूर्ण विवरण दिया है। ओ मनुष्यों तुमने राम की कथा रखों से पूर्ण और पवित्र सुना है। क्या तुम इससे प्रसन्न हो, मेरे दो जों का मार्जन करोंगे। बात्मी कि ने इस कृति को गध और पध में लिसा है। मैंने इसे अत्यन्त सावधानी से ग्रहण कर, जो कुछ समका है उसे पधबद किया है। कौन रसों की छाया को समक सकता है। पत्ती अपने पंतों के अनुसार उड़ते हैं, कि जनरू वि का ध्यान रस रचना करते हैं। कि अपनी रचनाओं में कुछ अपनी और से भी मिला देते हैं क्यां के जो लिसते हैं वह देववाणी नहीं किन्तु लोकिक कथा है।

यदि आप मूल पुस्तक देलें और उसमें यह बार्ते न पाएं जो मैंने तिसी हैं तो मैरी मत्सीना करें जैसा आप वाहें।

कंदति की रचना के वर्तमान रूप में, उपलाखीन वैष्णवाँ की प्रवार प्रवृति दिलाई देती है। राम को विष्णु का अवतार मूल रामायण में नहीं माना गया है, हां वाद में बाध्यात्म रामायण में यह स्पष्ट हुआ है। क्या भाजव कंदति की रच्ना में इन तत्वों का पायाचाना इस रचना का प्रताव माना जा सकता है। क्या गुरु चरित में इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया गया है। माध्यव देव और रकंरदेन ने रामायण में प्रथम और अंतिम कांड जोड़ कर रामायण को पूर्ण क्या, माध्यवदेव ने उन स्थानों पर उपवेश प्रवाप कर दिया है जिन स्थानों पर परवेश हुम शुम था। यह सर्वया प्रामक है कि रामायण को दुसरा, संपादन कर उसे वैष्णाव सरहित्य की भांति भवितप्रधान बनाया प्रमा

कंद ित नेंडन समस्त कामुक धावनाओं को स्मष्ट रूप से प्रकाशित किया है जिनसे भाव्य रस की बृद्धि होती है। सीता राम से बनुरोध्न करतीं हैं ि वे बनू जाते समय सफ उन्हें कोले न त्यानें, क्यों कि उनका योवन मोग के योग्य पूर्ण हो गया है।

कार कार का हाता है के का मामार के का मही के का मान

र- निषिनिधानांड पृ० २५६

३- लेगा गाँड 90 ४४ =

४- उ० चं तेला स-- वसमिया रामायण साहित्य- १६४८ पृ० ४०

५- म० नेवांग -- शि शि शंकरदेव १६५२ - पुष्ठ १४८

६- अयोध्या कांड - ११६

युद्ध तीर पारचालने स्थान, प्रासाय, प्राकृतिक दृश्य, मानवीय शौंदर्य का अत्यन्त तुंदर विभण हुता । सुंदरकांड में उन चित्रों की अध्यकता है । माज्य वंदित कुर शब्दों प्रारा तोंदर्य को आकर्षक बना रकते हैं । जीयन, कार्यव्यापार, कार और प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन करते समय उनके आंतों के सम्मुख असमिया सनाज था । नथोपकथन का तार सामान्य लोगों--का है । मुहाबरों, ग्रामीण प्रयोगों के कारण उनकी माजा जिल्हा आकर्षक दुई है । उनकी वृद्ध अभिन्य कित्यां आज के युग में अनुचित जान पहुँगी और साधारण लोगों की रुनि की समक्ती जायगी किन्तु वे वंदिल के जोताओं को अधिक रुनिकार प्रतीत होती थें हैं ।

यगिप माध्यव कंदित की स्वना उनकी न थी, तो भी हम उसमें जरांग्या एनाज की भालक पाते हैं। जब कवि शत्रु के निवट जाने की छ नी ति:संघि, विग्रह आसन, द्वैध, सत्य, यान: या मंत्री और राज्युत के कर्तव्य, का वर्णन करता है, तब हम यह सोचने के लिये बाध्य होते हैं कि श्री महामणिक्य के शायन काल में यह सब प्रवस्ति था। वंदरों का टिइस्ट्यों की मांति फैलना, उच्छा कटिवंधीय बर्णन है। संघिकार शब्द का प्रयोग तन त्रहोगों का प्रभाव वहा जा सकता है जिन्होंने ब्रह्मपुत्र उपत्यका के पूर्व और राज्य स्थापित कर लिया था।

देविता : इस रवना में माञ्चव कंद ित अर्जुन और इन्दु के मध्य हुए युद्ध का वर्णन करते हैं, देवताओं के स्वामी इन्द्र ने कृष्ण को अपने प्रस्तावित राष्ट्रम्म यह में नियंत्रित करना मस्वीकार कर दिया था । किंतु वह अत्यंत संदिग्ध है कि यह उनकी रचना थी । प्रकाशित संस्करण में कदि ने अपने को प्रत्येक स्थान पर पाञ्चव कहा है, माञ्चव कंद ित नहीं । पंडित हेमचंद्र गोरवममी ने इसे माञ्चव कंद ित की रचना माना है, किन्तु यह प्रति पर हो सकता है । यह पुस्तक इस महाकवि के योग्य नहीं है । कहीं भी कवि ने अपना परिचय नहीं दिया है । इसके विष्यय का ग्रोत ही संदेवस्पद है । प्रकाशित संस्करण के प्रश्रे और १३६ पद की क्या अठारह पुराणों से ती गई है, जब कि पांडु तिप के अनुसार क्या पहुमपुराण से ती गई है । पूर्ण मूत के हवा प्रत्यय के इत्य इसमें मिलते हैं किन्तु यह केवल अनुकरण मात्र ज्ञात होता है । क्रिया का एर प्रयोग कहीं भी नहीं मिलता है । माणा की कृत्विता के आधार पर इसे शंकरदेव के पूर्व की रचना नहीं कहा जा सकता । इस रचना में नाम धर्म का बेष्डत्व तपस्या और वित के उत्पर स्थापित करने का यत्म किया क्या है । इसके अतिरिक्त वो और रचनायें माञ्चव कंद ित

की कही जाती हैं -- 'ताग्रव्यवर युद्धे और पाताल कांड दोनों <u>भेमिन श्वमेधा के स्र</u> स्पांतर हैं। डा० महेश्वर नेश्रोग का गत है कि देव जित और यह दोनों रचनायें किसी दूसरे माध्य कंदिल की हैं और इनका समय शंकरदेव के जाद होगा।

हरिवर विप्र

हरिवर विप्र ने 'क्बुवाहनर युद्ध' में अपने शायदाता कामता के राजा दुलंगरायण पर शाशीविद की वर्षा की है। इनके शाय दाता दुलंगरायण के सम्बन्ध में अधिक विवरण अभी तक प्राप्त नहीं है। रुकिमणी हरण काव्य में अंगरेव ने कहा है कि उनके प्राप्तामह बंदीवर व देवीदास को दुलंगरायण ने टेमुनियाबांत्र के निकट मूमि दान दी थी। शंकरदेव के चरितकारों ने इस बात को बार बार तुहराया है। शंकरदेव की जन्मतिथि १४४६ से गणना करने पर दुलंगरायण का राजत्य काल तेरहवीं शती का उपराद्धं या बोदहवीं शती का मध्य स्थिर होता है। और यही वह समय है जब हरिवर विप्र ने 'क्बुवाहर्र युद्ध' और 'तम कुशर युद्ध' की रचना की होगी। संबंध सूक्क प्रत्ययन्यर और पूर्ण मूत काल में -- इबा का प्रयोग अधिक हुशा है, यह शंकरदेव ने पूर्ववर्ती किवरों की विशेषता है।

⁸⁻ H.E. A.T. - As 33.

२ - जम जय नर्पति दुलैंग नारायणा राजा कामपुरे मेला वीरवर सपुत्र बांघ वे मेंबे सुसे राजा करोन्तक जीवनतको सहस्य वत्सर ताहान राज्यत थित साध्यु जन मनो निला अश्वमेधा विर्वित सार् विम्न हरिवर काह गौरिर चरण सेह पन बंधो करिलो मनार । :२५५:

३ - डा० काकति : A. F. D. एठ ८३.

४ - पासिश्वार मस्त्र शस्त्र मनत पेराक :३१८: हरिवर मुंड गीटा मसिवार देखि :५६६: तोमार कोरे येवे चिडियरो गला :५५४: वृत्रवाहनर युद

ी ती वंशीगोपाल देवर चरित में वंशीगोपाल के पितामह का नाम हरिवर विप्र है जो व्याष्ट्रपिंड :उत्तर लगिमपुर: के अत्यन्त सम्पन्न और विद्वानों के प्रमुख मुख्यां थे। कहा जाता है कि संस्कृत से उन्होंने भारत पुराण का स्त्यांतर अग्रामया में किया, इन दो विचाराधीन रचनाओं के सम्बन्ध में यह संदर्भ महत्वपूर्ण है किसी भी प्रकार यह कल्पना करना कि है कि शंकरदेव के पितामह और वंशीगोपाल के पितामह स्क ही काल के थे।

निम्नलिखत पंक्तियों में माध्यव कंदलि के रामायण की प्रतिध्वनि सुनाई देती हैं, जो कदाचित वब्रुवाहरर युद्ध की रचना के समय लिखी गई थी।

ियवा किलो किलो सुजि सुरि पाइला राम येन लंका यांते ।

पुंसवन संस्कार के वर्णन में, किव ने राम से पंबदेवताओं की पूजा कराई है। जब बहुवाहन ने रण होत्र को प्रस्थान किया उसने वासुदेव के चरणों को मौन हो प्रणाम किया :वासुदेव-पदे प्रणामिला मने मन: :१५०: वहुवाहनर युद्ध में बहुआ कृष्ण वासुदेव जेसे शंकित किये गये हैं। राजा का वासुदेव को प्रणाम करना इस बात का प्रवल प्रमाण है कि असम में नव-वैष्णव धर्म के विकास के पूर्व वासुदेव सम्प्रदाय का प्रभाव था। डा० काकति इस वासुदेव सम्प्रदाय की उपासना के संबंध में लिखते हैं जैसा कलिकापुराण में प्रतिपादित है वासुदेव के बीज मंत्र में इवादश करार हैं -- जेक नमो मगवते वासुदेवाये। इनके श्रतिरिवत अन्य सहायक देवता राम, कृष्णा, ब्रह्मा, शंमु और गौति की मी पूजा की जाती थी, अंत के दो देवी- देवता को कभी पृथक कर उपासना न की जाती थी। हर तथा गौति की उपासना कर चित्रांगदा को अनुपम पुत्र लाम हुआ। कालिकापुराण में कन वासुदेव पीठ की स्थिति कामरूप के उत्तरपूर्व में दी गई है। अब भी उत्तर लक्षीमपुर महक्तमें में वासुदेवर थान नामक स्थान है, जो प्रकृति के कोप के कारण नष्ट हो गया है, गर्मी के दिनों में अनेक यात्रियों को आकर्षित करता है। हरिवर विप्र की हन दो रचनाओं में शंकरदेव के पूर्व का वातावरण श्रीकत है जो पूर्वोचर भाग :लक्षीमपुर: का है

⁸⁻J. Kati-Mother Godders Kamakhya- 4000

जिस पर अहोमों का अधिकार पहले हुआ था।

क्बुवाहरर युद्ध : हरिवर विष्न ने <u>ये मिनीयश्वमेध्य से बब्बवाहनर युद्ध की कथा ली है-</u>
इसमें अर्जुन और उनकी पत्नी चित्रकंगदा के पुत्र, मणिपुर के राजा बब्बवाहन से साथ
युद्ध का वर्णन है । रूपांतर-कार यथासंभव मूल ग्रंथ के अध्यक निकट रहा है, कहीं कहीं
उसने लम्बी कहानी को होटी बनाया है, जहां उसकी कल्पनायें सुकोमल हो उठीं हैं वहां
उसने विस्तृत वर्णन को लहु कर दिया है ।

यैमिनी श्वश्वमेधा : मैं ३७-३१-४३: जब अर्जुन ने देला कि उनके पता के सभी बढ़ें योदा ववुवाहन के इवारा मारे गये, उन्होंने वृष्ण केट्स यह आशंका प्रकट की कि वे कदा कि अश्वमेधा में भाग न ले सकेंगे क्यों कि अब उसके पूर्ण होने की आशा नहीं है। हरिवर विप्र के असमिया स्टूपांतर में अर्जुन की दशा अध्यक दयनीय अंकित हुई है, वह अपने पूर्व पौरुष की घटनाएं स्मरण कर दुखी होते हैं। मणिपुर राज्य के विशाल प्रासादों का वर्णन कवि ने अध्यक किया है।

लाकुशर युद्ध : येमिनीयश्वमेध्न के २२,२६ अध्याय से लब-कुश और राम की युद्ध की कहानी ली गई है पच्चीसहवें सर्ग के आरंभ में येमिनी ने अर्जुन और वब्रुवाहन के युद्ध की तुलना राम और उनके पुत्र कुश के युद्ध के साथ की है। सीताहरण, लंका दहन, सीता का अग्नि प्रवेश, राम का अयोध्या गमन, हत्यादि का संचि प्त वर्णन इस काव्य में हुआ है। राम सक हज़ार ह वर्ष तक राज्य करते हैं। इसके पश्चात गर्मवती सीता को बनवास देते हैं।

हरिवर इस काल के प्रमुख कवि थे। उनके अनुवाद और रूपांतर की कृषियों में मूल काव्य का एस है। वक्रो चियों, मुहावरों, उपनाओं और रूपकों के प्रयोग में माध्य कंदलि के बाद उनका स्थान है।

हेम सर स्वती

प्रस्ताद चरित : एक सहस्त्र पदौँ का संग्रह है जिसमें कवि ने अपना परिचय इस प्रकार

कामतामंडल दुर्लमनारायण
नृत्यवर् अनुमम
ताहान राज्यात रुद्र सरस्वती
देवयानी कन्या नाम
ताहान तन्य हैम सरस्वती
दुवर अनुज भाई
पद बंधो तेहो प्रशार करिला
वामन प्रराण चाह ।

हैम सरस्वती तेरहवीं शती के अंत या चौदहवीं शती के प्रारंभ के दुलेमनारायण के समसामियक थे। उपर्युंवत पद के दिवतीय और तृतीय चरण के अर्थ लगाने में कुछ किनाई होती है। इसका अर्थ इस प्रकार किया जा सकता है उनके राज्य में रुद्र सरस्वती रहते थे देवयानी इनकी पुनी थीं उन्हीं के पुत्र हेमसरस्वती अपूव के ओटे माई हैं। यहां रुद्र सरस्वती निश्चित ही दुलेम नारायण के समसामियक या एक पीढ़ी बाद के जात होते हैं। वे हरितर विप्र और किव रत्न सरस्वती से ओटे होंगे, जिनके पिता दुलेमनारायण के राज्य में सिकदार पद पर कार्य करते थे। यह माना जाता है किहेम सरस्वती ब्राइमण है जिसका कोई प्रमाण नहीं मिलता है, मारती, बंदिस आदि विद्वानों की अलंकृत उपाध्य मात्र हैं।

हैम सरस्वती ने प्रहलाद की कथा वामन पुराण से ली है, इसमें उसके पिता हिरण्यकार्रिमपु के मृत्यु के समय का संवाद : : किया गया है जिसका कवि ने
अपने ढंग से वर्णन किया है । यह उतने अच्छे कहानी लेखक नहीं है, और विस्तृत वर्णन
नितांत आकर्णणीय नहीं है । इनकी माणा और शैली न तो उच्च कोटि की है न माणा
ही मंजी हुई है कड़ो स्थिं की अभिव्यंजना प्रमाव हीन जात होती है कवि वैष्णाव लगता
है, वह विष्णु नारायण को प्रणाम कर वैष्णाव प्रहलाद की कथा वामानय संप्रदाय पर
जय प्राप्त करने के लिये कहता है । यह प्रथम कृति असमिया में विष्णाव वादी, है ।

१ - का लिराम मेथि -- प्रवताद चरित १८३५ शक

२ - ऋतिया बुरुंजी -- सूर्य कुमार मुख्या ७ ०९७

३ - का बिराम मेथि - A.G.O. A.L. 23 XCI

हरगौरी संवाद: हेम सरस्वती की अधिक विचार शील कृति ग्वालपाड़ा ज़िले में अभी पाई ख गई है। कि इसमें छ: अध्याय हैं द हह इंदों के लगभग ४००० पंकितयों के हैं। प्रथम अध्याय में नृसिंह के हाथों देत्यराज हिरण्यकश्यिपु की मृत्यु का वर्णन है बाद के अध्यायों में हरगौरी संवाद है। २-५ अध्याय में देत्य ताहक का युद्ध शिव के नेत्रों की ज्याला से कामदेव का मस्म होना और कार्तिक के जन्म की कथा का वर्णन है।

दुर्लभनारायण के मंत्री :महापात्र: पशुपति और उनकी पत्नी रमनावती के बार पृत्रों में धे एक हेम सरस्वती भी थे। इन बारों में घ्रुव और सबसे बढ़े घनंजय अधिक प्रसिद्ध थे। कवि का जन्म नाम हेमन्त था, उसे हेम सरस्वती पदवी भ्रश्न हरगोरी के अनवरत पूजा के फलस्वस्रप प्राप्त हुई थी। जबि दुर्लम की राजधानी कामता में अपने माता पिता के साथ रहते थे।

कवि रत्नं सरस्वती

जपद्रथ वधा : इस रचना में कवि लिखता है :-

राजा दुर्लभनारायण अन्य राजाओं के मिण मुकुट थे और देवताओं के महान उपास्त थे। प्रजा के प्रति उनका व्यवहार पुत्रवत था। उनके पुत्र इन्द्रनारायण सज्जन व्यक्त हैं, वे महान योद्धा, विद्वान और रेश्वयेशाली हैं वे सदेव हिए की पूजा करते हैं, अपि मुजाओं के बल से उन्होंने समस्त मुमंडल को अधीन किया है। प्रत्येक काण सदाशिव उन्हें आशीविद देते हैं मंगों ह केराजा अपने पुत्रों सहित चिरंजीव हों। छोटा चिला के च्छ्रपाणि सिकदार केपुत्र कविरत्न सरस्वती थे। द्रोणपर्व से ज्यद्रथ वधा की कथा ली गई है।

काम स्रप ज़िले के बरपेटा अंकल का छोटा चिला एक गांव है। यह रचना महाभारत का अनुवाद न होकर ह स्रपांतर अधिक है। इनकी माणा और हैली माध्य केंद्रिल और हरिवर विप्र से घटिया है इनके वर्णन विस्तृत और संदिग्ध हैं:कैलाश वर्णन:-

१ - इस पुस्तक का उदार हाल ही मैं घुवरी निवासी श्री अज्यनंद्र कुवर्ती ने किया है।

ব

साहित्यिक पृष्ठभूमि

रुष्ट्र भंद लि

सात्यिक प्रवेश: रुद्र कंदि इस रचना में ीमंत तामध्यज और उनके अनुज, जो राम और लक्ष्मण के समान मातृप्रेमी थे, की प्रशंसा की है। तामध्यज बुद्धिमान पवित्र, और निर्धानों के पोष्णक थे और विष्णु और महामाधा के उपासक थे-- ऐसा वर्णन इस रचना में मिलता है। शंकरदेव के अनेक चिरतों में कामता या काम रूप के राजा दुलेंम नारायण और गोड़ के राजा धर्मनारायण के युद्ध और संध्य का वर्णन मिलता है।

सात्यिक प्रवेश महाभारत के द्रोणाभी जयद्रथ वध्य उपभी का एक ग्रंश है। यह बुल के सिनि के पुत्र सात्यिक का वर्णन है। यह ब्रनुवाद मूल के ब्रिधिक निकट है। यो ब्राबा के युद्ध वर्णन में रुप्त कंदलि ने लंबी कहानी को कभी छोटा बनाया है:सात्यिक बौर बिश्वित: बौर लब्धु को दीर्घ किया है:बोणा बौर घृष्टद्युम्न: कभी कभी वे ब्रिधिक स्वंतक्रता पूर्वक विस्तृत वर्णन करने लगते हैं। पूरा का पूरा वर्णन ब्रत्यन्त रोचक बौर स्वीव है इस रचना की माजा में ब्राचिक उपमार्थों की ब्रिधिकता होने के कारण यह अधिक रोचक बौर ध्राकर्णक बन गई है। बंदित ने मूल उपमार्थों को वैसा का वैसा रखा है,कभी बदला भी है।

समवेत गान -- श्रोजा पासि

समवेत गान के गीति का व्य नव वैष्णाव प्रभाव के पूर्व साहित्य के महत्वपूर्ण शंग थे। काल की दृष्टि से यह शंकरदेव के समय के हैं, किन्तु उनका तात्पर्य श्रीर विष्य वर्णान पूर्व काल का लगता है। गीति का व्य के हन गीतों को गांव के चार पांच व्यक्तियों का समूह बहुआ। गाया करते थे। समवेत गायकों का प्रमुख श्रोजा कहा जाता है श्रीर श्रन्थ सख्योगी गायक पालि कहे जाते हैं, हन पालियों में एक प्रभान होता है जिसे हैना पालि कहते हैं। वस्तुत: वह श्रोजा का दाहिना हाथ होता है श्रीर यह इस दल का दूसरा नेता होता है। श्रोजा का यह कार्य है कि वह समवेत गान के दल का नेतृत्व करे; वह स्तुपद श्रादि को स्थिर कर पालि के लिये दुहराने का संकेत करता है जिसे वे हाथ श्रीर पैर चला कर समय का निर्धारण कर गाते हैं और वह स्वयं काच्य का मुख्य छंद गाता है। वह समय समय पर नृत्य की मुद्रा अपने हाथों से दिशा नाचता है वह एक कथावाचक की भांति दर्शनों के सम्मुख आता है और अनेक घटनाओं को स्पष्ट करता है, जैसा जहां आवश्यक समकता है। कभी कभी यह हैना पालि कैसाथ होताहै जिसके साथ ओजा वार्रालाप करता है। ओजा पालि का सीधा प्रभाव वैष्णाव नाटकों पर पड़ा। जब देश में नाटक न थे, औजा पालि का अभिनय सर्वसाधारण को मनोरंजन और आमोद देशा था किन्तु शंकरदेव ने जब नवीन अंक या नाटक का आविष्कार किया तब संगीत का महत्त्व अधिक बढ़ गया सिपीं की देवी मनसा पूजन के लिये यह गान विशेष महत्त्व का था किन्तु नव वैष्णावों ने भी गायन-वादन का व्यवहार किया। शंकरदेव के कीर्तन घोषा और रामायण-महाभारत के पद भी इस प्रकार गाये जाने ले।

काव्य के प्रमुख रूप -- सामान्य पाथार के मध्य गीत इस विवेचन काल की प्रमुख विशेषाता है। मनकर बुगाँवर पीतांबर बादि सबने इस ढांचे की रचना की है, किन्तु विष्णाव किया ने ऐसा नहीं किया है। इस मय के बनेक दशक पश्चात नारायण देव ने पड्मपुराण की रचना गीति काव्य में की, किन्तु यह उनके विष्णय वस्तु का बावाहान था, बाद की दूसरी रचना गंगादास का 'अश्वमेध्य पर्व है, सुबुध्धीर्य और भवानीदास ने इसका अनुकरण किया है किन्तु इन तीन व कियाँ का विष्णाव रेली : से परिचय न था। किन्तु कुछ कारणाँ से यह कला नव वेष्णावों द्वारा हैय समभी गई । इस प्रकार की कविता पांचाली या पाचाली पाठ में स्थान स्थान पर कही गई है।

^{? -} Jul ward parchice en pread deriver it illy from est

यह उत्लेखनीय है कि मनना और चांद सौद की कथा कियी संस्कृत स्रोत से नहीं ती गई है, दुर्गावर की राम कथा का जाधार माध्यव कंदाल की पूर्व रचना है पीतांवर के काध्य की कथा सीघो हरिवंश और पुराणों से ती गई है। पीतांवर की रचनाएं अनुवाद और रूपांतर वर्ग में रखी जा सकती थीं किन्तु उनकी गीतात्मकता और लोक प्रियता के कारण इन्हें दूसरे वर्ग के साथ रखा जा सकता है। इन गीति काव्यों का केन्द्र सुक्क और युवदियों के प्रेम और विवाह हैं।

पीतांगर कवि **२**००००००००

पीतांबर काम द्वर के थे और नामना नगर में रखते थे, जना जित वे शंकरदेव के समतामिशिक थे या कुछ बढ़े थे, कुछ रचनाएं उन्होंने कूचिवचार के जमर सिंह के अनुरोध : पर की । शंकरदेव ने भन शहोम राज्य १५४६ ०० में त्याग कर काम हम्म आये और बरपेजा में ठहरें। उन्होंने अपने नवीन शिष्य नारायण ठाकुर से पूरा कि वे इस अंबस के कुछ प्रमाधपूर्ण व्यक्तियों को बतार जो गण्डेस्क :

: का काम कर सर्वे । नारायणा ने तीन व्यितियों का ताम लिया, जिनमें पीताम्बर का भी नाम था, जिन्होंने पहले ही मागवत पुराणा दश्म का स्त्पांतर पदों में किया था, शंकरदेव ने पीताम्बर कवि की कविता रचना को देतना जाहा । नारायण ने पीताम्बर कवि की रचना का स्क श्रंश पढ़ा, जिसमें, कुंडिस्नगर की राजकुमारी रुक्मिणी कृष्ण के दश्न के लिये व्याकुल थी, का वर्णम था ।

> विलाय करि कार्षे माइ रुकिमणी कोन अंगे लून देखि नैला यदुमनि ।

१ - महेश्वर नैत्रोग -- शी शी शंकरदेव दि्वतीय संस्करण पृ० १२३

शंकरदेव ने कवि को शावत और कामुकता प्रेमी समका और उसे धर्म उपदेशक के अयोग्य कहा क्यों कि वह गर्व पर्वत पर बैठा है।

उणा परिणय: यह काव्य कामता नगर में १४५५ शक वैसास मास के पांचवें दिन या १५३३ ई० में पूर्ण हुआ। यह पीतांबर की प्रथम उपलब्ध रचना है। इसमें मुवराब समरसिंह: शुक्तब्द्वज: का नाम कहीं भी नहीं मिलता है। १४५५ शक में नरनारायण सिंहासना छढ़ हुए और उन्होंने माई शुक्तब्द्वज को युवराज और प्रधान सेनापति नियुक्त जिल्लायणि पीतांबर उस समय राजधानी में रहते थे, पर उस समय तक उन्हें राजधात्रय प्राप्त न हुआ था।

वाणासुर और यादवों का युद्ध, कृष्ण और हर के मध्य युद्ध, उषा और अनिरुद्ध का प्रेम व्यापार और विवाह शादि का वर्णन यत्यन्त विस्तार से किया है हरिवंश :विष्णुपर्व -- ११६-१२८: से पीताम्बर ने कथा ती है और अधिकतर वे मूल के निकट रहे हैं। वह कहते हैं:-

व्यासर मुलर क्या यनिको अवसे श्रारासक रचिनो ताहार श्रासे पासे

उना के सौंदर्य वर्णन में किन अधिक स्वतंत्र रहा है। वसंतक्ष्तु के प्रभाव से उना का मन प्रेम के विचारों में निमग्न हूना था, अणि रुद्ध का स्वप्न में कामसेना यिताणी से क्योपनीय आनन्द प्राप्त करना, उन्ना का कामुक स्वप्न और युवा होना आदि आकर्षक वर्णन हैं। हरिवंश में बाण हरमस्त घटनाओं का केन्द्र हैं किन्तु इस काक्ष्य में वही केन्द्र है। काव्य का प्रथम भाग अधिक कामुकता पूर्ण और गीतिमय है। प्रेम और विवाह मूल तत्व हैं। इसमें अलीकिकता पूर्ण कुछ वर्णन हैं जो अधिक लोकप्रिय हैं। हर और गौरी की पूजा के समय तत्कालीन समाज की फालक देखने को मिलती है और विवाहों का भी सूक्ष्म विवरण मिलता है।

१ - गर्ब्य पर्व्यंत सितो उठिया शास्य । क्या गुरुचरित -- सं० उ० चं० तेता रू, पृष्ठ ध्य

भागवत पुराण : इस रचना में इसका रचना काल नहीं मिलता है। पीलाम्बर बहते हैं :---

गामता नगर बद्भुत नगर है, जशां राजा विश्व शिंह रखते हैं, उनके पुत्र का नाम सप्त सम् रसिंह है जो कृष्ण की अलोकिक कृष्ड़ा से मानंदित होते हैं, वे कृष्ण के युगल कमलवत सप्र चरणों के भवत हैं। पीताम्बर ने बाल बुद्धि द्वारा उनके निकट रह कृष्ण संबंधी हन पत्रों की रचना की।

बन्य स्थलों पर समरसिंह को युवराज कहा गया है जितका रांबंध शुवलध्यल अथवा विवाराम से अध्यक है दरं राजवंशावली में यह उत्सेंस उपलब्ध है, मत्सदेव या नरनारायण के राज्या मिष्टोंक के अवसर पर शुक्लध्यल युवा नृपति घोष्टित किये गये थे और उन्हें संग्रामसिंह की उपाधि एण शुश्ला के कारण दी गई। गुरु चरित में उन्हें प्रत्येक स्थल पर छोकटा राजा कहा गया है। भीतांबर ने संग्रामसिंह को समरसिंह के रूप में बंकित किया है। शुक्लध्यल कृष्ण मनत थे, शंकरदेव के जागमन पर वे वेष्णाव सम्प्रदाय में सम्मिलत हो गये थे भागवत पुराण दशम का खना काल हाठ महेश्वर नेओंग १५४६ ईठ के बाद मानते हैं। यह गोलहवीं शती के प्रथम अर्देक की रचना है।

मागवत पुराण की कथा का अत्यन्त मनीरंक रूप में पीताम्बर ने कहा है।

गार्कीय पुराण : वंडी आख्यान: शुक्तव्यव या समरतिंह के अनुरोध पर पीतांबर

ने इसकी भी रचना की । इस समय संरत्नक राजकुमार मदानी के परम मतत इत्य में

निरु पित हुआ है, कि व स्वयं ग्रंथ के प्रारंभिक पदों में मदानी की रत्नित कोटि कोटि

प्रणाम कर करता है पीतांबर इस काल के अत्यन्त उत्सेक्षनीय कवियों में से हैं। शंकरवेव

के पूर्व के लेक्कों में माध्य कंदित के बाद उन्हीं का स्थान है, वे उच्च कोटि के विद्वान

कवि और संगीतल हैं।

१-रेन्ट्नमारी परितास नाजा-४.

^{3.} A.E.A.L. Boys.

हुगविर कायस्य

गीति गायण : गीति रामायण का वर्तमान उपलब्ध रूप त्रपूर्ण लगा है।
इसमें जो के परिचय के लंध में कुछ भी प्राप्त नहीं है। उनकी दूसरी स्वना पद्म या
मनसा पुरण में कुछ विवरण मिलते हैं। इसमें वे कामजा नरेश विश्वसिंह की अद्धांजित
वर्षित को हैं। राजा की मृत्यु १५४० ईं० में हुई, किन ने अपनी रचना इस समय तक
व्यास्य समप्त कर ती होगी, -- गीति राभायण उनकी प्रारंभिक रचना वही जा सकती क है क्यों किसमें विशी आज्यवाजा का नाम नहीं आजा। दुर्गावर अपने को जी कायस्थ
चंद्रपर क मृत्र कहते हैं।

दुगार नाम माटों और धूमने वाले वरणों केलिये मी प्रमुक्त होता था 'किंब गाहते बाह राजार माट दुर्गावर ! गीति राभायण में दुर्गावर किसी विशिष्ट धर्म की ए नहीं फुके थे, यथिप राम को उन्होंने अनेक बार प्रणाम किया है । राम के लिये किंव सारंग, गांडीव , मुरासी, क्रमाणि, देत्यारि देवराज अलंगारिक नाम किं लिये हैं । वेटक ग्रामीण किव जान पहना है और उसका शास्त्रीय ज्ञान नहीं के बराबर है संग: इसने रानायण संस्कृत में न देशी और माध्य कंदिल के संस्करण अथवा अपनी मनाओं के उत्तर निर्मेर रहा । सम्प्रति गीति राभायण का जो द्वाप प्राप्त है उसने दिशे और अधीच्या कांड नहीं है, लंग और उत्तर कांड अत्यन्त संदित प्राप्त हैं । यह अधिसंम्ब है कि प्रथम दो कांड अला व्ययों बाद सोगये या नष्ट हो गर अथवा यह कमिले की न गये । अर्ण्यकांड के आरंम में अयोध्याकांड का उत्तर है ।

गीति श्यण गीतात्मक सौंदर्ध की दृष्टि से माध्य बंदित के रामायण का लोक प्रिय संस्करहें जिसका प्रयोग श्रोजा और भोजापालि ने समवेत गान में श्रध्यक किया है। क्या प्रवाह सर्वेदा सरल नहीं कभी कभी कथा विशृंख लित हो गई है। अनेक प्यार कंदा समान हैं। दुर्गावर ने कभी कंदिस की कुछ पंकितयां जोड़ ली है शौर

१ - गीपीचंदर १ क०वि० माग १,१६२२ पृ० ५७

२ - क्योच्या कांक्या मेला समापति त्राच्य कांडरः सुनियो सम्प्रति ।

कभी घटा ती हैं। जंदति के गुल् पर्दों को दुर्गावर ने विभिन्न रागों में मोड़ा है मात्रा और गान की सुविध्या के लिये हैं है या ह : जोड़ दिशा है। नदीन लय बनाने के लिये कुल् मात्राओं और शब्दों में परिवर्तन भी किया है।

करुण रस से शोतप्रोत गीतों की रचना में दुर्गावर श्रद्भवतीय हैं। श्रहीर राग कवि की मध्युर तथा मंजुल प्रिय राग जान पढ़ती है। काच्य के अत्यन्त सुन्दर गीत सीता, राम तथा तारा के विलाप के हैं। मनुष्य या पशु: स्वर्ण मृग: का सौंदर्य वर्णन कवि ने कुछ पंक्तियों ही मैं किया है। श्रयोध्या जैसे अनुपम नगर तथा मदन च्युदिशी उत्सव का वर्णन कुछ पंक्तियों में हुआ है।

मनला पूजा के गीत

कसन के काम रूप, ग्वालपाड़ा ज़िले और मंगल देर सव स्विंगिन में मनसा, विष्वहरी पड़ागि कि क्या गारह की पूजा होती है -- ब्राइमण से लेकर वांडाल शुद्र वर्ग के व्यक्ति इस देवी की पूजा करते हैं। मनसा की पूजा में मुसल्मान मी समनेत गान बोजा पालि में माग ते सकते हैं और तेते हैं। यह स्पष्ट नहीं कि कब और कहां से मनसा सम्प्रदाय का उद्ग्य हुआ किन्तु नाग पूजा के चिन्ह असम की अनेक वन्य जातियों में पाये गए हैं -- लासी, मैते, भिश्मी और रामा। मनसा और शैव व्यवसायी चन्द्रभर की क्या बाद में मनसा सम्प्रदाय में परिवर्तित की गई, रेसा त्याता है कि यह बनार्य देवी को हिन्दू रूप देने के लिये किया गया। वष्मा ऋतु के आष्ठा हू, आवण, माद्रमद और अश्वित्त मास में इस देवी की पूजा की जाती है। कवि मनकर ने कहा है कि इनकी पूजा आवण में बार दिन तक करनी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा है कि देवी की प्रतिमा को मंब पर रह रात दिन वष्मा ऋतु में पूजा करनी चाहिए। मृतिका की प्रतिमा में सर्प के आसन पर वह विराजमान होती हैं, सर्प उनके अलंकार हैं। सिजु : पल्टव: और सहस्यवत कमल को कलश में रख उसकी पूजा की जा सकती है। देवी के गीतों का गान, के देखानी और देखमा का मृत्य इस उत्सव के आकर्णक अंग हैं, जो प्राय: बार दिन या इससे अधिक समय तक बलता है। असमिया में रेसे अनेक मंत्र हैं जिनके उच्चारण मात्र से

^{8 -} A. E. A.L.

सर्प विष्ण का शमन हो सकता है। मनकर दुर्गावर और नारायण देव तीन प्रमुख कि हैं जिनके गीत भनता पूजा के अवसर पर गाये वाते हैं उनके पद मनकरि दुर्गावरी और सुक्रवाल्यी : कुक्विनारायण: े नाम से जाने जाते हैं। नारायण देव वाद के और संमवत: राजा जाति नारायण या अमेनारायण दरंगि राजा के दरजारी काव थे, इनका समय संबद्धीं शहर माना जाता है।

मान : मनवर असमिया के कदा चित भनसा कवि हैं। अपने पदों में कवि ने राजा की वंदना की है। जल्पेरवर और कामता नरेश और जल्पेरवर नगर के धान और वैभव की तुला अमरायती से की है। इनकी शब्दावती में फार्सी के शब्दों की संस्था कम है बाजार शब्द ही मात्र मिलता है। राजा जल्पेश्वर कामरूप के नरेश थे और उनकी राजधानी जल्पेश्वर की वर्तभान जलगाई गुड़ी थी। वह स्वयं शैव थे, उन्होंने जल्पेश्वर नामक शिव मंदिर का निमाण विधा।

मनकर सोलहवीं शती के पश्चिमी असम :कामता: के कांव थे। इनकी माणा
ग्वालपाड़ा और काम रूप की है। कवि ने जिस प्रकार की वैवाहिक रातियों का वर्णन
किया है वह उसी माग की हैं। कोच लोगों का संदर्भ अधिक आता है और गोमाना
वाथ मंत्र का उल्लेख मिलता है जिसका व्यवहार वोहों लोग अधिक करते हैं। कवि
मनता का उपासक जान पहना है किन्तु वह नारायण को भी प्रणाम करता है, लौकिट्र
को भी अभिवादन करता है। बुद्ध का भी उल्लेख प्राप्त है। मनकर ग्रामीण कवि और
चारण था, मनसा के गीत हाथ में करताल किए गाता था। उसकी माणा सरल और
सीजी थी, उसमें कल्पना और संगीत का अविरल प्रवाह है। हर गौरी के गंधाव विवाह
का वर्णन अल्यन्त श्रृंगारिक है।

दुर्गावर: दुर्गावर मनकर की अपेजा अधिक सुसंस्कृति और उच्च कवि हैं। उनके गीत कामाख्या में मनसा पूजा के समय औजा पालि गाते हैं। सभी गीत मारतीय राग में लिखे गये हैं और इनका नाम गीत के ब रूपर दिया गया है। मानव रूप, कार्य व्यापार और प्राकृतिक दृश्यों के वर्णन में किव सिद्धहस्त हैं इनमें यूथार्थ भालकता है। बेउला तथा सबीन्दर की कहानी प्रशास प्रधान विषय वस्तु है।

१-विशिष्य उत्तर अंग्रे रामे - नन्त्र आर रुगात्

ग

घार्मिक पृष्टभूमि

भार्मिक पृष्ठभूमि: का तिका पुराण और योगिनी तंत्र में प्राचीन काम के तीर्थ भी भी गी तिक स्थित के विषय में विस्तृत वर्णन मिलता है। किता पुराण की रवना योगिनी तंत्र से पर्ट ती पूर्व हुई हुई थीं इसमें नव-प्रवासित देवी पूजा प्रवास का विरोध विवरण प्राप्त है। कितापुराण के अनुसार जल वराष्ट विष्ठणु और पृथ्विदेवी ने जब अपने पुत्र नरह को राजप्त देने के लिए प्राग्ज्योतिष्ठापुर लाई उसके परते इस में सिवपूर्ण का प्राच्चान्य था। इस देश के अधियाधीगण किराव जाति के थे और वे के मतावलंबी प्रतीत होते थे। कहा, जाता से कि विष्ठणु ने शिव की अनुसार से कि कामक्ष्य के मध्य के अंग्ल से सुटाकर पूर्व में लिलता और कांता को सीमा निर्वासित हर सागर के तट पर बसाया। राजा नरक केन-धर्म का पृष्ठियोष्ठक था उसके तत्त्वावधान में देवी पूजा प्रवित्त हुई और कामाख्या के अतिरिक्त अन्य देवता की पूजा निष्ठाद थीं। राजकीय पृष्ठियोष्ठकता न पाने पर भी मीतर भीतर नरक के राज्य में किन पूजा चल रही थी। किन मेरे आराधनीय नहीं है मेरे राज्य में किन मीतर गुप्त मान से हैं। नरक के राजस्य काल में विशिष्ठ ने संध्याचल पर खिन की आराधना की थी।

किला पुराण में उत्लिखित तीओं में शिव के दोत्रों की संस्था सबसे अधिक है।
पश्चिम में करतीया नदी के पार के महाबुधा सिंग से आरंग कर पूर्व में बूढ़ा गंगा नदी के
पार के विश्वनाथ दोत्र तक शिव के दोत्रों की संस्था पन्द्रह हैं। इसके विपरीत विष्णु
दोत्र की संस्था चार और देवी दोत्र की संस्था पांच मात्र हैं। योगिनी तंत्र के अनुसार
काम रूप में शिव की संस्था एक करोड़ से अधिक है।

१ - का ० भा भा भा -- पु० १४

२ - स्वनुकता स्वयं विष्णु शंभीरणुमते: **त**वा सर्वान किरातान पूर्वस्थात यागरन्ते न्यवेश्यात:

कार दे - अहारताह

३ - कामाल्या त्वं विना पुत्र नान्यदेवं यजिष्यामि । का० पु० १३६।५३।५४

४ - नेवाराष्यस्तथा शंमुरन्तर्गुप्तः स मे पुरे ।। ४४।६५।६

५ - सार्द्वको टितस्था लिगं त्रिशतं च कलौयुगे । मूम्यन्तस्थं लतां च सार्वं लतां जलेप्रिये ।।

कामरुप शासनावती में ई० ७ म शती से लेकर १२ वीं शती तक के १० राजाओं का वृधांत है। धर्मपाल ने वराह क्रिपी नारायण को नमरकार किया है शेषा राजाओं ने शिव की विभिन्न मूर्तियों को प्रणाम किया। इन्द्रपाल:११००: ने अनेक शिव मंदिर का निर्माण कराया। शासनावती के निर्देशित काल के पश्चात भी शिव पूजा प्रचलन का प्रमाण गुरुचरित आदि में पाया जाता है। गोपेश्वर शिव की आराधना कर कुसन्बर मुख्यां ने पुत्र लाम किया, इसलिये पुत्र का नाम शंकरदेव हुआ। माध्यवदेख के बढ़े मा है रूपवन्द्र गिरि ने शिव चतुर्देशी तिथि को शिव पूजा करने के लिये माध्यवदेव को आदेश दिया था। दिनाण पार सकते संस्थापक बनमाली देन के चरित में है कि एक समय बनमाली देव को हलेश्वर नाम की शिवमूर्ति के सम्मुख होना पढ़ा। बनभाली देव ने एक शरण धर्म की मयदि। रख शिवमूर्ति को हरि सम्भक्त कर नमी नमी लक्ष्मीपात मगवंत कर सेवा की

कामाख्या देवी को स्वयं मगवती का रूप माना गया है किन्तु भगवती ने किस , प्रमार कामाख्या रूप भारण किया इस विषय में मिन्न भिन्न शास्त्रों में कुक पृथक वार्त निस्ती हैं। कामाख्या देवी ब्रह्म रूपा सनावनी और परम विधा सेशियन हैं। जामाख्या के यो निपीठ और स्रो निमंडल जिला विला स्थान पर हैं, इसका पर्माण पांच कोस जा है। जनमें से नील नामक पर्नत पर मनोभाव गुहा के भीतार यो निमंडल हैं। ब्रह्मशिल, नीलरेख, मणि पर्वत और मरगाचल इनमें से प्रसिद्ध हैं।

किता पुराण में कामात्था की निरुक्ति है। गई है किन्तु यो गिनी तंत्र के उपाल्यान के ताथ उतका संबंध नहीं है कितका पुराण के अनुसार देनी कित के साथ पुष्ठ गुप्त अंभोग भिने वाई थी, एस कारण उनका नाम कामात्था हुआ। काभात्था शब्द का अर्थ हुआ- कामा। कामात्था देवी के दो वित्व रूप की कत्यना कितका पुराण में की

१ - हरि नुद्धि करि तांक करिलंत सेन । नमो नमो लक्ष्मी पति भगवन्त देव ।।

२ - या काकी पत्माविधा ब्रह्मरूपा स्नाविधा। कामारमा सेव देवेशि सर्वसिद्धि विनोदिनी।। यो० तं०

३ - बार पेर हराइटाव्स

गर्ध है-- संहार मूर्ति और संभोग मूर्ति । संहार मूर्ति में देवी ने हाथ में संग्रथ वल फ्रेंब :शव: के उत्तपर अवस्थित हैं और संभोग मूर्ति में हाथ में पुष्प की माला ले लोहित कमल के उत्तपर श्रासन ग्रहण किया है ।

किता पुराण में शबरोत्सव नामक एक उत्सव का उत्लेख है। शार्दीय पूजा के दसवें दिन शबरोत्सव द्वारा देवी का विसर्जन करना ना किए। कुमारी नारी, वैश्या और नतेकी शादि को सुन्दर वस्तों से सुसज्जित कर इनके साथ घूल, की चड़, वावल और पुष्प से खेलना ना हिए और स्त्री पुरुष के गुप्तांग का नाम उत्लेख कर, इनके प्रक्रियापूर्ण गीत सहित विनोद करना ना हिए। यदि कोई इस खेल में योगदान न करे, तो उसके उत्तप्त मगवती कृपित हाँगी और शाप देंगी।

विष्णु ने न्र्स के शिमकोक समय ावधान कर दिया या कि कामारता के शिति कि अन्य देवता का मजन न कर्ता, कर्ने से उसका प्राण नाश होना । देवी पूजा के कुमविकास के समय में इसका संबंध विष्णु के साथ था, शिव के साथ नहीं । वैष्णाव जन काली व कामारथा का पूजा को शैवों के विश्व उन लोगों की पृष्ठपोणका में प्रवर्तित एक नये अभे के समान बलाया । शैवों ने एस अभे की भविष्य लोग प्रियता और इससे प्रतिद्वंदिता की आशंका कर जड़ से पृष्ठपोणकों के विश्व तक शौर भेद नीति का अवलंबन लिया ।

शिव मोत्रों की अधिक संख्या और लाग्रह्मप शासनावती के साध्य इनारा प्रस्ट है कि प्राचीन कामह्मप में शिव मवित की प्रीयानशा थी िन्तु देकी पूना के संबंध में अत्यन्त उदार पत प्रवित्त था। प्रत्येक देश के पीठ में स्थानीय शिति से मूना करने कि की विधि निकारित की गई है किन्तु कामास्था में व्यक्ति निव देश के विधि नुसार पूजा कर सकता है। नरक के बास्थान में गाया जाता है, शैव धर्म बादिम ित्त जनों का धर्म था। नरक के राजस्य कात के पूर्व भी यह गुप्त भाव से वत रहा था। यह ख्यान किया वा सकता है कि शिव पूजा, विशेष्णत: शैवाना श्वार्य प्रभावलंकियों के

१ - बार पुर देशदेनावर

२ - बार पुर देश १६ ह

पता में निंदनीय था । परशुराम के भय से अपने को िपा कर अनेक बार ता कियाँ ने म्लेक्टों का वेश जारण कर जल्योश शिव का आव्य लिया और निज आर्यमाणा को गोपन कर म्लेक्ट माणा में बात की । इससे यह प्रकृट होता है कि शिव की पूजा गुप्त रूप से बल्दी थी और यह म्लेक्टों तक सी मित थी ।

-- किला पुराण का प्रधान तत्य शिव की प्रधानता नष्ट कर देवी की **प्रशस्त्रह** माहात्म्य वृद्धि हैं।

योगिन तंत्र में कामरूप के तमस्त तीशों को ह तेणा में विकात िया गया है, प्रत्येक तेणी को योनि कहा गया है तेरे उपनी थि, विशिष्ठ, पीठ, पिउपीठ, पहापीठ, क्रमपीठ, विष्णु पीठ राष्ट्र पीठ। इसी प्रकार तमस्त कामरूप को विभिन्न पीठ में विकात किया गया— कामरूप, भौमार, नायवृत्त, सौमार निर्पाठ, कौलाठि, भोहार, रत्न-पीठ, मणिपीठ उत्यादि। कामरूप में जितने मनुष्य हैं वे सल बुद्धा उनदूप थीर यहां पर जितना पानी है वह तीर्थ के लनान है, कामरूप स्थयं देवी पीत्र, इसके तुत्य कोर्थ स्थान हो नहीं सकता है। कामरूप या अभी कैरातक- कामरूप में सन्यास विभिन्न और किसी दीवें अत का उत्सेव नहीं है। यहां पर इसे, क्यूतर शुकर आदि साथा जा रहता है, को र जुने पर जुनित सोती है। वंठ मूणण नामक सक ब्राष्ट्रमण का पुत्र काशी वेदांत पढ़ने कता वहां साथीं ने उसे कामरूपी महिता साथा कर घुणा की पुत्र काशी वेदांत पढ़ने कता वहां साथीं ने उसे कामरूपी महिता साने वाजा कर घुणा की ।

योगिनी तंत्र के ग्रंपकार ने कामरूप में प्रचलित सगस्त श्राचाः विभिन्नी की और श्रव शास्त्रीय मतागत का यणीन विथा है । इसी प्रकार दिख्य योग्न का योग जादि रक्ष्यम्य

१ - जामदग्रता भगाव्यीता साविया पूर्व मैत ये ।
म्रेन्ध् इयन्धुमादाय जल्मीशं शरणं गता: ।।
ते म्रेन्ध् धान: सत्तमाय्यं वानश्य सर्वेदा ।
जल्मीशं रोक्गागास्ते गोपयान्त व तं इरम ।।
: 10 । १५ १ ।

२ - ना० पुर शहर । २३,१ १११ । २४

३ - प्रा बार घरमार - पु-१५-१६

४ - बनेन पद्भा से हि थानत थानप गंट्यू पणिक तारा सबै नो छोवन ।। नाम रूपी विष्ठ ४ न्ते मत्स्यक गुंजय। एडि नुवि छूटस स्नान तेसने करम ।।

प्रक्रियाओं की भी व्यवस्था है मुंह साधन की प्रक्रिया में-- मनुष्य का मुंह, बिल्ली का का मुंह, मेंसे का मुंह, यह ३ मुंह बा तीन मनुष्य का मुंह लगाने पर त्रिमुंही होता है । इसी प्रकार शगुन का सिर, सांप का मुंह, कुंदे का मुंह, गाय का सिर और मनुष्य का मुंह नहीं तो पांच मनुष्य का मुंह एक साथ लगाने से पंचमुंही होता है । इन मुंहों को मिट्टी में खोद कर गाड़ना चाहिए, उसके ऊपर निर्दिष्ट परिमाण में बेदी सजाना चाहिए। विधि के अनुसार मूतनाथ की पूजा कर बिल देनी चाहिए।

तांत्रिक णटकम् के श्रंतर्गत शांति, वशीकरण, स्तंमन विद्वेसा, मारण श्रीर उच्चाटन की प्रक्रिया है। मारण कम्र शव पर करना चाहिए। :४।३ :यो०तं०:

योगिनी तंत्र में विष्णु को जनादन कह निर्देश किया गया है केवल तीन जनादन दोत्र का उत्लेख है -- अश्वकृतं पर किल्क रूपी जनादन :२।३।३०: नंदन पर्वत के पश्चिम बौद्ध जनादन :२३५३२:

युद्ध निग्रह शादि की यात्रा सम्य असम में राजा काली व शिव की पूजा करते थे। उसका स्क उदाहरण दिया जाताहै ह

श्राहोम राजा प्रतापसिंह के राजत्व काल मैं, वंगाल श्रीर श्रहोम युद्ध के समय, राजा ने व देवी की पूजा की लुहत को, श्राठ मेंसा , हंस, कबूतर श्रीर बकरी श्रादि श्रन्थ उपहार की वस्तु दे राजा ने प्रार्थना कर कहा -- े ब्रह्मपुत्र मेरे सम्बन्धी सुप्रसन्न हो श्रपने स्रोत को तल मैं फेंक दो । राजा की प्रार्थना पर ब्रह्मपुत्र ने हाजों की स्रोत को नीचे फेंका, श्रीर बंगाल की नावें जहां की, वे सब लग गई।

नरनारायण कोचिवहार के राजा ने अहोमों के विरुद्ध युद्ध यात्रा के समय शिव के आदेशानुसार कहारी रिति के अनुसार शिव की पूजा की । सोन को षा नदी के तट पर थाना गाड़ कर कहारियों को लाकर नचाया और इंस कबूतर, मतू, भात, महिष्ण, शूकर मुर्गा करा आदि का उपहार दिया, भादत बजा नृतकों ने नृत्य किया ।

१ - ना॰ घ० घा० - पृ०१६

२ - देखभाइ बुरंजी -- पृष्ठ ७०

३ - सौन को का नदि ति ति थाना गारि ।
पातिला नाचन मत शानिया कहारी ।।
संग्रमदभात महिषा शुक्र ।
कुकुरा ,कागल/उपहार, निरंतर ।।
पातिला नाचन तथा मादल बजाह ।
सवारो माजत तुलिलंत देउथाह ।। द०रा०व० पृष्ठ ६३।६४

गोडांइ कमला की बालि को मध्य सीमा कर उत्तर में जितने देव देवी के मंदिर हैं,इनमें कोच मेच पूजा करेंगे और दिताण की बोर देवालयों में १ ब्राइमण पूजा करेंगे।

रक श्रोर शव साधन, मुंड साधन श्रादि की भयावह प्रक्रिया श्रोर दूसरी श्रोर कुलाचारी मंत्रवारी गणों का मद मांस श्रोर स्त्री श्रादि के साथ मजन होता था। कुलाचारी मद, मळ्ली, मांस, भूचर ं, नमचर श्रोर जलवर सब को खाते थे श्रोर निज की माता के श्रीतिकत श्रन्थ समस्त स्त्रियों के साथ संगम करते थे।

कामरुप में एक कुमारी की पूजा करने से देवता की पूजा सिद्ध होती है, कुमारी पूजा में जाति मेद नहीं है, किसी भी जाति की कुमारी की पूजा की जा सकती है। जाति मेद करने पर नरक प्राप्त होता है। सदि कुमारी पूजा करने वाला कोई कामी होता है तो वह वेकुंटगामी होता है।

कुमारी पूजा में जिस कुमारी का उल्लेख है वह केवल इस अर्थ में कुमारी है। कुमारी का अर्थ अविवाहिता, अदातयों नि नहीं। कुमारी किसी के अधीन नहीं होती।

: 841 0818:

१ - महामयं विना कौत: ताणातुर्धं न तिष्ठति ।
तस्मान्मधादिव्यं देवी सेवितव्यं दिने दिने ।।
मत्स्यं मांसं तस्य देवी जल मूचर तेचरम ।
पूर्वोचा च मवेन्मुद्रा सेविता सादशन्तिता ।।
मातृ यो नि परित्यज्य मेथुनं सर्वयो निष्णु ।
दातयो निस्ता द्वितव्या अदातां नेव ताद्येतृ ।। १।६।१७।४३,४४

२ - एका हि पूजिता बाला सर्व हि पूजितं मनेतृ । जाति मेदो न कर्तव्य: कुमारी पूजने शिवे ।। जाति मेदान महेशानि नख्यान्न निवर्धते ।। १।१७।३१।३५

३ - यदि कामी मजेत को हिप वैकुंठं पर्मं ब्रजेत । मल्लोकं वा महेशानि गच्छेनम मणिमंदिर्म ।।

किला पुराण और योगिनी तेल होनों ग्रंथों में अशेष देव-देवी के पूजा का क्रम है। किन्तु दोनों ग्रंथों की समाप्ति विष्णु के शेष्ठत्व कीर्तन से हुई है। दोनों ही ग्रंथकार ऐसा लगता है कि वैष्णव मतावलंकी थे, तथापि ग्रंथकार की दृष्टि से नाना अनेदिक प्रक्रियाओं का वर्णन किया गया है। किल्हा पुराण रचयिता ने वशिष्ठ के मुख से कहलवाया है कि कामरूप में म्लेव्हाचार चलेगा और देवी भी बाम पूजा मोग करेंगी और स्वयं विष्णु भी इस स्थान पर पुन: न आयेंगे अथाति बामाचार प्रतिपादक आगम शास्त्रादि विरते होंगे।

स्वयं महापुरुष शंकरदेव के मत से कलिका पुराण विष्णु माहात्म्य प्रतिपादक गृंध है। गुरुचरित में है जब महापुरुष दूसरी बार कौच बिहार जाने के लिये निकले नारायण ठाकुर के तत्चावधान में द उनकी मूत्यवान वस्तुओं से नाव लादी गई। नाव में समस्तु वस्तु लाद दी गई किन्तु स्क कोटी से पोथी मात्र ही नाव पर है। ठाकुर ने महापुरुष से निवेदन किया कि नाव पर पोथी नहीं है, ब्राइमणों से विवाद करनेपर ज्या होगा १ महापुरुष ने कहा यह कोटी सी पोथी ही सब बाद को संहन कर सकती है, तपापि यदि पुस्तक चाहिए तो अनेक पुस्तक राजा के घर में है, कृष्ण देव की अष्टता दिला दूंगा।

: द्विब रामानंद - गुरुचरित:

१ - स्वयं विष्णुनिचायाति यावत् स्थानिमदं पुन: । विर्लाश्चागमा सव प एतत् प्रतिपादका ।। : प्य-२३:

२ - समस्ते पुस्तक आहे रजार घरत ।

कृष्णदेव शेष्ठ देताइको समस्तत ।।

श्वानिया ठालुरे बुलिलंत शंकरक ।

प्रतिपतो यदि सिक्को देतावे शास्यक ।।

कालिकापुराणे यदि आनि देतावय ।

तेके ना कि देने नाप कित्यो निर्णय ।।

शंकरे बोलंत शुना मोर अभिप्राय ।

कालिकापुराणे देताइकोडो तिनि ठाइ ।।

श्वानो शास्य समस्तत हरिकेसे क्य ।

समस्ते शास्यर जाना रुद्दिसे निर्णय ।।

किता पुराण में विष्णु माधातम्य सूचक बहुत बचन हैं।

योगिनी तंत्र का ग्रंथकार एवयं वैष्णव मतावलंकी जैसा लगता है। स्थान स्थान पर उन्होंने विष्णु को सर्वे रेड देवता घोषित किया है। संभवत: विष्णु मतावलंकी होने के कारण ही ग्रंथ कार ने अश्वकृतं तिथी :२।४।३५: और अपूर्णभव :हाजो: के स्थगीव दोत्र का :२।६।२२: अति सुदीर्घ वर्णन और माहात्म्थ प्रकाशित किया है।

माण कूट मैं स्थग्रीव माधव की स्थापना केविषय में कहा जाता है कि उड़ीसा
मैं इन्द्रम्युम्न स्वप्नप्रेरित हो,सागर के पार तक जा, एक वृता के खात टुकड़े किये। उसी
का दो माग काष्ठ कामरूप लाया गया-- उसी के एक भाग से स्थग्रीव माधव का और
दूसरे भाग से मतस्यास्थ माधव का निर्माण हुआ।

किता पुराण के वर्णन में विष्णु पूजा का कोई प्राधान्य नहीं देशा जाता।
जिन स्थानों पर वासुदेव विष्णु की पूजा होती थी, उनकी संस्था पांच मात्र है।
जिल्हा विष्णु ने स्थग्रीव रूप में जरासुर का वधा मणिकूट नामक स्थान पर विथा
कि पुष्ण पर । थर : स: मणि कूट के पूर्व मत्स्यध्वज पर्वत पर विष्णु मत्स्य अवतार के रूप

१ - कानरुपे यथा विष्णु : सवीष्ठो महेश्वरि । कामरुपे तथा देवी पूजा सवीचिमा स्मृता ।। :२।६।४६ यो० तं०:

२ - यथा नारायण: 'श्रेष्ठो देवाना' पुरुषाचिम: । :२।४।३१ वही : म**४७४**

३ - मणिकूटे ततो देव स्थापितं वरुणेन हि ।
प्राच्यां नन्दी शमेशान्ये मत्स्थाख्यो नाम माधवः ।।
।माख्यो मणि कूटे च माधवाख्यो व्यवस्थितः ।
यो० तं० २।६।२४४,२४५

में पूजे गर :क0पु० =२।५०: :ग: पांडुनाथ नामक मेरव की शाकृति में रदाकूट पर माधव की पूजा की गई :क0पु० =२।६५: :घ: पांडु के पूर्व चित्रवह पर्वत पर माध्यव की पूजा की जाती थी : क0 पु० =२।७४: उ० दिनकर वासिनी श्रंवल में वासुदेव विष्णु की पूजा चलती थी ।

किता पुराण में व्याख्या की गई विष्णु पूजा का नंत्र है 'कं नमो भगवते वासुवेवाय'। उनके साथ और पांच जन संपूर्व देवता की पूजा वार्ती होगी-- राम,कृष्णा, ब्रह्मा, शेंमु और गोरी। पूजा में शेषा के दो जनों को कभी पूथक नहीं किया जा सकता। वासुवेव के बाठ सहबर :योगी: हैं -- बलमद्र, काम, बाति हद्द, ना रायणा, ब्रह्मा, विष्णु और नृसिंह और वराह। नायक वासुवेव और नायका विमता हैं। यतमद्र प्रकृति की सहबरी :योगिनी: हैं उत्किषा, जेया, जाना, ब्रिया, योगा, प्रहवी, रेशानी और अनुग्राही जिर्प पूल और निरामिण नैवेथ द्वारा पूजा करनी चाहिए। दंढ पद्म बादि ब्रस्त्र और ब्रत्कारादि के पूजा के निमित्त विभिन्न ब्रह्मारी बीज मंत्र हैं।

१ - क पु : न्वाहाः

द्विवर्ताय अध्याय व्यवस्थान

र्शन्तेन का जीवन वृत

हंकर देव हैं पूर्वज: - एंकर्डिय ने त्यां यभने पूर्वजों का उत्तेत कोक ग्रंथों में किया है।

ाम्थांतर प्रमाणों इयारा यह स्पष्ट होता है कि बुद्धवपरीया बरदीया गांव के

महाग्रामेश्वर राजधार कायस्थ राजधार के पुत्र सूर्य्येवर महावहादेशधार सूर्य्येवर के

नुव नौ मिक शिरोमणि कुनुभवर कुनुभवर के पुत्र संकर्षिय थे। राजा हुलैंन नारायण ने

राजधार के फिता बंडीवर को सम्मान पूर्वक बट्डुवा ग्राम में बसाया तथा उन्हें देवीदास
के नाम से विभूगेषात किया। पूणानिंद गिरि ने कृष्ण की उपासना कर कृष्णागिरि नामक
पुत्र की प्राप्ति की। कृष्ण गिरि भगवन्त सुवर्णीय की शाराधाना की और इस प्रकार
सुवर्णीगिरि का जन्म हुशा-- सुवर्णीगिरि ने गंधामों की शाराधाना की और इस प्रकार
सुवर्णीगिरि का जन्म हुशा-- सुवर्णीगिरि ने गंधामों की शाराधाना की और गंधावी गिरि
पुत्र का जन्म हुशा-- भगवान के राम स्टप की वाराधाना करने से रामगिरि का जन्म
हुशा । रामगिरि के पुत्र हैमगिरि उनके पुत्र हार्यवरिगिरि थे। हार्यवर गिरि की स्क मम
मात्र कन्या थी, वह मी चिरकुमारि। सदाखित के वर हुवारा कृष्णागीत को लेग्वेव
नामक पुत्र उत्पन्न हुशा- लहावर ने बंदी देवी की उपासना की शोर उनकी मार्या सुमद्रा
के गर्भ से बंदीवर का जन्म हुशा ।

जन्म क्या गुरु शरित के अनुसार शंकरदेव का जन्म कार्तिक संप्रांति, वार वृहस्पति-पार १३ ७६ शक में तथा महाप्रयाण १४६० शक में हुआ । वर्तोका चरित के अनुसार इनका जन्म े ३७६ शक कार्तिक संक्राति अमावस्था तिथि, वृहस्पतिवार घडी रात्रि को हुआ-माद्र गास की दिवरीया लिथि को मध्याङ्ग के पूर्व १४६० शक में इनका तिरोमाव हुआ। रामवरण ठासुर के अनुसार इनका जन्म पांच किन व्यतीत होने पर अश्विन मास की शुक्ता दशमी, शुक्रवार की हुआ। दैत्यारि ठाकुर ने भी १४६० शक में शंकरदेव का वैकुंठ

< शंकारवेव- मागयत जाण्ठ स्कंघा ५५३४- ३५

२- वहीं - वहीं- दशम स्बंघ १२६०१-०२

३- उपेन्द्र चंद्र तेलारु- कथा गुरुचरित- पृष्ठ ४-८

४- उपेन्द्र लेता रु- क्या गुरुचरित पृ०

५- डा० म० नेश्रोग- श्री शंकर्देव पु० ३४

६- वही - वही

गभन लिहा है। रामानंद द्विल के गुरुचरित में शंकरदेव की जन्मतिथि फील्गुन मास
ग्रास दिवितीया है और जन्म काल बढ़ें राजि है और मृत्यु ति।थ माद्रपद श्वला दिवितीया
वार वृहरमितवार है। रामानंद दिवल ने बपने पिता जो महानी पुरीया गोपाल बाता
के शिष्य थे, से सुनकर वरित्र की रचना की। अन्य चरित लेकों के पीछे रामानंद का रचना
जाल जारंम हुआ और इनके इस चरित के अर्णन और अन्य चरितों के विवरण में
बिवल जेता है। डाठ महेश्वर नेशोग ने जन्म मास फाल्गुन के संबंध में दो तर्क उपस्थित
विता है, प्राम शंकरदेव का गुप्त नाम ग्यांत सोचरिण नाम गदापार था यह प्रवाद है,
यह नाम ज्योतिष के अनुसार मकर राशि का यूनक है। दूसरे शंकर का जीवन काल ११८
या १९६ वर्ष और ह: मास का स्थिर विधा गया है। धारियन बधना गारिक में जन्म
और माद्रपद में महाप्रयाण होने से एक वर्ष पूरा नहीं होता । प्राचीन साल में इसे
बाजा वर्ष ही कहते थे। किन्तु रामानंद ने कार राशि तथा छ: मास के देव की
गणना कर फाल्गुन मास निकाता यह उनका प्रम कहा जा सकता है। सार्वमीम महाचार्य से रंकर चरित में मृत्यु के समय शंकरदेव की आयु १९६ वर्ण की तिसी है। रुष्ट्रामक
नामक प्राचीन चरित मूलक ग्रंथ में मां शंकरदेव का निवारण सक उत्तर और आविमांव
रामक प्राचीन चरित मूलक ग्रंथ में मां शंकरदेव का निवारण सक उत्तर और आविमांव
रामक प्राचीन चरित मूलक ग्रंथ में मां शंकरदेव का निवारण सक उत्तर और आविमांव
रामक श्रित है।

मित्रपुर्दी के वरमुख्यां क्षेत्र के कुलुमदेव की पत्नी रात्यसंघा के गर्म है से १३७८ शक में वर्तमान नवगांव के मैराबारी मंचल में शंकरदेव का जन्म हुया । इस समय नवगांव और लुक्षत के उत्तर पार का समस्त मंचल वर मुख्यों के अध्यकार में था। रामचरण के अनुसार किपिती में वामघरा तक और सिंगरी से उत्तर में धिलाघारी तक वरमुख्यों का स्थान था। वर्दौवा चरित में कालियावर से केगर काजली के मुख तक मुख्यां लोगों के राज्य का उत्तेस है। मुख्यां राज्य के निकट ही कहारी लोगों का देश था अतः राज्य की सीमा, या गोवारण मूमि के संबंघ में कभी कभी उन लोगों से सुद्ध या विवाद न होता था। कुनुनवर की प्रथम पत्नी से कोई संतान उत्पन्न नहीं हुई हुआ और इसलिश उन्होंने

१- दैत्यारि ठाकुर -- गुरुवरित

२- रामानंद -- गुरुचरित

३- डा० महेश्वर नेयोग - शी शंतरदेव पृ० ३६

४- वही पु० ४५

गोपेश्वर विष्णु की पूला की। अन्य बरितों के अनुसार उन्होंने केंग्र की उपालना की गोर जम्मे पुत्र का नाम केंग्र रहा। केंग्र का तेरह नाम के गैर उसी समय करारियों ने मुल्यों राज्य पर वाजनण क्यान- परते मुल्यों वन में दिम नष्ट पीट करारियों पर यकार देव अवस्थात आफ्रमण कर उन्हें नष्ट प्रष्ट कर विथा। इसी संघर्ण संकृति वास में शंकर के की शौर ती सौ एक पुत्र हुआ कि का नाम दलकार प्रथम बन में अन्य होने के कारण वन गश्यां हुआ। इंतरदेव तात वर्षा के तथा वरमध्यां दो वर्षा के थे कित समय कुतुमयर की मृत्यु हुं। उनके साथ शंकर की मां का भी देवांत हुआ। रामराय के पिता सतानंद ने कर्मकाण किया। कथा चरित में शंकर के माता-पिता की मृत्यु के वंबंधा में कुछ मतभेद है। शंकरदेव बेट पूद में कब प्रहमपुत्र कार पार करने लो उसी समय बुतुमवर वेतुंखामी। हुए और कत्यसंख्या भी स्वामी की चतुमा मिनी हुई। कथा गुरुषित के अनुसार शंकर ने पिता की मृत्यु कर्म विथा। मुखणा दिवज के चरित के अनुसार शंकर के पितास के परवात उनके पिता की मृत्यु हुई और उनकी भाषिक ताद के पीछे माता का विरोमाव हुआ। प्राचीन प्रवतित प्रवाद पर विशेषा वल देवर उसमी नाथ वैजवरुका ने किए की मां की मृत्यु तिथि उनके जन्म के तीशरे दिन विशेषार की है।

नातृ-पिशृ दीन संतर का पालन पोषण उनकी आयाँ :वादी: ने किया-बारह तेरह वर्ण की काला का ने रेल्ते कृदते रहे। इतके पश्नात ही मध्न्द्र कंद ित की पाठशान वा में प्रवेश किया पाठशाना कंपने लगा। यहीं शंतर ने व्याकरण, कोष पुराण, भारत, रामायण, बौदह शान्त्र तथा काव्य बादि का प्रथ्यान किया। वर्ष प्रथम भार्क-हें भूराण की क्या केरर हरिश्वन्द्र तपाल्यान की त्वा की। एक दिन मुल ने प्रतिभाशाती विधार्थियों को बुता कर बादेश दिया कि कल प्रात: मुक्ते अपने उपास्य पेव के संबंध में एक एक एतोक विश्व कर देता। दार्यों ने मुरू को प्रणाम कर विदा ती बीर शतीक रचना की। एकर में भी मुरू की बाद्या किरोधनार्य कर वृष्ण-स्तोत्र की रचना पूर्ण की। प्रात: काल बन्य जार्यों के वाध रकर ने मुरू को शतोक दिया। सुक्र ने देता कि एकर के रचना प्रणी की। प्रात: काल बन्य जार्यों के वाध रकर ने मुरू को शतोक दिया। सुक्र ने देता कि एकर के रचने कर विदा साम प्रणी की। प्रात: काल बन्य जार्यों के वाध रकर ने मुरू को शतोक दिया। सुक्र ने देता कि एकर के रचने कर विदा साम प्रणी की। प्रात: काल बन्य जार्यों के वाध रकर ने मुरू को स्तोक दिया। सुक्र ने देता कि एकर के रचने काल विद्या साम कर की प्राप्त के प्राप्त के एकर के रचने कर काल काल कर साम साम प्रणी की। प्रात: काल बन्य जार्यों के वाध रकर ने सुक्र को रचने कर किया। सुक्र ने देता कि एकर के रचने काल काल कर साम प्राप्त काल कर साम साम कर की सुक्र से रचने काल काल स्वर्ण साम कर की सुक्र से स्वर्ण कर साम साम स्वर्ण कर साम साम साम साम साम साम साम सुक्र सिंग सुक्र की सुक्र से साम सुक्र सिंग सुक्र से सुक्र से स्वर्ण कर साम साम सुक्र की सुक्र से सुक्र से स्वर्ण कर सुक्र साम सुक्र सिंग सुक्र से सुक्र सुक्र

१- रामानंत - गुरुचरित पृ० २१-२४

२- वही पु० ३० पद सं० ११६

३- उ० ले० कथा गुरु चरित पृ० २४

४- ड्विब मूष्णण:- केतो दिन - अनंतरे तान पाने मातृ मरिलंत ।

५- म० ने-- शी शं० पुष्ठ ४८

शौर सुनने में अत्यन्त मध्युर हैं। शंकर का मूख देख गुरु ने कहा कि किस प्रकार सुनने ऐसा श्लोक लिला, तुम तो पुस्तक के पत्र भी नहीं जानते, फिर कैसे यह श्लोक जान गर। शंकर की प्रशंता तब विप्रों ने की। राम चरण के अनुतार सत्रह वर्ण की अवस्था में शंकर ने गुरु गृह त्यागा, किन्तु शाचार्य ं हिता के शनुसार महेन्द्र कंदलि ने शंकर को दस वर्ण तक पढ़ाया । वैजवस्त्वा ने भी इस बात की पुष्टि की है। शंकरतेव ग्रंथ में उनकी शिला समाप्ति की लिथि । उप दी गई है। अभिप्राय यह है कि हिर्श्वंद्र उपाख्यान की रचना २१।२२ वर्ण की अवस्था के पूर्व हुई। शंकर ने महेन्द्र कंदलि की पाठ शाला में योगाभ्यास की भी शिला गृहण की। इस योगभ्यास के परिणाम स्वरूप उनका शरीर स्वरूध एवं सुगठित हुआ।

विवाह :- सूर्य मुहयां की पुत्री सूय्यंवती से शंकर का विवाह हुआ- विवाह के समय

शंकर २१ वर्ष के तथा सूथ्यंवती चौदह वर्षों की थीं। सबह वर्षों की शवरणा में शंकर की

पत्नी में भन्न को अन्य किया—-अन कर्या नव नास की हुई माताका देखांत हो गया।

शंकर्षिय के चरित सेटकों के शिवरणा से स्पष्ट प्रकट शीता है कि शिरोमणि मुख्यां का

कार्याद्य त्रतिपुश्चरी से बरदीवा तथा वरदीया से शिवपुश्चरी तक लावा और से जाया

गया। शंकर्षेत्र मुख्यां शिवपुश्चरी में बीस वर्षों तक सह दूसके पश्चात ने देगित, के टेमिया,

टेमूनिया व टेन्युवानी बद्दीवा जाने को बाध्य हुए । शंकर के निवाह के एक वर्षों पश्चात
कहारियों का प्रवह शाक्ष्यण मुख्यां राज्य पर हुआ और प्रवागण व्ह मार के भय से

श्वरूष्य में छिप गए।

पत्नी की मृत्यु :- विवाह के तीन वर्षों पश्चात संकर की मार्या सूयूर्यंवर्ती के गर्भ से मनु का जन्म पौष मास में बाठ दिन व्यतीत होने पर हुआ बौर मनु केजन्म के वाद नव मास

१- रामानंद ड्विज गुरुचरित ५० ४०-४२

२- म० ने-- शिव्हांव पुरु ४६

३- तदमी नाथ वैजवाहाता- शंक(वेव:म०ने०शं०४६:

४- उ०ते० - क० गु० च० पृ० २६

५- वहीं ० ₹६

६- म०ने० - शं० पृ० ५०: नर्दों वा चरित:

माता जी जित रहीं और दो दिन गरियन व्यतीत होने के परनात पन्नीस वर्ण की ार पा में पुरुषिति। की मृत्यु हुई। साथ महेराना नेवीन का मल है कि उस तमा संहर-ो। दी. ही हा भा पल्यीय वर्ष की की कितनती पत्नी की भरी। वेजवहादा से अधार ं ३६६ राज में मनु ना जन्म धुवा एस गणाना केवनुसार भी सुबुर्यकरी की चनस्था मृत्यु के ंकः पर्व्यास धर्ण की मानना समीचीन न होगा । पर्ता की क्रमामाविक मृत्सु ने शंकर को पंगत कर किया था, सदैव ही ये तीर्यमुगण की चिन्सा करते थेड जनकर पुत्री मातु-विकीन वी अत: उसके स्नेष्ठ का परित्याय न कर एके । एक पिन शासियन गास व्यवीत होने के उपरांत पुत्रवार केदिन रामचंद्र काठ के पुत्र हरि से मनु का विवाह संपन्न हुरा । देल्यारि इस प्रतंग में भौन हैं। रामानंद ने भी इतिप्रिया जा विभाष हिर्दे चाथ किला है। इक वर्ष परचात अंकर की पत्नी परलीक गामी हुई। उनका मन क्रान्न हुआ और उन्कोंने बहोन राज्य अधियारी चेउ दिता है एक मास का क्षकाश स्थिता वर्षीया वरित से यह बत्यप्ट रूप ते जाना ता जाता है कि मनु के विशाह के स उपरांत स्योकी का देशांत हुआ और संगर तीर्थ भागा के लिए नाशर गए। क्या गुरा-चित्र तथा रामनरण ने परिष्कृत रूप ो सिता है कि कूर्यवती की मृत्यू पतु के जन्म के ६ भाग पर**ात पुर्ध हार परे**श्तर नेशोग का मत है कि यह पंत्रस्थान याज वहामिया ीका वो है गया प्रवस्ति है।

प्रथम वंश्ये यात्रा :- शंकर ने कामध्यां गिरिष्ट्रहें। आर्ड, कहुंद्र, काम्याद को स्क त्यान पर बुताया हार तथा वनगण्यां को घर रेती आदि की समस्त व्यास्त व्यास्ता समस्ता दी। क्षांत विक को आमंत्रित कर अत्यन्त कोह पूर्ण मान से संबंध ने उन्हें मार्ड तथा बूड़ी मह आर के संगारण का मार किहूं। कांत माध्य आदि समस्त वंद्राओं को लंबी ध्यास कर संबंध ती की को किए वर्ते। क्याचरित के अनुसार क्यंत की राज्य मार वीर्थ आत्रा के पूर्व मिल बुवा था। संबद्धिय के साथ स्वत्र व्यक्ति तीर्थ आत्रा के लिये गर्न उनकी

१- वही पु० ५३

[.] २- उ०ते० वन्यु० वन २६

३- रामानंद - गु०न० ५६

४- उ०ले०-- वंव्युव्यव पृव २६

५- मo नेo -- शीo श्रेo पुo ५४

६- रामानंदर गुरु चर पुरु ५७

पूर्वा इस फ्रार है: - राम राम, सर्व्ववय, परमानंद, बलोराम बलोमद्र, गोविंद, नारायण पर्वाराम, गोभाल, छोट बलेराम, मुलुंद, मुरारि, महेन्द्र, कंरिल, हिरिदास बानेशा दामोदर आला तथा दो अन्य जना रामानंद के अनुसार अनेक जन शंकरदेव के ताहित तीर्थ यात्रा को बले, दिन्तु वारह व्यक्ति के अतिरिक्त शेषा गंगा तनाम कर घर लीट बार और कंटिन जन्म देश के लिये याह्या गरा हाठ महेशवर मेजीग का गत है कि तीर्थ वालियों दी यह गाम लालिका प्रामाणिक नहीं है क्यों के तनमें से कई व्यक्ति के लिये याह्या गराणिक नहीं है क्यों के उनमें से कई व्यक्ति के लिये वालिय प्रामाणिक नहीं है क्यों के उनमें से कई व्यक्ति के लिये वालिय प्रामाणिक नहीं है क्यों के उनमें से कई व्यक्ति प्राप्त हुआ रागानंद के आलार्ज किसी ने नहीं लिया है कि बारह व्यक्ति में छोड़ शेषा यात्रा घर वापस वले आरंश

शंकर की तीर्थ भ्रमण कथा का वर्णन प्रत्येक चरित्र में किन्न रूप में होनेल किया गता है। रामानंद तथा दैत्यारि वे बहुतार शंकर्देव जान्नाध भीम में बहुवन दिन उहरे। रामानंद्र,रामनरण,बरदौवा चरित ध्वारा तीथै याचा का विवत्त विवरण प्राप्त भिया जा सकता है। मुनीमवा करांत्या में धर्व प्रभा स्नाम कर के गंगा के चिलिप्र बाट पर एगान दान विया इसके पश्चात कता जाकर फगलु के तीर वर दान दक्षिणा री शौर चौदह पुरा**षाँ** को फिंह दान दिया। यहां तक पहुंचने में नौ दिन कम तीन भारा ली---गंगा बाट पर नौ दिन, लगा। गंगा से भग तक ाने में दस दिन का समय व्यतीत हुआ-- ग्या में तीन रहे वे पुन: गंगा घाट लॉट नाए---ए। याचा में तस विन लगा। यहां से तीन सप्ताह पूर्ण होने ने पश्चात वे जनन्ताय पुरि पहुँच। विन्तु दै शोधक दिन कान्याय पुरी न उधर सरे। क्या गुरुवारित में इस समय की जननाथ याता का उत्लेख नहीं मिलता। गया से संकर्देव काशी-विश्वेश्वर के घाम वाराणसी पहुँचे और एनान दान किया। प्रधान में मुंडन करा के ब्रह्म बट दम दर्शन निवा---गंगा यसुना के अंगन में स्नान किया। वहां से राभ की पवित्र मूमि अविदा गए और सख मैं रतान विचा। निष्णाम में नरज्ञाण बाध्म का दर्शन विच्या और यहां कुछ दिन ठहरे। कई दिन यात्रा करनेके पश्चात वे अपने कृष्णा देव के वृंदाबन- गोकुल पहुंचे। यहीं राजा नामक सन्यासी ने शंकर की शरण सी। कालीदह में रनान कर का खिंदी के तट

१- उ०ले० न०गु० च० पृ० २९

२- रामानंव - क० गु० च०-५८पु०

३- मा ने - शि शे पुर पूर्व

४- ड० ले० - क० गु० च० - पुष्ठ ३०

५- म० ने० -- शी० शं० पु० ५६

पर् ठहरे। यहीं रूपसनातन, तथा बृंदाबन दास ने शंकरदेव को गुरु मान कर शरण ली। जरदीया चरित के अनुसार शंकरदेवा ने इस बार पंडों के सम्मुस ब्रह्मपुराण से जगन्नाथ महातम्य की व्याख्या की। रामानंद ने भी ्षष्ट लिला है कि लौटने के पूर्व वे पुरुषोत्म दोत्र में चार-पांच मास रहे और जगन्नाथ यात्रा के न्मय इन्होंने नैतन्य से सादाात्कार मी किया। रामानंद ने इस देखा-देखी का वर्णन श्रत्यन्त रोचक ढंग से विध्या है। शंकरदेव पूर्व दिशा में तीर्थधा त्रियों के साथ सड़े थे और नैतन्य पश्चिम दिशा में थे। चैतन्य ने शंहर को देख हापने शिष्यों से इनके संबंधा में पूरा। स्य ब्रह्मचारी ने उत्तर दिया कि वे पूर्वदेशी महंत शंकर हैं। शंकरदेव ने भी चैतन्य के विषय में नागरिकों से पूछा। नागरिकों ने बैतन्य का परिचय विया। इन दोनों महापुरु जों की देखा देखी दूर से हुई- ापस में कोई बातचीत न हुई। डा० नेत्रोग का मत है कि रामानंद की धारणा भ्रांतिपूर्ण है। किसी अन्य चरित्र में यह बात नहीं मिलती है। दिवर्ताय बार की तीर्थ यात्रा में शंकर नैतन्य की देसा देसी हुई थी, यह वर्णन अन्य चरितों में मिलाई,संभवत: इसी कथा कोउन्होंने प्रथम तीर्थ यात्रा की कहानी समभी हो । तीसरी और मूल बात तो यह है कि दो बार की तीर्थ-यात्रा में शंकर नैतन्य का मिलन संभव नहीं। ३२ वर्ष की अवस्था से शंकरदेव ने तीर्थ यात्रा शारंम की और ४४ वर्ष की अवस्था में यापस जा गर। ४४०३ रक में वैतन्य का जन्म ही हुशा न था-- निमाइ १४१५ सक में निद्या में सात बाठ वर्षों के पाठशाला के बालक थे---वर्यों कि उनका जन्म १४०७ क्षा में हुआ । बरदीया चरित के अनुसार वृंदायन के अनेक पंडितों को शंगर देव ने तर्क में परास्त किया और यहीं उनकी मेंट रूप सनाजन से हुई। इनके संबंध में यह कहाजाता है कि ये पहले विधावा ब्राइमणी के पुत्र थे, मवन राजा को कोई पुत्र न था, इसलिए इन दोनों को ले, रूप को युवराज नियुवत किया। इन लोगों को यह राज्य का कार्य रु निकर नहीं लगा, इन्होंने राज्य का परित्याग किया। रामानंद ने शंकरदेव और रूप-सनातन के मिलन का उल्लेख नहीं किया है। यद्यपि रूप सनातन की कहानी विस्तार पूर्क शंकित की गई है। रामानंद के अनुसार वन दोनों का जन्म पात्रिय परिवार में हुआ और स्क यवन कुल के अधिकारी थे। शी जी नैतन्य के

१- उ०ले० -- क० गु० च० पृ० ३०

र- रामानंद०- गु०च० पृ० ६०-६१

३- म०ने०- श्री० श्रे० पु० ५७

४- रामानंद -- गु०व० पु० २४१

चरितों में रूप धनाचन की कहानी अन्य रूप में दिली गई है। रूप सनातन जा शंहरनेन के साथ तथा संबंधा था, यह विचार का विषय है लंगन है कि हाप-सनातन की अश्वावस्था में संहर्तेन की उनसे मेंट हुई को हो पर यह पपन्ट नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने संग्रदेव का मानत-धार्म ग्रहणा किया होगा। निसंपेह स्ट्रप-स्नायन संग्र े गरित कार्र के अनुसार्या अंत तक न रहे, हो स्वचा, है आ में वें शंकर देव से व्यक्तिगत राप में प्रभावित हुए धीं। दिवतीय जार की तीर्थ-नात्रा के वर्णन में रूप-सनातन का नाम शालाएँ। शंकरदेव की इच्छा थी कि ्बुंदाका की यात्रा की लाग्न, किन्तु का लिंदी जाने के लिए असहमत थीं। इस समय शंकर्देव ने रूप-ए तालन को एक शरण क भर्म का प्रभारत कहा है और उनको देवने की हच्या प्रमट की है। शंहरीय ने सुह, सुह, साल, तुंब, मुंग, निहुंग, आजूर अशोक, मंदारि का म्यारिक्र, अशील नेकी पाट, वंसी वट पा उद्रीत कर अमुना में लान किया। गोवदी पर प्रधिक दिन उसरे। पांडनों के रनान सकितापुर बौर रन्द्रप्रस्थ में एक वर्ष रुवे । कृष्ण-गो।आं की सीला भूमि का दरीन करने के उपरांत वे बांद्रकाश्रम पहुँचे। यहां से नेपाल, नेषा वा, नेक्केड, केशाल्य, द्राविष्ट्र पंताल तथा स्वेत इकी प यादि वेश्राराज्य का अनवा किया। केशरा- कावेरी में स्तान किया- नाथे कारी, विन्हु काशी में कूछ दिन उहरे - सीनाक्स में एनान किया और उप द्वारका पहुंचे त्रिगर, नगर, चंद्रापती ज्ञाम, रामेश्यर कीला बंह, सुबाहु नगर, विविधा नगर, बंदन बन, विश्रास पष्पी, गोदापरि,गोपति गर्दी, पंतवटी शालम उष्पत्ता प्रति, विष्कंप्ता, पुणारास्ती, मर्च्यार हरिहशार व्यक्तार्नभ्रामकानवी, मटक नगर विकास साम्य का उपणा तर वे पुनः ानाप गुरी पहुंचे।

पुनिवाह कर प्रस्तान: जीर्थ यात्रा से लोटने के परचात रंगर तुन: सांगारिक बने। उस समय उनके। धाई दार्था: लेर्स्स्ती अल्यन्त बुद को गई थी प्राम कार की उनके पीत्र के कोई पुत्र उत्पन्न न सुत्रा उनके मन में अशांति था। एक दिन लेकर की सेर्स्स्ती माला ने संकर से वका कि आगे कोई संतान नहीं है,यदि कच्या की तो एक कन्या का प्रवंधा करें। सर्व प्रमा संकर्षन ने वियाह को जंगाल कर शस्त्रीकार कर दिया। एसे सुन बूद्धा माला को शिक्षक कर हुआ। दूसरे दिन राम का रूपका मार्थीं केतार सा बूद्धा माला को ने पिल कर संकर्षन को पकड़ा इस दशा में संकर्षन इन लोगों का आग्रह टाल न सके और

१- उ०लें। का मु० व० पृ० ३१

र- वहीं ० पु० ३२

शकता कह विवाह की स्वीकृत दी। ५४ वर्ष की अवस्था मैं शंकर का दूसरा विवाह ंकृष वर्षीया का लिंकि के भाष धुना ।

केवाल ना के बतुनार दीर्थ-भ्रमण ने बीटने और लुड़ी मां धेरसुर्व के देशांत के प्रतान किवान मुल्तों की पुत्री का लिंदी में मंत्र ने विवाह किया। हा० नेशोग का पत्र के बताह किया। हा० नेशोग का पत्र के बताह किया १४२५ एक में संपन्न हुआ। शंकर का राज्य कार्य में भन न लगा- वह के विवास पुत्रों ने मिलकर शंकर को गोमोच्या नियुक्त किया। बर्दांचा चरित के विवर्धन पुत्रा दिवल ने लिला है कि शंकर को तीस घर तंत्री निर्दे के उत्पर गोमोस्ता नियुक्त किया गार्टिक को स्थान किया। बर्दांचा विवर्धन नियुक्त किया। वहांचा चरित के विवर्धन के लिए प्रताम के किया गार्टिक के पर गोमोस्ता नियुक्त किया गार्टिका मार्टिका में संसर ने एस दाचित्व को सार जोवार को सौंप दिया।

जर्म प्रवार:- . लंकर्षेय ने प्रेंग्य तीर्थ भ्रमण वें काल में अनेक जामिक स्थानों की यात्रा की थीर उन स्थानों की उपासना पढ़ित को थी देशा गीत, पद, मिरिमा, क्षण्य वादि गा, ढोल इत्यादि ते हिमाने की प्रणाली निश्चित ही उन्होंने बुंदाबन, मधुरा, उद्गित थाराणकी बादि स्थानों से सीका और इसका अलम में प्रवलन किया। की तिन में स्पष्ट

१- उ०ले०--- क० गु० च० पृ० ३४

२- म० ने० -- शी० शंव प्रव ७०

३- उ० ले०--- क० गु० च० पु० ३४

४- म० ने० -- शी० शं० पु० ७२

लिला है 'उरेषा पाराणर्स। ठावें ठाये,कबीर गीत शिष्ट सबै गावै। उनके नाटकों पर परिवर्गी रास लीला का अधिक प्रभावताला है। नाम घर, मणिवृद्ध सजा, सक नी ्यापना कर नाम कीतीन कर घम प्रवार करना उन्होंने पश्चिम बिहार में प्रवरित प्राचीन नौद विचारों से लिया है, ऐसा अनुसान किया जा सदला है यह घ्यान देने ोग्य है कि शंकर ने चिन्ह यात्रा का शभिनय प्रथम तीर्थ भ्रमण के पूर्व किया था । भागवत स स्वंग सास्त्रनाम का नाम, गीता का एक शरण, इन तीन वस्तुत्रों को व्यवत िया। इस समय से उन्होंने घर्म प्रवार की और अधिक घ्यान दिया। भितप्रदीप तथा रु विभणी हरण की र्चना :- बरदीया में ही शंतर ने गरु पुराण का शाधार से मिनत प्रदीप की रचना की तथा हरिवंश से रु निमणी हरण काव्य की खना की | वेज वरावा ने मिकत प्रदीप की पाटवार्सी में रचित कहा है। डा॰ मध्यार नेश्रोग का मत है कि सुनित की धार रचना प्रणार्श। धादि शंतरंग प्रमाण दवारा यह स्पष्ट शात होता है कि यह उनके प्रारंभिक काल की रचना है। इंद लालित्य तथा तत्व गांभीय के मध्य षाष्ट अध्याय के नाम महिमा वर्णन में अंत पोधी में सन्निवस्ट शंकर की लेलना में कहीं ऐसा गांभीय नहीं है। शंकरतेन कृत मिति रत्नाक भाष्य वदेव कृत भिवत रत्नावती े भट्टेव के भिवतिविवेक तादि प्रकर्ण ग्रंथ की की टि में इसे स्थान नहीं दिया जा रक्ता और न ानके साथ इनकी धूलना ही की जा सकती है। वरनगर के मवानंद साउद जिस तमन केंगर के शिष्य हुए और गुरु ने उन्हें नारायण नाम दिया। गारायण ने विदा होते समय मिलत प्रदीप की प्रति प्रार्थना कर प्राप्त की और धर में उचित भारत पर रख परिवार के प्रत्येक व्यक्ति को कृष्ण देव की शरण में लगाया। मिनित प्रभीप में उन सीशों के नाम अपस हैं जिनकी याना शंकर ने की थी। निश्चित 🛊 ही यह रचना उनके प्रथम-तीर्थ भ्रमण के बाद की है। इसके श्रीति दिनत शंकर ने रु विमणी हरण श्रास्थान को ते एक काव्य श्रीर नाटक की रचना की । शंकर ने मागवत के सार

१- म०ने०-- श्री० श्रं० पु० ७२

२- उ०ले० -- क० गु० च० प० ३४

३- वहीं पु० ४५

४- म० ने० - शि० शं० पु० एव

हरितंश के मिश्रण से रु निमणी हरण तथा कुरु दोत्र की रचना की। रु निमणी हरण नाटक में रामराम का नाम मिलता है ---यह उपर काल की रचना है। यह निर्विनाद है कि रु निमणी हरण काव्य की रचना बर्दीया में हुई।--- केजकर ना रु किमणी हरण काव्य को शंकर के युवा काल की रचना मानते हैं। डा० बाणीकांत काकति ने स्पष्ट संकेत दुवारा यह दिवाया है शंकरदेव के प्रारंभिक जीवन की रचनाओं में काय रथ शंकर शब्द और शेष काल की रचनाओं में कृष्णार किंकर शंश रहता है। कायरथ शंकर का उत्लेख रु निमणी हरण काव्य में अनेक रघान पर हुआ है अत: यह युवा काल की रचना का स्पष्ट संकेत देता है।

मागवत:- जगदीश मि। द्वादश रकंटा मागवत ते शंकर के गांव पहुंचे। यहां उन्होंने लोगों से शंकर का कौन घर है पूछा । शंकर स्वयं चार पण जागे ाहे और चौकी पर शास्त्र को स्थापित किया। जगदीश मि। ने अपना परिचय देते हुस बताया कि मैं विक्र तिया ग्राम वाराणकी का हूं और ब्रह्मानंद की पाठशाला मैं वारह वर्ण तक जन्यन किया है, पुरु ने मेरा नाम जगदीश रखा है। मुके वारह कंटा कंटा है, मैं इसे जगनाथ को सुनाने गया था। जगनाथ ने जगदीश मि। को नवप्त में वादेश दिया कि पूर्व देश के शंकर को अपन मागवत सुनाजो । देख्यारि ने तिसा है कि जगदीश मि। के वारदीया जाने के समय शंकर अपने फूफा के यहां गामौर गर थे। यह निर्विवाद है कि जगदीश मिश तथा शंकरदेव का मिलन हुजा। जगदीश मिश रक इनंध की व्यारधा एक मास तक करते थे, इस प्रकार एक वर्ष में यह व्याख्या पूर्ण हुई। हा० भहेश्वर नेजोग का मत है कि जगदीश मिश के जाने के पूर्व असम-कामरूप में भागवत का प्रवेश हो चुका था। इसके पूर्व शंकर ने उद्धव संवाद की रचना की थी। शंकरदेव के कामरूप जानेके पूर्व पीतांवर कवि ने दशम रकंघ का रूपांतर किया था। रामानंद गुरुचरित में जगदीश मिश के स्थान पर जाना की थी। रामानंद गुरुचरित में जगदीश मिश के स्थान पर जानाथ का लाम मिलन है। जगदीश मिश के स्थान की स्थान स्थान की स्

१- वि० कु० व० -- ऋं० नाट पृ०

२- म० नै० -- शि० शै०

३- उ० ले० --- क० गु० च०- पृ० ३५

४- दैत्यारि --- गुरुचरित ू- 90

५- म० ने० --- शी० शं० - पृ० ७६

रामानंव--- गुरुचरित - पृ०

ब्रह्मानंद के शिष्य थे। अत: ेसा प्रतीत होता है जगदीश मिल मागवत टीका सहित लाए थे। बैजवरूका ने लिला है कि जगदीश ने 'सात्वत तंत्र' और पंचराल भी पढ़ कर सुनाया था। मूल को देस प्रथम से द्वादश स्कंघ तक श्राप कंघा पथार पद किया तथा उद्धम संवाद की रहना की। जगन्नाथ की कृपा वर्णन के निमित्र उद्देश के स्वकीस कीर्तन

शंकर को काज्य तथा नाद्य शास्त्र की पूर्ण शिक्षा गुरु के निवट संपर्क इवारा प्राप्त हुई, उसके जिति रित बार्ह वर्ष के तीर्थ प्रमण में जो अभिसता प्राप्त हुई उसका योग उन्होंने अपने प्रथम श्रेक नाटक में दिया। चिन्ह मात्रा नामक नाटक लिसकर एवसं उसका अभिनय कराया। यह चिन्धु प्रात्रा, ऋभिया संनीत तथा नाट्य गाहित्य के इतिहास का गौरवपूर्ण पृष्ठ है। बरदौवा चरित के अनुसार करंत दले के नाती , शतानंद देश के पुत्र जगतानंद के :पीई इनका नाम ताम ताम हुआ: अनुतीय पर उसे उत्सव का आयोजन हुता क जगदीश मित्र को महानाटक दिलाने और चिन्समात्रा करते समय संकर् ने श्रोणा पाति नृत्य का श्रायोजन दिया था। चिन्ह ऋषति रेतात वेबुंटर विन्ह अंव में श्रन्य कंक नाटकों की भांति धौमाति घोषा की बाद श्लोक,नाट, सूभ,भाटिया और तिभिर वायुमंडती तथा मेघ मंडती जादि राग के गीत-सुर से परिपूर्ण है। पार्जी के रांबाद का उत्लेख किसी भी चरित में प्राप्त नहीं है। रामथ के अनुसार गायक, यादक तथा नतीक को भी सुस ज्या किया गया। मुदंग, बरतास तथा छोटतास की नए डंग से गढ़ाया गया। रमाघर हो घर का निर्माण इस नाटक के श्रिमनय के लिये किया गया। चिन्ह माता के हेतु शंकर ने पुष्पक शादि सात केनुंठों का चित्र कपास, कुंतुम तथा हरताल की सहायता से अंकित किया। राम धरण के मत से ८६ वर्ष की अवस्था ऋगति १४६० शक मैं इस चिन्ह का श्रीमनय हुशा। क्या गुरु चरित तथा बर्दीवा चरित के शतुरार इसका श्रीनय वर्दौवा में संगर के निवास काल में ही हुशा-- इसी रामय से फागुना उत्सव का प्रवेतन भी प्रारंभ हुआ। जिल्ह्स यात्रा का अभिनय प्रथम तीर्थ , प्रमण के परवात हुआ

१- म० ने०---ी० श्रं० पृ० ७७

र- ड० ले०-- क० गु० च०-- पु० ३६

३- म० नै० -- श्री० शं० -- पृ० द

यही त्रिधिक समीचीन लगता है और इस समय से लोगों ने मिनत-धर्म की शरण ली। चिन्ह मात्रा में त्रिमिनतात्रों ने संवाद किया था या नहीं-- इस लंबंध में दृढ़ विश्वास के साथ कुछ भी नहीं कहा जा सकता है।

की तीन घोषा:- सर्व प्रथम मागवत का सार ले शंकर ने की तीन के एंद्र, उसके बाद अन्य फ्रार के इंदर्गात, पद, मटिमा, कथा, श्लोक श्रादि लिला उड़ेसा के एककीस कीर्तन, पापंड कीर्तन, अजा मिल उपाख्यान और प्रहलाद चरित्र की रचना की। कीर्तन घोषा का अधि-कांश माग वर्दौवा में लिला गया। बेजबरुवा के अनुसार शंकर को ४४ वर्ष की अवस्था में जादीश भित्र से मागवत की प्रति प्राप्त हुई। डा० महेश्वर नेशोग का मत है कि वे ४४ वर्ष की अवस्था में अलिपुलूरी लौढे। जगदीश मिन ने वादीवा में ही शंकर को मागवत दिया। कीर्तन घोषा के विकास श्रीकांश लंडों की रचना वरदीवा में हुई। डा० नेश्रोग के अनुतार यह कार्य १५३१ से १५३८ के मीतर हुआ। अवश्य ही कुछ अध्याय वेलगुरी में लिसे गर। दैत्यारि तथा कथागुरुचरित के अनुसार : घूवांशाट: में प्रवास करते समय कीती घोषा का उड़ेता वर्णन गाया गया, दवना पुष्प की एड़ेताद बप्रांच गंधा उठी। पांश ह मदी :- क्या गुरुचरित में पाणंह मदी रचना की पृष्टमूमि दी हैं। एंकर्देव के बेलगुरी भूनाहाट पहुंचने के पूर्व वहां बौद मत के दो टाटिकिया :शिद्ध: रहते थे--एक था व्याधि य्लाधा वैषा ये दोनों लोगों को फाड़ फूंक कर ठीक करते थे, लोग प्रतन्त हो इन्हें भान तथा द्रव्य दिया करते थे। इस प्रकार इस मत का प्रवार हो रहा था। गुरु ने यह सुन पाणंड मद्देन के कीर्तन गा दिया---मक्तों ने भी कीर्तन आरंभ की पाणंड मर्दन में तीर्थ भ्रमण के अनेक रमृति अंतिनिहित है, डरेस्त वाराणारी ठावे ठावें। कबीर गीत शिष्ट सबे गावें। पाषांड मदीन संभवत: शंगर माध्यव निलम के पश्चात लिया गया। पद्मपुराण के स्वर्ग लंड की कथा वस्तु को ले शंकर ने नामापराज की रचना की। पदम पुराण के कुछ प्रसंग पावंड मदीन में भी है -- इससे ऐसा प्रभट होता है जैसे दीनों एक स समय की रचना । हीं।

१- वही --- पु० ट्यू

र- म०ने० -- शी० शं०---पु० ⊏ह

३- उ० लें -- क० गु० च० -- पृ० ४५

४- वही ---- पु० ४५

गुणमाला :- शिंगरी परित्याग के पश्चात शंकर गांमों में सत्र की स्थापना कर रहते थे यहीं शतानंद व देवीदास नामक देवी-उपासक को उन्होंने शिष्य बनाया और गुणमा-ला पुत्तक उसे दी। इसके द्वारा यह समफा जा सकता है कि इस पुत्तक की रवना बरवीवा प्रवास काल में हुई • होगी ठाकुर श्राटा को शरण देने के लभय, चूनपारा में यही पुस्तक उन्हें दी गई, यह विवरण चरित पुत्तकों में मिलता है। भूषण दिवज के अनुसार राजा के गरमालि गुण माला लीलामाला के कृष्ण गुण गाते थे। गुणचिंता मणि गुणमाला का दूलरा नाम है। एक दिन राजा नरनारायण ने शंकर से सम्पूर्ण भागपत लिल देने को कहा- उन्होंने एक रात में प्रथम श्रध्याय की रचना कर राम्पूर्ण कर दिया।

प्रथम तीर्थ मुमण के पश्चात शंकर्षेव सात वर्ष तक अपने महतों तहित बर्दोवा में रहे तथा प्रायः ६७ वर्ष की अवस्था में :१४३ = शक में: वे उत्तर पार के आसम :आहोम: राज्य, मीतर प्रविष्ट हुए। इस समय से ही शंकर के वंश का मुहयांगिरि या मूमि शिक्षकार लुप्त हुआ। वरदौवा विश्त के अनुसार शिंगरी में एक राज, स्थावरित के महानुद्वार रोटा में छ मास--- धिलाधारी में एक रात और वैश्वकरूका के अनुसार महुलागुरि में हेड़ मास और कोमोरा कूटा में कुछ दिन रह वे लूढ़ी गंगा से गांग मुस अथवा गांमी पहुंचे।

गांभीर से बले जाने के पश्चात शंकर कोमीराकटा जार माल उहरें। केजकर वा ने जरवीया परित पर निर्मर हो यह दिला है कि वे के हाथिया दले क्यावा माध्यवी दले जादि लोगों के अनुषित व्यवहार से विश्वत हो केलांशि कोमीराकटा बले आए और यहां छ: मास रहे। इन दोनों प्रमाणों के काध्यार पर यह कहा जा सकता है कि शंकरदेव के प्रथम पुत्र रामानंद का जन्म गांभी में हुआ। वांगिन में ए माल प्रवास कर कंकर धूवांहाट वले गए- गांभों में ही जयंत माध्यव की मृत्यु हुई। कथावरित के मतानुसार वागिनि कोमीराकटा के सब रथान पानी के नीचे आ गए- यह देल वे मलूनार आटि चले गए। किसी के अनुसार बरठाकुर रामानंद का जन्म यहीं हुआ। छा० नेत्रोग का मत है कि गांभी में स्वका जन्म होना अधिक संमद है मलुवार आटि में दो मास उहर लुक्त के पार उत्तर लक्षीपपुर के अंतर्गत नारायणपुर के समीप संमवत: माजूलि के धूवांहाट व बेलपुरी कहे जाने वाले स्थान में रहे।

१- म० ने०-- ी ० सं० ६१

२- म०ने० --- शी० शं० पु० हर

३- वहीं पुठ ६३

माध्य मिला :- क्या चित के अनुसार ३३ वर्षीय माध्य ने शंकरदेव की छ वर्षी की अन्तर्थों में मेंट की अर्थात यह मिण कांचन योग १४४४ शक्ष में हुआ। माध्य और उनके वहनों गयापणि शंकर से धूवाहाट में मिले।

कीर्तन घोषा की खंड रचना -- डा० महेश्वर नेत्रोग के शनुसार शंकर चौदह वर्ष तक घूनाहाट में रहे बैजबरु वा के अनुसार वे यहाँ १८ वर्ष रहे। इस समय नारायणपुर अंवस में किसी फिगर की अशांति नहीं थी न किसी शत्रु का आक्रमण ही हुआ। आहोम शासन के अंतर्गत मुख्यां लोग घूव हिंद में एक प्रकार त्वायक शासन करते थे--रामराम तथा हिर जवाई इस शासन सूत्र का संवालन कर रहे थे।

इस समय शंकर माध्यव ने सब चिन्ता छोड़ भिवत प्रवार आरंभ किया। हिस्कितिन की ध्वनि धूवाहाट बेलगुरी के गगन को भेदने लगि। शंकर ने प्रहलाद वरित्र और शिशु-लीला की स्वना यहीं पूर्ण की। कंसबध तक के पद यहीं लिले गर। डॉ॰ नेत्रोग के अनुसार कीर्तन के प्रहलाद वरित्र अंश की स्वना बरदौवा में हुई।

वेजवात के मत से शंकर के दिवतीय और हुंक तृतीय पुत्र कमतलोचन और हरिवरण का जन्म गांगों में हुआ -- रामवरण के अनुलार अपि हरिवरण और कि विमर्णा का जन्म जूवां हाट में हुआ । कथा चरित के अनुलार कमल लोचन हरिवरण व पुत्री के किमणी अथवा विष्णुप्रिया का जन्म बेलगुरी में हुआ का लिंदि आह के परामर्थ से शंकर ने जब माजव को विवाह के लिने फल्ड़ा उस समय क विमणी की अवस्था विवाह योग्य थी। शंकर की पुत्री विष्णुप्रिया की मृत्यु रात में स्म्था पर हुई।

पुरोहितों तथा पंढितों का विरोध :- शंकर्देव जिस समय बेलगुरी में नाम प्रसंग की प्रवि कर रहे थे, उस समय अनेक व्यक्तियों ने भजित धर्म ग्रहण लिथा, नयों कि इसका द्वार प्रत्येक के जिसे सुता था। रत्नाकर कंदलि, व्यास कलाइ, इसि भिन, जयराम आदि ब्रह्मण पंढितों ने इस समय शंकर की शरण की। शंकरी-वर्म-प्रवार के पूर्व सर्वसाथारण हिन्दू

१- वहीं - पुरुष्ट

२ वर्षा - पुरुष्

३- वर्षा - ५० १९१.

४- मा ने -- ी व शं पुर ११२

५- उ० ले०- क० गु० च०-- पृ० १००

पुरो हित तथा पंडित समाज के हाथ में थे। अधिकांश लोगों ने एक शरणीय मत को ग्रहण किया दूह शूह को नाम मंत्र देने लगे, हर कि प्रकार विपर्शत कार्य आरंम हुए- वे देवी की पूजा न कर पंडितों के नवन का लंडन करते हैं- शंकर की शिक्षा के जाठ की भाला जपते हैं। इमरत लोक नौड मत तेकर प्रष्ट हो गर हैं। यह स्थिति देव वासना जावार्य ने ब्राष्ट्रमणों को संबोधित करते हुए कहा कि जहां ऐसे मकत दिलाई दें उनकी माला उतार लो, वे अपमानित होंगे। श्रीध्यर महावार्य ने भी अपनी सम्मति दी। ब्राष्ट्रमणों ने देता कि शूह होकर भी लोग मागवत पढ़ते हैं और ब्राष्ट्रमणों को शिक्षा प्रदान करते हैं--इस प्रकार इन लोगों ने ब्राष्ट्रमणों की वृधि को नष्ट कर दिखा है। इस निर्णय के पश्चात लोग मक्ष्तों की माला उतारने लो और दूकूर की पूंछ पूंछ से भारने लो-- हन मदतों की वितंता करने लो और मक्ष्तों की नाना प्रकार से कदर्थना करने लो। ब्राष्ट्रमणों से मदतों की नाना प्रकार के कदर्थना करने लो। ब्राष्ट्रमणों से मदतों की नाना प्रकार के कदर्थना करने लो। ब्राष्ट्रमणों से मदतों की नाना प्रकार के कदर्थना करने लो। ब्राष्ट्रमणों से मदतों की नाना प्रकार के कप्ट मिते, एक दूसरे जालोचना कर मन्त शंकर के निकट गर।

वृहालां परुवा के पितृशाद के समय ब्रह्मानंद महाचार्य तथा बन्य पंख्ति गण उपिथत थे इसी समय संगर माजव आदि भवतों के सिक्स वक्षां आर। यहीं शंकर तथा महाचार्य से बनेक विष्यां पर तक हुआ। शंकर ने ब्रह्मानंद को संको जित करते हुए कहा कि आप तब पंख्यों में के के हैं, जाप बताइए कि कलियुक में शास्त्रों के ब्रह्मानंद महापातकी का क्या धर्म है १ ब्रह्मानंद महाचार्य कुछ समय के लिए भीन थे- इसोच विवार करने के उपरांत उन्होंने कहा कि पुराण, भागवत, भारत गीता आदि शास्त्रों का यहा निर्णय है कि कलियुक में नामवाम के ब्रितिश्वत बन्य आमें द्वारा व्यक्ति का उद्वार नहीं हो सकता है।

मदन गोपाल नूर्ति निर्माण :- करोला बद्धे को संगर ने आदेश दिया कि काण्ठ की स्ति मूर्ति का निर्माण करों, जिसे लोग हिर समकें । करोला बद्धे अत्यन्त आनंदित हुआ और बेल का एक खंड वाण्ठ उटा लाया। प्रत्येक अंग की आकृति बना कर वह मुख फंज की आकृति न बना सका । शंकर का मुख देखकर उसने प्रतिमा का मुख गढ़ा। ब्राह्मणों ने मदन गोपाल की प्रतिमा को प्रतिष्ठा पित किया। इसी समय शंकर ने समा- सदों को संबोधित किया कि आज से अन्य देवता की पूजा छोड़ दो आज से ईश्वर को

१- रामानंद द्विज -- गु० च०-- पुष्ठ १४१-१४२

र- वही ---- पु० १५२- १५३

३- वहीं ० पु० १५६-१६०

निशिक्ति एका -- वंदितों ने विदिक्ति राजा के सम्मुख शंहर के विश्व द थह अभिया का कि वैदिक धर्म के जाजार विजार को नष्ट कर शंहर पाणंड अमें का प्रवार कर रहा है। इस समय तक अहोम राजाओं ने हिन्दू ह धर्म को ग्रहण न किया था तथा विदिक्ष हाचार विधि का न तो उन्हें तान था न उन्होंने करी। उसे जानने की चेष्टा ही की। वो एक प्रश्न पूंच ब्राह्मणों को तिरस्कृत कर राजा ने इस अभियोग को समाप्त किया।

स्वर्गिव राजा ने सन्दिव को हार्थ। पकड़ने का आपेश किया। जारह मुख्यां भी संपित के साथ तहाबता के लिये गए एक और की रता का मार मिट्या मुख्यां को और शेष तीन पता में अन्य लोग रहे गए। मिट्या मुख्यां की आरे हैं हार्थ। प्राथ माग गया। मुख्यां लोग मुख्यु दंह के भय से अपना शर्रार है भाग गए। ज्ब संदिक को यह सूचना प्राप्त हुई कि हाथी माग गया, वे अधिक रूप्ट हुए और मुख्यों को लंदी करने की आजा दी। कंतर के जनार मनु को दूतों ने होर से बांघा। राजा की जातानुसार अने मुख्यों और मनु जनार को प्राण दंह दिया गया।

माञ्चन के मुख से छिर जनारी की मृत्यु समाचार प्राप्त होते ही रंकर ने सन सममा लिए। ब्रह्मेंम राज्य में शांतिपूर्वक धार्म और शास्त्र कर्ना व्यांमय करों गरें।

बर्दीना निरंत से यह जात होता है कि संगर को पकड़ने के लिये अहोम राजवार ने उस अस्य भी दूव भेजा जब वे जाने की तैयारी कर रहे थे। सब नदी की घार के निपतित दिशा में जाने के लिये प्रस्तुत थे : इसी अस्य देववाणी हुई रेकंटर दुम बारा की और जाशों उत्पर्द न जाओं। यो महापुरुषों ने हुस वाक्य को जुना, दिन में नाव पर नोमना खाद, रात में अगरा की और नाव सांस दी।

शंकरदेव ने कराम की इस विषम स्थिति को देता और नरनारायण की प्रशंता सुन ने के बाद ही वे काम रूप की और जाना चाहते थे। गुरु चरित के युसार भी द७ वर्षा की अवस्था अर्थात १४५८ शक से प्राय: ६४।६५ वर्षा की अवस्था क्यांत १४६५-६६ के मीतर

१- वर्श ० पु० १६६

२- म० ने० -- ीि० शं० पु० ११७

३- रामानंद द्विष - गु० च० ५० १७६

४- वही पु०१६२-१६४

u- मo नेo - शिo शंo - पुo ११८

⁴⁻ वहीं पुरुष

सीर भाध इवारा कामरूप ग्राए। वेजवरुवा के मतानुसार वे गांमों में ७।। श्रीर घूवा-दाट में ४८ वर्ण रहे ।

ेजवहान ने 'पत्नी प्रसाद' शादि कई नाटकों को पाटकाउदी में दिसा कहा है, राभिष यह सत्य नहीं है। राभनरण तथा स्थागुरू परित ने प्यप्ट कंदेत विशा है कि संबद देव पत्र असम राज्य त्याग करपेटा पहुंचे यहीं चूनपारा में प्रवास करते एक उन्होंने पत्नी प्रसाद नृत्य का बायोजन किया । निश्चित ही एको पूर्व एस नाटक की रचना हुई छोगी। जलकान विश्वविधालय के मूलपूर्व अध्यापक शंगिकानाभ गरा जा यत है कि पत्नी प्रसाद अंक की रचना १४४० शक में हुई।

कपलावारि में मनौरमा आह की मृत्यु हुं। यहीं उनका दाह तर्भ ांखार संपन्त हुता । यहां से चिरित्या के मूल के निकट गर चूनपारा में एशार्थ। रूप से रूपने का प्रबंध लंकर ने विया। यहीं उन्हें मालव की मांति प्रिय भात प्राप्त हुता— उनका मिसद नाम मनानंत साउद था। शुरू जन की की ति सुन कर ये उनकी चीर नामृष्ट हुए। संकर ने नारायणा नाम से उन्हें मुकारा । कालांतर ये नारायणा ठापुर अधना ठापुर बाता के नाम से प्रवित्र हुए।

भनो (पा श्राह के आह के उपलंश में नाम की तिन्नंद्वा का 'पत्नी प्रताद नाच यात्रा महासमारोह पूर्वक चूनपारा में नंपन्न हुवा मिर्टू। काट कर महतों के गर का निम्हण किया गया । करवीचा चरित के अनुदार नारायण ने किया छोते समय गुरू है 'गुणमाला' व रामचरण के मत है 'मिरित प्रदीप पोर्था ते गर वर और इस पोर्था को गुरू जावित कर वर के समस्त लोगों को मिरित यमें में शरण दें। इसके निपतित कथा चिता में है 'ठापुर जाता ने परिवार गुरू के निमट शरण ही।

तांतीकृषि बादि स्थानों के बनेक लोगों ने चूनपारा में शंकरी घर्ग ग्रहण किया।
बूढ़ा गोपाल नेमी यहीं शरण ली। रामनरण के मत से शंकर चूनपारा-पालिंगि मैं केवल
द: मारा रहे-- देत्थारि के धनुसार पालिंगि में स्क वर्ष ठहरे। वहां से वे गनक्कृषि अथवा

१- म ० ने० -- शी० शं० पु० १२३

२ उ० ले**० ---** क**० गु० च०** १०२

३- म० ने० --- शी० शं० पु० १३०

गणाला हा भें तिल गात ठारे । जुता रहुचि वाचे स्था उन्होंने घर वाही की कावरणा भाजव को सोंप दें। । करकाती तात : किट हुता रिकूल व भुतार पाड़ा भें घर आदि निर्माण कर संबर स्थ वर्ष ठारे । यहीं रुकिमणी का देशांत हुआ । खुट उन्हें इस एका में रहना उत्म न लगा और वै सब मती सिंखा पाटवाउकी पते गर।

पाटवाउदी में घोतुलंदा जिल के समीप वर्तमाँ नामक वन को नष्ट कर संगरदेव ने नामकर तथा महतों के लिए हाटी घर का निर्माण कराया । हाक महेरवर नेशीम के अनुतार खंदर १४६८ सक में पाटवाउदी बार । वरित पोधिकों केवतुतार शंतर पाटवाउदी में बोवह वही तक रहे । पाटवाउदी में महतों की पंचा हात के जिल के खुदत है जब है सनान वर्दे का रामवरण ने उन महतों के नाम की नाविता दी है— वह इस प्रवार है— गाध्यपंच, नारायण डाकुर, राम राम पुरू, सब्बेक्स वरमानंड , हजार गोविंद, बहमद्र, वर्तोराम, बूढ़ा गोविंद, बहमद्र, वर्तोराम, बूढ़ा गोविंद, बहमद्र, वर्तोराम, बूढ़ा गोविंद, बहमद्र, वर्तोराम, बूढ़ा गोविंद, वर्ताद वर्ता पुत्र शीवता वर्तिना हो से पी दिन हार विद्या शीवता की पूजा करने को उन्हें उन्य नेव देवी की पूजा करने से रोका ।

वाभीव, शिर मंदिर में मनतीं तरित की तैन गारे थे--- नाम नवण उन्हें अभूत पान की मांति काता था । नाम तना प्त । शोने पश्चात के अपने पर तौत जाते के हैं है प्रत्येक दिन उन्हें देवते थे । एक दिन लंकर ने उन्हें अपने निकट पुलावर कथा कि जान से मनतीं के साथ नाम की जैन करों, में अन्य वस्त्र देकर पोक्षण करूंगा । यह दून वामीवर आनंदित हुत्स हुए और अपना घर छों है संतर के पास चले बार । वामीवर ने उंकर से अवस्थ अरण तो की की प्राप्नीन की । वामीवर के अनुरोध पर अंकर ने ताम राम गुरू को पुलावा-- रामराम गुरू ने वामीवर को हिर वरणों में शरण दिया । दैल्लारि के अनुतार वामीवर के अल्लाव है असहस्त हुए । उन्हारे बतिरिक्त में अन्य की गुरू न मानूंगा और तुन्छारे संग कृष्ण कथा सुनुंगा । यह कहकर वामीवर गुरू ने कृष्ण के पद में शरण ती ।

१- म० नै० - ीि० शैं० - पूठ १३२

[→] उ० ते० -- ग० गु० च० मुगिता पृ० ७

३- मा ने - ीि र्रं - पृ० १३६

४- रा० द्वि -- गुः च० - पुः २०६-२०७

५- दैत्यारि - गु० च० १६७

रंतर के ब्राइमण शिष्य अनंत कंदित ने गुरु की आशानुसार दशम स्वंध का मध्य तथा अंतिम भाग का रुपांतर किया। संतर दिवतीय बार की तीर्थ अमण से जब लौटे उसी राम्य कंदित ने दरम के पंद दिखलाए। गुरु ने इसे देख कर कहा 'तुमने मन्ति को कम स्थान दिया और युद्ध का विस्तृत वर्णन किया है। वेजनरूचा ने कंदित के दशम स्वंध के पद रुपांतर के संबंध में लिखा है, रंकरदेव की मृत्यु के पीछे ही यह रचना पूर्ण हुई इसे कंदित ने दशम के शेष में स्पष्ट कहा है 'संतर कृष्ण को समस्या कर केतृत गामी हुए। विका में बंदित ने उस्तेख किया है— तंमी दुल-कमत- विमृत गुणशाली केशन दात दल होंग्र के उधान और गोविन्द के प्रीवद से दशम की रचना की।

क्याचरित के अनुवार सार्वभीम भट्टाचार्य इसके पूर्व ही शंवर के शिष्य हो गरन थे। उसने उपरांत यो गिनी तंत्र, हरगौरी संनाद, रुद्र वामल, लात्चत तंत्र दी फिला इंद्र, पर्मतुराण , नवरोदय के देता स्वर्ग संह में शंकर को देशवर के तूला शंकित किया है। कीर्तन घोषा:- पाटवाउसी पहुंचने के पूर्व कीर्तन घोषा की एचना पूर्ण न सूर्व थी। यहीं संकर्तिव ने शेषा की रचना कर कीर्तन को पूर्ण किया । घृवाहाट से एक मकत ने जाकर शंकरदेव से उनिक जाम के लिये धार्म प्रवाहक की प्रार्थना की-- इस समय वे मध्य तराम के जशासंघा युद्ध की तैन कर रहे थे। ीि मदभागवत का प्रशम दिवतीय, तृतीय, सप्तम, अष्टम और दशम र**कं**ध का पद रुपांतर पाटवाउसी में हुआ-- कुरुदोत्र निमिनव सिद ंवाद की भी रचना यहीं हुई । बेजवरुवा का कहना है 'रु विमणी हरण मनित प्रहेश प्रतीप की रचना पाटवाउसी में हुई--पाटवाउसी ही में उन्होंने भागवत के स्कादश और व्वादश रक्षेत्र का पदानुवाद किया-- उनका का लिदमन नाट आदि और अन्य गीत भटिमा बादि की रचना पाटवाउसी में ही हुई बेद- बेदांत, गीला भागवत के लार का उद्धरण कर शंकर ने यहीं रित्नाकर ग्रंथ की एचना हंस्कृत में की । श्रंतरंग सादयों के शाधार पर निर्मर कर मिनत प्रकीय और रु निमणी उर्ण काव्य को बर्दीवा में र्वित कहा जा चुका है डा॰ नेश्रोग के अनुसार ेमत्नी प्रताद धूवांहाट में--- रिखा गया राम विजय की खना कुब विहार में हुई, रु विमणी हरण, पारिजात हरण, केलि गोपाल का लिनमन भी संमवत: इस समय की रचना नहीं है ।

१- म० ने० -- शी० शं० - पु० १४१-१४२

२- उ० ले० --- क० मु० च० - पु० ४३

३- म० ने---- शीर शं पुर १४३

अना दि पतन में शंकरदेव ने भागवत के मूल में ज्यो तिष भंग कर मिला किया है भाग ... का दिवतीय, दशम का पूर्व भाग और एकादश स्कंध का पदे हिंचीतर शंकर ने दिवतीय तीर्थं भ्रमण के पूर्व किया था । कहा जाताहै कि जिस समय वे इस दिवतीय रकेंघ का पतानुवाद कर रहे थे, उसी समय उनके प्रिय मनत ज्यांती माध्यव की मृत्यु हुई और उनका ह हाथ कंपने लगा, हाथ से कागज-त्याही गिर गई। दिवतीय उकंधा के पद भागवत द्विशीय त्यांवा के अदार्श: अनुवाद जान पढ़ते हैं । रामचरण के मत से तीर्थ से वापस शाने के पश्चात स्कादश स्कंघ की रचना की । दूसरी और कंअपण ब्राह्मण काशी के ब्रह्मानंद रांन्यासी से मूल भवित रत्नावती पुस्तक लाने के तमय गुरुजन रकादश के पद उतार कर सुनाने की कथा चारतों में थी। निश्चित ही यह तार्थ यात्रा के बाद की धटना है। स्कादश के पद लिलने में हरिवंश , प्रथम और खुंग्न तृतीय स्कंथा भागवत की भी अनेक कथा समाविष्ट की गई है। बेजबरुवा ने लिया है रेशंगरनेव ने पाटवाउसी में प्रवास करते समय श्राघ दशम की रचना की । इसके पश्चगत वे तीर्थ भ्रमण के लिए निकल पड़े । कतादि पतन में वामनपुराण का मिलण भी दिया गया है। निमिनव सिद्ध संवाद की खना एकादश रबंधा के पर्दों का स्पांतर है, इसकी रचना भी पाटवाउसी, प्रवास के पूर्व भाग की है। रामराम बाटा दश्म की कालि चर्चा से संतुष्ट हुए और गुरु से कालिदमन बाट की रचना के लिये आगुँह किया । पाटवाउसी में शंकर ने स्क के बाद दूसरी पुस्तक लिखना प्रारंभ किया । ठाकुर श्राटा ने त्रपना विस्मय भाव माधन से प्रकट किया । माध्यव और श्राटा दोनों लोग एक दिन रात गणक्कूचि से वाउर्वा श्राप । दोनों ने जब बिड़की से देला, गुरु जन पीथी लिस रहे थे। यह पज्तक के लिगोपाल नाटक थी।

ड्वितीय तिथी यात्रा आरंम कर्नेके पूर्व ही शंकरदेव के मध्यम पुत्र कमललोचन की मृत्यु हुई । कहा जाता है कि ड्वितीय स्कंघ मागवत की रचना के और ज्यंती माधव की मृत्यु के पूर्व कमललोचन की असामधिक देखांत हुआ ।

दैत्थारि ठाकुर ने इस बार की तीर्थ यात्रा के पूर्व ही शंकर नरनारायण के साचा म त्कार का उत्लेख किया है। इतना ही नहीं, उन्होंने यह भी लिसा है कि शंकर चिलाराय

१- उ० ते० -- क० गु० क० - पु० १०४

२- म० नै० -- शी० शै० पु० १४४

३- वहीं o पुo १४४-१४६

४- उ० ले०-- क० गु० च० पृ० १०५

५- म० ने० -- शी० शं० - पृ० १४८

के मक्त में दो तार ठहरे और पूतरा बार विताराय दीवान ने संगर्देव से शरण दी दिल्यार की माने में दी तार हिन्दीय तीर्थ यात्रा के पूर्व शंकर का नरनार्यण राज्य समा में विप्रों के गोचर :अपनाद: के संबंध में उपस्थित हुए । डा० महेश्वर नेशोग का मत है, यह घटना की कृम का उत्तट पत्तट जान पढ़ता है । इसके अतिरिक्त केजनरूवा ने लिला है कि राम शाटा की पुत्री मुक्नेश्चरी के मुख से शंकर का एक गीत सुनकर विताराम ने उन्हें शुलाने के लिये एक नाव मेजी और नरनारायण ने बृंदावनीया व वस्त्र बनाने को कहा । जिन्तु चरितों के अनुसार यह घटना दिवलाय दीर्थ यात्रा के बाद की हो सकती है ।

चैतन्य का कामरूप शागनन :- नेजबरू वा के की संकर्दिय शारू नाध्यविवे ग्रंथ में हैं भी चैतन्य मणिपुर में संन्याक्षा वेश पारण कर शार शीर धर्म प्रवार क्या । वहां से शा हाजों में खुळ विन रहे, हाजों से लौटते समय संकर्दिव शौर माध्यवदेव से उनका साधानकार पाटनाउसी में हुशा । किया भी प्राचीन वरित पुस्तक में वैतन्य- संकर का यह क्या नहीं दिखाई देता है- किया प्रकार इसका विश्वास नहीं दिखाई देता है-

भारतीय तीर्थ दोत्रों के मततों से मिलो के लिये, शंकर ६७ वर्ण की अवस्था, ऋषति १४६८ एक में तीर्थ यात्रा के लिए अभिमुल हुए । इस बार वे बृंतावन तक जाना चास्ते थे किन्तु कालिद आए ने माध्यव को संकेत है रखा था कि यदि प्रभु बृंदावन जायंगे, तो कदा- चित वे वधां रोनलीटें—— अतस्य माध्यय यदि हुम न जाओंगे तो वे किसी प्रतार वहां न जा संकेंगे । बाह ने शंकर की वृद्धावस्था को देख कर ही सेता संकेत माध्यय को दिया होना ।

शंकर- मैतन्य शाजात का प्रवाद :- देत्यारि के बनुदार चैतन्य के स्थान था मठ, और मूचण के मत से जानाध पोम में शंकर चैतन्य ने एक दूसरे को दूर से देता । वरदीवा चरित के अनुतार दोनों ने एक साथ वैकार नटी का नाच जगनाथ दो अरक मंदिर में देता । रामानंद के चरित के अनुसार थी दोत्र में शंकर-चैतन्य

१- दैत्यारि - गु० च०- पृ० ११४

र रामानंद-- गु० च०- पृ० २९०,२६२,२८५

३- म० ने०-- नी० शै०- पु० १४६

४- वड़ी -- पृ० १५१

५- वही-- पु० १५२

क देखारि- कुठ १२ द्या

७ रामानंद- पूठ द्या.

की मेंट म तो प्रथम तिथी ताचा में हुई न द्विताय तिथी याचा में की हुई होगी में देखन हाता वहते हैं संग्रदेव वसी सक में :१४६८ सक में घहोम राज्य होड़ कोच राज्य यदि नहीं मी गए ती मी उनका पाटनाइसी से द्विताय चार तीथे प्रमण करने के लिए जाते काय नाइना था पुरी में :निका तीही नहीं सकता क्यों मि जीवन के शेष यठारह वृष्टी कैतन्य ने पुरी में ही समाप्त विथा: चैतन्य के साथ वाद्यात होना यसंमव है कारण चैतन्य की मुत्यु र४५५ सक में हुई । डाठ नेश्रोण वा मत है कि देसा लगता है कि चरितहर कारों ने तास्तियम घटना को मूल गर उस युग के प्रत्येक महापुत्र वा का मिलन कीर्तन वारों से उद्येख में तिथा है।

क्योर के मंड में शंतरदेव :- देत्यारि के मंत से जगनाथ के गार्ग में गया तीर्थ पहुंचने के पूर्व विधानित के मंत से गंगा पहुंचने पूर्व, वेजवार वा), मेरीनेदी, जगनाथ पहुंचने के पहले शंतर विधीर के मंठ में प्रतिष्ट हुए । तानानंद ने दिशा है गंगा, गया, तीर्थ कर धूमते रामय शंतर कर्यार के मंठ पहुंचे । राम घरण ठागुर के अनुतार जगननाथ वर्शन के परनात, मूणण दिवल के अनुतार गया, वाराणली, कुरु पोत्र तीर्थ करने के पश्चात शंतर कबीर का मंठ देखने वालि नाम नगर तक वार । इस गमय कबीर मंठ में न ये लाकी नितनी ही थी-- क्योर की मृत्यु संठ १५७५ विठ के पूर्व हो गई थी । इतना अवश्य है किउस तमय समस्त उत्तर मारत में क्वीर के गीत मुखरित हो रहे थे ।

क्या चरित में दबीर के मठ का जिनरण इस प्रकार है :- कबीर के स्थान पहुंचने
पर प्रश्न निया कबीर का कौन है १ उत्तर मिला एक नितनी है । उसने बा रोवा की ।
उसका पित घर में न था । ऋत: गुरू वहां न ठहरे बौर एक पुरानी संगुठी उसे दी ।
पथ में भवत गणा शापस में चर्चा कर रहे थे कि हमने सुना है कि कबीर बदन हैं, यह कैसा
अन्याय है १ शंकर ने उत्तर दिया 'कबीर ईश्वर विराट ब्रह्म के बंश हैं।

रामानंद के मतानुतार कबीर का मठ देखते ही शंकर ने भाष्त्रव का मुख देखते हुए कहा किवीर को केवल मनत जानना- महंतों का स्थान तीर्थ से ेष्ठ है। शंकर ने देता, कबीर की नतिनी केवल राम राम शब्द का उच्चारण कर रही है। शंकर माध्यव को

^{8- 40 40- 40 --- 20 17.}R.

२- वहीं पुठ १५५

३- वैत्यारि-- गु० व० पु० १३४

४- रामानंद-- गु० च० पु० २५६

५- म० नै०-- शि० शं०

मनतों सिंहत देख खड़ी हो गई और अनेक प्रकार से अभिवादन िया और घटा भेरे स्वामी जाय घर नहीं हैं। इसके पश्चात वह घर से पाग : हाई और प्रार्थना की जाप बरण भी तें। शंकर ने प्रियवाणी द्वारा उसे जाशतासन दिया और पर न भोया। कवीर के स्थान जा दर्शन कर मनतों सहित हांगे बढ़ें।

वैत्या ए के अनुसार रंगर ने कबीर के स्थान में एक स्त्री देला और उससे पूरा किए जा कौन है १ इन्हें विष्णु भवत जान उसने उत्तर दिशा में उनकी जीव निर्तिती हूं। इसके परवात दोनों और से परिचय के प्रश्न किये गए। निर्तिती ने अपने पति जा पाग सा कर उनके सम्मुख एक विया तथा निवेदन किया आप लोग उससे पद पोछ हैं। दुर्माण्य है कि मेरा क्सम यहां मन उपस्थित नहीं है इस पाग पर गिरी घूलि तेने से उसे सीभाग्य प्राप्त होता। राम राम गुरू ने उस पाग पर वरणा न रजा- अंत में शंकर ने चरण से पाग का स्मर्श किया।

जानाथ तीन में :- वसायरित के प्राचार केरदेव कान्ताथ के सिंस्ड्रार में तीन मना देशे । यहां इन्निकां , मार्कन्छेय भूष हुय, सन्द्रमुम, बंकन त्र तो पर, और सोकताथ कन मांच तीनों को कर उसका पवित्र स्थानों के दर्शन किया । सागर में रनान करते समय सागरजूति वस्त्र जास करते की पांचने के लिये रहा जास करते की पांचने के लिये रहा । उन्होंने कान्ताथ में घोजा जमा गीत की रचना दें। । उसके ब्रोतिर का कान्ताथ गांच में तो वैतन्य इत्यार , रामानंद, नित्यानंद, सिंद्र कान्ताथ होट कान्ताथ गांच मंदर में तो वैतन्य इत्यार , रामानंद, नित्यानंद, सिंद्र कान्ताथ होट कान्ताथ गांच कार्ति, वर्ष गारिम, बर्ते को सिंद्र कार्ति कार्ति कार्ति कार्ति होते हैं वर्ष कार्ति कार्

१- राभानंद -- गु० च०-- पु०-- २५६-२५७

२- देत्यारि -- गु० च०-- पु०-- १३३-१३४

३- उ० हेळ --- क० गु० व० -- पृ० १५४-१५५

४- वही--- पृ० १५७

ए- मo नेo -- शिo शेo -- पुo १६४

पाटवालकी की और :- कटक नगर में पहुंच शंकर देव ने नाम बदेव को स्क रूपया रू सरीदने के लिये दिया । उस रूपर को देश घीली परारी ने करा देश पर गोपुल के काना का निन्ह है। इस रूपर को तुला पर एस उतने ही मार की अन्य अरतुरं माअव को दे दें। तहां से वे महानंद वैस्ता के पार जाहाद पुर और बूज़ नदी के तीर बारेएकः पहुँचे । यहाँ माध्य ने एक बूढ़ी को रोते हुए देता । उन्होंने उससे प्रश्न िया ेबूढ़ी तुम कर्गों तो एकी को १ बूढ़ी नेउटर दिया वित्य नेता एक की पुत्र है वह मी सिपाही बन कर युद्ध में कता है। माध्यव ने उत्तर दिया े प्रमहारा बेटा पच्चीस वर्षा भा है, उसकी दाई। नहीं निकली है, मुख चपटा है । ऐसे उदार से पूई। अल्यन्त प्रतन्त हुर्रिशीर नावल प्रत्यादि वस्तुएं किया मू त्य के दे दिया । यहाँ से वर्दमान,क्यारमुखुरी, निवश गोजीनाथ, शांतिपुर कटना, वा विभगंज, मुनवीवाज, गंता है तट पर जंगिनपुर पहुंचे । यहां ने मगनगोता में रहं भनितपुर घाट से पड्मा पार हो पुतुरियागंज में ठहरे-- ना लिंद्री गंगा में त्यान कर चंदा गंज में रहे। चिलिमपुर्वनाजपुर गोविंद गंज घोराघाट होते हुए सिंगियाणंज पहुँचे । सिंगियाणंज जूचनिहार राज्य का भाग था और यह चिलाराम का गांव था । इसरे दिन प्रात: नतीया नदी के तीर लाचिंपुर गंज सीनकीण के किनारे मदार्गंज प्रवास कर पाटवाउसी पहुंचे । ह मास के बाद शंबर महतों सहित पुन: पाटवाउसी पराशुन नास में शास है

र्शंगरीय ने पाटनाउसी में स्कार को स्थापना की, ीमइभागनत शास्त्र के अनुतार विश्व वेष्णाय प्रमें प्रधार करने की इच्छा प्रकट की— नाना शास्त्रों के तर्क इवारा तंत्र-मत को निर्मुत करने की चेष्टा की । इससे ब्राइमण हंकर से इनेषा गरनेत्त्रों । माध्यव ने विपद की यांचिक शास्त्रों देख, ताद्धादि को लोप न कर तंत्रमत को कुछ परिमाण में रसने का श्रुरोध करने पर रचित शास्त्रों को नष्ट कर विधा । देल्यारि ने लिला है कालि शुद्धियों करते पर रचित शास्त्रों को नष्ट कर विधा । देल्यारि ने लिला है कालि शुद्धिरों करत मिले । सुपत्रक दशनैधा कल गिले 'स्कादशी दिन मुंजप मात मूझत नलें तुल्सी पात । इस प्रशार के विदूत्पात्मक पथ लिल कर मनतों की सिर्ली उड़ाते थे । यह

१- उ० लेल--- क० मु० च० --- पृ० १६०

२- वहीं --- पृ० १६३

३- वही --- पृ० १६४-१६६

४- वही --- पु० १६६

५- वहीं - पु १६६

देश हैं है नाता शास्त्रों का तत्व उद्धार कर एक पुस्तक रिकी, किन्तु नाभाव की वात स पर इसे नक्ष कर भाषां सदीने की तिन की स्थना की ।

्रापर्क्रिकी मुझे जनलिएना व मुन्देश्वरी ने मुख से जिलार्क्रिन नेरिराम चरणि तामु मिन शुन भुग्ध हो गर तीर संग्रेव गा पर्जिंग पूछ उन्हें लाने के लिस नाव मेल जिला । संग्रेव ने विलाराम्ह को सरणा दी । किथ्यत्व ग्रहण करने के पश्चात दी तान चिन्ताराम संग्रेव के विष्णाव धर्म के प्रभार में विस्तार स्वावता दी यह इतिहास का जिल्य है। संग्रिक पुत्र रामानंद मी जिलार्क्ष के जान्तिय में कार्य करते थे। यह चिल्वित है कि वनलिएना के योग से ही संग्रीर चिलार्क्ष ता दक्षि हुता ।

वागी महाचार्य के पुत्र, वाग चक्रवाति, वादहन्त हिराह, मिराह, वेदेरा कंदिल, यह सांच मुख्य भीन कोन ब्राह्मणा ने तांकिंग तथा शास्त करा वर प्राच के परवारायण से निदेवन किता कि शैंकर किती को नहीं मानता , देव, देवी, ताद जिप्ति, पूर्ति को पानी में फेंकता है, भायका को तोड़ पद कर ता है, ब्राह्मण, गंगा, ब्राही, शास्त्राम को नहीं मानता है और न पूछता है—— ब्राह्मण, कैवर देवत, कोन तथ मजते और एक शाध साहे हैं, ब्रुवसील, जर्म, क्र्रू, तेद, नी ति को बोड़कर शुक्तारे देश तो जनानारी कर दिया है । वेद, मानत के सम्मत् वर्ण नव्द होंने पर राज्य का नास होता है, प्रता कात सात से पी दिव होते हैं। स्वाप्त वर्ष होंने पर राज्य का नास होता है, प्रता कात स्वाप्त से पी दिव होता है। सात वर्ष सुनकर शिवक ब्रोधित हुआ और हहा मेरे रखते के से केता करता है है सात वर्ष से पी पी पी केता केता है है सात वर्ष से पान से पी से पी से केता प्रतम किर, किन्तु है श्रीतिक की या सर्थ । किन्तु है श्रीतिक की या सर्थ । वारायणा उत्तर और ब्रूलनांद को एस समय पत्र है लिए है श्रीतिक की या सर्थ पत्र पत्र पत्र पत्र प्रतम किर, किन्तु है श्रीतिक की या सर्थ । वारायणा उत्तर और ब्रुवलांद को एस समय पत्र होता ।

प्रारंभ में भूह रेसे पत्न किए गए िससे शंहरदेव के तंतंत्र में दूछ तात यो सके । श्रोक प्रमार की यंत्रणा और शक्ति का प्रयोग हते, पर भी इस बीनों व्यक्तियों ने शंहरदेव के संबंध में कोई हुबना न दी ।

कोच राज्यसमा में शंकरदेव :- क्याचरित के निवरण के शतुरार शंकरदेव सभी मनतों सक्ति कुछ दिन तक छिपे रहे । चिताराध्य ने शंकरदेव से अनुरोध्य दिया कि वे राजा नरनारायण

१- में ने शिंठ शेंठ पुर १६७

२ उ० ले०-- क० गु० व०---पृ० १०६

३- वही पु०१७६

४- वडी ० पुर १७७-१७८

५-वहीं ५०१व्य

की राज्यसमा में पधारें और यह बाश्वासन दिया उनके साथ किसी प्रकार का दुर्व्यवहार न किया जायगा । शंकर मध्य दानव-दारुण देव वरम् श्रादि तौटक श्लोक पढ़ते हुए राज प्रासाद में प्रवेश विधा । कहा जाता है कि बार श्रीक पाठ कर राजा को कार्शान्द्रि स्थि।--- ेजय जय मरल नुमति रसजाने गा कर उनकी प्रशंसा की रेराजा उनकी विद्वता पर जत्थन्त प्रतन्त हुए और सादर बाग्रह किया कि वस से ाप प्रात: गाल मेरे यहां बाया करें बौर मध्याइनोचर समय नुणु के यहां रहें । जून निरार के दरबार में लेंगरदेव तीन मास तक बाते जाते रहे और विरोधी यह का लि अपने फताधा पांडित्य इवारा यंदित विया । दूसरे दिन शंकर ने विन्दी गोविन्दा गोर्थायतमानन्दा मटिमा गया । और राजा को शाशीविद दिया महाराज जाप दिवरीया के बन्द्र जैसे हों, धर्म प्रशास युवत हो तिसरे दिन राज समा में शंकरदेव ने मिटिना काकर राजा की प्रशंसा की हासि सभा द करू वह थिए मल्ल नुमतिक सभ नास्त्रिय वीर। इस दिन भी ब्राइमणों ने उनके विरुद्ध यमियोग तनाया कि गंगा, मधा, कार्थ। सीधी चौजों नो शंगर नह नहीं मानते हैं। राजा ने पूजा वया यह सत्य है ६ जिए ने उजर दिया भहाराज सुनाकात में बार्ष वर्ण तक समस्त तीर्थों का प्रभण कर स्नान जान किया, अर्था कुछ है। दिन पूर्व गंगा-जगन्नाथ कर लोटा हूं भेंत्र में ब्राइनणा ने रंतरदेव से बतुरीया निया 🕦 जप ब्राङ्गण की जीविया का नास न करें। इस पर संकर ने अंगुठे से पृथ्वी की स्परी कर वनन विधा थिव ाप लोग मधिल का विरोधा न करें तो कौन प्रामर है जो हिंदा करेगा । इस प्रकार यह अनुभान निया जा समताहै कि शंकरदेव विप्रों के प्रतिकृत न वे और न उनके प्रति विसी प्रतार का इवेषा संतर के मन में था ।

किनंद्र :- साठ शिष्यों सिंहत किनंद्र नामक पंद्धित शंकर से तर्क शास्त्राणे जरने के लिये परिचम से आर । राज प्राचाद में प्रोश करते हैं। हिर घ्विन की राजा के प्रश्न करने पर बताया कि मैं पंद्धितों से तर्क करना चाहता हूं। पश्चिमी पंद्धित की आश्चर्य हुआ, राज्य के सभी कमेंचारा संस्कृत बोस रहे थे। संस्कृत के श्रातिरियत और कोई बोला यहां नहीं सुनाई देती थी। स्व दिन हनके शिष्य दीवान चिलाराम के स्थान पहुंचे और देता लंकरदेव

१- वहीं पु० १व्य

र- वहीं पु० १८६

३- बैत्यारि -- गु० च०-- पु० १७६

४- उ० ते० -- क० गु० **च०** -- पु० १ ह३

वंदन की बौकी पर दिराजमान हैं। शिक्यों ने शंकर से कहा 'शूद्र को मागवत पढ़ने का अधिकार नहीं है। क्या गुरु चरित के अनुसार 'ब्राइमण ने शंकर को नहीं पहनाना और पूढ़ा शंकर कहां रहता है। शंकर ने उपर दिया यहीं है। हम शूद्र हो न, क्या ग्रंथ परि दिस रहे हो ? 'नवम रकंथ भागवत 'उपर मिला। विप्र ने आपित करते हुए कहा शूद्र भागवत लिख पढ़ नहीं सकता 'शंकर ने यह उपर दिया यदि महाभागवत को दिवज-गण पढ़े उन्हें मनसिद्धि प्राप्त होगी, नाक्रिय पढ़ेगा उसका राज्य सागर तक होगा और शूद्र पढ़कर नवनिधि को प्राप्त करेगा। इस प्रकार अनेक श्लोकों का उद्धरण दे यह सिद्ध कर दिया कि भागवत पढ़ने का अधिकार चारों वणाों के लोगों को है।

एक दिन राजा ने ब्राइमणा पंडितों से आग्रह निया, कल तक मुके बारह स्कंधा भागवत सुनाना है। ब्राइमणों ने उधर दिया बारह स्कंधा भागवत सुनने के लिए बारह मास का भी समय कम है। व हां ईश्वर ही ऐसा कर सकता हैं, मनुष्य की सिवत नहीं। दूसरे दिन राजा ने ब्राइमणों से प्रश्न किया किया जाम सुना सकते हैं। ब्राइमणों ने उधर दिया महाराज ईश्वरीय कार्य की सिवत मनुष्य में नहीं है। शंकरदेव से पूछा जाम सुना सकते हैं १ हां महाराज जो हो सकेगा वह सुनाऊंगा। शंकरदेव नेदों दंह में गुणमाला गा कर सुना दिया। राजा गुणमाला सुनकर अत्यन्त हिंदित हुश और ब्राइमणों से कहा जिसके लिए जाम बारह मास समय वाहते थे, उसे रंकर ने दो दंह में सुना दिया।

डा० नेश्रोग का मत है १४८० शक के श्रास पास शंकर्षेव- नर्नारायण का सादाा-तकार हुआ होगा । इसके परचात की बार वे विहार से बरपेटा श्रास गर । बेजबरुवा ने लिखा है कि प्रथम बार वे तीन मास विहार में रहे । बरदौवा चित में इसे हा: मास कहा गया है । एक बार दीवान चिलाराय ने उनको जन्म पुराण के कतिपय श्लोक स्तुवाद बरने के लिस दिया । इस समय शंकर ने कहा 'पाटवाउसी में इसे समाप्त कर श्राम को दूंगा । अंत में यह कार्य भार माथव को सींप विद्या गया क्यों कि वे हू स्व दीर्घ कर सकते थे ।

१- वेल्यारि -- गु० च० -- पु० १व्ह

[→] उ० ले० — क० गु० च० पु० १६३

३- वहीं पुरु २०१

४- मo नेo -- ीo रांo -- पुठ १७७

५- ड० हैं। -- वट गु० व० पु० २०२

राज प्रासाद में योगी :- राजा नरनारायण के प्रासाद में निर्विषय, निर्विकारी, निर्मेद्दा, निर्मेदा, निर्मेदा हैं उसके मीतर एक मोगी है कथा उसके संबंध में कुछ कहा है १ शंकर ने उपर दिया निर्द्धा कहा शंकर ने जाकर महाराज से प्रश्न किया महाराज को प्रश्न किया महाराज ने उसे मगा किया । लूण्यु सन्यासी ने एक बौद्ध मिद्द्या को भी घर में रखा था । दीवान विलाराम सम्मत्ते थे, शंकरदेव की मांति वह एक ब्रह्म का चिंतन करता है । जब शंकरदेव ने भागवत पुराण संस्कृत में पूछे, किसे पूजते हो, किसका ध्यान करते हो १ वह बार बार यही कहता में ब्रह्म का चिंतन करता हूं । शंकर ने दीवान से कहा थि ६ बौद्धाचार है, इसे मगा दीजिए । दीवान ने इस सन्यासी को अपने स्थान से निर्वासित कर दिया। वहा जाता है इस घटना से साइटा सन्यासी कूढ़ हो कर शंकर का पुरान तनाया और सर्वे वाणा है उसे बैधा-- वृद्ध दिन के बाद शंकर का स्थारध्य गिरने लगा ।

शंकर गोकुल, मधुरा, इवारका, वृंदाधन, गोवर्दन शादि बाए बन :की कथा सदैव कहते थे: कालिन्द्री, नत्म, घोसु, गोप गोपी की तीला चरित्र सदैव कहते थे। राजा ने कहा नाप जिस फ़रार मेहक पायस की, परिद्र शब्दिनिय की, मिना अनुत की, कामना करता है, उसी फ़रार में की यह लीला देखना बाहता हूं। शंकर ने कहा विस्य दिखा तकता हूं। नी दिन की थाशा समाप्त कर शंकर पाटवाडसी पहुंच।

प्रात: कात होट जाता तथा ठाकुर जाता ने सेवा की— इसी सम्य उजान जसम से जनंत कंदित दश्म के मध्य, रोज पद के इवारा सेवा की । कंदित ने पवित को हुस्व कर के युद्ध को दीर्थ कर किया था । यह रचना रंकर के अनुकूल न थी, जत: उन्होंने माथव से कहा में जारंग का भाग ते रहा हूं, तुम भध्य के भाग से आरंग करों । तार को ते और हिरवंश की कथा का मिल्या दे, संकर ने रुकिमणी छरण तथा कुरु पत्रित की—माधव ने राजस्य की रचना की । हाठ नैजोग का मत है, यहां रुकिमणी हरण नाटक की ही रचना हुं होगी, क्यों के रुकिमणी हरण काव्य वर्रवांचा में ही लिखा जा चुका था ।

१- वहीं -- पुठ २०५-२०६

२ वहीं o -- पुठ २०७-२० E

३- म० ने० -- ी० शे० -- १७६

वृंदावनीया वस्त्र :- इस विचित्र व स्त्र के बुनने में छ: मास से अधिक समय लगा । स्क वर्ष पश्चात स्करात दीवान चिलाराम को हिविष्यान्न कराके, स्क चौकी पर चटाई विद्याकर उस इस वस्त्र को फेला दिया । इस वस्त्र में वृंदावन के बारह बन और समस्त लीलार दिसाई गई थीं, इसके ऋतार स्पष्ट और पठनीय थे । राजा इससे परम संतुष्ट हुए तीस रूप्या, चार सुवर्ण-मुद्रा और स्क जोड़ा वस्त्र दिया । इसके अतिरिक्त दिग-विषय में प्राप्त युधिष्ठर के यह की वासुदेव मूर्ति भी दी ।

राम विजय नाट:- व स्त्र को देखने के पश्चात चिलाराम ने इंटर से रामायण के नाटक लिखने को कहा । स्क रात में उन्होंने नाट, सूत्र गीत, मिटिमा क्या पूर्ण की, राजा को सुनाया राजा हसे देख सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हुस्-- उनकी तीस पत्भियों ने प्रत किया और संकर देव की सेवा की । राम विजय नाट उनकी अंतिम रचना है । प्याण के गण शलीक में शक्य दिया गया है । भी संकर दिया गुणोन्द्र शाके जातो गमतु हरिपदं खिला किया बंदे हित १४६० ।

ग्रात :- शंकर्देव ने प्रथम दीर्थ याजा ने यद्रिकाश्चम में भन मेरि राम नरणाहि लागुं गित की रचना की थी। पाटवाडकी में उन्होंने दो शतक है अञ्चल गीत लिते। क्याचरित के अनुसार इनकी संस्था २४० थी। इन गीतों को कमला नायम अवराव है गए ये और वहां पूरवा वायु से घर जल गया शंकर को इन गीतों की पुस्तक के जल जाने से लेव हुआ, उन्होंने माध्यव से कहा भेने जम से ये गीत लिते थे, वे जल गर्थ अब तुम गीत रचना करों, में न करुंगा। जो गीत महतों के मध्य प्रयालत हो जुने थे, उनका संग्रह माध्यव देव ने किया।

मैतिम बार् शंकरदेव पाटवाउसी मैं स्क भाष ठहरे। नारायण ठाकुर और दिवाण तट के मनतों सहित कथा- वार्चा चलती थी। अन्य मनतों सहित लंकरदेव पाज्यदेव के

१- उठ ते० - क० मु० क० -- पृ० २१३

र- वहीं पुरु २१४

३- उ० ले० -- क० गु० च० -- पु० २१३

त्थान गनकतू चि पहुँचे और यहां स्क रात ठहरे यहां माध्यव के साथ स्वन्हंद रुप से विचारों का आदान प्रदान हुआ और शंकरदेव ने अपना हूं हुदूय लोल कर रल दिया। भाष्यव से कहा 'मेरा धर्म सात पीढ़ी तक प्रवर्तित करना । दशम- कीर्तन में मुफे पाश्रोगे -- तुम बढ़ा घर और बड़ा मेल न करना, नहीं तो दुली होंगे और कीर्तन शास्त्र संग्रह करना।

शंकरदेव ने मनतों से निदा लेकर नाव इकारा विद्यार की और प्रकान किया--पानी-कुं घिर्से मनत गण उन्हें देखते रहे । विद्यामारी भूष्रा पाटिंगरी के घर रह् योगी छोगा केलमी प यदुनाथ, होते हुए दूसरे दिन काकतकूटा में नाव वांध्य दी । दूतरे दिन शंकर राजवाड़ी गए । यहां कमलिप्रया और चिलाराम 'ने उनका सत्कार किया । यह निश्चित है कि इस बार की विहार यात्रा में उन्हें आठ-दम दिन लो होंगे ।

बेजवरुवा ने क्ति। है इस बार संबर देव डाई वर्ष विदार में रहे और यहां के काजी कैता के वर्षाचे को लाट कर सब का निर्माण किया--यहां से हेढ़ वर्ष के पश्चात मार्च व वांकुता गर । डा० नेत्रोग का मत है कि यह कथा अन्य चित्र पुराकों में इसके पूर्व दी जा जुकी है।

रक दिन राजा नारायण ने संक तेन है अरण देने की प्रार्थना की । इस और वे राजा, नजी, कर्मकांडी ब्राइनण का गुरू है न होने का नुद्ध रंडरूम दर कु थे। इसके यति रिक्त यह भी था राजा सान्त मत की और मिक्क आकां जीत थे— दो वर्ज पूर्व कामस्था मंदिर का जीणाँडार जियाजा चुका था कहा जाता है संकर्दन न्यारह दिन राजा है न भि । एक दिन राजा ने उन्धें स्वयं चुलाया, नाजा प्रकार से सम्काने पर एक राजा एक्मत न हुए । केल तक्षेत्रा जायगा, कह कर संकर्दन चिंतित मुद्रा में अपने आवास की और लौटे ।

काकततूटा नामक स्थान में,माद्रपद २१ वृक्क्यितिवार,क्ष्मिल द्विवतिया,मध्याङ्न वेला लुक्न भोषो, बाद्रा नवा त्र सक् १४६० में शेकरदेव ने नर देख त्यान, राम नाम स्मरण कर

१- म० ने० -- शि० शं० -- मु० ४ ६५

२- डo लेo -- कo गुo चo -- पृo २९ E

३- वहीं -- पुठ २१ व-२१ ह

४- म ने० -- शिक शेक -- मृक १ दर्ब

प्- मा नेव-- ीि शंव -- पुठ १८७

वेशुंठगामी हुए । रामानंद के अनुसार दिवतीय खंघ की रचना के पश्चात बुधवार के दिन उनके दाहिने हाथ की गांठ में एक फोड़ा हुआ । रात मर शरीर ज्वर तथा पीड़ा से पीड़ित था--- प्रात: गांत उठ, उन्होंने स्नान घ्यान किया । माद्रपद शुक्त दिवतीया वृहस्पतिवार, एक प्रहर व्यतीत होने पर शंकर ने शरीर त्यागा ।

१- ड॰ के -- क गु० व० पृ० २२४

२- राठ नैंठ -- गुठ नेठ पुठ -- ३११

३- वर्षा ---- पुठ ३६२

द्वितीय त्रध्याय

माध्यक्षीय का जीवन वृत

माध्य बेव का जीवन वृष

जन्म :- माध्रव देव का जन्म वर्तमान लक्षीमपुर जनपद के शंतर्गत लेटेकुपुत्ती पार हरिसंग वड़ा के घर,१४११ शक में ज्येष्ठ मास के जमावस्या तिथि,रिववार के दिन भरणी नज़ अर्द्ध रात्रि में हुआ । जन्म लग्न के संबंध्य में वरित पुस्तकों में अत्यध्यिक मत भेद है। रामानंद के अनुसार उनका जन्म वैशाध्य मास, शुकल पद्म नवमी तिथि को दो पहर को हुआ । रामराह की संत सब की वंशावती के अनुसार १४११ शक, ज्येष्ठ मास के रिववार कृष्ण पंत्रमी को माध्रव देव का जन्म हुआ । बरदौवा चरित के अनुसार १४११ में ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा,रिववार की आधी रात को माध्रव देव का जन्म हुआ । बेज्बरु आ के उद्घृत व चरित में है कि १४११ शक में ज्येष्ठ मास की प्रतिपदा को माध्रव का जन्म हुआ । डा० महेश्वर नेओग का मत है कि माध्रव का अविभाव का चन्म हुआ । डा० महेश्वर नेओग का मत है कि माध्रव का अविभाव का चन्म हुआ । डा० महेश्वर नेओग का मत है कि माध्रव का अविभाव का चन्म हुआ ।

पिता का रोग :- तेटुकुपुतुरी के पार घर बना कर माध्यवदेव के पिता माध्यव और अपनी पत्नी के सिंदत रहे । कुछ दिन पश्चात माध्यव तक ईंग-ईध्यन संग्रह करने के योग्य बढ़े हुए । इसी समय उनके पिता जिंजियात : ऋंकुपीड़ा रोग हुआ केवल अग्नि से सेंकने पर ही पीड़ा कम होती थी । वे नाना औष धियाँ के रेजन के पश्चात ही रोग मुखत हुए ।

१- क्या गुरु चरित्रभूमिका-पृष्ठ - उ० लेला रु - १६५२ पृष्ठ ५०

क ज्येष्ठ माह,रिववार अमावत्या तिथि मरणि नदात्र,१४११ स्दिन यात्रते दुई प्रहर निशा इदम नरदेहा केवत हैहे गुरु जन।

३- शुक्ल नवमी तिथि वैसाग मासत । दिवा मागे जिन्मलंत दुई प्रहरत ।। रामानंद द्विष-ति गुरु चरिल सं० डा० नैज्ञोग पृष्ठ ६२

का० महेश्वर नेश्रोग- ी शी शंकरदेव पृष्ठ ६३

४- वही ६३

५- वही ६३

दे- देत्यारि ठाकुर - शि शंकरदेव चारु शि माधावदेव चित्त पृष्ठ ३१-१२७-१२६ पद

शिता -- व्याकरण,पुराण,काव्य,कोष मागवत का अध्ययन कर कायस्य शास्त्र की माध्य ने पढ़ा ।

हरिसंग बरा का संगत्याग :- माध्यव के पिता का समस्त धन विदित्सा में अधिर विश्वा मी श्रिक्त को साम को र उनके लाने पीने के लिये कुछ मी श्रेष्ठ न रहा । माध्यय किसी प्रकार अधक परिश्रम कर पिता-माता का पोषणा किश्विष्ठ प्रश्रम कर रहे थे । बढ़ कना िरि से पुत्र की यह दुवैशा देखी न गई तथा उन्होंने यह निश्चित किया कि ये उनकी असम के सक मित्र केयहां सपरिवार जावेंगे । गोध्यू लि बेला माध्य अपने पिता सहित उसके घर पहुँचे। उन्होंने देखा कि हस व्यक्ति ने चन लोगों की और प्रशन्ततापूर्वक दृष्टिपात विया न आदर किया । वक्तना गिरि, को देख वह व्यक्ति अत्यन्त चितित हो उठा और लोचने लगा कि यदि यह लोग धन की याचना करेंगे तब तो मेरि अधिक हानि होगी । अत: सोच विवार कर हन अतिथियों को ठेकिशाल या माढ़ता में बैठने का स्थान दिया । थोड़ा सा चावल लाकर इन तीन प्राणियों को दिया । दुलित हो हन व्यक्तियों ने मोजन किया । प्रात:काल दोनों व्यक्ति वहां से चले गर ।

नुष्यापी कित पुत्र और पिता :- नदी में स्नान करने के पश्चात माधव गांव से स्क लोकी का रस पान कर दोनों व्यक्तियों ने चुध्या की तृष्ति की । किसी भी कुटुंकी ने इन्हें शाक्ष्य न दिया और इनसे प्रश्न करते कि आप लोग साली हाथ क्यों आर १ किसी प्रकार शाक्ष पात का भोजन किया । अनेक दिन माध्य ने स्वयं भोजन न विया, माता नि पिता को मोजन सिला, उपवास किया ।

घाघरि माजि के घर :- माध्य के पिता का शरीर रोग गृत्त हो दिशा तथा शक्ति-हीन हो चुका था, कई दिन तक श्राहार न मिलने के कारण इनुसे चला न जाता था। माध्य अपने माता-पिता सहित उठ बैठ कर श्रागे बढ़ रहे थे। घाघरि माजि ने इनका सम्मान कर घर में रहने की व्यवस्था कर दी। माध्य के शरीर में स्वयं तैल मर्दन कर स्नान कराया। मोजन के उपरांत माजि ने तीनों व्यक्तियों को सुन्दर वस्त्र दिथा।

१- रामानंद - श गुरु चरित्रपद ३६८ पृष्ठ ६३

स- दैत्यारि ठाकुर - शंकर बाह्य माध्यय चरित । १३० पृष्ठ ३२

३- रामाचैद - ी गुरु चरित्र ३७६ पृष्ठ ६५

४- दैत्यारि -- शंकर मारु माध्य - १३१-१३२ पु० ३३-३४

u- दैल्यारि-- शंo माo चo १५८ पृष्ठ ३७

याघरि नाजि ने माध्यव को कोई वार्य न करने दिया । माध्यव और उनके बाता का मरण पोषण उसने विधा । यहीं माध्यव की परम सुन्दरी वहन उवेशी का जन्म हुआ । माध्यव का कृषि कर्म :- धाधरि माजि ने माध्यव को अपने सात हल देकर कहा कि तुम हनकी सहायता से लेती करो जिससे यहां से जाते समय तुम्हें खाली हााथ न जाना पहें । माध्यव ने धान तथा उद्ध्द की लेती शारंम की । उद्ध्द के बीज उन्होंने इस प्रशार बोया कि यह अधिक धना व जमा और माध्यव के पिता ने कहा कि जितना होना जाहिस था वह मीं अब न हो सकेगा । अत: माध्यव ने बेलों को उद्ध्द के अंकुरित पौधी तिला दिया पशुओं के चरने के परचात सारे लेत में की बढ़ हो गया, इसे देख तब लोग होंसे । पशुओं द्वारा चरे जाने के परचात लो हंठल शेष या, उससे उद्ध की उत्पन्न शिवाक हुई

माधव का होको राकू चिमं वास :- माधव के पिता ने घाषि माजि से विदां ती और उन्हीं के विवाह के लिये बर की लोज में होको राकू चि गए । ठेन्चुवानी वंघ के हों को राकुं जिया के पुत्र गयापाणि को उच्च कुल ा संतान समफ उनके साथ माध्य की ब देखा जिया के पिता ने कर विया । अनेक दिन माध्य वहीं रहे । मां को वहनोई के घर छोड़ माध्य अपने पिता के साथ वांकुका चले ।

रामानंद के अनुसार माध्यव के पिता के पिता का देहांत फानुन मास में धुआ । एक वर्षा तक वे नारायणपुर में रह कर्म-कार्य करते रहे । माध्यव ने अपि माला के साध्य आलोचना कर उवेशी का विवाह राम दास वैष्णाव से कर दिया । पिता के कार्य में अधिक क्याय हुआ और एक सौ रूपये से अधिक ऋण हो गता । ऋतः वे माला को राम दास के घर छोड़ वांहुका गये ।

१-	वही 0	१६३	38
5-	वधी	१व्	88
3-	वही	१ टप्	85
8-	वही	738	83
¥-	वही	508	४६

बांडुका में दैत्यारि के अनुसार माधव और उनके पिता वांडुका गर । रामानंद के मतानुसार माधव के पिता की मृत्यु माधव के वांडुका जाने के पूर्व हो गई थी । माधव के बड़े माई ने पिता और माधव का आदर सत्कार कर कुशल पूछी । माधव के पिता ने अपने बड़े पुत्र से माधव का परिचय कराया-- माधव ने रूप गिरि को नमस्कार किया ।

माध्यव की शिक्ता माध्यव ने वांकुक्त में शास्त्र पुराण तथा काय स्थिका वृष्टि को पढ़ा। संस्कृत के गध-पथ, न्याय, तर्क तथा नी ति की शिक्ता उन्हें यहीं मिली । डा० महेश्वर नेत्रोग ने राजेन्द्र अध्यापक को माध्यव का शिक्त क लिला है। पिता की मृत्यु कुछ दिन पश्चात माध्यव के पिता का यहीं देखांत छो गया। दोनों माझ्यों ने मिलकर पिता का शवदाह कर समस्त प्रेता दिक कार्य कर्म किया। वर्ष मास वांकुक्त में रहने के पश्चात माध्यव ने मां से मिलने की हच्छा प्रभठ की। रामानंद के अनुसार माध्यव के पिता की मृत्यु नारायण पुर में वैसास मास में हो गई थी। टेन्जुवानी की ब्रोर प्रत्यावर्षन शि तीर्थ नाथ शर्मा के अनुसार माध्यव के पिता की मृत्यु वांकुक्त में हुई।

माध्य के बड़े माई ने माध्य को सुपारी से मरी एक नाव देकर विदाई दी।
माध्य की माता, च वहन तथा बहनोई ने माध्य का श्रत्यन्त हिंदित हो स्थागत किया
माध्य की मां ने जब पित की मृत्यु का समाधार पाथा, उन्होंने शंब- सिंदूर का त्याग
कर सबस्त स्नान किया।

बन्या को जोरोन पहनाना कुछ दिन बाद माध्यव ने स्व सजातीय कन्था को जोरोन पहनाया । पिवाह के पूर्व वर अपनी परिणिता को कुछ असंगर प्रदान करता है, इसे ई अप्तिया समाज में जोरोन पहनाना कहते हैं।

१- दैत्यारि - शं० शारु माधव चरित वद २१० पृष्ठ ४७

रामानंद दिवल -- गुरु चाँरत पद ० ३६६

३- दैत्यारि -- शं० त्रा० माधव चरित २९२

४- देत्थारि -- शं० शारु मा० चरित २६३ पृष्ठ ४८

u- डा० महेश्वर नेत्रोग- ी शि शंकरदेव पुष्ठ १०५

⁴⁻ देत्यारि - शं आहा मा० चरित २१४ पृष्ठ ४=

७ रामानंद दिवल- भी गुरु चरित पद ३६६ पुष्ठ ६६

^{*} F. F. F. BO 140

३०- देत्यारि -- शं० वारु मा० नरित, पप २१६

माधाव का वांकुका वास माधाव देव कुछ दिन अपने अग्रज वंध्यु के साथ वांकुका में रहे। पेतृक उंपि के विषय में दोनों भाइयों में कलह आरंम हुआ । माधावदेव को मी संपि का ग्रंश प्राप्त हुआ और कुछ दिन उसका उपभोग उन्होंने किया । इस सम्पि को असत्य जान कर इसका त्याग कर, माधाव ने इसे अपने बड़े माई को दे दिया । अत्यन्त विनम्र शब्दों द्वारा संवोधित कर इस प्राप्त अर्थ को लौटा दिया । इस प्रकार सम्पूर्ण कलह नष्ट हो गया, माधाव के प्रति उनकी माभी का अपार स्नेह था । मां के दरीनार्थ माधाव की टेन्जुवानी जाने की इच्छा हुई ।

माध्य को संग्रहणी रुप चन्द्र गिरि की माय्या प्रात: काल जल गत मर्ने के लिये नित तर पर बार्ड, उसने देशा कि व्यक्ति बनेतावस्था में पड़ा हुआ है। जिल्ट जाकर देशा, बापु माध्य पड़े हुए हैं-- उन्हें देश करन की फेंक तरनाण घर दोड़ी हु वौड़ी गई। माध्य के अग्रज ने आकर उनकी सेवा और सहायता की। बार मास तक वे संग्रहणी से पीड़ित रहे, उनका शरीर अत्यन्त द्यीण तथा दुबैल हो गया। देवी पूजा तथा बलि रुपचन्द्र गिरि ने आहिवन भास में देवी पूजा के निमित्त वस बकरी सरीदा और इनकी वित दे भगवती की आराभना की-- इस अवसर पर ब्राइमणों को अर्थ दान दिया। रुपचंद्र गिरि की पत्नी ने मांस रांधा।

मांस की गंधा या माध्यव को भी मांस खाने की इच्छा हुई। उनकी नामी ने कहा कि इस मांस के मताण से संग्रहणी रोग और बढ़ेगा और कोई मी रूगण व्यक्ति मांस मताण नहीं करताहै। इसंस्त माध्यव की माभी ने मांस केसमान बालू का व्यंजन ला उन्हें किया। इसे ला माध्यव राल भर सुल पूर्वक सोये। रूपनंद्र गिरि को अल्यन्त हर्ष हुआ कि माध्यव का रोग छाग-मांस से दूर हो गया।

उजिनिकी श्रोर प्रत्यावर्तन टेन्चुवानी जाते समय माध्यय को गार्थ में समाचार प्राप्त हुआ कि तुम्दारी माता अत्यन्त शस्तस्य हैं,संभव है कि तुमस्तके दर्शन न प्राप्त कर सकी ।

१- वहीं २३३ - २३६

र- रामानंद द्विष - गी गुरु चरित - पद ४१५-- ४१ E

३- वही --- ४१६- ४२०

४- वहीं ० ४२१- ४२५

यह समाचार सुनते ही माध्यव ने देवी से प्रार्थना की कि बाह यदि मेरी माता स्वस्य होंगी, तो में बाप को एक जोड़ा ध्यवल वर्ण का छाग दूंगा । घर पर माता रोग मुक्त हो घीरे घीरे स्वास्थ्य लाम कर रही थीं । तीन चार मास के पश्चाल माध्य सुपारी कैचने के लिये बाहर गये और रामदास से कहा कि वे एक जोड़ा जाग देवी पूजा के लिये सरीद हैं।

रामदास ने बलि के बकरें न सरीदें। माध्यव के प्रश्न करने पर वे कह देते थे कि करा गृहस्थ के घर है। सक दिन मार्धिव ने अधिक बल देवर रामदारा से पूरा कि वे बलि के बकरें कहां हैं। रामदास ने उत्तर दिया जो जीव को इस लोक में काटता है, उसे वह जीव परलोक में काटता है।

शंकर के साथ माध्य का तर्क प्रात: काल स्नान कर दोनों व्यक्ति गुवा इत्यादि ते शंकर के दशार्थ चले । शंकरदेन शौच, बुद्धि स्नान, गुरु तेवा, नाम गिर्तन कर कर्तों सिंहत नौजाल में बैठे थे । कोटि कि सूर्य सदृश ज्योति, गौरवण, इताकृति माल, नील जाकुंचित केश, शंक प्राय प्रावा, कानों में मकर कुंडल सुशो मित था । इन रूप को देल माध्य सिंहर य उठे । रामदास ने दंखना किया और संकोच साहित माध्यन ने शंकर को नमस्कार किया ।

रामनास ने माध्यव का परिचय कराया कि यह दीघलपुराया के पुत्र हैं। मैंने इनके कहने पर पाठा नहीं लिदाशीर शापके समीप इन्हें लाया हूं।

दसने उपरांत संगर ने गांधाव को अपने निकट जांचन दिया और कहा में समफ गया कि शास्त्रों का परिचय तुम्हें नहीं प्राप्त हुआ है। महा मूर्व द्वांदित शास्त्रों के आतान के अहस्त्रक्षप्त पास्त्रकरूप अन्य देवी देवताओं की पूना करते हैं। यह तुनते ही माधाव ने अत्यन्त प्रवाह तुनत शैंवी में श्लोक पाठ किया। महामना देवी परभेश्यरी हैं और उनकी पूजा बराबर करते हैं ब्रह्ना, रुष्ट्र, बंद्र आदि अन्य देव उनकी ब्रह्मा करते हैं। दुर्गा प्रकृति की अंश है तथा उनकी पूना क्षी व्यक्ति करते हैं। संगर देव ने उत्तर दिया विश्व जानते होन कि प्रकृति भी हर्श्यर की सुष्टि है, अगादि, जनन्त, नित्य, विरंजन तथा

१- देत्यारि ठाकुर -- नी गुरुषित -- २४६-२४८ पुष्ठ ५७-५८

र- वहीं ० स्पृश

३- उपेन्द्र तेबारु- क्या गुरु चरित, पृष्ठ ६६

४- रामानंव -- श्री गुरु चरित -- ४५६-४६० पृष्ठ ११३

सनातन देव हरि हैं जो इस प्रकृति का सूजन तथा संहार करोड़ों जार करते हैं। कोटि कोटि माया जिनकी त्राशा शिरोधार्य कर सेवा करती हैं तीन गुणों के द्वारा वह विनोद में सुष्टि का प्रवर्तन करता है। ईश्वर से केड माया है, यह वाममा नियाँ का कथन है। पुराण, भागवत गीला में यह नहीं कहा गया है।

माध्यव ने कहा कि लोग घी के दीप की बिल देते हैं और इसके द्वारा स्वर्ग की कामना करते हैं। शंकरदेव ने उपर दिया कि विष्णु भवत स्वर्ग की वांचा नहीं करते- जिस प्रकार अपूत पान करने वाला व्यक्ति सारा पानी नहीं पीचा है। माध्यव ने कहा जो व्यक्ति कामरुप में रह शंकिका देवा की पूजा करेगा, अंत काल में वह देवी के प्रसाद से अनाय स्वर्ग पद प्राप्त करेगा। शंकर नेउचर दिया कि हिंसा कई द्वारा स्वर्ग प्राप्त नहीं होती-- जो वैष्णवी पूजा कर स्वर्ग लाम करते हैं, उन्हें यालना का मय नहीं होता।

माध्यव ने कहा कि शास्त्रानुतार गृहस्थ को प्रातदिन पांच बाल देनी बाकिए , जो पापी इन पांच यहाँ को नहीं करते, वे मरने के परवात नरक में पहते हैं । माध्यव को कृष्ण मिनत का उपदेश जो व्यक्ति कृष्ण के शरणागत हो, काय वाक्य मा से सुदृढ़ विश्वास सहित कृष्ण के पदकमल का रमरण करता है, इसकी तुला किसी से नहीं की जा सकती, जंत काल में वह विष्णुलोक् में स्थान पाता है । माध्यव ने कहा यह निवृति नार्गियों की बात है जो घर त्थाग, रिन्द्रयों का दमन कर विश्वत हो गये हैं । जो प्राप्त हो उसी शाहार से संतुष्ट रहना और प्रयास कर तिथे थाता कर विस् सुद्ध करना और जन्मान्तर परवात सत्संग इतारा भवित कर ही जावित गांव ताम कर सकता है । लोग माया-पुत्र के प्रति शासकत हैं और साथ ताथ वाम क्रोध सकता है । लोग माया-पुत्र के प्रति शासकत हैं और साथ ताथ वाम क्रोध सम्ता है । लोग माया-पुत्र के प्रति शासकत हैं और साथ ताथ वाम क्रोध स्था लोग से उन्हें बड़ोगित प्राप्त होगी ।

लंगर ने उपर दिया कि कृष्ण ने गीता में कहा है कि जो सब धर्मों का परित्याग नर मेरी शरण में याताह उसे में समस्त पापों से मुक्त करता हूं। मैंने यन जा लार तुम्हारे सम्मुख रख दिया है, इसमें किशी प्रकार का एंक्स नहीं। पद्मनुराण में शिव ने पार्वती को नाम का महत्व बताया है और कहा है कि जो एक केवता की उपासना करता है वह समस्त मोगों को उपलब्धन कर सकताहै। पार्वती नाम अर्म ही सब्दिष्ट धर्म है

१- वर्षी ४६० - ४६२ पुष्ठ ११३-१९४

र- वहीं **४६३ -** ४६५

३- वडी ४६६

४- वर्षी ४६७ - ४६८

५- वहीं ४६६ - ४७२ पृष्ठ १९८

शंकर ने उद्धर दिया कि जो व्यक्ति कर्म-योग मक्ति करते हैं उनकी यह अवस्था होती है तथा जो लोग भागवती मिवत करते हैं उसका निर्णय इस प्रकार है, सुनी । हुड़ निरुक्य सहित वे केवल कृष्णा की ही पूना करते हैं , हिर की पूना से देवता गण प्रान्न होते हैं। इस बात को जानकर महंत सकल कृष्ण की पूजा करते हैं। जिस प्रकार वृदा के मूल में जल दान देने से साला-पियां तुष्ट होती हैं इसी प्रकार कृष्णा की मना से तब देवता संतुष्ट होते हैं, ढाल-पत्रों को पानी देने से बृता को संतोम नहीं घोता, इसी भांति पृथक पूजा से देवता प्रसन्न नहीं होते ।

माञ्चन प्रवृति मार्ग का प्रतिपाजन पर्ते थे तथा शंकर उसका संहम करते थे । दोनों ही वाबित श्लोक पढ़ रहे थे और वहीं दोनों समकते थे और शैषा लोग इन्हें केत रहे थे। माध्यव ह: सात रतोक विषय गति से पढ़ते और एंकर वेबत एवं श्लोक में उटर दे देते । शुंबर ने पुन: कहा कि देवकी नंपन के शांतिरकत शन्य कोई देव नहीं तथा नाम यम भिन्न कोई यम नहीं है। माध्य का श्रीर यह हुनकर पुलाबेल हो वा उठा और उठार उन्होंने कीए के चरण स्मर्श किये हैं

माअव ने कहा कि अनेक जन्मों की धुवासना तथा कतान आदि अन्य ग्रंथियां आज शाप के वाक्य के प्रभाव से दूर हुई और में निर्मीक हुशा। तुम्हारे चरणों को कृपामय में नै गाज मन्डा है ।

माधव की कृष्ण पूजा घर जा कर भाधव ने रामरास से रामा याचना की शीर कहा कि बाज मुक्ते शेवर के फ्रांद से महाधर्म भिला है। ृत्तरे जिन प्रात: काल माजव ज्ञानादि कर घौत वस्त्र घारण कर बारान पर कैठे। नैजेव बादि पूजा की सामग्री सा भाषाय ने स्मष्ट कहा कि मैं अन्य देवता का भूत न करे का राख सब केवल हरि को ही उत्सर्ग किया जा सकता है। की भी श्रीकरा देश की उपारता न करुंगा इसे तुन रामराम गुरु अत्यन्त तुन्ध हुए । हाथ में तुलती तथा पुष्य ग्रहण कर भूटण की पूजा की । मोदक तथा संदेश इत्थादि भोगों को भाजन ने हुव्या को अपित दिला ।

१- वर्षा ४७७-४७६ पृष्ठ १२१ तथा वैत्यारि ठाक्तुर-वी गुरु २५७

न वहीं ४८२ पुष्ठ १२२

३- वरी ४६४ पुष्ठ १२३ तथा दित्या । - गु०व० पद २७० पृष्ठ ६२

४- रामानंद - शि० शुक्त चरित ४८६ पृष्ठ १२४

५- वडी ४६६- ४६८ पुष्ठ १२७

माध्य का व्यवसाय त्यांग शरणागत होने के पश्चात माध्य वार पांच दिन घर देखें, पुन: वा संवरदेव से गिवेदन थिया में बार मास में घर का लेता देता समाप्त कर जाम के ज्यान को लांट आफंगा। घर जा कर माध्य ने किसे तार देता था उसे छं: पिया और दस के पाने वाले को फंट दिया और किन लोगों से भाष्य को धन पाना था उन्हें उन्होंने सप्रेम बुलवाया और कहा कि मुक्ते व्याज नहीं वाहिए और न पूरा मूल ही, केवल मूल का जाब्ना धन शिघ्र चुकता कर दो। इस प्रकार उन समी व्यक्तियों ने रुपये लौटा दिये किन्होंने माध्य से उपार दिया था। पाध्य की मां दवारा गृह त्याग न करने का शतुरीज भाष्यव की माला ने माध्य से आगृह किया कि तुम्हें कि गृह बरना हो गा, यदि कियाह क करींगे, तो पुत्र देसे होंगे, किसके पुत्र नहीं होते उसे लोग अच्छा नहीं तमकते और देव-पितृ गण पिंछतन मी गृहण गहीं करते। पंछित ,ब्राइनणा, जाति कुल के बुद करिए इन्होंगे किन्होंने से स्थान वे लाता को संक्रिया कर करींगे विक्र गण पुक्ते के स्थान उन्होंने से लाग उन्होंने हो लागोंगे। भाष्य ने लाता को संक्रिया से पित्र गण मुक्ते बच्छा न कहीं।

माता को तमदास के स्थान पर जोड़ माध्यव पर्म जानंदित हो शंकर के स्थान की क्षीर वल पड़े।

प्यांचाट में की हो उत्सव के कार्ता का लिए ना पान को नों व्यक्ति एक हिंदा का किए मान्य को नों व्यक्ति एक हिंदा की मिले हों । राम राम गुरु लिया रामवास को बीजा हुए थीर मान्य डाइना पाति हो के लिन करने लो, इस की दीन की प्रवान को स्मर्श फर्ने ली। थीर लोग हसे हुन निन्द साथर में निगानिक हो गये। स्वान से की लिन हो मान्य सुमहार है और म है स्वर् ही वाल कर कर गाने हैं, फिर व्यकी महिमा का वर्णन कोन कर सकता है। साधान होत्र देव को सन्मुख देत परिवर्ग को नहीं ग्रानंद मिलाया।

१- वही ५१८ पुष्ठ ६३०

र- धरी ५२० - ५२३

३- वहीं पर्ह

४- वैत्यारि - रांo जारा माध्य परित २८५- २८८ पृष्ट ६५

जो तेन पहाह गई कन्या का परित्यांग शंकर के सम्पर्ध में आते ही माध्यव ने विवाह करने की एक्या त्यांग दी और सोचा कि किस प्रकार कन्या को छोड़ा जा सकता है। अंत में यह निश्चय किया कि हम जाकर कन्या के माता-पिता से अनुरोध करेंगे कि आप शिष्ठों विवाह कर दें, में कन्या को वांदुका ले जाना चाहता हूं। कन्या थांदुका चली जायंगी यह सोच वे लोग विवाह न करेंगे और में अलंकार आदि वापस मांग लूंगा। कन्या के घर जा माध्यव ने त्यह कहा कि कन्या का विवाह कर दो, उसे लेकर में वांदुका जारूंगा। बांदुता का नाम सुनते ही कन्या के अधिभावक ने सब वस्त्र, अलंकार माध्यय को तौटा दिया औ, क्या कि में कन्या का जियाह नहीं कर सकता।

विष्णु प्रिंग का विशाह माधव है करने की कामता जिए दें पर नी में एक दिन होता विष्णु प्रियों का देखें राज्य विशाह कर दूं। पूरी विन गुरा में माधाव से यह प्रशा किया । नाध्यय ने उद्धर क्या कि वाप, सब वृद्ध दिशा ा अकता हूं किन्तु रसे में नहीं पान सकता । जीवान के तुशस के हेतु ही शाप की गुरा स्थीकार कर नुवा हूं। जाम के दो बरणों की अविरिक्त मुके स्वर्ग की कामना नहीं है। विश्वय विश्व की अपन में आप मुके न देखें ।

शंकर-माध्यय संबंध प्रतिदिन माध्यय शंकर के स्थान पर आसे थे। शंकर्षेय हंत कर माध्यय से पूरते कि तुम कब से यहां बैटे हो १ यह सुन माध्यय प्रतन्त हो शंकर को प्रणाम करते और अत्थन्त वानंदित हो बात करते। माध्यय के भाने से रुविमणीं। शंकर्षेय को अविलंध लगा देशा थी। और कहती थी। किमाध्यय बांध्यय बांध्य बा गये हैं। शंकर्षेय गाध्यय को बांध्य माध्यय ही समकते थे।

बंदा-माध्यव स्वर्ग राजा वे वादेश या नंत्यिकार हाथी पहलो है कि मुख्यां लोगों के साथ बरे । तान और की रदााका भार सामान्य कर्नों को दिया गरा और स्ल कोर की रदाा का भार मिटिया मुहंयां लोगों भी विशा गरा था । भिटिया मुहंयां की और से हा हाथी गाग निकला । यह देस समस्त मुहयां बत्यन्त दुसी हुए कि व्यमें अहोम: उनकी हत्या कर देंगे सक लोग बर-गृहरथी छोड़ केवल प्राण बचा कर भाग गरे । एक रंदिकाह को यह बात हुआ कि हाथी भाग गरा तथा मुहया भी भाग गरे वह अस्थन्त को वित

१- वहीं ३०२-३०५ पुष्ठ ८७

२- उपेन्द्र लेसारा - कथा गुरु चिरत पृष्ठ ∞

३- वेल्पारि - शं० बा० मा० बरित ३६७- ३६६ मुब्ह ६२

हुआ और मुख्यां लोगों को जंदी करने की आता दी है

बर संदिक्तार ने इन दोनों को ंदी। गृह में डाल दिया । इन लोगों के पास लाने पीने की कोई वस्तु न थी । माध्रव के दुल का वर्णन कहां तक दिला जाय, उनके शर्रार पर किल एक वरत्र था, भूमि पर सोना पड़ता था हाथ के अंजाल से पानी पीना पड़ता था, केवल एक जोड़ा मंदिरा के अतिरिक्त यन्य कोई वस्तु उनके पास न थी । प्रात:काल माध्रव मंदिरा पर ताल बजा कर गीत गा धूम फिर कर मिना आक्ना करते थे, उनके जागे पीछे दो रक्तक सदैव बत्ते थे। माध्यव जब उच्च रवर से गीत गाते थे, उस समय नीता गण वानंद सागर में डूब विमोर हो उद्धे थे।

मिना इवारा वैयत स्व सम्य का भी त प्राप्त होता था, जाचा मनु साते और शेषा गाजव बना कर साते थे। इस प्रकार माजव ने दो भास कारावास में व्यतीत विधा।

माध्य का न्थाय दूतों ने भाध्यव आदि अन्य वंदियों को सुनाया कि लंदिकाइ तुम लोगों को बुला रहे हैं। यह सुनते ही माध्यव दौड़ जागे हो गये और मनु उनके पिछे पिछे सिन्न मन से आगे बड़ बढ़ रहे थे। माध्यव को देल,संदिकाइ के मन में उड़ा हुई और सोया यह मनुष्य देवता है, मुख्यांनहीं, इसका कोई दोख नहीं है, जत: यह निरंक और निर्मय है।

माधव से जब वेक दिया : रिक्स में प्रश्न विद्या कि तुम हमें कितना धन वै रहते हो द माधव ने उत्तर किता में निजा याचना कर किती प्रतार भोजन पाता हूं इस जात से सभी परिचित हैं, मेरा केवल स्क जोड़ा मंदिरा है। मेरे पात है । सांक्रिकाइ

१- रामानंद - ी शुरू चरित ७००-७०४ पृष्ठ १७६

र वहीं प्रश् पृष्ठ १ प्र

३- वैत्यारि- शं० वावनाव नरित ४१६ पृष्ठ ६६

तमानंद - ी गुरु विश्त ७३-७५ पृष्ठ १७६-१७६

५- वहीं --- ७१७ पुष्ठ १७६

र्क नहीं ७२२ पुष्ठ १००

७- वहीं ७२५ पु० १ दर

ो भाष्य व को मुन्त कर किया ।

मतु के बच्च के पूर्व माध्यव उनसे थिले और कान में राम राम ा नाम सुनाया और गले लिएट कर रोने लगे। मतु ने बार बार माध्यव को प्रणाम िया और माध्यव एक दृष्टि से उन्हें देखते रहे। यनु के कटे हुए मुंह से तीन बार राम शब्द निकता। रोते हुए माध्यव शंकरदेव के पार गये और यह वृद्धांत सुनाना। माध्यव की मन्त प्रीति माध्यव नाव द्धारा प्रष्ट्मपुत्र के बहाय की और यात्रा करने के लिले प्रस्तुत हुये। नाव में सुक् तथान तार्ता देख दो मजतों ने भाष्यय से प्रार्थना की उन्हें नाव पर बिठा लें। माध्यव के साध्यों ने निष्ठोध किता कि अधिक लोगों के वैठो से नाय का बीक अधिक हो जावना भ माध्यव ने त्यक्ति यहा तो नाव के वाहर फेंक इन दो मजतों को सरनेह नाय में विठा लिला।

थे और स्म दिन उन्होंने माध्यव से कहा कि वे उनके साथ स्थान करें, किन्तु माध्यव को यह करंगत लगा और उन्होंने कहा कि रात में आप को मेरे पैर हाथ लग सकते हैं, यह द्वापि कच्या नहीं। अत: मैं आप की इस हच्छा की पूर्ति नहीं कर सकता। अनेक दिन के पश्चात माध्यव ने कंगर का कथन मान लिया और उनके डर हे मस्तक स्पर्श कर सोने लगे-- शंकरदेव के सो जाने पर माध्यव उनके उनपर वाल टाल, उसके उनपर अपना स्क हाथ रह हो यह हाथ रह हो यह हाथ रह हो यह हाथ रह हो यह साथ है।

भाष्यव की गंगा यात्रा-बांकुता में रूपवंद्र की शिव पूजा राभ राम गुरू जगा श्रन्थ द्राष्ट्रमणों सिंहत माध्यव गंगा के तट पर गये शिष्ट्र विसर्जन कर जान दान विशा । यहाँ का कार्य समाप्त कर जगनाण दर्शन करने चरे । जगनाण जाते तमल माध्यय ने एक गीत गाया, जिसमें राम का वर्णन था जब वर विकर्ण होजर जा रहे हैं । जंत में प्रमु जगनाण का, दर्शन कर राम राम गुरू कैसाथ सभी व्यक्ति तीट शाये ।

१- देत्थारि -- एं० याज्माव्यस्ति ४२५ पृष्ठ ६६

रामानंद - गुरु नित्त ७० ७ ० ०

३- वैत्यारि -- शं० भा०मा० चरित ४२६-४२७

४- दैत्यारि - शं० भाज्मा० च० ४४५-४४६ पु० १०१-१०२

५- वर्षी० ४५६- ४५७

६- वहीं प्रथ-प्रदेश पुष्ठ १२४

७ रामानंद नी गुरु वरित घट-ष्य० पृष्ठ २०४

नेत्र की नतुर्देशी के दिन बांकुत में लोग घर घर किन की पूर्ता कर रहे थे। रुपनंद्र गिरि में माध्यय से वहा कि तुम्मी मेरे साथ ज्ञाज खिन की पूर्वा करों। माध्यव मुख्यरा गर रह गये, मुख से बुद्ध न कहा। बेल पात और रुज पुष्प को देल माध्यव ने एक पे पर रक्ष गांत तिला, में बृष्णा के घरणां की सेवा कर रहा हूं जल: में जन्य देवता की पूर्ता नहीं कर सकता। वैलन्य का परित्याग कर जड़ की उपासका कीन करेगा, में बृष्णा को इष्टदेव मानता हूं।

माजव तीन गांस तक वांकुता में रह पुन: रांतर के रंगीय वाथे । रंगर ने पश्चिम देश की बाच पूर्ण । माजव ने वारी क्या हुनाई । तीर्थ थात्रा भाषाय को संतर पेय ने बुला कर करना कि पेर्र, कापर के प्रोशों की वेसने रच्या है और प्रवास के लिये किन बरतुओं की जायस्थक है है उनकी तुमताप रह सो । राम राम गुरू रामराम हिंद की नायाय केनाथ तीर्थ बाजा करने निवसे । अगरन के मारा में जात दिन व्यतीत होने पर संतर्भेव पश्चिमी देश की और बढ़े तमा उनका पीछा गायाय ने किया । जिन स्थानों में संतर माजव ठंदो वहीं भागवत पढ़ और दिर नाम के सरलव किया ।

प्रभात होते समी लोग चलते थे थीर माध्यव संगर के लाध रहते थे, जब कभी संगर को ध्यास लगती, माध्यव तत्दाण शामता दे जल पान कराते थे कथी। कथी। तथा धूमि पर संगर के प्रथ क्यल मुल्ला जाते थे, माध्यम लोटा में ठंढा जल से चलते थे। संगर में पर भी पर शासल जल ढाल उन्हें शांत करते थे। इस प्रशार वह संगर देव की रोजा करते थे। माध्यम की पत्रत सेवा शंकरदेव के मोधन कर होने के उपरांत माध्यम अपना भोजन क्यां बनाते थे। साथ के समत्त मन्त जनों जो पूछ पूछ रिलाते थे, यदि कि। मोजन रेखा न रहता तो वे फिर मोजन जाते थे।

गंगा के भुम्न जल को देल शंकर ने माज्य से कथा देशों यह प्रमु ा पक्षिण एक प्रधार के पापों को एरता है। माञ्चल ने प्रथन किया कि ईश्वर े ाम और पदोक्क में नाम भर्म कैसे वेष्ठ है।

१- वर्शी ६४३ पुष्ट २०५

र- वहीं ११२- ११५, प्र० २२७

३- वहीं ११६-६२० पुष्ठ २२८

४- वर्षा **६२१-६२२ पृ० २२**६

५- वही ६२६ पुष्ठ २२०

शंकर ने उत्तर विया कि ईश्वर के नाम में निसी ढंग का मेद नहीं, तीर्थ में पर्श का गुण है, इसकिने संतर्थ से नाम किंठ है और कलिसुग में इसका विशेष महत्व है ।

गया तथि दरीन के पश्चात रामराय ने शंहरदेव उसे से प्रार्थना की, कि गंगा, गवा तीर्थ कर मुक्ते अभिक संतोष हुआ, यदि हम मधुरा तथा गोकुल वेदरीन कर हैं, तो छमारा बीवन पार्थक होगा। अंहर ने रामराय ने क्या माध्यय वैतन्य है और में बढ़ शमुदाय हूं, माध्यय के न तने पर में न ा सबूंगा।

राम राष्ट्रिने गांधाव ते यह प्रश्न िया मांधाव ने विष्णु ता मरण कर पष्ट कर किया कि मैं न बाकं या क्यों कि नेरे पाल कई नहीं है । रामराम ने गांधाव से नियेदन कि मैं बापके कई की व्यवस्था क्यों कर लूंगा— मेरी का मांबा कि है कि मैं वहाँ बागर उस अमें का अध्ययन कर राकूं किएका प्रयोग रूप प्राान ने दिया है और जो उस प्रदेश में भी प्रयक्ति है यदि वावा क्यारा प्रशासित चर्म और उनका धर्म रूप हो, तो मेरे मन कर संस्थ बूर होगा ।

माध्य ने श्रत्यन्त कृषित को रागराम को उधर किया कि जो लोग अंगरवेष का सम्भान करते हैं वे उनके भासम मत का शनुतरण श्रवश्य करेंगे । शुम्हारा यह शास्य था कि जो लोग शंकर के मतायलंकी नहीं हैं, वे शंकर का परित्थाग कर कें, भेरा मन दुल से जल रहा है।

माध्यका मूर्ति दशैन हाजों में स्मग्रीय भाजव का रूप वर्णने कर्मा नय ने कई रिलोक पढ़ा । पुकारी तथा हुवरी के माध्यव ने सोतह रूपये दान किया । माध्य पूजा समाप्त करने के पश्चात कंठ मूखणा के पाल गये ।

वंद्रभूषण के पान शालिग्राम की कील से शिविक प्रतिपारों सं ्रित्तका पून वे प्रत्येक विन करते थे, बार घड़े जल और पांच टोकरी पून से इनकी पूजा की जाती थी। माध्य के वागमनू का समाचार पातेकी वंद्रभूषणा मुख्यों की राशि वहीं होड़ भाजन से मिली ब बले गये। माध्य का वंद्रभूषणा ने उचित सम्बान कर उन्हें हमी चिति रहा। समय समय

१- वहीं १२८ पुष्ठ २३०

र- वर्षा ६३३ पु० २३१

३- वही ६३५-६३ ८ पुष्ठ २३६-२३२

४- वहीं ६४१ पृष्ठ २३३

५- वैत्यारि - श्रे जाव्याव्यव १० ६१-१०६२ पृष्ठ २४५

६- वहीं १०६४ पु० १४६

मर नाज्य तथा गंठमूषण कृष्ण कवा की चर्चा करते थे।

हैश्वर को सिद्धान्त अर्पण करना एक दिन स्व ब्राइसण नेमाध्य से प्रश्न विधा कि पूछ सोकर तुम किया कि सिद्धान्न अर्पित नहीं कर करते और न उसे सा करते हो । माध्य ने एंस पर उत्तर किया देश कर में भी कास वाकी होंगे और उन्हें तुम मोजन देते होंगे । ठाक उसी प्रकार एम लोग कृष्ण के सेवक हैं , फिनर हम मध्य, मोज्य आदि वस्तु उन्हें दे नाते हैं । इस उत्तर से ब्राइमण वत्यन्त प्रशन्न हो माध्यव के भीठ पर हाथ रह चरा गा।

जोश में अमे प्रतार जोशि विज्ञास्त के नितालियों ने मालाव कर प्रार्थना की और जार दोनि तक लिया गरे। मालाव ने विश्वासार गणक बादि अन्य जनों-- के तम्मुल कृष्ण क्या बारंम की। कुपरे दिन मालाव की प्रकेत सुन विश्वास क्या कि व्यक्ति लाये। बार हजार से बिधिक व्यक्ति मालव का दर्शन करने वहां स्कृत हुये। तीन दिन बार मान वहां ठहर मालाव ने सास्त्रों की क्या कह उनकी कंगाओं का समाधान किया। नेताओं को बितिया बार लोग मालव को गुरु मान कृष्ण-चरण में श्रुणागत हुए। मालों को खंबीधित कर पालव वाधीरहुदित की बोर वल पहुं। सोना होने का प्रायस्थित समाधान ने कहा कि बाद की प्रकार समाधान ने कहा कि बाद स्कृत समाधान किया है। विश्व सुक्ति ने किया कर पालव कर वाधान ने कहा कि बाद की साधान ने कहा कि बाद समाधान करना स्कृत समाधार किया कि बोना उन्हें मिल क्या है। विश्व मालव यह कर श्रुण में बात स्वान कर स्वान की कैया कि बोना उन्हें मिल क्या है। विश्व मालव यह कर श्रुण में तेल महन कर स्वान की कैया कि बोना उन्हें मिल क्या है। विश्व मालव मायकी माठ किया है से से की की की की की की की की है। मालव ने बाइसण-बाइसणी से बाकर

शंशूठी के शंबंधा में पूरा । ब्राइमणा ने उत्तर दिया कि मुकेन न भिर्ता, भिन्तु ब्राइमणी मौन रही । ब्राइमणा ने कहा कि परिहास में पाया सोने के स्थि में मोजन न ब्रह्ण भरुंगा ।

१- वहीं ११०३ पुर १४७

२- वाही १११० - १११५ पु० १५०-१५१

३- पैल्यारि-- राजातमाज्यक ११२७ पूर्व १४४

भ वहीं पद ११३२ पु० २५६

५- वही ११५१- ११५४

गृही और उदाधीन मनत एक दिन ग्री व्या कार में माधान ने कहा भिर्म के दिन पूप में भेरे दिसे मात वनाना अत्यन्त कष्ट प्रव है । माधान की एवं तात को सुन ठासुर नारायण ने कहा कि तुम्हारा मोलन रामनरण जना दिया होंगे । माजन ने कहां हां रामनरण मेरा मोलन वना रहता है, किन्तु उसे उदाधीन होना पढ़ेंगा । रामनरण ने ठातुर नारायण ने निवेदन किया कि वे किसी प्रतार उदाधीन हो मोलन नहीं नना सकते, इसके स्थान पर वे अन्य देना करने के लिले प्रत्युत हैं । नारायण ठासुर ने जन यह क्या माधान को सुनाई गायन ने बहा भात उसी को वनाना होगा । दो मास तक करा सुनी होने के बाद मी रामनरण उदाधीन न हुए । इन्य में माधान ने अपना मात रमयं बनावा ।

स्त दिन मक्तों के को बुता माजव ने तादेश किया कि जाज राग चरण मात जगायों और क्या लोग मोजन करेंगे । इस फ्रार माजव ने का राग चरण को मात जनाने को कहा तब मक्तों के मन में वित्तय हुता । नारायण ठापुर ने मानव से इसका स्मन्दीकरण मांगा । माजव ने स्मन्द करते हुने कहा कि कार पार कहने पर जब धन्डोंने गृहस्थी का त्याग म किया और पुद्ध कि का व्यक्ति जान मेंने मात रांभने की आता

अनुरारि महानार्य से नाधान की मेंट शासुरारि महानार्य जाराणारं। ने भागवत सहस्य नाम तथा गीता पढ़ कर शाम थे ताम ने शाकर गावान से अनुरोध जिला कि उस पंख्ति के स्थान पर वर्ते । माधान को देल अनुरारि महावार्य ने जागन दे ताम और धान पूरा। माधान ने अनुरारि के सभी प्रश्नों का संतोज नक उत्र दिशा । अवने उपरांत महानार्य ने माधान से इति हर का भेद स्मष्ट करने को कहा । गाधान ने शनेक सास्तों उदरण दे हिता की पूर्ण रूप से प्रतिपादित विशानहारार्थ उनका मुत केले रहे । उन्होंने मन में लोगा कि वत्तुत: माधान शन्य पंछितों से भिन्न है बर्भ अवनंत निराकार अनुम मात्र हैं, इसका शाम रहस्य रमन्द करें । माधान देव की वह नाव को सुन महानार्य मानी पानी हो नथा— माधान की प्रशंगा कर उन्हें हाती से स्था किया । आनुरारि महानार्य ने माधान को महानुराण नाना ।

१- वर्षी ११५८-११६३ पु०१६१

[→] विशे ११६६
पुरु १६३

३- वहीं ११७२-११७४ पु० २६१-२६२

४- वर्षा ११६२- ११६६

कामस्था में नीत्कंठ के साथ तर्क अपुरारि मट्टाबार्य ने सुंदरी में माध्यव से कहाँ कि नितायस में तुम्हारे संबंध में लोग कहते हैं कि तुम देवी की पूजा नहीं करते, तुलती की माला नहीं जारण करते । सुन नी एक जा उन्हें पवित्र करते । सब राजा बूढ़ा फूरा करेंगे इकी सम्ब तुम्हारा जाना झुमकर होगा । दुक्क दिन पश्यात माध्यव नीतायस पहुंचे । तुलति की गार भाला हाथ में तिथे साध्यव को नित्कंठ नाम्क ब्राह्मण ने देला और नाध्य को जहत तुरा मला कहा किन्तु माध्यय मीन रहे, जब ब्राह्मण ने देला कि माजय कुछ नहीं ह बोत्हों, तो पूरा तुलति की माला का फल है १ मालति की माला के अनेन फल है माध्य ने दला कि में अभी तक मौन था इसलिन्ने तुम बच्छानुसार कि कर पर रहे थे । तुमतुलती की माला का फल जानते हो, पहले मालती की माला का फल कर पर रहे थे । तुमतुलती की माला का फल जानते हो, पहले मालती की माला का फल मस्टप्ट सुनायो- नाना पुराणों से इलोकों का उत्तरण दे माध्य ने तुलती की माला का महत्व दिश्वर किया । भाव्यव की इलोक पाठ करने की हैती को देल ब्राह्मण अधिक विस्मात हुआ ।

देउरी ने नीलांड से वहा कि इस जनसर पर माधन से तर्क न नरना ना विष्ट, उन्हें हम मणनी का दर्शन करायेंगे। जन वर देउरी ने मानन से अनुरोध किया, तो उन्होंने उस किया कीन पापी मातृ का यो नि इसार देशेगा। अनेक श्लोफ पढ़ यह सिद्ध किया कि इस प्रकार देवी का दर्शन करना अनुस्ति है। वरदेउरी ने माधन को जिलापारी पंडित करा। अनुरारि मद्दाचार्य ने यरदेउरी को संवी धित कर करा कि हम लोगों ने जो दस वर्ज में शिला प्राप्त की है, वह भी नाधन पढ़ा कि है। मैंने उनके साथ पार्ता की है, इनके सभान काम हम में कोई पंडित नहीं है

सुंदरी परिल्याग

सुंदित के ठासुरिया कृष्ण दास को समानार भवता कि राजा रखुदेव सब हिर भवतों को फाइ तेता है। नाजव ने फार्लों को ठाउ केरोल में केडने का जातेश दिया, यहीं कैठ काल गण जासाम राज्य के मनत नाजुरा लान से लगा सुन रहे थे। दूसरे दिन मनतों को कुछ ब्राह्मणों ने बुरी तरह से पीट कर घायल कर िशा। नाधान ने जब हस

१- वहीं १२०१ - १२०५

स् वहीं १२०७ - १२०६ पुंठ २७

३- वडी १२११ - १२१५ पृ० २५६-२५४

४- वही १२७४ पु० २८८

घटना को सुना, वे त्रत्यंत दुखित हुये त्रीर मधुरा त्राता को बुला किर्तन करनेवाले मनताँ को बरपेटा जाने का उपदेश दिया ।

गोताई-घर निर्माण बरपेटा पहुंच माध्यव ने अनेक प्रकार के नाटकरेका प्रदर्शन आयो जित किया, जिसे देख वहां के लोग प्रसन्न हुए । क्रुम्यूर तथा दिधा मंथन नाटक का अभिनय अनेक मध्युर गीतों सिहत उस स्थान पर हुआ । अत्यन्त मनोरम गौसाई घर की स्थापना की, वैसा घर कामरूप में कहीं नहीं था । नरनारी इस सुन्दर घर का दर्शन करने आते थे । इस घर की कथा राजा को जात हुई । राम निजय यात्रा अभिनय तांतिकूचि के लोगों की इच्छा रास्तीला करने की हुई । माध्यव देव से आ खर लोगों ने अनुरोधा किया माध्यव ने कहा कि जो को हमें बाहिए यदि आप लोग दे सकते हैं तोयात्रा का अभिनय हो सकता है । अस्ती स्रप्या ले माध्यव ने सुन्दरा नदुवा को निर्देश दिया कि वह राम स्वं सीता की प्रतिमा वैयार को अन्य लोगों को रथ सजाने को कहा और अन्य लोगों को नेहरा बनाने का कार्य सींपा और राम यात्रा के गीतों को स्वयं किया । तांतिकूचि के सभी लोग राम यात्रा का दर्शन करने आये । राम तथासीला की प्रतिमा, दंड, क्र्यू, वामर सहित रथ के उत्पर रख दी गई-- हनुमान विभिष्ठण मी रथ पर वैठे थे । यात्रा को देख समस्त व्यक्ति प्रसन्न हुए।

श्री शंकर देव का तिथि महोत्सव माध्यव ने ी शंकर देव का तिथि महोत्सव श्रुवि श्री शिया किया अपि के लोग की तैन सुनने देखने गये, किन्तु वहां दामोदर देव न थे। माध्यव हरि चरण से प्रश्न किया दामोदर देव को इस उत्सव में भाग लेने के लिये क्यों नहीं श्रामंत्रित किया । हरि चरण ने उत्तर दिया मैंने एक मकत को निमंत्रण दे मेजा था, वे न श्राये, इसके पश्चात में स्वयं गया था, उन्होंने यह कह मेरा निमंत्रण श्रस्वीकार कर दिया कि यदि में शाज पुम्हारे घर जाऊंगा तो मुके सब के घर जाना होगा । यायु, इसियों में न जाऊंगा, पुम श्रमनेघर जाशो । यह युन माध्यव हंसे शौर कहा भेरा घर शौर सब का घर एक समान है, न बुताने पर भी उन्हों यहां श्रामा चाहिए, में समक्त क्या कि वे वर्यों न शाये । मविष्य में उन्हों कभी न निमंत्रित करना ।

१- वही १२७४ पु० २८८

र- वहीं १२६२ पू० २६०

३- वही १२६६ २६०

४- वही १३०५ - १३२० पृ० १६६

दामोदर गुरु के साथ मतभेद दामोदर गुरु के पास जा माध्यव ने प्रश्न किया कि जिसका हम त्याग करते हैं उसे जाप कयों शरण देते हैं। दामोदर ने उदर दिया, तुम्हीं कही में किसे किसे मगा दूं, भेरे सभी हैं, पराया कौन है। माध्यव ने कहा तुम सत्र स्थापित कर जावार्य तुत्य पद पर सुशोपित हो, क्या विध्यमि को दीवा देना दोष नहीं है। उन्होंने कहा जो जो कुछ भी करता है वह अपने लिये करता है, उसका दोष हमें तो न स्पर्श करेगा। शंकरदेव ने तुम्हें गुण-दोष देखने के लिये नियुक्त किया था तुम गुण दोष का विकेचन कर खलों का त्याग कर खलते हो। माध्यव ने अनेक पुराण, जीधार स्थामी के टीका के शलोकों का उद्धरण किया। दामोदर ने कहा पुराणों की टीकाकार निधार स्थामी की बातें हैं में नहीं मान सकता, ती भागवत की कथा के अतिरिक्त अन्य पुराण की बात नहीं मान सकता, वी भागवत की कथा के

ग्रंत में माध्यव ने दामोदर से कहा कि शंकरदेव ने रत्नाकर ग्रंथ की खना अनेक पुराणों के श्राधार पर की है,तुम्हीं बोलो इस पुराण की क्या का क्या करोंगे, शिष्ठ कहो, रत्नाकर ग्रंथ को मानोंगे या न मानोंगे।

दामोदर ने उत्तर दिया ेजन चतुर्भुज मगवान स्वयं आजर कह रहे हैं फिर मैं क्यों न मानूंगा । सर्वां हारेक्षें माध्य यह सुन ेसज सज वोल और कुछ न वहा । यहीं दोनों गुरुओं का संबंध विच्छेद हो गया ।

रामचरण की परीचा मनतों सहित माध्यव कृष्ण कथा कह रहे थे बड़ी सभा में बैठ की तिनियां की तैन कर रहे थे राम चरण पाटर परोड़ा उड़िया का गान सुनने उसके निकट चले गये और बाद में माध्यव को दंढकत किया । राम चरण के वस्त्र को मृदुल इंसी कर माध्यव ने पूरा यह वस्त्र कहां मिला । राम चरण नेउपर दिया कि इसे आप ने दिया, और कहां से प्राप्त होगा । माध्यव ने इस वस्त्र के विश्वय में चार बार प्रश्न किया किन्तु रामचरण अपना पहला उपर दुहराते थे । कुछ देर बाद राम चरण को अप अपनिक भूव ज्ञात हुई माध्यव ने इतना कहा कि मविष्य में इस प्रकार की मूल न करना ।

१- वही १३२२- १३२६ पुष्ठ २६७-२६६

२- वही १३२६

३- वहीं १३२८

४- वही १३२६- १३३३ पु० ३००-३०१

५- वही १३३६ मुष्ठ ३०३

स्मरण रखना यह वस्त्र विनाशी है, जो वस्तु मैं तुम्बें दूंगा वह होगी जिसे मुके शंकरदेव ने दी है और इस परलोक में त्यागने यो ग्य नहीं है, यह सुन कर रामवरण उठ माध्य के वरणों पर गिर पड़े। माअव ने अपनेदोनों हाथों से उन्हें उठाया और मनतों ने रामवरण का यथायो ग्य सम्मान विधा।

राजा रघुदेव से ब्राइमणों का सल वरपेटा के स्थान पर माजवदेव महलों सहित
वेठे थे, महलों के बाम क्ष्म फाइकने लगे लोगों ने उत्पात की शासंका की । युरानंद ने इसी
दिन वा ब्राइमणों से सब बातें बहाया और सब ब्राइमणों ने राजा से कहा कि कहा
माजव नाम का स्क शूद्ध है-- उसने अनाचार कर सम्पूर्ण जगत को नष्ट कर दिया है।
राजा रघुदेव यह सुन अत्यन्त क्रीधित हो य उठा और सुरानंद को माध्यव को बंदी करने
की शास्त्र दी । लस्कर ने माध्यव से राजा केअनुचर को देख कर कहा कि राजा का व्यक्ति
शा रहा है। माध्यव ने ल स्कर को शादेश दिया कि उनके स्वागत के लिये, फूल, चंदन
केला, गुवा का प्रबंध करी और शीघ्र ही गोसाइ घर मैं बुता लाशो । माध्यव को देख
गते में वर्ण डाल कर सुरानंद ने प्रणाम किया । इल पूर्वक उसने बात करना शारंम किया,
मन्त गण नाम लेते हैं इसे भी देखने की मेरिडि इच्छा हुई । मन्त गण अपना घर छोनड़
नाम गाने के लिये सुरानंद के समीप शाये । जब सब मन्त कीर्तन करने में तत्तीन हो गये,
उसने दोनों और के कपाट बंद करा दिये और मन्तों को बंदी लिया । मन्तों का हाथ
पीठ पर बांध्य दिया, माध्यव कादोनों हाथ सक साथ बांध्या । प्रभात होते ही सुरानंद
घोड़ों पर चढ़ विवयपुर पहुंचा और राजा से वृत्यांत सुनाया ।

विजयपुर में माध्यवदेव बंदी माध्यव बंदी गृह में दिन भर पाशा हैलते थे और विदेवषी ब्राइमण दिन भर सब शास्त्रों को देल रहे थे किन्तु भाध्य सेल में लो हुए थे उन्हें इन ब्राइमणों की विन्ता न थी । उन्होंने मद्रमणि मंहारी से कहा कि उन्हें शास्त्रों का अवलोकन करने दो उनका उधर भेरे मुल में है ।

१- वहीं १३४२ पु० ३०४

२- वही १४००-१४११ पु० ३२१

३- वहीं १४१४ - १४२२ पु० ३२२-३२३

५- वही १४३४ - १४३६ पु० ३२६

वागीश मट्टाचार्य ने सब ब्राइमणों से कहा कि पापियों माञ्रव से क्या परिहास कर रहे हो १ तुम लोग जलती अग्नि को हाथ से फाइना चाहते हो, हाथी को ढोल क्या हराना चाहते हो, जो तुम कर रहे हो उसके लिये तुम्हें लिजत होना चाहिए। यह सब ब्राइमणों को समभा लाठी फाइ उसने राजा के समीप जाकर प्रार्थना की कि प्रमु मुक्ते विदार्थ हो शुद्ध के साथ तर्क कर विजयी होना किसी प्रकार गौरव की वात नहीं है, यदि शुद्ध से पराजित हुआ तो महा लज्जा का विषय होगा। माथव की मुनित वागीश मट्टाचार्य ने राजा से कहा प्रमु मैंने सुना था कि माथव बनाचारी है किन्तु जब मैंने देशा तो वैसा न पाया, यह ब्रह्मन्त महाशुद्ध प्राणी है। यह सुन राजा ने तुरानंद को बुला माथव को मुनत विधा और आदेश किशा कि इन्हें बरमेटा पहुंचा आशो।

माथन का सुन्दि। में वास विकयपुर से लौटने के पश्चात माथन केवल हेढ़ मास तक वर्षिटा में दहरें। इसके पश्चात रामनरण के घर सुन्दिरी में कुछ दिन दहरें। रामनरण ने माथन को गोशांह घर में शयन करने का स्थान दिया। दूसरे दिन रामनरण ने सक पृथक घर लीप पोत कर तैयार कर दिया राम नरण के घर माथन सक मास तक रहे, कम मनत गण विकयपुर से वापस जा गये, सन को रहने के लिए पर्याप्त श्यान दिया गया। हाजों में वास राजा की जाजा शिरोध्नार्थ कर माधन ने सुंदरिया से हाजों के लिये प्रस्थान किया। दैत्यारि के अनुसार माथन ने अमहन नास में मात्रा वारंभ की धी, फागुन में वे हाजों पहुंचे, तीन मास तक ने बालू पर ही रहें। माथन के दर्शनार्थ हाजों में बधिक संख्या में लोग प्रति दिन जानेलों। ह्यग्रीन माथन के दर्शन न कर लोग माथन के पास नते जाते थे। माथन के इस प्रभान को देल ब्राह्मणों को इच्चा हुई वे छिड़ान्वेकण करने में लो थे।

१- वर्षी १४४१ - १४४३ पु० ३२७

र- वही १४४६ पु० ३२८

३- वही १४५६ - १४६२ पु० ३३०

४- वही १४६५ - १४६ पृष्ठ ३३२

माधव का कामरूप त्याग नाव पर चढ़ गांधव ब्रह्मपुत्र के बहाव की दिशा में चल पड़े। मनदिवार घाट पर नाव बांध रामवरण को बुलाया। तीन दिन पर्यात रामवरण ने मांव से मिल बात बीत की । माध्यव ने रामवरण से कहा में इस देश को जोड़ बिहार जा रहा हूं तुम यहां रह कार्य संवालन करना। राम वरण इस समय करूणा बंदन करने लो और कहा कि में जपने साथ कुछ भी नहीं लाया हूं में तो केवल आप से मिलने की हच्छा से धाया था। बिहार का सीमान्य है कि आप वहां जा रहे हैं, किन्तु कामरूप का दुमान्य है कि आप इसे होड़ रहे हैं। इतना कह राम बरण रोने लो ।

मनपुर को परीसा देकर माध्यव ने बिदाई दी। रामकरण को वृस के हुआ कि जाड़े का यस्त्र इस मन्त को देने से माध्यव को कष्ट होगा। नाध्यय ने रामकरण को प्रकोध बिदा ती।

कुनार गाणि मेंबुछ दिन माध्यव ठहरे । लोगों की धीड़ हेती हुई कि लोग इस पार उस पार का जा न सकते थे । मृतुनुरु नाभक एक ब्राइमण उस पार से पूर्व पार की बोर ब्राय बीर माध्यव देव के साथ करा जाता की लथा माध्यव को निमंत्रित दिशा । वसुमणि के साथ माध्यवदेव ने सोनकोच नदी। पार की बौर भृतुनुरु के स्थान पर पहुँचे । प्रत्येक द्वार पर बनेक प्रकार के उत्स्वों का कायोजन किया गया था । वेस्पार में माध्यव था सम्मान वेसार नगर में प्रवेश करते की राजा प्रता वेष्णाय जन नाभव के दिले की सिने अले । माध्यव देव के धरणों की ध्यांत दे प्रणाम कर नागरिक प्रसन्न हुये । माध्यव देव की कथा बमृत था कि सुत्य थी, जिसे एकाग्र निर्देश लोग सुन रहे थे, किसी का ध्यान इधार उधार नथा ।

माधव का रूप माधव प्रसन्न मुख है, उनकी वाणी अभिय के तुत्य है, वश्ल मुहता की पंति के हैं, ना सिका तिल्कू ल के समान तथा मू धनुष के तुत्य है नेत्र पड्म के सनुश हैं,

१- वही १४७० पु० ३३२

२- वही १४७० - १४७६ - ५३३ - ३३३

३- वही १४८४ पु० ३३५

५- वही १४६३ पु० ३३६

६- वही १४६८ पु० ३०७ - ३०८

उर अत्यन्त विस्तृत है उनकी मुजायें अत्यन्त सुब ित हैं, उनका शरीर गौर वर्ण का है, उनके परण कमल सुकोमल हैं वे हार्था के सदृश घीरे घीरे गंभीर गति से चलते हैं उनके शरीर पर सदैव शुम्र वस्त्र सुशोभित रहता है। माध्यव अनेक गंभीर गुणों के मंदिर हैं उनकी महिमा का वर्णन कहां तक करूं।

वीर नारायण और उनकी माता का शरण वीरनारायण, उनके भाजा, तथा कुमार कुमारियों ने माध्यव को गुरु मान कृष्ण की शरण ग्रहण की । अनेक नागरिकों ने माध्यव को गुरु मान कृष्ण की शरण छी-- डाक डाकुवा शुर वरुआ आदि अनेक लोगों ने शरण ही कोच, मेच लोगों ने अपना पूर्व आचार निर्मेश त्याग मानय देव से उपदेश प्राप्त कर सदाचारी हुए । बीरु कायूथी नामक मुख्य देवक ने राजा के सम्मुख माध्यव की प्रशंसा की, उसकी श्रीति माध्यव देव के साथ भी अध्यक थी-- माध्यव को देवते ही वह घोड़े से उत्तर नम्न शब्दों द्वारा बात चीत करना था । एक दिन बाह ने माध्यव से अनुरोध किथा कि कृष्ण कथा राजा के सम्मुख होनी चाहिए । माध्यव ने कहा कि मुक्ते राज्य के स्थान की बावस्थकता नहीं है । इसे शुन बाई जाह मीन हो गई ।

नाम मिला की लना की रू कार्यों को एक दिन एक पुस्तक मिली, जिसका नाम के कि नाम मिला था — उन्होंने इस पोधी के अनुसाद करने का कार्य एक ब्राइनण तथा एक कार्यस्य को सौंपा — माध्यबदेव से भी उन्होंने इसके प्यानुवाद करने की प्रार्थना की। माध्यब ने एक पता के मीलर पदानुवाद प्रस्तुत किया — कार्यस्य को इस कार्य में पूरे तीन मास लो — ब्राइनण ने पूरा इ: गास में अनुवाद किया । की रू कार्य्यों ने इन तीनों अनुवादों को आरंभ से अंश तक देशा और दो अनुवादों को होड़, माजय की कृति को अपने स्थाम पर रहा । वी रूकार्य्यों के अनुरोध पर माध्यव ने नाम मिला का यह अनुवाद किया, अत: उसने माध्यव का अधिक आदर किया ।

म्धुरा दास के साथ नाध्य का कार्तालाप मधुरादास से माजय ने कामरूप के मक्तों के विषय में पूरा । मधुरादास नेउचर दिया की बरपेटा के स्थान में छल सौ से अधिक

१- वही १५०० पु० ३०८

र- वही १५०४ पु० ३४०

३- वहीं १५०६ - १५०७ पु० ३४१

४- बह्य. १४०६ - १४१० ने० ३८**४**

महत गण कृष्ण कथा तथा की तैन में भाग ले रहे हैं कुछ दिन बेहार में ठहर मथुरादास बर्पेटा बले गये। माजब ने उन्हें विदा करते लगय गुधा, पान तथा एक वल्ल दिया। मनपुर के लिये संदेश देते हुये माधाव ने कहा कि उससे कह देना कि उसे में भूला नहीं हूं, उसने मेरे शरीर का बन्त्र तक ले लिया में उसके इस कृत्य से प्रसन्न हूं।

राजमाता का वस्त्रदान राज माता ने माथा बंधा, दुपट्टा, पिछोरी इत्यादि अनेक प्रकार के वस्त्र मततों के लिये मेज दिया और माध्यव से निवेदन दिया कि वे मकतों को यो ग्यतानुशार वस्त्र वितरण करें। माध्यव ने क्रोध से कहा कौन मनत होटा है और कौन बड़ा है यह मैं नहीं जानता हूं, शाह आप स्वयं अपनी उच्छानुशार बड़ा होटा समभा कर वस्त्र वितरित कर दें-- अन्यथा हसे वापस घर ले जांय। मैं मक्तों में बड़ा छोटा मेद नहीं देखता। हसे सुन शाह ने सब मक्तों को एक समान कपड़ा दिया। हसे देख माध्यव प्रसन्न हुये।

साध्य ने मन्ता से कहा कि बाप लोग प्रीति पूर्वक एक साथ रहें। जब तक तुम लोग एक होकर न रहोगे, ईश्वर की मक्ति को नहीं पा सकते हो यह सुन सब मनत क हिमति हुये।

घोषा रत्न स्क दिन माधव से मक्तों ने ईश्वर के अविभवि तिरोभाव, वादि के संबंध में प्रश्न किया । इस प्रश्न को सुन पाध्यव मौन रहे तथा एक मत्त दूसरा प्रश्न न कर सका । तीन दिन के पश्चात माधव मक्तों से बोले क्या और किरसे पूरता चाहते हो। तुम में से सभी लोग लोभाविष्ट हो फिर में किसी को आदर्श नहीं कह सकता । देखों, घोषा पुस्तक मेरी है, उसमें मैंने सब कुछ कहा है, जो मुक्त कहता चाहिये था उसके अर्थ को जो व्यक्ति समक्त लाहे वही भेरे समीप आ सकेगा । घोषा में भेरी समस्त बुद्ध-वल है, जिसका जैसा भाग्य है, वेसा वह उपयोग कर सकेगा ।

माधव द्वारा की तैन घोषा के संकलन पर ज्ञानंद की तैन घोषा के संह, हाजो, दिन ण कुल बरनगर, बरपेटा जीर जहीम राज्य के जन्य स्थान पर और कलाजार मैं किसरे धुरे थे। इन्हें राम चरण ने सक वर्ष धूम फिर कर संकलित किया। गाथव ने रामचरण

१- बहु। १४१ - १४२७ पु० ३४५ - ३४७

३- वहीं १५४७ पु० ३५०

४- वही १५६० - १५६६ पु० ३५३ - ३५४

५- वहीं १५७६ - पुठ ३५६

को देत प्रश्न दिया कि इक समाचार मुके प्राप्त हुआ है वह सत्य है या नहीं कि तुमने की तीन घोषा के समस्त की तीनों को एक पुस्तक में संगृहात किया है। उस सम्य राम बरण के पास यह पुस्तक न थी थत: प्रमात होते ही। वह घर बते गये -- चार दिन पश्चात लौट माधाव को वह संगृह दिसाया। मेरी स्वयं इच्छा थी किमें इस पुस्तक का संगृह करें - किन्तु इस राज्य में बते जाने के फलस्वरूप में यह कार्य पूर्णा न कर सका-राम चरण ने इसे एक स्थान पर संगृह कर मेरा ही कार्य किया है। माधाव ने पुस्तक और उसके विभिन्न खंडों का अवलोकन किया, विचार कर देशा कि पुस्तक में की तीन घोषा का इम उचित है इस पुस्तक के चार माग कर इसके लिखने का कार्य थार व्यक्तियों को सौंपा। केवल जाठ दिन में ही चार जनों ने की तीन घोषा पुस्तक लिख लिखा। माधाव के उत्पर कोचा वीरू कार्यी ने अपने पिता के जाद के दिन समस्त कुटुंब और जाति जनों की आमंकित किया। मावलीव लस्कर और उनके पुत्र जिन्होंने शरण ले लिया था, वहां भात न कार्या पुत्र ने नहीं साया नहीं साया किन्तु पिता को तो मोजन करना चा हिये था। यह एव वाजव का प्रभाव है, हम उसका विचार करेंगे। बीरू काय्यी ने कई ग्राह्मणों के साथ आलोचना की, कि माधाव ने सम्पूर्ण राज्य को नष्ट कर दिया है आ; इसे इस राज्य से हर करना होगा।

माध्य के पत का विचार यह निश्चय कर बीरुकाय्यी ने एक बंग देशी माध्य को बुता तिथा- वेष्णवों ने उसका सत्कार विया- वह शास्त्र से पूर्ण तथा अनिका था । माध्य बहेब बन्य ब्राइपणों सिहत समा में बैठे । बीरु ने माध्य बहेब से कहा कि यह कहते हैं कि बाप की माला में मेरु नहीं है । इस प्रश्न का उपर इन्हें ाप दें । माध्य व ने तीन शास्त्रों का उद्धरण देते कहा कि हम प्रत्येक दाण कृष्ण की मध्त में लो रहते हैं, यथि सहस्त्रनाम गीता, नागवत में वेबल एक शलीक ही मेर्स देने का संकेत करा है, में निश्चत ही मेरु हूंगा । बंगदेशी माध्य बुद्ध भी न जानता जा, बत: वह बुपवाप बैठा रहा । ब्राइमण यह सहन न कर सके, उन्होंने कहा कि माला में भेरु अवश्य होना चाहिए माध्य ने उपर दिया किवाप तोग जो बुद्ध कह रहे हैं, यह ठीक है, मंत्र के तिथे भेरु व्यवस्थ

१- वर्श १५७६ पु० ३५७

चर्ला १५८४ पु०३५६

३- वहीं १५८५ - १५८६ पु० ३६०

४- वर्शी १५६१ - १५६४ पृ० ३६२

प्- वही १५६५ - १५६८ पुo ३६२ - ३६३

वैता चास्थि । माध्य ने किला पुराण का श्लोक पढ़ा में मेरा के दो व प्रित संकेत करते हुए माध्यय ने पड्मपुराण की उस कथा की चर्चा की कहां मगवान महादेव ने पार्वेती को समकाया है कि मेरा युक्त माला गुर को न दिलानी चाहिए । यह सुन बीरा कार्य्वि ने प्रसंग बदल दिया ।

वीर काय्यी ने माध्यव से कहा 'बोलो महेश जड़ हैं क्रयवा बैतन्य । महेश गुण के कंति हैं, इससे आप मध्य नकते हैं कि जड़ बैतन्य न । होगा, प्रकृति का गुण है मुष्टि का आदि कारण है, इससे आप मध्य नवते हैं कि जड़ बैतन्य न । होगा, प्रकृति का गुण है मुष्टि का आदि कारण है, इससे तीन गुण और तीन रूप हैं । यदि महेश बैतन्य होते तो हिर के स्वी रूप पर वयों मोहित होते-- वृकासुर स्वयं वरदान दे स्वयं तीनों लोकों में प्रमते रहें -- बैतन्य को मोह नहीं होता, यह आप निश्चित सम्प्रा ते । वीरा कार्यी ने क्री जित हो कहा 'तुम लोगों ने सम्पूर्ण राज्य को मध्य कर दिया, तुम्हें यहाँ से मगा देता होगा - तुम्हारे मजानुसार शेनु ईश्वर नहीं है । माध्यव ने उपर दिया महेश ईश्वर हैं किन्तु शस्तित्व स्वतंत्र नहीं है । पुन: बीरा ने माध्यव से पूरा 'लथा महेश मोद्दा दान कर किते हैं । माध्यव नेउपर दिया मोद्दा दोन का अध्यक्तार केवल विष्णा को ही है, अन्य कोई मोद्दा नहीं दे सकता '। इसी पर ब्राइमणों को जुला बारा ने कहा 'देसो यह महेश सेश को नहीं मानता है ।

पंडितों को संबोधित करते हुने भाधित करें ने कहा कि आप लोग नागयत ने दशम लोग को तें, मुकुंद राजा से सब देवता करते हैं कि राजन हम ताम की मनोवां दित वर दे सकते हैं। राजा ने मोजा की आधना की इस पर देवताओं ने उत्तर दिया कि मोजा वान का अधिकार केवल विष्णु कोंहे। वीक काय्यीं क्रीआ कि मूत हो सिर हिला हिला कर माधव से क्रोध युक्त वचन बोलने लगा जुम लोगों ने ही पूर्ण राज्य को नष्ट प्रस्त कर दिया है, जितने धर्म कर्ने थे, सब का संहन कर दिता हिला गण सहन नहीं कर सकते हैं।

की रुपाय्यीं के इस जानरण से रुष्ट ही माध्यय ने कहा कि हम इस स्थान में न रहेंगे तो भी राजा के रहते शुम हमें यहां से नहीं मगा सकते हो ।

१- वर्षी १५६७ -- १६०३ पु० ३६३- ३६४

२- वर्षी १६०८ पु० ३६५

३- वर्षी १६०६ - १६११ पु० ३६५

५- वही १६१७ - १६१६ पु० ३६७

६- वर्षी १६२१ पुरु ३६७

मानव में विरुद्ध वीरा का अभियोग कीरा ने जाकर राजा से माध्यव के विरुद्ध निंदा की कि माध्यव ने पूर्ण राज्य को नष्ट कर किता है- लोगों ने देव धार्म-क्ष्र का परित्यान कर किया है-पुन ने पिता को छोड़ किया, पिता ने तुन को- अमस्त राज्य को भाषाव ने सेता कर किता है। राजा ने मन में अमना दिला कि कीरा माजव से अप्रसन्त होने के कारण रेखा अभियोग लगा रहा है, नहीं तो यह सदैव माध्यव की प्रशंता करताथा। राजा ने बीरा को शास्त्रायन दिया कि वे स्वयं माध्यव का निराह करेंगे, यदि उसके विरुद्ध यह अभियोग प्रमाणित हो कता तो उसे राज्य में स्थान न किरोगा।

राजा वार पश्चिमी पंडितों को साथ हैकर गया और माध्यव को उस तथान पर बुताथा। इन ब्राइमणों ने माध्यव से प्रश्न क्या क्या भ्रम सरत काली की पूजा करते हो माध्यव ने राजा को संबोधित करते हुए 'इम लोग शरत काली की पूजा नहीं करते, जिनकी मोग की हुछा होती। है वे ही उनकी उपासना करते हैं, इस उदर से पश्चिमी पंडित गण प्रसन्न हुये और भाषाव की प्रशंता की

इसके पश्चात राजा ने हरि मिनत और उसके प्रचार के विश्वय में प्रश्न किया । कि
शुन लोगों को कैसे उपदेश देते हो । भाष्य ने सारी नात स्मष्ट की । पश्चिमी पंडितों
ने माश्रव के उत्तर की मूरि प्रश्नेस की— राजा को भी प्रसन्तता हुई । राजा ने नी का
को देत कहा कि शुनवया कहना चाहते हो । बी क काय्यी ने जहा राजा में क्या
जानूं देश हम जोच मेच हैं जहां कहां जो कुछ सुनते हैं वही मैंने आपके सम्मुख नहा था, फिर
मेरा क्या दोव है । राजा ने कहा कि यह राज्य केरा है, मैं सब पुछ कर काता हूं, आज
से भाषाय मेरे राज्य में अपने महा का प्रमार करेंगे ।

महापुरु विया राज वर्ग के रूप में स्वीकृत माजव को गुना तता पान मेंट कर राजा ने विदा विचा और कहा कि नाजव का मत पूर्ण रूप से शुद्ध है जत: तोग परंपरागत मत का त्थाग कर नदीन शुद्ध मत के अनुवादी हो। माजव की इस सफलता से महातीं को अधिक हर्ष हुना, उन्होंने हरि घ्यान जारंम की।

१- वरी १६३५ - १६३७ पु० ३७०

२- वही १६३६ - १६४३ पु० ३५९

३- वही १६४६ - पुर ३७२

५- वर्षा १६५०

राजा ने बार घाए से फूल, चंदन, वस्त्र, गुवा और पान लिया और करा कि मेरे राज्य में जितने सत्त हैं स्पी माध्यव के मत का प्रूवर्धन करें महतों के राजा माध्यव हैं, उन पर केरा कि उंग का अधिकार न होगा । बाह यह सुन कर बत्यन्त आनंदित हुई, बूलरे दिन प्रात: ही माध्यव के यहां हक व्यक्ति मेजा । माध्यव ने यह समाचार पा मुस्तराये कि में भवतों के ऊपर राजा हुआ ।

राजा का फूल चंडन दान मक्तों की सभा में माध्यव ने निवेदन किया कि राजा हमें गुना, पान और करन देना चाहते हैं। त्रच्युत गुरु के साध दस मक्तों की बाध्यव ने रामनरण के थहां मेखा। रामनरण को अब्ले तमीप रस अन्य सब मक्तों की भाष्यव ने मेल किया। बाह्य ने रामनरण और जाता को न देल मक्तों से पूरा कि रामनरण तथा माध्यव पेरे यहां क्यों नहीं थाये १ माध्यव से लाकर मक्तों ने बाद का संदेश पुनाका। पाध्यव ने कहा में न जा सकूंगा। जब शाह ने सुना कि माध्यव नहीं हा रहे हैं उन्होंने स्वयं एक होत मेल किया। माध्यव ने इसे देल हंसते हुए 'श्राप लोग मुक्त प्रकार का राजा काना चाहते हैं। इसके परवात माध्यव शरीर पर वस्त्र हाल रख्यं रामदरण के साथ रें गये।

माध्यवेथ का तिरोमान माध्य राजा के प्रातान के भीतर न करे, बाहर हाथ पैर यो पीड़ा पर बैठे। दाहिने हाथ की नाड़ी की गांत समक्त कर राम नरण ने गांजन को लिफ्ट कर फ़ब्ड़ लिखा, माध्य के छोड़ छोड़ कहने पर राम करण ने उन्हें लोड़ दिया। गाजन जोर जोर से राम राम बोल्ते लो बौर उनकी बार्ड गाड़ी की गांत भंड होने लिए- राम नरण ने उन्हें पुन: लिफ्ट कर फ़ब्ज़। मतत गण कमने कर से बाहर गांधन की इस्तीला देखने बाये, सब मनतों ने राम नाम की, घुन की माध्यन ने क्यां राम कुष्णा नाम ना उच्चारण करते हुए महाप्रयाण दिथा।

माध्यद्येव का संस्कार कार्य लक्षा भारायण को अब माजव देन के मृत्यु का समाचार प्राप्त हुआ, वे अत्यन्त दुखित हुए और बीरु को निर्देश दिया कि अगरु चंदन जादि के

१- वर्षाः १६५३ पुरु ३ एव

३- वही १६७२ - १६७८ पु० ३७७- ३७८

काष्ठ द्वारा मानव ा दाह उंस्तार िता जाय । इसी समय वर्षा चारंभ हुई मतः वंश्त ने मंडप हा कर चिता की इचित व्यवस्था की । राम चरण ने अग्नि संस्कार पिंड जान तथा पर दान विया ।

माजन केन ता लीला है कुम और उनकी तिथियां एवं शक उनका जन्म ज्येष्ठ माह, रिनिनार, ज्ञान लाग पर प्राची रात में हुना । एरिसंह नरा के घर नार वर्षा, नात में नार धर्षा, तेहुनु पुर्त पार में एर वर्षा, में नार धर्षा, तेहुनु पुर्त पार में एर वर्षा, में मान वर्षा एर । जर कंतरिय पनरतर वर्षा के ले गये थे, ब उस जमन माजन से उनकी मेंट ज्यूनांकाट वेलपुरी में छुं, माजन की जमाशा ३२ वर्षा की थीं । ग्यारह वर्षा तक माजन ने मुल सेना की नान कार्या अरा कांड के पर्यात आहत्यार में छुं। मारा, तका ज्यान में तान मास एरें । धरानाह में तीन वर्षा की पाल कार्या में से मान, नानकपूर्व में बठारह पर्षा और पाटनाहरी में भार मोरानी पाल कार्या है । विराम ता जारि बाँवरा में ३ मास, कुंदरी में बारह पर्षा, मानूर में ३ मास, नार्या मानूर में मान कार्य कार्य कार्य कार्य कार्य के पाटनी से भाग नार्य के पाट मानूर के स्वां ३ मास प्राची रामक्ता नार्य में ३ मास, विकायुर में नुस्ति यहां २० दिन स्वां में ३ मास हाजो रामक्ता नाति में ३ मास, विकायुर में नुस्ति यहां २० दिन स्वां में सास हाजो रामक्ता नाति में ३ मास, विकायुर में नुस्ति यहां २० दिन स्वं भाग आता के निवास में ३ मास, वरिमा वर्ष के घर, मचपुर में दो वर्ष एर वेत्न तात्र में १ माद कार्य में १ माद स्वां से भाग स्वां माद से भाग से १ माद से १

१- वहीं १६८४ - १६८७ पृत्र ३७६

र- उपेन्द्र लेवारा - क्या गुरु गरित पु० ५६६

तृतीय अध्याय ००००००००००

असमिया और हिंदी वैष्णव साहित्य

शंकरदेव की रचनाएं

शंकरदेव की रचनाएं

मागवत :- शंकरदेव को प्रधानत: भागकत से प्रेरणा प्राप्त हुई जिसे उन्होंने पुराण के मध्य सूर्य कहा है जिसमें वेदांत का दर्शन युक्त था । अत: प्रारंभ में इस पुस्तक का असमिया अनुवाद विधा गया । निसंदेह संस्कृत मात्रा तथा दूरु ह शैली में रिवत इस पुस्तक का प्रांतीय मात्रा में अनुवाद करना सहज न था । कोच राजा नरनारायण की राज्य सभा में ब्राइमणों ने शंकरदेव के ऊपर यह अभियोग लगाया कि उन्होंने भागकत को पढ़ा, पढ़ाया और उसका अनुवाद किया । एक व्यक्ति के रिष्ट संपूर्ण पुस्तक का अनुवाद करना संसव न था । अत: उन्होंने इसके विभिन्न मार्गों के अनुवाद का भार अपने अनेक शिष्यों को दिया और स्वयं इसके दीर्घ माग को लिया । प्रथम, दिवतीय, तृतीय, व स्व अष्टम नक्म, दश्म और द्वादश स्कंभ के स्त्यांतर का कार्य अपने हाथ में लिया ।

मागवत के रूपांतर से बसिया कावता के नव युग की नींच पढ़ी: - साहित्यिक दृष्टि से इसका प्रभाव संकरी लाहित्य पर विविध रूपों में बत्यधिक पढ़ा बीर संपूर्ण शंकरी साहित्य इसी ढांचे में ढला । केवल कृष्ण संबंधी कथाओं के लिए ही शंकरदेव भागवत के ऋणी नहीं हैं वरं उन्होंने इससे विविध साहित्यिक रूपक, अभिव्यंकना और परंपरा भी ग्रहण की । शंकर ने भागवत का अनुवाद वसिया शब्दों में न कर असिया मुहावरों में किया। असिया अनुवाद करने में किव ने बन्य टीकाओं और पुराणों का भी उपयोग किया है । शंकरदेव ने कालीहृद के लट के कदंब बुदा को गरु इ पति से स्पर्ध कराया है, जब वह अमृत लेकर आ रहा था, इस कृता पर उसने विकाम किया । संमवत: कवि ने इस घटना को किसी पृथक म्रोत से ग्रहण क्यों कि इसका उत्लेख भागवत में नहीं है । इस प्रकार से इन्होंने मूल संस्कृत ग्रंथ की विविध घटनाओं तथा विवारों को इस ढंग से प्रस्तुत करने की चेट्टा की है जिससे सर्व साधारण असिया इसे लगा से जिन्स सर्वे बौर

इसकी प्रशंसा कर सकें। अत: भागवत का असमिया रूपांतर ग्रंथ और टीका दौंनों ही कहा जा सकताहै।

यथि इस ग्रंथ की रचना सर्व साधारण लोगों के लिए की गर्ट, किन्तु विद्वानों ने भी इसकी प्रशंसा की है। शंकरदेव के चरितकार मुख्या दिवज ने इस संबंधा में एक उल्लेबनीय घटना का विवरण दिया है जिससे इस ग्रंथ की लोक प्रियता तथा उपयोगिता का जाभास मिल**ा है । ब्रह्मानंद सन्धासी के निकट कंटमूषण नाम** का एक असमिया ब्राइमण वेदांत दरीन का अध्ययन काशी में कर रहा था-- एक िन उन्होंने अपने जात्रों के सम्मुल मागवत पुराणा के कुछ श्लोक पढ़े, िसे उनके शिष्य न तमका सके और मौन रहे । कंट्यूषण ने इन श्लोकों की व्याख्या की । ब्रह्मानंद को वित्मय हुआ कि इस यसमिया शिष्य ने वैसे एन श्लोकों की व्याख्या की । प्रश्न िये जाने पर कंटमूषण ने कहा कि शंगर्देव ने असमिया में इस गूंध को इतने सहज और स्पष्ट शैली में लिला है कि स्त्री तथा शुद्र भी इसे सर्लता से समफ सक्ते हैं। बादि दशम स्कंघ भागवत के मन्य स्कंघों की अपेता शिवक लोकप्रिय है। इस र्यंधा में कृष्ण की बाल सुतम कृीड़ाबों, नाना राजासों के वध्न, वन में मोजन, गोचारण, भावन चोरी, गोपियों के साथ विवाह तथा माता-यशोदा के साथ श्रन्थ शिशु सुलम चंचलता और ेलों,का वर्णन हुआ है। दशम में वालक के मानवीय तथा यथार्थ चित्रों का चित्रण हुआ है--माता का अपने नन्हें शिशु के प्रति स्नेष्ठ और शोक प्रकृति और काव्य की अन्य स्थापनाएं मानव हुत्य को शास्त्रत मांदो िल्ल करती रहेंगी । यह ध्यान देने योग्य है कि शन्य प्रांतीय वैष्णव साहित्य के विपरीत राधा इन दृश्यों में नहीं हैं-- श्रीर शंहरी साहित्य में उनका चरित्र कहीं भी शंकित नहीं हुआ है।

शंकरदेव ने अनेक बार अवायग्रोत भागवत से सामग्री ती है। इस रूपांतर के अतिरिक्त उन्होंने इस पुराण की सामग्री से अनेक विशास ग्रंथों की रचना की। भागवत की स्कादश स्थंभ की कथा के द्वारा उन्होंने निभिनवसिद्ध संवाद की रचना की। इस ग्रंथ में नारद वासुदेव के सम्मुख राजा निभि तथा नव संत,कवि, हथि, अंतरिना, प्रमुद्ध, मिप्पसायन, अविद्नोत द्राविड़, चमसा, करमाजन के मध्य हुए संवाद की कथा कहते हैं। राजा द्वारा प्रस्तुत विमिन्न समस्याओं का समाधान इन सिद्धों ने किया मागवत, धर्म, मिनत, माथा, माथा से मुनित का मार्ग ब्रह्मयोग, कर्मयोग, कर्मयोग, कर्मयोग, करानत के लडाण, ध्वार का विदेवन इस ग्रंथ में हुआ है। इसमें तत्त्वतान की कुछ गूढ़ समस्याओं का प्रतिपादन भी क्ष्मिया माजा में हुआ है। इनकी भिनित प्रदीप में भिनत के विभिन्न कंगों का विश्लेकणा किया गया है। कहा जाता है कि गरु हु पुराण के आधार पर इस ग्रंथ की रचना हुई किन्तु भागवत के स्कादश स्कंध के साथ इसका अधिक सादृश्य दिसाई देता है। भिनत के विविध नव विधियों में से रचनाकार ने अवण तथा कीर्तन पर अधिक बल दिया है। केन्द्रित ने स्क शरण का प्रवार किया है, अन्य देवी देवताओं की उपासना विजित है। भिनत प्रदीप में कृष्णा ने इसे स्मष्ट किया है।

एक चित्रे तुमि मोक मान करा सेना
परिशार दूरते यते ज्ञान देवा।
ध्योक शरणापन्न एक मोते मात्र
मोके मन शहना तेके मुकतिर पात्र
नाम नुशुनिना तुमि ज्ञान देवतार
येन मते नुष्क्षि मन्ति व्यमितार।।

गुणमाला :- कूच बिहार के राजा नरनारायण के प्रार्थना करने पर उन्होंने गुणमाला की रचना की , बढ़ यह उनकी श्रेतिम कृति है। वस्तुत: गुण माला मागवत के दशम श्रीर

१- मजे माध्यवक नाम

२ येन पितृ शिशुक लाष्ट्र लोम दियय ।

स्मादश का सार मात्र है। यह स्तोत्र ढंग की कविता है, जिसमें विष्णु अथना कृष्णा की प्रशंसा की गई है। स्क इंद में कवि कृष्ण के जीवन की अनेक घटनाओं का वर्णन करता है। कोई रेसा वैष्णव मकत नहीं है जो गुणमाला का मौ लिक पाठ न कर सके। की तैन :- दूसरी महत्वपूर्ण रचना की तैन है जिसका प्रभाव आज भी अविभिधा लोगों के मन और विवार पर सबसे अधिक है। असम में इस पुस्तक को उसी दृष्टि से देता व जाता है जिस दृष्टि से उत्तर भारत में रामचरितमानस देला जाता है। स्क भी हिन्दू असिना का घर रेता न होगा जिसमें यह पुस्तक पांडुलिप के रूप में, या मुद्रित रूप में न हो, इसके कुछ पद आ अधिक अवसरों और रुग्णावस्था में पढ़े जाते हैं।

कीर्तन की रचना तिथि बदात है। शंकरदेव के कुछ चरितकारों का नत है कि उन्होंने संपूर्ण गूंथ को एक समय में न लिला बौर यह रचना बस्त व्यस्त बनेक वर्षों तक पड़ी रही। जिस कुम से गूंथ का वर्धनान रूप मिद्धा है, इतसे सहज में यह बनुमान लगाया जा सकता है कि यथि गूंथ की रचना विभिन्न समय पर हुई, किन्तु यह पूर्व योजनानुसार लिसा गया बौर यह उनके प्रारंभिक काल की कृति नहीं थी। कीर्तन केवल एक काव्य नहीं, इसमें रश्कर पतों की रक्ष च्यनित किताएं हैं। इसिक बिनागंश कविताएं मागवत पुराप की रूपांतर मात्र हैं। सहस्थानम वृद्धांत तथा छुन्धा बन्ध तेलक की देन हैं व इनके लेक शंकरदेव के शिष्य कर्नत कंदति बौर ीधर बंदति हैं, शंकरदेव की इच्छा से इन्हें मूल खान में भिला लिसा गया कीर्तन के प्रत्येक काव्य स्वतंत्र काव्य वहे जा सकते हैं। धार्मिक समार्थों बौर सेवा- उपासना के बनसर पर कीर्तन के पर गाए जाते थे-- प्रत्येक पद में एक घोष है, जिसे हम ध्रुव कह सकते हैं। एक पद पढ़के पश्चात नायक घोषा को दुधराता है श्रीर वल के लीग ताली बजाते हुए उसका साथ देतेहैं।

की ती प्रथम कविता 'चतुं विंशति श्रवतार में संदोप में ईश्वर के चौकीस श्रवतारों का वर्णन है, कृष्णावतार के व्यक्तित्व और उन्हें प्राणी मान का उद्धारक कहा गया है। 'नामापराश्च'की विषय वस्तु पड्मपुराण के स्वर्ग संह से ती गई है। इसमें : :

नारद और ब्रध्ना के पुत्र नार सिद्धों के मध्य हुए मंजाद का रूप है, जिसके बंत में काल्युग में मुक्ति लाम करने के विविध्य साध्यन बतार गए हैं। पाणंड मर्दने पाणंड मित का दमन मात्र शंकित हुआहें, इसकी विषयवस्तु मान का विष्णुध्यमीं र, वृहत नारदीय पुराण तथा सुत-संहिता से ली गई है। इसमें मगवान का नाम उच्चारण ही मव मय से मुक्त होने का स्क मात्र ताध्यन कहा गया है। एंजरदेव ने यह अनुभव किता कि ब्रह्मणों के कर्मकांड ने ईश्वर और मनुष्य के मध्य दीचार खड़ी कर दी है-- अत: उन्होंने लेखनी और मंच इवारा जाति, वंश पद की रुद्धियों को जिन्न मिन्न कर दिया अनेक अवतरणों में संकरदेव ने स्मष्ट कर दिया कि संतार से पूर्ण मुक्ति के लिए देव दिवल होने की आवश्यकता नहीं - न शास्त्रों के ज्ञान की अमेदता है। एंकरदेव ने जिस विष्णाव मत दीचा दी वह वह स्वभाव से सिद्धांत तथा संगठन की दृष्टि से पूर्णात्या गणतांत्रिक था और प्रत्येक व्यक्ति इसे गृहण कर सकता था। यही एक कारण था जिन्हों अनेक मुखलमान और आदिम जाति के लोगों ने इस मत को स्वीकार किया।

च्यान वर्णन :- यह रम त्यु पर्दों का लाय्य है, इसमें केंतुंठ का ल्रस्यन्त सुन्दर वर्णन है- जहां प्रत्येक भवत मृत्यु के परवात जाना बाहता है। जिला मिलोपारधान की क्या भागवत के घष्ठ अध्याय से ती गई है। उस ब्राह्मण ने पतित नीच बुत की शूद्रा को अपनी पत्नी बनाया और उससे दस पुत्रों का जन्म हुला मृत्यु के समय उसने अपने छोटे पुत्र नारायण को पुकारा-- नारायण ईश्वर का नाम है बत: उसे दूत यमपुर न ले जाकर विष्णु लोक ले गए। इस काव्य में ईश्वर के नाम उच्चारण का महत्व दिलाया गया है, यहां तक कि यदि कोई क्यानवश भी ईश्वर का नाम लेला है तो उस महापतिक का उद्धार हो जाता है, असे अनेतावस्था में पान की गई औष धि से उदर जूत दूर हो जाता है।

प्रस्ताद चरित्र की विषय वस्तु भागवत के सप्तम स्वांध्य शे ती वह है। इसमें प्रस्ताद की प्रसिद्ध कथा द्वारा भवित प्रतिपादित की वह है। इसे ही ३० वरणाँ: इंदाँ: के ग्रोन्द्रोपाल्यान में अधिक स्पष्ट किया गया है। गरेन्द्र ग्राह इवारा पराजित हुआ और वह भृत्यु के ताण गिन रहा था। कास्मात उसके मन में आथा कि हिर मिनत उसकी रुगा कर सकती है, उसने सूंड में कमल केकर विष्णु का किंतन किया। निष्णु नै जाकर उसकी रुगा की

हरमोहन: - हरमोहन की विषय वरतु मागवत के अष्टम अध्याय से ली गई है। इसमें विष्य कन्या के प्रति आकर्षण का वर्णन है विष्णु ने मोहिनी का रूप भारण कर शिव के मित में ऐसी शिथिलता प्रकट की कि वे अपना गौरव, मया दा ला आत्म नियंत्रण को एोड़ उस कन्या के पीछे लागान्य व्यक्ति की मांति दोड़े। कवि ने मोहिनी के अंगों का ऐसा सुंदर वर्णन किया है जिसमें गंगारिकता अधिक है। निम्नलिलित पद में दिव्य कन्या का चित्रमय वर्णन किया है जिसमें गंगारिकता अधिक है। निम्नलिलित पद में दिव्य कन्या का चित्रमय वर्णन किया गया है:-

तप्त स्वर्णं सम ज्वले देश निरूपम लिल विलत हात पाव चदा कमलर पाशि मुखे मनोहर हिस समने दरसाह काम माव ।।

उन मनुष्यों के लिए जो नारी के प्रति वासकत है एक चेतावनी मी है, तरी का वाकष्ठाण इन पंक्तियों में वंक्ति हुआ है

> घोर नारी सर्व माथाते हुत्सित महा सिद्ध मुनिरो स्टादो हरे निव दश्मो नरे सम्ब प्रश्न भंग वानी शामी से नामिनिर हरे संग ।

प्रस्था है कि नारी जाति के प्रति शंकरदेव का यह दृष्टिकोण न भारतन्य स्थलो पर उन्होंने नारी कोमल तथा प्रशंसनीय प्रवृत्यों का चित्रण किया है। शिशुलीला काव्य में बाल कृष्ण की बाल क्रीड़ा तथा उनकी ईश्वरीय शक्ति का चित्रण शत्यन्त मध्युर तथा प्रांजल भाषा में हुता है। इस प्रकार नटस्ट कृष्ण का शत्यन्त मगोहर चित्रण यहां प्रस्तुत किया गया है।

> विश्वांग किया पाछे तुमि नामोनर अनर्थ जरिया फुरा गोनालीर घर । धानंदले तमस्त गोनालीगण धासि कृष्णर शाकृति यशोनार देत संती कि भेला तोभार इतो तनय दुर्जन कृष्णर निभिन्ने धार न रहे जीवन ।। गांध नतु दोस्ते डामुरी किल्गांच । गृह पशि नुरि करि लांत दुग्धा दह ।। बानर को ख्याध गोवंद किनो चंड बानर न शांध को कोयांच मंगे मंड ।। दुती येने नपाये ननंत नाध तुष्टि सिक्यार पारा धने कुलत उठी ।।

रास की हा मुनतक का व्य की कथा मागवत के दशम तमंत्र से ली गई है, इसमें कृष्णा गो पियों सिंदत शरद पूर्णिमा की रात्रि में यमुना पुलिन पर रास मंडल बना नृत्य करते हैं। प्रकृति के वर्णन के पद इस का व्य में शक्षिक हैं जिनका मानव जी पन से शरूट संबंध है। रास नृत्य के मध्य से कृष्णा शहुश्य हो गए और गो पियां यमुना तह के प्रत्येक तरुन लता से अपने प्रियतम कृष्णा के संबंध में प्रश्न करती हैं कि वे कहां गए।

१- कम समयत तोक मंत्री हेना शिख रंगर बेलात येन तक प्राणा सिख स्नेहर प्रस्तावे तक मातृ हेन धान शयन बेलात तक दासिर समान । :हरिश्बंद्र उपाख्यान:

१- उच्च वृता देखि सोधी सादिर

शुनियो अश्वय वत पाकड़ी -----

वृष्ण की मुर्रतीमा घुरी का प्रभाव गो पियों पर वैसा पड़ा उसका वित्रमय वर्णन किया था है।

स्थामंतक हरण में एक मणि की तथा है जो प्रति दिन जाठ स्वर्ण लंह, प्रदान करती थी गीर आधाल, मृत्यु से व्याच्या, व्याघ्र और सर्प की बाधा को दूर गर्दा था राजा जंबुताण ने सिनार के लम्य सर्पराजत की सूर्य प्रदर्श मणि को बुरा लिया । जंबुतान से युद्ध कर पृष्णा ने इस मणि को प्राप्त किया । इस मुनतक काच्य में किन ने समर के उरेजनाजाक जित्रों का वर्णन नाटकीय तत्ना से संदित्य और शक्तिशाली ढंग से प्रस्तुत किया है । दुछ पंतितयां जम्बुवान और कृष्ण के मध्य हुए युद्ध का आमाः देंगी ।

वंसवध्य दो सौ तेरह पदों का काव्य है इसमें कृष्ण के दीरतापूर्ण द्वंद्य का विजय है जिसके अंत में कंस की इत्या की गई । गोपी उद्धन संवाय तैतीस पदों की तहा रचना है, इसमें उद्धन ने कृष्ण का संदेश प्रज की गोपियों तक पहुंचाया है इस काव्य में गोपियों के शोगालुत हृदय की वेदना चौर रादन का चित्रण हुआ है । कृतिरा वांका पुराण तना 'अकूरर वांका पुराण' में यह प्रभट किया गया है , कि मगवान मन्तों के मनो स क्षे पूर्ण करते हैं । जरासंघ्य युद्ध और कात्मवन वध्य में जरासंघ्य और वत्नराम के संघर्ण का वर्णन है, कृष्ण के संकेत पर मुहलूंद ने जरासंघ्य की हत्या की । 'नारदर कृष्ण दर्शन की जया मागवत के दस्म स्वंध्य से ती गर्ध है यहां कवि इन्हें सर्व्वव्यापी रूप में बंक्ति किया मागवत के दस्म स्वंध्य से ती गर्ध है यहां कवि इन्हें सर्व्वव्यापी रूप में बंक्ति किया है । एक दिन नारद कृष्ण के रिन्धास में गर और देशा कि कृष्ण वक्ती मुख्य पत्नी राज्य के ताथ एक कक्षा में आनंद कर रहे थे, वहां से वे दूसरे कथा में गर वहां कृष्ण वक्ती के साथ थे मुनि ने सो तह सी क हजार भाठ कन्नों का भारदर्शन विद्या और

१- बुस्वर मण्डुर करि हरि गाइला गीत बुनि कामे उत्तरायल हुरा गोफी गणे विका लगण गीत ध्वान गिरीचाणे विका भारित कृष्णे वहे अलक्तिते।।

के शिन जाम्बर्वत धाएला महाजलवंत निवित्त स्वामीणो पाई धारिलंत युद्ध काहे सामान्य मनुष्य बुलि महाष्ट्रोधो गेला ज्वलि ना जान प्रभाव श्रति लगाइलेक हात्रशाती ।

देशा कि कृष्णा अपनी १६०० = रानियों के साथ पृथक पृथक कता में बानंद कर रहे हैं। ेविष्रपुत्र शानयमें :- गृष्णा जब द्वारका के शासक थे एक दिन उनके प्रासाद में स्क विष्र वपने मृतक पुत्र को मुजाओं में तमेटे बाधा । ब्राष्ट्रमण ने रोते हुए कहा कि जिस राज्य में ब्राइयण को रोजा पढ़े वहां का राजा पात्रिय नहीं नृतक होगा । ब्राइयण के नौ पुत्र थे, वे बा त्याय या में कालग्रसित हुए । कृष्ण के निकट अर्जुन वैठे हुए थे, उन्होंने विप्र के निकट जाकर सांन्तावना दी कि वे उसके शागामी पुत्र की रुजा करेंगे, यदि वे असफ ल हुए तो अग्नि में जलकर प्राण त्थाग करेंगे। ब्राङ्गण का दरायां पुत्र भी जन्म होते ही मर गया । इस पर ब्राइ्मण ने अर्जुन की मर्त्सना की और कहा कि जिस कार्य को तुम नहीं कर सके उसकी प्रतिहा कथाँ की १ अर्जुन ने यमपुरी देशा पर वहां भी ब्राइ्मण का पुत्र दिलाई न दिया । विविध मुक्तों में बन्वेषण करने पर मी उसका कोई दिन्ह न मिला । वे निराश हो कर द्वारका वापस धार और जल्मे के लिए चिला का प्रबंधा किया कृष्ण ने अर्जुन को एथ पर बैठा, सात वृवीप, सात तागर पार कराया, वहां देता कि विष्णु चरि जागर में अनंत नाग पर ब्राइमण के दर वासकों सहित विज्ञाम कर रहे हैं। ेरस काच्य का शार यह है कि पनुष्य किता ईश्वर की कृपा के अपनी चेष्टा में सफल नहीं हो सकराहै। देवकीर पुत्र शानधन नौतीस पतों की छोटी से रचना है। कंस द्वारा मारे गर ह पुत्रों को द्विनमस-सार कृष्ण सुतलपुर्त के राजा विल के यहां से वापस लाए। माता के दर्शन के परचात कृष्ण क्य कृषा वृवारा सब पुत्र वेशुंठपुर्व चले गए । वृक्षरा काव्य वेद रहुति :मागवत दशम स्कंवा: चिंतनशील विचार चारा धौर दार्शनिकता से पोर्पूर्ण लग है।

ेदामोदर निप्रोत्याने के। विषय बस्तु भागवर के दशम स्लंधा से ती गई है। वामोदर श्रत्यन्त रंक ब्राएमण या किसी प्रकार वह अपना और पत्नी का भरण पोषाण कर पाता था। एक दिन हमकी पत्नी ने अनुरोध किया वह पाठशाला के बंधा कृष्ण के क्रीन करें सर्वप्रथम दामोदर ने अपने बेम्ब संपन्त भित्र से निसने के लिए संबोच विया, विन्तु

श्रंत में उसने पत्नी की बात गान ली । मुने हुए चावल की छोटी की पोटली ले नित्र के ख पास गया । कृष्ण गपने वियालय के संगी को देत अत्यन्त प्रसन्न हुए और उपहार का उपभोग विधा । कवि ने यहां यह विक्षाने की चेच्टा की है कि प्रमु मिल द्वारा दे। गई शोटी सी वस्तु पर भी श्रधिक संतुष्ट होते हैं। इस काव्य में ब्राह्मण की दर्जिता तथा भित्र के प्रति रनेह तथा क्तीव्य की फांकी मिलती है। तीलामाला में कृष्ण के बात्य काल की घटनाएं १०७ पद में चित्रित की गई हैं, केतुंड प्रयाण में कृष्ण के श्रंतिम प्रयाण का वर्णन है, दोनों की क्या गागवत के दशम एकंघा से ती गई है। वैकुंठ प्रमाण कीर्तन का राजसे दीर्घकाय का या है जिसके २५४ पद १६ मार्गों में विमनत हैं इसमें, यदुवंशियों के द्वारका से प्रभार जाने का और उनके मयपान, मोग, कलह और विनाश की क्या है, कृष्ण की मृत्यु जरा नामक व्याधा के शर से हुई और उन्होंने अर्जुन को अंतिम संदेश दिया, अर्जुन यादवीं को इन्द्रप्रत्थ लार । काव्य मा आरंभ कृष्ण और उद्धव के वालालाप से आरंभ होता है, जिन्हें यादनों के विनाश की बात पहले प्रस्ट हो भूकी थी। कृष्णा ने उद्धव को भनित की शिला दी और तिथैयात्रा करने के लिए आदेश किया । इस काच्य के श्रंतिम वृ दृश्य में उद्धव ने विदुर को यदुक़्ल किनाश और कृष्ण के लिरोभाव का समाचार दिया । संपूर्ण काव्य शोक से प्रभावित है । स्वनावत: प्रत्येक व्यक्ति की उच्छा होगी कीर्तन का ऋंत वै्सुंठ प्रयाण के साथ होना चाहिए किन्तु शंहरदेव ने उरे जावणीने नामक काव्य का योग इसमें विधा है जिसमें जानाथ मंतिर का क्णीन है, इसकी विषय वस्तु ब्रह्मपुराणा से ली गई है और इसमें जान्नाथ दोत्र की स्थापना का वर्णन है। राजा इन्द्रम्युम्न ने उड़ीसा में श्रनेक मंदिरों का निर्माण कराया ।

की तैन शंकरदेव की प्रौढ़ रचना है, जैसा हमने देशा है कि मागवत के अनेक आरखान को इस दृष्टि से इसमें संयुक्त किया गया है, जिससे मिलत के सामान्य सिद्धांत और मनत के आचरण तथा निशम का जान हो सके। इसमें संवेदनात्मक माणा शिक्षाप्रद वंदना पिनय से पूर्ण आकर्ष है लिए की में तिसी गई हैं। किन्तु आध्युनिक पाटक के लिए की तैन का महत्व इसके सेद्धांतिक व्याख्या, प्रवचन तथा घार्मिकता की दृष्टि से नहीं कर विशास वर्णनात्मक पदयोजना, विश्व व्याख्या तथा मृततः तुक की योजना जो काव्य में सर्वत्र प्रभाहित हो रख है के लिए है जननाथ वरुचा ने इसकी लोकप्रियता के संबंध में ठाक ही कहा है सुल-दुल प्रम-वियोग, कोच्य पाया आदि सब मान समान रूप से की तैन में समासित विश्वे गए हैं। प्रत्येक शेणी के पाटकों को यह आनंद प्रदान करती है। इसमें वालकों के लिए कौतूबल पूर्ण क्यार और गीत है, युक्कों को काव्य सौंदर्य आनंद देता है, और वृद्ध जनों को इसमें घार्मिक शिक्षा तथा जान मिलता है। घार्मिक दृष्टिकोण से ही की तिन काव्य की

महत्वपूर्ण कृति नहीं ,वरं इसमें प्रत्येक धर्म के उदाच विचार सन्निहित हैं।

हिरिचंद्र उपारधान की रचना शंकरदेव ने महेन्द्र कंदति की पाठशाला में किया था। इस ग्रंथ की विषय वस्तु मार्थिय पुराण से संकत्ति की गई है काव्य के आरंम से ग्रंत तक कि ने मिनत का महत्त्व प्रशासित कथा है। उनके सुना काल की दूर्ती रचना रूकिमणी हरण काव्य है।

ेरु निमणी हरणो अत्यन्त मनोहर काव्य है। इसकी विषय वस्तु हरिवंश तथा मागल से तो गई है। लाव्य के प्रारंभिक पदों में कवि ने उच्यं कहा कि भैने इन गूंथाँ की सामग्री का मिल्या इस दृष्टि से विधा विस्तो वह श्राधिक सरस शौर मधार हो जिस फ्रार से लोग दूध में ह मध्यु डाल कर उसे अधिक स्वादिष्ट पेश बनाते हैं। कवि ने इसे अधिक यधार्थवादी रूप देने के लिए मूल करा के दृश्यों में सर्वसाधारण घरेल अनुमर्वों का भी योग किया है जिससे पीराणिक शास्थान साधारण लोकप्रिय करानी में परिवर्तित हो गया है। विदर्भ के राजा नी व्यक्त की पुत्री रु िपणी। ने हुव्या को अपना पति चुना । माता फिता की इच्हा के जिल्हा लिनगा के मार्च रूकम ने शिशुपाल के साथ उसके विवाह की व्यवस्था की । राविमणी ने पेवनिधा भाट ब्राइमण द्वारा अपता संदेश गुल्या को भेजा कि वे उसकी शिशुपास से एका करें। इस बाव्य में वेदानिधि ने विश्वासी नित्र का कार्य विद्या है। कृष्ण की जुलाने के लिए वेद निध्न द्वारका पहुँचे कृष्ण ने ब्राह्मण के साथ तत्ताण त्य से प्रस्थान विचार्थ की गति नासु और नार्व की गति से सिविक थी, विध्वंसक की भांति वह शब्द करता गरा एटा था। सबेत हो जाने के मय से ब्राइमण ने लानी वालें । जान से ढंक लीं । जकता चिर जाए बार घूमने लगा, कराकर वह रथ के निलते भाग में अवेल को कर किए करा । कृष्ण ने ब्राक्सण की सेवा की और पुन: चेतना लाम कर तका । किवाह के जिन कृष्णा बुंकिन नगर पहुँचे-- मवानी मंतिर की शोर जाती हुई क िमणी का घरण किया । रूपम शादि बन्य राष्ट्रमार्गे ने गृष्ण ना पीछा क्या पर वे असफर ्षे । ध्वारका में रुकिमणी गृष्ण का विवाह हुआ। एस काव्य में कवि ने शनेक यथार्थवादी। चित्र प्रस्तुत किंद हैं कु निमणी की विवाह संवंधी पारिवारिक वात्री,कृष्ण जागनन और अन्य राज्युनारों के साथ युद्ध, वेवाहिक रीति का विशद वित्रण कवि ने किया है। मध्यसुर्गान ऋसिया अलंगर तथा अनेक वर्ण के शामुषण शालेंग रिक ढंग से उपस्थित विधे गर हैं। अंगरवेव ने विश विवाह का वर्णन यहां प्रस्तुत किया है वह प्रवतित वैवाहिक रूप से वर्तथा भिन्न, बन्ध लोकप्रिय चित्रों से भरपूर है। विवाह के दृश्य में व्यंग विनोद तथा दुल से वौनों ही दिलाई देते हैं। इस विवाह में समस्त देव गंध वे तीनों लोक से अपनी मयादा और पद की दृष्टि से वी ग्य सम उपहार ते हा श्रास । शिव की स्थिति सर्वेषुा श्रद्भुत थी क्यों कि उनके पास मेंट के लिस कुछ भी न धा— यहां तक कि उनका वेश बाध का की था और उनके हाथ में त्रिशूल और उनके लगा स्व कृषा ही संपित्त थी, उनके मस्तक पर चंद्र किराजित था, खांप उनके सद्दिर में शामूष्यण की मांति लटक रहा था, मुंडगाल गते में था और गात्र में विभूति मान थीं।

युद दृश्य के विना कोई कार्य पूर्ण नहीं होता है। हमारे कवि ने इसकी भी पूर्ति, कृष्ण और वन्ध राजाओं के गव्य दुर युद्ध का वर्णन दे पूरा किया है, युद्ध के वृद्ध में वार एव का प्राधान्य है।

वा लिएलन -- पाटनाउसी प्रवास काल में इंकर ने इस कृति का सूजन किया। मागवत सब्दम उन्नं के जिल का जात्यान इसमें रूपांत रित किया कता है। भिन्त के निविध पूर्तों की व्याख्या और विशेष्णत: पास्य भिन्त का प्रक्तिपादन इस ग्रंथ भर में हुआ है इसके बाति जिल इस ग्रंथ में यह भी स्मर्थ किया कता है कि धन-धान्य वैभव मनुष्य की शाध्या त्मिक उन्नेति भें नाध्यक हैं: की पाले पाने ताक पर्म वापते: यह सब अनर्थ की मूल हैं और उनके नियंत्रण द्वारा ही शांवि तथा संतोष की प्राप्ति संभव है।

शंकरदेव वेयल कृष्ण संतंत्री विषय यस्तु तक ही सं मित न रहे किन्तु उन्होंने रामायण के सार की ग्रहण कर मी ग्रंघों की रकात की उन्होंने रामायण केउतर काण्ड का अनुवाद किया उस तमय मालव कंदलि के अरामिया रामायण के पांच काण्ड प्राप्त थे किन्तु शादि तथाउतर कांड न थे। इस उत्तकांड को एक स्वंतत्र रचना भान सकते हैं। क्यों कि इस शास्थान की नाना घटनाओं का वर्णीन राम की समा में तब कुश ने गान गा कर किया है। मानवत बेरो पवित्र ग्रंथ के अनुवाद में कांव ने मूल पाठ का अदारशः अनुसरण किया है किन्तु इसके विपरीत रामायणा के उत्तर कांड में :अनुवादक ने शादश्री वरित्र तथा घटनाओं का अनुवाद के नायक राम इसमें काव्य के नायक नहीं, वे केवल कृष्णा के अवतार मात्र हैं।

१- तिनियों लोकत मत बाहे धान्य धन यत विव्य नारी शाहे सुंदरी प्रणान यत विव्य घर बारी वस्त्र अलंकार सवेड नुमुरे मन स्क लुमियार पृशु गया शाबि करि राजा अपयैन्त वर्षर तृष्णा केही नपाइलेक अन्त

भित संप्रदाय के प्रवारार्थ ही संकर्षित ने इसका रूपांतर किता । इसे ऋतिया विकाली रूप देने के लिए ही कार्य ने घार्मिक भावों से युवत भनिताओं का संयोग प्रत्येक संद में विधा है। एक संद इस प्रकार की शिला सहित समाप्त होता है। :-

> हुना समासद रामायण पद पा नर भूक्रकेतु विपार संसार हुने होये पार राम नाम गांधि सेतु दुष्ट बाल एप सब को दंशिले मैदा हुति का सुद्धि रामनाम क्यों व्यक्त विनर नाह नाह महाबौधा थि ।।

्रानायण जाव्य है शास्त्र नहीं, संबद्धि ने इस शाव्य में स्वतंत्रापूर्वक अनेक नवीन अद्मावनों का ामिनण किया है और काव्य में से वर्णन के थो व्य जितने भी अवसर भिते हैं उनता साम उन्होंने उठाया है सो फिक तत्यों के भितरंजित प्रयोग से कहीं कहीं पाठनों को भाष्य हात्य रस का रहास्थावन कराया कहा है। राम इसारा बृद्ध दुनांसा और उनके सिक्यों के भोजन का दृश्य यद्यपि मारियारिक यार्थिशव से परिपूर्ण है तथापि जितिश्वत वर्णन के फसलाइन क्रों कार्य ग्रांचिक है।

श्री पर अश्रोण देति गंकित राघवे अनापान श्रापुनि साणिशा सवांत्र वे । श्रागत योगाधला श्रानि श्रोण मने ।। देति दुर्नासा महातुष्ट मेला मने ।। गरि परिपाटि पाछे शिष्ये समे श्रीण मुख्ये लागिला जन्न परम श्रिरिण । कन सीर सीर ला रवेलंत लागे मने नमस्थ पेट पीपाण परमाणे ।। नायकों ने यहां अपने उदार चार्त को छोड़ दिया और वे धामान्य कोटि के स्त्री पुरुष के ए सदृश हो गए हैं। पृथ्क होने के दृश्य में सीला वाचाल स्त्री की मांति प्रश्ति की गई है। उन्होंने राम की मत्सेना जिन शक्यों द्वारा की है उसकी माणा गंगारमा की शीभा का पहुंच गई है। शंकरदेव की :विशव: विस्तार प्रियता के कारण सीला के शंकिम बनवास के करू जा दृश्य में भी उन्होंने अनावश्यक हंग से कथा का विस्तार किता है। सीला विलाम करने त्यती हैं, अपने पुत्र स्व-कुश को शिला देकर उन्हें गंधे से जाती हैं तथा अपने पाते राम के लिस अत्यन्त विश्वृत संदेश देती हैं। ज्यां विस्ता स्वर्ण पालिंग पर से जाती हैं, राम मूहित हो सिंहासन के नीचे गिर पड़ते हैं। समस्त उपस्थित का शोकाकुत हो अधुव्यारा वहाते हैं। इस दृश्य में स्थानीय तत्व हैं:-

वेव द्विष स्वे संतापे कांदन्त भारते दिन नपारि भारते दिन नपारि भारत कांदे निरंतर भारता परि लोटाि भत तनाण कीर समुद्रन भूभित पारता कांपे कीनता प्रस्थे सुठि कांथ स्थि वीना सुत्थे सुठि कांथ स्थि विक्ता प्रस्थे सुठि कांथ स्थि

इस फ्रार गृशिष्यः दुल, शोक और करणा के दृश्यों का प्रभाव सामान्य जनों के मस्तिक पर अधिक पढ़ा है। मूल महाकाच्य में जो धनी मूल भावनाएं और शांत स्तर है वह इन वर्णनों में नहीं है।

वर्गित तथा केंग्रिय गाट की रकता कर शंकरदेव ने प्रणा शामेट विन्छ असमिया गाहित्य पर छोड़ दिया है। असिया के लिये ये दोनों रूप नयान थे। कितन अपना अपना प्रचान पर काव्यों की मांति इसकी रकता असिया माणा में न हुई। मेथिकी असिया मिति प्रज्ञृति भाषा में ये लिये गर। बंगान, बिहार, उद्धिता के विष्णायों के काव्यों मध्य यही माध्यम प्रवालित था। यह अनुभान लगाना किन है कि शंकरदेव ने प्रमे नगव्यों की भाषा को छोड़कर अपने मितिसूलक गीतों तथा नाटकों के लिए ब्रज्जुति को क्यों चुना २ यह दृष्टक है कि शंकरदेव ने प्रथम बरगीत की रचना अपने से बाहर बदिवाजम में प्रथम तीर्थ भ्रमण काल :१४१४: में की थी। नीचे यहां धम ऐतिहासिक महत्व के दृष्टि से नहीं-- गंभीर अभिन्यवित तथा कड़ा सौष्ट्य की दृष्टि से एक गीत उद्धत करते हैं:-

मन नेरि राम घरणाहि लागु तह देशना घन्तक श्रागु मन श्रायु श्रायु शाणे ताणे दूटे देशा प्राणा गीन दिना हूटे मन गाल श्रमारे गिले जान तिलेके मरणा भिले

यह घ्यान देने प्रीच्य है कि द्रम्यु ि में संदुत्त व्यंतन रनरों की वांप्यमना थीर रहेण शादि कम प्रे, यहां नारण है कि निता की रमना के सिर यह मान्यम प्यति की दृष्टि है भी मध्यक उपसुनत सिर हुना । उन्हों प्राथा दिकता के प्रतितित उस पृतिम नीती में पित्रता की मान्य प्रधिक समकी जाती थी, क्यों कि उसे तुंतायन : त्रज: की परंपरायत मान्या समका जाता था किसे तृष्णा तथा गो पिनों ने बार्याताम किया था । इस मुल मान्या में घ्यन्यात्मक वांपव्यंत्रता तृतक रवर थे, : उसना प्यवंत्रत र वांपान्य नातीताम में किसी वांपव्यंत्रता तृतक रवर थे, : उसना प्यवंत्रत र वांपान्य नातीताम में किसी वांपव्यंत्रता नहीं होती, की पृति के सिर इसका उपयोग विधा गता है ; वेष्णाव वांतायरण की शुन्धि में यह विधाक उपर हुई । इस कृतिम मान्या का प्रयोग सर्व प्रथम संतर्देव ने किया, उनके बरगीत तथा कंतिय नाट में उसका ब्रुप्तिम प्रयोग हुवा है । संभव है कि बौद वर्यपतों के भावर्थ रूप ने बरगीत रचना का

मार्ग दिलाया हो । वर्गीत का व्यों की अपेता अधिक कवित्वमय और कीर्शन के शाल्यानों से भानपर्क हैं । लेंगत की बढ़ती हुई लोकप्रियता और देव-वंदना की शावन्यकता ने शंकरवेव ने अधिक संख्या में धर्गीतों की मृष्टि कराथा । यह भवन भाज भी हमारे वाहित्य की सुन्दर निधि हैं ।

वार्षिक पीवनकी अनुभूति, दाशैनिक विवार जात तथा क्ष्रवाद, शारमितंन, जात्म ेदना, श्रीर श्रात्मसम्पर्ण बादि वर्गीत के विषय हैं। बुक् गीतों में धेरवर के जात्म प्रवाद शासमस्पर्ण बादि वर्गीत के विषय हैं। बुक् गीतों में धेरवर के जात्म के साथ पंतंत्र उसकी करू जाा, मनुष्य बन्ध में उसके मीग और उससे मुक्ति के साध्य का विवरण है। श्रन्थ में मनुष्य कोउड़्कोधान दिशा गया है कि वे हिर्द का स्वरण करें, गोतिंद का चिंतन कर उनके चरणों में प्यान कर संसार की माला प्रपंत से विमुत्त हों संसार के मत प्रय से पाड़ित रंकर देव श्रत्थन्त दुनित हैं, किन्हीं किन्ही मजनों में धारिधर और शोफपूर्ण संसार है किन्हीं श्रत्थन्त दुनित हैं। इस प्रवार वह गाते हैं:-

शी राण महं अति आपी, मामर तेरि मानता नाष् जनम जिन्तामाण कहे गतो मेंचे जानक लाखा। दिन्से विषय किताजुल किश स्थमे गर्नांट। मने ध्यम सूचि विभोक्ति तेरि आरति नाड कृत्य कमते हरि बैट्ट चिन्ती बरण ना तेरि।।

राय कावा कृष्ण की मिनित्राता करा उपासना ही उस मन संतार के प्राणियों का मृत्यु विनाश और संहार से एक्सा कर समती है। निम्नालेखित मजन में संबर की मिनि प्रणासी, श्राल्य ग्लानि और धाल्य निधेतन का थणने है

रथिंग किया हुए

पानर मन राम घरणे कि वेहु

श्रीवन राम मार्थुव नेरि नान भरणक संबद्ध तेहु

र्थान दिवस हुर शाबि गावत, शायत संतक गरांच

काथ तनुपात मिलत यति मणि राम मजह क्ल परिव श्राशा नाश परिक मनसापशु पढ़ित बंदि वेरि वेरि भव कारागर तार्क नाहि शार विने मकति रति तेरि व्यानिश देवहु राग परम पहु रहु हुदि फंगिज मेरा कृष्ण दिन्हर मण राम परम घन मरण हिं तंग न छोरा किया बर्गातों में प्रम बाल कृष्ण की लीला का वर्णन देखते हैं, वे गोप वालकों सिक्त गो गरण के लिए जाते हैं, वन में सलावों से पृथक हो जाते हैं, और संध्या समय व्ययन्त वाकुल व्याकुल हो वा घर पर सी जाते हैं इन गीलों में व्यस के गांवों के मनोहर दृश्य वंतित हुए हैं। यशोदा वस्में पुत्र कृष्ण के कुशल दोम के लिए सदैव सदैव व्यागुल हैं। ृष्ण के मधुरा पनन के पश्चात गो पियां वस्पन्त शोकावुल तथा विश्वत हुई, उनका

> उद्धन वेजुको । मन्युपुरी १६६६ मुरास्त वाहे १६व नाहीर अब जीवन धन मयो मधन क्या हा ।।

याहै कियोग आणि कंता अस्य, तिहु एकु रक्ष्य न पारि सोही वृज तूर हुर गयो गोधिन पिश दश दिवसे भंभारि मयो नरण मोशि गेहि छरि नरणक विहुरि रक्ष्य ना पारि पाछ देलत का सिनी गिरि वृंदावन ततु मन दक्ष्य स्वाय । वृज्यन जीवन यहुरि नहि आपत स्माकु करन कराध गोपिंग प्रेस परांत नीर कुरस्य, केंद्र कह भूग गांध

३ पारीनिक विवारों को उन्होंने गितिमालाओं में प्रोता । एस गीति काव्य में उन्होंने उन्यतम मार्थों का समाकार वहापूर्ण तथा तुकांत रेकी में विधा । उपमारक पकर उत्प्रेकार केवा शादि अर्द्धनारों ने एके शिवाक ज़ैनक और ग्राह्य वनावा है । बरगीत

> पाने सिर्हार पर को कार्तार प्राणा राज्य मोरा विकाय विकास विश्व जराजर जीवन ना रहे थोरा ।। गिपर पन जन जीवन योवन, थांथर स्हु संसार । पुत्र परितार जब हि कतार कर दो जोशिर जार ।। जमरा-वल-जल कि चंचल थिर नहे तिल स्क । नाहि भरी मन मोगे हरि हरि पर्मानंद प्रोक ।।

की लोकप्रियता शीष्र ही व्याप्त हो गई और पारानुवर्धी कवियों ने भी इस ढंग के भी तिलाय्य का कुल किया । शंगीत विशास्त्र माय बदेव की स्कार स्वीच्म हैं।

चित्र रंगर्देव के काव्य का एक पृथक क्र्य है। फंगर्देव काधी में कबीर के जुख शिष्टों से मिले और वे वर्तार के चोरिका पद पर सुन्धा हुए। उसमें वर्णी को कुम से रता जाता है।

मार्डा जनसङ्

ामान्य नतुष्य के लोकनों के तावण्य तथा तुष्यमण्डर भाव का ज्यान रह मंगीय नाट की रवना हुई । एन पाटकों का क्यारे राष्ट्रीय तथा तांख्यित की वन पर प्रयाप प्रमान पढ़ा, इनके इकारा रंगमंव का उत्थान और नृत्य, संगीत की प्रगति हुई । आरंम में इनका उद्देश्य वैष्णव पत का प्रवार नाव था, किन्तु आज की उनका बद्ध संबंध हमारे लोकिन जीवन से हैं । उसके हमारे काव्य को गांत प्राप्त हुई और एस प्रवार वर्णनात्मक इंद पटिमा की रचना जारंम हुई । कंतिय नाट में हमें सर्वप्रक्ष क्यानिया गय का वर्शन होता है -- यह यह स्थान स्थाप गंगीतात्मक तथा व्यन्यात्मक है ।

भगातकमन नाट की त्वना लगान १५१ म दें में ग्रंदीना में, प्रतीप्रताप १५२१, म्यूनांधाट में नेविस्तीपात १५३० में, स्विताणी स्राण, प्राप्ताच प्राण, रामविष्य की त्वना लगान १५६ में हुई । राजा गरनारायण ने अनुरोधा पर एवं शिलेम नाटक की त्वना हुई थी । प्राप्त तीन नाटकों की विषय अन्तु भागात से ती गई । स्विमणी स्राण तथा पारिवात स्राण प्रमश्च: इितंश और विष्णु पुराण में स्पांतर नात हैं, राम विषय की क्या रामायण से प्रस्ता की हैं । इन नाटकों की क्या रामायण से प्रस्ता की हैं । इन नाटकों की क्या रामायण से प्रस्ता विषय की हैं । इन नाटकों की क्या रामायण से प्रस्ता की के हैं । इन नाटकों की क्या रामायण से प्रस्ता की किया मुनेवियोजित तथा स्थिर थी— अनित्य के समय प्रवार पदा की और करता की अभिन्यित की अपेता अभिक प्यान विधा गया है।

तेलक यहां पहते उपदेशक है और पीछे कलापार है यहां उन्होंने उन घटनाओं को बुना जिल्ले उनके अभी कर की सिद्धि होती थी। हाल्मणी उर्ण, पारिजात हरण तथा राम विकास भादि नाटकों की रह परिधि में भी पार्जों का बार्ज विकास स्पष्ट है। रामविका नाटक में, राज मिथिता से दशस्थ, सीता तथा शहस लक्ष्मण के साथ लौट

रहे थे, मार्ग में उन्हें परशुराम मिले। परशुराम के गुरु शंमु के धनुषा तोड़ने के कारण राम पर कृद्ध थे। परशुराम ने क्रोधा में अपना कंधा हिलाया और राम को शिवत परिचाा का आवाहन दिया। सूत्रधार के शब्दों द्वारा इस उद्योजनात्मक स्थिति की मृष्ट संभव हुई।

पारिजात हरण के पात्रों में मानवीय संवेदना का आधितय है। नार्द ने स्क दिन स्क पारिजात पुष्प कृष्ण को समर्पित किया और कृष्ण ने उस पुष्प को रु किमणी को मेंट किया, जो उस समय उनकी सेवा कर रही थीं। यह समाचार नार्द ने सत्यमामा को सुनाया। सत्यमामा ने अन्न जल का त्याग किया और वे ईष्यों से पी दित हो अनेत हो गई। नार्द पुन: कृष्ण के समीप गर और उन्हें स्थिति से अवगत कराया। कृष्ण शीघ्र ही मीतर के कदा में प्रविष्ट हुए। सत्यमामा कृष्ण को तब तक अपशब्द कहतीं रही जब तक उन्होंने यह वचन दिया कि के इन्द्र के उद्यान से पारिजात को समूल उलाइ उनके मंदिर में लगा देंगे। अमरावती अभियान में सत्यमामा ने कृष्ण का साथ दिया।

जिस समय कृष्ण पारिजात को समूल उलाइने की चेष्टा में थे, माली ने उन्हें रोका--इस समय सत्यमामा और इन्द्र की पत्नी शवी के मध्य वाक्युद्ध हुआ । यहीं इम उसके एक अंश को उद्ध्यात करते हैं।

श्वी अवे, सत्यमामा , तो हारि स्वामी माध्यवक कथा हामु सव जानि । श्रो हि गोपी विठाल गोपाल । उनिकर श्रागु गोकुलक स्त्री नाहि रहल । देखु कंसक दासी कुबुजी ताहाक हात एड़ाक्य नाहि । ताहेक श्रारा कि कहव । स्वन श्रनाचारी कृष्णक गर्व कंथेको हामाक पारिजात निया जाय । श्रा: वज्रपाते सवंशे नाश मेलि । जानव । सत्यमामा - श्रवे इन्द्राणी जगतक परम गुरु हामार स्वामी माहेर नाम सुमिरते महा महा पापी सब संसार निस्तरे । ताहेक ऋतये निन्दा करह । श्रवे निलाजिनी मारिते न जान। तोहारि स्वामी इद्रक कथा कहिते धृणसे उपजे । देखो श्रमरावतीक मत वेश्या तोहाक स्वामीक से नाहि श्रांटल । तोहारि स्वामी क्यालि कि १ गौतम श्रांकिक भाय्याँ श्रहत्या ताहेक मायाकरिकह जाति प्रष्ट क्यल । तानि मिचे सब शरीर टाकि यो निदक भेल । श्रवे

यथि ये पात्र पीराणिक है तथापि इनमें मार्यादा और गांभीर्य का अभाव है। वस्तुत: लेखक के समय की कुलटा नारी का प्रतिनिध्यत्व ये दोनों करती हैं। शंकरदेव ने रिलियणी हरण तथा राम विजय में अशिदात दर्शकों के लिए कतिपय प्रेम दृश्यों की प्रस्तुत किया है।

पामरी रेवन इंद्रक हामाथ त्रागु वासानह ।

इन नाटकों की उल्लेखनीय विशेषाता यह है कि इनमें पदों की श्रधिकता है, और कवि ने कथा को आगे बढ़ाने के लिए इनका प्रयोग किया है। पात्रों के इवारा परिस्थिति, घटना और स्थान को प्रस्तुत न कर इसे सूत्रधार के मुख से लंबे वर्णनात्मक पत्रों द्वारा प्रस्तुत किया गया है । मुख्य पात्र की अनेक छोटी मोटी घटनाएं, भाव तथा अपुत्ति का प्रकाशन गीतों इवारा हुआ है। राम विजय में राजासी ताइका के साथ राम की मुठभेड़ : : तथा सुवाहु तथा मारीच का कौ शिक की काशाला के निकट वधा बादि रंगमंच पर ब्रिभनय द्वारा नहीं दिलाए गये, केवल गीतों का पाठ कर इन घटनाओं को दर्शकों को सुना दिया गया । इसी प्रकार रू विमणी हरण में --- वंधा के रहार्थ रु विमणी की कृष्ण से प्रार्थना कृष्ण और रु विमणी की द्वारका की बर्यात्रा और विवाह का चिवाकर्णक दृश्य केवल गीतों द्वारा प्रस्तुत किया गया है । नृत्य दूसरा साधन था, जिससे कथा को दर्शकों के सम्मुल रखा गया । पत्नी प्रसाद, रास क़ी ड़ा, का लि दमन के संबाद और चरित्र चित्रण अत्यन्त दुर्वेल और शिथिल हैं। इनकी कथा का वर्णन सूत्रधार गध अथवा पद द्वारा करता है। संस्कृत नाटकों के विपरीत सूत्रधार अंकीय नाट का अभिन्न अंग है और वह आरंम से अंत तक रंगमंच पर रहता है । वह नाटक का आरंम, पात्रों का परिचय, उन्हें निर्देश दे, उनके प्रवेश और निगमन की सूचना देता है--- और नाटक के रिवत समय में गीत गा, साली स्थान को पूर्ण करता है, कथानक में जहां कहीं भी नैतिक अथवा आध्यात्मिक प्रसंग आते हैं वह स्थाखान देता है।

नाटकों की मटिमाओं का प्रयोग विशेषात: नंदी पाठ अथवा मंगलाचरण तथा श्रंतिम स्तुति के लिए किया गया है। सीता के अलोकिक सोंदर्य का प्रकाशन रामविज्ये में सूत्रधार ने इस प्रकार किया है:-

> कि कहब रूप कुमा रिक राम कनक पुतली तुल तनु अनुपाम रतन तिलक लोल अलक कपोल हेरिये भूमंगे त्रिभुवन मोल देखिया बदन चांद मेलि लाज नयन निरित्ते कमल जल मामा हेरिये मुज्युन मिलल उचंक

लित पुणाल मामज जल फं श्रारकत कारताल मुनि भन मोह कनक शलाक श्रंगुलि करु सोह बंदुलि निंदि श्रध्यर करु कांति दाङ्गि निविड़ विजा दंति पांति हसत हासित मदन मोह जाह नाशा तिल्फूल कमिली माह नक्योवन तन बदरी प्रमाण उह करिकर कटि हम्बरुक थान पद फंज नव पत्लव पांति चंफा पाकरि श्रंगुलि करु कांति नस्वय बारु चंद परकाश लहु लहु मज्जजमन विलास क्य लन्नु विहि निरमल जानि कोकिल नाद श्रमिय मुन्रे वाणि।।।

शंकरदेव शिल्प विधान की दृष्टि से संस्कृत नाटक के ग्रणी हैं। उन्होंने 'अंकीय' नाटकों में नंदी, त्राशींवनन , प्रस्तावना, मंगला चरण और मुक्तिमंगल मटिमा का व्यवहार किया है। मंगला चरण और मुक्तिमंगल असमिया में हैं किन्तु नंदी पाठ संस्कृत में है। स

माध वदेव की रचनाएं

माध्य देव की रचनाएं

नाधवदेव ने असम में वैज्याव धर्म के विकास के लिये सम्प्रदाय के योग्य अनेक गृंध लिखे । अपने गुरु के समान वे भी योग्य स्वं कुशल लेखक थे । उन्होंने हु: अंक लिखे, मिलत रत्नावली और जादि कांड का रूपांतर असमिया हंद में किया, और नामघोषा के अतिरिवत अन्य काव्य गृंधों की रचना की । सम्प्रदाय के लिये लगभग २०० मजन लिखा, वे स्वयं भी उच्चकोटि के संगीतका थे । उनका व्यवहार आज भी नित्य प्रसंग तथा ने नित्य प्रसंग वे व्यवितगत और सामूहिक रूप से होता है । अमूत्य रत्न और भूषणण हेरोवा आदि कुछ कृतिया ऐसी हैं जो उनकी मानी जाती हैं किन्तु यह विश्वसनीय नहीं हैं । इनमें से प्रथम तीन माध्यदेव की नहीं है वयों कि इनमें बाद के १० वीं शती तक के व्यवितयों और घटनाओं का उत्लेख मिलता है । माध्यवदेव के नाम से अनेक गीत प्रचलित है किन्तु परीदाणा करने पर वे उनके नहीं जान पहते ।

माधावदेव के साहित्यिक जीवन का आरंम सौलहवीं शताव्दी के मध्य में हुआ । उनकी प्रथम रचना जिन्म रहस्य है, यह ३०० पदों की लघु रचना है । इसमें सृष्टि की रचना लया प्रलय का वर्णन है और इस प्रकार इंश्वर की सर्वव्यापकता प्रतिष्ठित की गई है । विलाराय की पत्नी रानी मुवनेश्वरी की इच्छानुसार इसकी रचना की गई । वे सामान्य नारी मक्तों के लिये इस विष्य पर साधारण पुस्तक चाहती थीं । विष्णुपुरी की भित रत्नावली के मात्रिक रूपांतर का दूसरा रथान है । वेष्णाव परिपाटी और असम के साहित्य में विष्णुपुरी का प्रमुख स्थान है । भितत रत्नावली का मात्रिक अनुवाद असमिया वेष्णाव सम्प्रदाय में चार प्रमुख पुस्तकों में से स्क है । कांतिमाला के आशीवचन से

नामधोष्मा का बारंभ हुवा है, यह लेक की टीका है। शंबारदेव ने इस ग्रंथ की प्रति कैसे प्राप्त की, कि कथा बत्यन्त रोक्त है। कंट्यूष्णण नाम के किसी ब्राह्मण ने हसे काशी से ला शंकरदेव को दिया। कंट्यूष्णण को यह रचना कैसे प्राप्त हुई द्रेहस संबंध रूपें चरित करों में मत भेद है। देत्थारि के अनुसार कंट्यूष्णण ने इसे काशी में बरीदा। नहीं सोलहवीं शती के उतराई में यह रचना इतनी प्रसिद्ध्यी कि कामरूप का विद्वान बन्य कृतियों को शोड़, इसे बरीदता रामानंद के अनुसार विष्णुपुरी के शिष्य राममट्ट ने इस पुस्तक को कामरूप में मागन्त धर्म प्रवारार्थ मेंट की । मूष्णण दिवल के कनतव्य में बिधक अंतर नहीं। रामचरण ने इसमें बिधक जोड़ा है -- कंट्यूष्णण ने इसे काशी से लाकर शंकरदेव को मेंट किया बौर विष्णु पुरी के स्क शिष्य ने मी उत्सर्ग किया जब उन्होंने कंत में 'स्क शरण' बच्याय को देशा तो वे बत्यन्त बानंदित हुये। तदुपरांत इसके असमिया बनुवाद का कार्य माध्यवदेव को सींप दिया। मितत रत्नावती की टीका की मूल शिका। इस प्रकार है:-

:१: एक शरण - स्वयं को एक को समर्पित कर देना, केवल एक देव विष्णु के अतिरिक्त अन्य देवता की उपासना न करना ।

: र: दास्य भिनत ही भिनत का सुंदर रूप है।

: अवण और कीर्तन दी प्रधान साधन मित की प्राप्ति के लिये हैं

: ४: सत्संग मध्ति का महत्वपूर्ण त्रंग है ।

पुस्तक में एक शरण पर श्रधिक वल दिया गया है। रामानंद ने ठीक ही कहा है
कि इस पुस्तक के अंत में 'एक शर्ण'की चर्चा कर विष्णाव साधना का इसे महत्वपूर्ण श्री समका गया है।

भिवत रत्नावली असिया में रत्नावली के नाम से प्रसिद्ध है। किसी समय इसे श्राष्ट्र श्रिक दुरुष्ठ पुस्तक माना जाता था क्यों कि श्रन्य वर्णानात्मक काच्य की श्रोदना इसमें श्राचर तत्विकी श्रधिकता थी। श्राज भी श्रसम में मूर्सता पूर्ण कार्य की श्रालोचना करते

१- दैत्यारि - गुरुवरित ३६ :

२- रामानंद - १४२४ - १४५६

३- रामानंद - १४४६ - ५०

सवाते करिया शेष्ठ स्कांत शरण ।
गरिष्ठ कारणे सेसे करिया वंधन ।।

समय वहा जाता है के बुलिया ना जाने रत्नावित पढ़े अर्थात जो व्यक्ति प्रथम अदार का पाठ नहीं कर सकता वह रत्नावित पढ़ना चाहता है।

विष्णुपुरी की कांतिमाला हीका का उपयोग माध्यव देव ने अनुवाद में किया है विष्णुपुरी ने ीधार स्वामी का अनुकरण कुइ साधारण भेदों सहित किया है और उसके लिये भी रचना के अंत में पामा याचना की है।

आ दिकांड: - रामायण का असमिया में माक्रिक रूपांतर इनकी दूसरी रचना है। रंकरदेव से पूर्व माध्यव कंदित ने संपूर्ण रामायण का असमिया में माक्रिक अनुवाद किया था। घर में रामायण और महाभारत का संकलन कांड तथा पर्व के अनुसार रखा गया है। कहा जाता है कि कहारी आक्रमण के समय माध्यव कंदित के प्रथम और श्रंतिम कांड खो गए। शंकरदेव ने स्वयं उत्तरकांड का इंदोबद रूपांतर किया और माध्यवदेव को आदि कांड के रूपांतर का भार दिया। माध्यव ने अपना कार्य सफलतापूर्वक संपन्न किया। आदि कांड का सोंदर्य इसके आकर्षक पदों और उपमाओं में है। यह रचना कहीं भी अनुवाद नहीं जान पढ़ती है। असमिया लोको बितयों के कितपथ शास्य पूर्ण सटीक प्रयोगों ने इस कृति को अत्यन्त मौतिक जना दिया है।

आदिकांड के कुछ ऐसे अंश सम्प्रति मिलते हैं जो सम्पूर्ण कांड की संदिग्धता प्रसट क करते हैं और ऐसा लगता है कि क्या नित माध्यव इनके रचयिता न हों उदाहरणत: अधित्या की कथा मूल रचना से सर्वया मिन्न है। इन्द्र का कामपूर्ण विचरण, उनके संमोग का वर्णन कवि की हीन रुचि का परिचायक है और यह मूल रचना से मी नहीं लिया गया है। मूल रचना में यह कथा कुछ इलोकों में ही समाप्त हो गई है। यह कल्पना करना कठिन है कि माध्यव देव जैसे साध्यु वृति के कवि ने इस प्रकार का प्रयोग साहित्य में किया हो। संमव है कि बाद के दो एक साध्यारण कवियों ने इसे उस रचना में प्रदि पत्र कर दिया हो।

्राजसूयर यहां :- इसकी रचना १५६५ और १५६८ के मध्य में हुई । शंकरदेव के बूचरि कूचितार जाने के पूर्व माध्यव ने इस कार्य का आरंग किया और बाद में इसे पूर्ण किया। पुस्तक का उद्देश्य कृष्ण को सर्वोच्च देवत्च पद प्रदान किया करना है। इसके लिये माध्यव ने पांडवाँ के राजसूथ यहा का आधार लिया है। अतिथियों में कृष्ण का अधिक सम्मान किया गया जिसका विरोध केवल शिशुपाल ने अकेले किया। काव्य का आरंभ

द्वारका के सुंदर वर्णन से बारंम हुआ है,कृष्ण के देनिक वीवन का चिताकर्षक वर्णन मी उनकी सांसारिकता की प्रकट करने के लिये किया गया है, जो ईश्वर मनुष्य रूप में माया ते के द्वारा करता है। काव्य में नाटकीय घटनाएं और जरासंघ के राज्य दरवार हैं के अनेक दृश्य हैं,जहां भीम तथा जरासंघ में द्वंद होता है और अनेक वंदी राजा युधि फर के राजसूय यह को सफल करते हैं।

काव्यशैली में लिखी गई इस पुस्तक को वेच्णाव युग की सर्वशिष्ठ रचना कहा जा सकता है। अलंकारों के प्रयोग से इसका सोंदर्श नच्ट नहीं हुआ है, क्यों कि माध्यव यदा कदा ही दूरुह अलंकारों और शब्द चमत्कारों में उलकते थे। द्वारका तथा इंद्रप्रस्थ का वर्णन, शिकृष्ण का इन्द्रप्रस्थ प्रस्थान, जरासंध्य और भीम के द्वंद युद्ध वर्णन में गौरव, सम्मान और गाम्भीय है जो इस कृति को अधिक महत्त्वपूर्ण बनाने में सहायक है। राज्यूय के साथ उनके सक्कि साहित्यक जीवन का प्रथम भाग सभाष्त हुआ और दूसरे भाग में अंकों और बरगीत की रचना हुई।

माध्यवदेव ने कई स्कांकी नाटक लिले हैं। उनमें से कुछ जाली जान पढ़ते हैं। कंसिन कों के शाध्यार पर रास फूनर भूषणा हरोगा , ब्रह्म मोहन और कोटोरा सेलना के स्वायता माध्यवदेव नहीं ज्ञात होते। शेषा प्रामाणिक आंकीय नाटकों की संख्या पांच है -- 'अर्जुन मंजन', 'चोरघरा' पिष्परा गुनुपा नोजन विहार और मूमि- लोटोवा। चरित पोष्थ्यों में अन्य दो बा और उत्लेख भिलता है पर वे प्राप्त नहीं है। प्रामाणिकों में से बंतिन नार को कूमर और प्रथम को याजा या कंक कहते हैं।

मून्य शब्द का मून्य अधिविस्तार की दृष्टि से प्रयुक्त हुआ है जो तसु ताल पर समयेत गान की मांति गाया जाता है। जोटा नागपुर और उद्धित की महिलाएं सामूहिक नृत्य : : मैं इसका व्यवहार करती हैं। आरंम में फून्य कियाँ का सामूहिक नृत्य था, बाद में इसका प्रयोग महिलाओं के तसु प्रदर्शन के अर्थ में होने तमा जिसमें मुख्यत्या महिलाएं माग तेती थी। माध्यव देव के फून्यूरों के परी दाण करने पर जात होगा कि इन सब में बाल कृष्ण की तीला और सेल हैं। सूत्रधार के अतिरिक्त इनमें अन्य पुरुषा पात्र नहीं हैं। यही कारण है कि यह शब्द अर्थन मंजने के तिये तानू नहीं होता, जयों कि यह नारी पात्रों तक सी मित नहीं है। संभवत: आरंम में यह नारी समान के उत्सव प्रदर्शन थे जिन्हें महिलाओं के सामने दिलाया जाता था।

शाज भी असम में पाचित नामक अर्द्धनाटकीय प्रदर्शन प्रवित्त है। यह पूर्णातया स्ववित्त महिलाओं का उत्सव है जो जन्मा क्टमी के बाद होता है। कृष्ण के बात्य काल की घटनाएं क्योपक्यन और गीतों द्वारा प्रकट की जाती हैं किसी भी खूक द्वारा यह जात नहीं होता कि माधावदेव इस व्यवस्था के संत्थापक थे, किन्तु उनके फूमूर इसके विकास और प्रसार में सहायक अवस्थ हुए। इसका अनुकरण कर बाद के नाटककारों ने नाटक लिले और उन्हें शुद्ध सिक्के के रूप में चला दिया। उन्होंने होटे छोटे नाटक लिले, पुष्पिका और गान की भिनिता पंकितयों में माधाव का नाम भिष्ट-पेष्णित कर दिया गया और माध्यव देव के नाम से उसका प्रचलन हुआ, मानों प्रत्येक अंक माधाव के फूमूर ही होंगे। इस प्रकार से शब्द का प्रारंभिक महत्व समाप्त हो गया। देत्थारि भी इस प्रांति के शिकार हैं जब वे दिया पंथन को फूमूर कहते हैं।

अनेक निकित्यों को - गायक्त में विणित वाल कृष्ण की चमत्कारिक लीलाओं ने धाकिषित किया । बाल कृष्ण की आनंद पूर्ण लीलाओं का वर्णन सुन्दर पर्दों में हुआ । उस समय के प्रवाह में का व्य होने के कारण इन्हें धोड़े समय में अध्यक लोकप्रियनता प्राप्त हुई । रूप गोस्वामी की पथावली इसी प्रकार का संग्रह : है । लीला शुक्र का कृष्ण कर्णामृत भी इस प्रकार के मजनों का संग्रह है । माध्यवदेव ने जिन पर्दों का प्रयोग अपने औंक नाटकों में किया है, वे कृष्ण कर्णामृत में भिलते हैं । माध्यव के नाटकों में जिन पर्दों का समावेश है, वे वृह्त पाठ :

: मैं मिलते हैं। इस प्रकार के कुछ और संग्रह हैं -- `सु मंगला स्तोत्र े, विल्वमंगल स्तोत्र े, कृष्ण स्तोत्र हत्यादि । माध्यव देव इवारा गृहीत पत्र विल्वामंगल स्तोत्र तथा लीलाशुक विल्वमंगल में दिलाई देते हैं, ऐसा विश्वास किया जाता है कि ये एक ही व्यक्ति के दो नाम हैं बस्तु, किसी प्रकार यह पद अपने रचयिताओं से अध्यक महत्वपूर्ण हो गए। इसी लिये माध्यवदेव ने इन पदों के स्रोत का उल्लेख नहीं दिया है और नाटक में ऐसा करना संमव मी नहीं है यह चरण :पद: प्रारंभिक पदों :मिटमा: अथवा श्लोकों के माग में दिलाई देते हैं।

^{8 -}

³

जहां तक कथा वस्तु और अभिनय का संबंध है भाषा वदेव के नाटक शाजकल के स्कांकी नाटकों की मांति हैं। इन फूमूरों में कया को संपूर्ण करने के स्थि संधियों का प्रयोग नहीं किया गया है। नाटक चर्म विकास : : से नारंम होता है, विभिन्न घटना काँ का समाधान न कर नाटक त्याग : · ਜੇ समाप्त हो जाता है । दर्शनों को वात्सत्य रस में निमग्न कर उन्हें मनित का सौंदर्य दिताने में माध्यवदेव अत्यन्त सिद्धहस्त थे। मनुष्य में वात्तत्य प्रेम उत्पन्न हो उच्य रेशवर स्तरीय प्रेम में परिणित हो जाता है। माजव वाल कृष्ण के ईश्वरत्व की श्रीर स्केत करना कभी भी नहीं भूलते थे, जिनकी विभिन्न लीलाओं का चित्रण उन्होंने किया था । माधव ब्रह्मचारी थे और वे गृहस्था के वातावरण से अधिक दिन दूर रहे और तो भी उनकी रचना प्राचीन तथा अविधिन असमिया साहित्य में, बाल स्वभाव और उसकी चेष्टाओं और वात्सत्य भाव के सींदर्य चित्रण की दृष्टि से अनुपम है । क्या शास्त्रत भानंद दायक साहित्यिक कापज पुत्रविद्यान बृह्मवारी के अनेतन मन की उत्पिति है १ यह वस्तुत: उन लोगों का विष्य है जो साहित्य में मनोक्तिन का अध्ययन करते * 1

माणा - गुरा की मांति इन्होंने भी कृतिम माणा व्रजावली का व्यवहार किया है। ऐसा दिलाई देता है कि यह नव मिलिस माणा अपने पूर्व रूप को सो नुकी है। गीत और संबाद ब्रजावली में हैं किन्तु वर्णानारमक था विवरणात्मक अंगों का माठ जसकिया में होता है। माध्यवदेव ने यह नवीन परिवर्णन किया और इसलिये यह संकर्षण के नाटकों में नहीं मिलसा। माध्यवदेव ने संस्कृत इलोकों और गीतों की संख्या न्यून कर दी, इस प्रकार से उन घटनाओं को छोड़ दिया, जिनका वर्णान नाटक में नहीं भाता था सूत्रधार नाटक में आरंग से अंत तक रहता है किन्तु उसका अभिनय कार्य संकर्षण के सूत्रधार की अभिनय कार्य संकर्षण के सूत्रधार की अभिनय कार्य संकर्षण है। प्रकार की अभिनय कार्य संकर्षण वाद्य के सूत्रधार की अभिनय कार्य के सूत्रधार की अभिनय कार्य के सूत्रधार की अभिनय कार्य के स्वादक में स्कर्णन संवाद के लिये अभिनय अपसर छोड़ दिया क्या। प्रस्थित का अभाव है, इस दोषा के कारण संकर्षण के रास की हा और का लियन का नाटकीय अन प्रभाव कुछ कम हो गया है।

शंगरिव की मृत्यु के पश्चात माध्य ने अपने साहित्यक जीवन के उपरार्ध में बर्गीत और नाटकों की रचना आरंभ की और १६६३ ई० तक सभाप्त की । बर्गीत मिन्त-परक गान हैं, यह सभी स्क न स्क राग से संबद्ध हैं । इन गीतों को 'बर्'इसिल्में कहा जाता है क्यों कि इनका संबंध उच्च संगीत :मार्ग संगीत: से है और अन्य गान जिनका व्यवहार नाम प्रसंग में होता है, वे सामान्य, अपरिष्णव और शुति मध्युर :देशी संगित: हैं। वन्तुत: गीत और नाम का असिया में पुषक अर्थ है। पहें का अभिप्राय: है कि वे गीत जो रागबढ़ हैं, और दूसरे का अर्थ है, साध्यारण तम में पाठ करने के लिये राना। रागों का संगीतात्मक ढांचा वनेगान हिंदुस्तानी संगीत से मिलता जुलता है। संगवत: इसना कारण है कि ये राग असम में हिंदुस्तानी संगीत के पुनुरुद्धार जो मुगलों के समय में हुआ के पहले आर जान महो हैं। अस: बरगीतों के राग पूर्व मुगलका-तिन हिंदुस्तानी संगीत के रूप हैं। यह अत्यन्त श्रीक्षित शोवनीय है कि गायकों के स्वित शिदाण न पाने के फलस्वरुप जरगीत का शिवाण हास हुआ।

वर्गीतों का क्विकिरण परंपरागत थोजना के क्युसार विका जा काला है। इस
प्रकार का प्रथम कर्ग जागरण गीतों का है जिनमें यशोजा कृष्ण को प्रात: काल जगाती
हैं। चलार गीत में कृष्ण की गोचारण जीला है। हीलर गीत में कृष्ण के होल
क्री हा का वर्णी है। विभिन्न वर्गों के गीत गाने के लिथे कुछ विशिष्ट परंपरागत नियम
हैं। मध्यान्त सेवा के क्ष्मर पर जागणार गीत नहीं गाए जा सकते हैं। इन पवितमाव
पूर्ण गीतों में मन्त कवि का इंश्वरोन्मुल उन्माद दिलाई देता है। इस प्रकार दो प्रकार
के नरगीत हैं यदि इन्हें इस दृष्टिकोण से देशा जाय तो इनकी दो कोटि होगी माध्यव
देश की दो बाध्यात्मिक पता की सूचना इनमें है। एक में मन्त कवि के लिये कृष्ण केवल
गो चराने वाले बालक मात्र नहीं है उनका व्यक्तित्व अत्यन्त मनोहर और आकर्षक है
वे इस बालक की आगंदपायक उपस्थिति से प्रसन्न होते हैं उसका स्पर्श पा हिंगत होते हैं
बौर उसके व्यक्तिगत रूप और सौंदर्श के प्रति उनका प्रगाढ़ आकर्षण हैं। बन्य स्थल
पर मुरली मनोहर के दूर जाने पर वे आनंदकंद के दक्ष्म के लिये बत्यन्त व्यक्तित व्यक्ति है।

त्रालो मित्र कि कहवी दुस ।
परान निगरे निये किया चान्दमुस ।।
कत पुण्ये लिमलों गुणोर निध्नि स्थाम ।
वंचिया निलेक निकरुण विध्नि वाम ।।
स्थाम कानु किने मीर न रहे जीवन ।
हा स्थाम बुलिते ब्राह्मल करे मन ।।
विवस न्याय सुते न्याय स्थनी ।
वांद बंदन मन्द पवन वेरणी ।।:१२५:

वूसरी कोटि के वर्शीत में बात्मा का प्रशांत स्वभाव शंकित है इन गीतों में हम फंफा-कत रात का श्रंत तथा सागर की गंभी रता देखते हैं। कंबल नकी सागर से मिलने पहुंच गई है, श्रीर ससमें वह अपना धास्तत्व सो विलीन हो जाना चाहती है। इनमें ब्रामिमानी विद्वान कीन श्रीर मूर्त कह अपने को प्रमु के चरणों में समापित कर रहा है। इस प्रकार के लगका पवास गीत है, निमालितित भी उनमें से एक हैं ---

दथार ठाकुर हरि यदुमणि श्रो राम ।
श्रधमे तोम्हार नाम डाके। कृषा करा करायण
शाह्मार कंपल मन, तोष्ट्रमार चरणे येन धाके ।
स्क विम्न अशामिल मंदमति पाप शील
पुत्र मावे सुमरि तुम्हारे ।
कभी बंधा करि नास केतंठ पाहलेक बास
हटो जाति विदित संसारे ।। प्र

माध्यवदेन के बर्गीतों का सोंदर्य, कोमला और उनके का व्यरूप संगीत की तुलना किसी भी शेष्ठ संगीतक की कृति से की जा सकती है।

नः मधोषा में शरण तथा शांत का प्राध्नान्य है,यही स्वर् इन गीतों में सुनाई देता है। माधावदेव की वात्यत्य साधाना ने यात्रा के शंत में उन्हें सत और दार्य में उतार दिया। नाम घोषा उनके साहित्यिक जीवन, श्रीर कदा वित उस काल के न्मनि धारित्य का महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

भावित ने पूर्वित्तार :१५६३- १५६६: में एक और रचना की । यह संस्कृत की धार्मिक रवना निममित्सका का संत बढ़ असमिया रूपांतर है । जैसा नाम से प्रकृट है यह नाम की माला है, इसमें पित्र नाम की माहिमा का गुणगान किया क्या है । कूब विद्या के एक बृद्ध मंत्री वीर काजी को यह पुस्तक उद्धिता में प्राप्त हुई । उन्होंने माध्यव से अनुरोध किया कि वे इसका इंदबढ़ अनुवाद करें । माध्यव ने संरच्यक की आता शिरोधार्य की, किन्तु यह पुस्तक उन्हें अच्छी न लगी । इस ग्रंथ में न तो शृंखता थी न ग्रंथ ही साध्रक था और इसका यद करने में क्या कौतुक भिलेगा । इसका एक अन्य कारण

१ - नाष्टिने शुंबला ग्रंथ श्रति निर्थेक । शार पद करि कीने मिलिने कौतुक ।। नामः मिल्ला ४-१०

था जिससे यह पुस्तक उन्हें रू चिकर प्रतीत न हुई । हिर का पायन नाम स्मरण करने से जिन पुष्प फर्लों की सिद्धि होती है, उनकी लंकी हुनी हस ग्रंथ में दी गई है । इसकी प्रशंता माध्यवदेव ने कर सके । पुस्तक के अंत वे अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए कहते हैं । हिर का नाम ानंद से लो, यही केवल मात्र सेता धन है जिल्की मक्त को वांहा करनी वाहिस ।

नामघोषा:- पवित्र शात्मा की प्रामाणिक शनुवर्गों की लिपिक्द रचना है, इसे लिलालीन समाज की श्राच्यात्मिक पीड़ा, विविध्न विचार प्रनाहों का दर्मण कहा जा स्कर्ण है। इसमें उनके गुरु की शिला, नाना शास्त्रों का सार तथा इसके शिलिश्वल उस सत्य की राशि है जिसे उन्होंने अनुभव विधा था। उनका श्रीतम संदेश, मवानी आता को इस प्रवार दिया गया है:-

प्रत्येक दिन नाम घोषाा का पाठ करी, जो कुछ मुफे शंकरदेव से प्राप्त हुआ है तथा शास्त्रों के अध्ययन से जो मैंने पाया है, इससे बढ़कर मैंने अपनी सत्य अनुभूति को इसमें सिनाचित किया है। अत: इस पुस्तक को अपने निकट रहाना न मूलना, इसका स्वध्याय पुर्वे जान प्राप्त करने में सहायक होगा ।

शंकरदेव के कूच विचार प्रस्थान करने के पश्चात माध्य वदेव ने नाम घोषा की रवना बारंम की यह कथा प्रवस्ति है कि शंकरदेव ने प्रस्थान से पूर्व माध्य वदेव को ादेश दिया है कि तुम सक रेसी पुस्तक की रचना करों जो बाहर से केर के सदृश कोमल हो पर मीतर से कठोर हो, व थात 'नामध्य की खिला सरस, सुन्दर प्रवादमयी भाषा लथा पद में प्रकाशित की जाथ । गुरू की बाशा पालन कर माध्य ने कार्य बारंम किया, किन्तु जब तक वे वरपेटा में थे बाधिक कार्य न कर सके । कूच विचार में उनका जीवन विरक्त : : का जीवन था, यहीं इस ग्रंथ का बाधिक माग पूर्ण हुआ:१५६३-१५६६: मृत्यु के कुछ ही दिन पूर्व वे इस कार्य को समाप्त कर सके । उपरोक्त उद्धरित संदेश ने गोपाल जाता को चित्रत कर दिया, क्यों कि तब तक वे नामधों जा नामक रचना से अपरिचित थे ।

१ - करियो बार्ने हार नामर कीतेन । एडि मने मात्र मकतर महाधान ।।

गीत का प्रथम पद जो समवेत गान में बार बार दुहराथा जाला है उसे घोजा कहते हैं। यह पद उस लय का भी सीत करता है, जिसमें वह पद गाया जायगा। इस दृष्टि से यह संस्कृत , ध्रुव के समकता है। घोषा सब्द घुषा से निकला है ऋगति जोर से पढ़ना शारंभ में घोषा शहर उन गीतों को कहते थे, जो ऊंचे सुर से गाये जाते थे। बनघोषा के लिये भाज भी यह सिद्धांत लागू चीता है, बनधी जा के उन प्रेम गीतों को कहते हैं जिनका गान चरवाहे गांव गरांव में उच्च सुर से करते हैं। वेच्याव काल में इसके अर्थ में कुछ श्रेंतर या गया । याने उल्ब रवर में गार जाने वाले मजन को घोषा कहा गया है। शंकरदेव कृत कीर्तन के प्रत्येक अध्याय के आरंभ में ऐसे घोषा दिये गए हैं। कीर्तन के बो भिन्त पदौँ की अनुकृति कर यह युगपद : : `नाम घोषा'में लिखे गर । इस रचना में इस प्रकार के एक सहत्र पद हैं इसी दिए इस ृति को हाजारी धोषा भी कहा जाता है। तामूहिक ऋथवा व्यक्तियत सेवा की दृष्टि से गाने के लिए पुस्तक के शंतिम माग में विष्णु के श्रोज नाम और महात्म्य दिये गए हैं। पुस्तक के इस भाग को नाम होन कहते हैं नाम धार्म के उत्सव की दृष्टि से इ इसका अधिक महत्व है। इत: पुस्तक का यह भाग इवार घोषा का संग्रह नाम घोषा नाम विलाने ने लिये अधिक उत्तरदायी है।

ा तामघोषा के तीन वर्ग हैं। प्रथम वर्ग में नाम धार्म का सेहां तिक विनेत है। वूसरा वर्ग सरण हंद कहा जाता है इसमें मिनतपरक गीतों का संग्रह है। तृतीय वर्ग में विष्णु के अनेक नाम तथा महातम्य का वर्णन है, जिनका गान मतावर्तकी सम्प्रदाय की प्रार्थना के समय करते हैं।

प्रथम वर्ग को मुख्य घोषा कहा जाता है इसमें नाम धर्म को विश्वधर्म के रूप में शैक्ति किता गया है। यह शम्यास में सहज्र दृष्टिकोण से पुरातन और श्रत्थन्त सनातन तथा पवित्र है नामधोषा की दीदाा-शिता इस प्रकार की होगी।

सुष्टियोक घने घन । सवाय डाविया घुष्टियो हरि

१ - एरि धान काम, बोला राम राम

१: एक महापुरुष के एक देव का सिद्धांत दुहराया गया है लेलक ने इस पर अधिक वल दिया है। कृष्ण केवल मात्र एक देव हैं उनका वाक्यामृत मागवत ही एक मात्र प्रामाणिक शास्त्र है। वही एक मात्र ही विपत्ति से जीवों की रचा कर सकता है, क्यों कि वह काल और माया का स्वामी है।

:२: नाम तथा नामी :कृष्ण: एक रूप के हैं ऋत: नाम जी कित पदार्थ: है। यह बानंद के रस से ब्रोत प्रोत है: नाम ब्रानंद नाम रस: नाम मात्र ही मनत को पर्मानंद की ब्रोर ब्रग्नर करता है।

:३: भिनत जीवन का पर्म लदय है, यह पर्म पुरु जार्थ है। धर्म, ऋषी, काम तथा मोता भिवत के स्रोत हैं। उस मक्त को 'नामधो जा के आरंम में श्रद्धांजिल अपित की गई जो मुक्ति के प्रति उदासीन है, और प्रथम माग में स्कांत मक्त की व्याख्या ही है, जो चार पदार्थों के मोह का त्थाग कर अपने को अद्भुत नाम में विलीन कर देता है। माधव ने इस सिद्धांत को पुस्तक में बार बार दुहराया है। कृष्ण के चरणों में अपने को समर्पित कर देना ही मानव जीवन का लद्ध है

:४: नाम धर्म की उन्नति के लिये हुदय की पवित्रता अत्यन्त ज्ञावश्यक है। नाम की सहायता द्वारा ही पवित्रता प्राप्त की जा सकती है।

: प्र: नाम क घर्म का इवार सबके लिये बुला है। पूर्व युग में हिर का नाम गुप्त रखा जाता था किन्तु शंकरदेव ने मनुष्य जाति पर दया कर इसे सबके लिये सुलम दिया।

१- एक लिन मात्र शास्त्र निष्ठा देवकी नंदने फेला याक देवों एक मात्र देवकी देविरा सुत । ना० घो० ६६५

स्कृष्ण एक दुल हारी काल माया दिरो अधिकारी कृष्ण विने श्रेष्ठ देव नाहि नाहि शार ५८६

३- बार पुरुषार्थ ताहार निजरा हरिनाम मूलाधार ३७२

४- एकांत मकत जार्क्य महा अद्भुत हरि गुण नाम मय ६८%

^{#- 6 00 6 58 546 500 350} M35 640 408

कोई भी व्यक्ति कृष्ण की निरंतर प्रशंसा :स्तुति: कर अपने व्यक्तित्व को अधिक से अधिक ऊंचा :नरोत्तम: उठा सकता है।

कवि माध्य के वामत्कारिक स्पर्श से नामघोषा में धर्मशास्त्र सुन्दर काट्य में परिणित हो गया है। पुस्तंक के अंत में इ धर्मशास्त्री का कवि रूप नहीं रह पाता, वह नेवल पार्श्व में संकुचित दिलाई देता है और केवल रहस्य प्रच्चित होता है। माध्य देव विद्वान धर्मशास्त्री के रूप में बाकर, किव बन गए और अंत में रहस्यवादी रूप में बदल गए। उनका साहित्य उनके प्रामाणिक उत्थान का साद्वी है। जन्म रहस्य, मिक्तरत्नावली तथा बादि कांड में उन्हें हम धर्म शास्त्री के रूप में पाते हें, जो केवल वेष्णाव कथा बाँच बीर सिद्धांतों के रूपांतर और ह व्याख्या में व्यस्त हैं। यह धर्मांपदेशक की विकास अवस्था की राजधूय में धर्मशास्त्री किव हो गया है और अपने नाटकों में भी पहले वह किव है। बर्गीत में उसके बात्मा के गहन रात्रि के बंधकार का विवाद : : बंदित है। नाम घोषा में जब हम शरण वर्ग तक पहुंचते हैं वहां हमें शांत, स्थिर प्रथम प्रकाश मिलता है बहं माव पूर्ण रूप से नष्ट हो जाता है और वह शरण बानंद दशा में लीन हो जाता है और मिवष्य में भी इसी अवस्था की कामना करता है।

दयाशील स्वामी के प्रति पूर्ण आत्मसमपेण में उनका रहस्यवाद निहित है। उनका कृष्ण के साथ प्रिय और प्रिया का संबंध नहीं किन्तु स्वामी तथा सर्वत्याणी दास का संबंध है। उनका परम ल्रिय ईश्वर से मिलन अथवा आत्म मुक्ति नहीं, वे संदेव ही कृष्ण के चरणारविंद की शरण में सुरित्तित और आनंदित रहना चाहते हैं।

१- पर्म अमृत्य रत्न हरिर नामर पैरा
श्रित गुप्त स्वरूपे श्राद्धिल
लोकन कृपाये हरि शंकर स्वरूपे श्रिक्
मुद मंगे समस्तके दिल ।।

२ - नेवले कृष्णार् कीर्तने करिया

मुनित के पश्चात भी वे मनित रस का रसास्वादन करना चाहते हैं। नाम घोषा का बारंम रसन्यी मनित से बारंम होता है और ऋंत में किन अपने को मूर्स त्मुरुख: कहता है। इस शब्द का प्रयोग माध्य ने बार बार अपनी ऋगानता फ्राट करने के लिये किया है। इतना ही नहीं इसका ऋष्य गहन है। उच्च कोटि के मनत को के जान प्राप्त करना ऋत्यन्त अनिवार्य है। यह सच्चे मनत के लिये आनंद का विषय है कि उसके लिये आवश्यक नहीं कि वह जानी हो माध्यवदेव ने मनो विज्ञान के जिस रूप को गृहण किया है, इसमें किसी भी फ्रार की जटिलता नहीं और उनका साध्यन सहज है। विशेषा रूप से नामधोषा में संकर्ता का प्रयोग नहीं हुआ है। उनका मार्ग साध्यना का था जिसे कुछ ही इरवर के अन्वेषी दास्य मनित को इतने रहस्थ के उच्च स्तर पर हा स्टार सके।

\$75, 575, 359 - 9

^{2 - 380 333 330}

३ - एडु रस माध्य मुरुस मति गावे। १००१

ग

राम सरस्वती की रचनाएं

ऋसिया वैष्णव काव्य

राम सरस्वती :- सोलहवीं शती के असिया किवयों में इनका प्रमुख थान है और इनका संबंध नव-वैष्णव शांजीलन से हैं। इन्होंने संस्कृत महाभारत का रूपांतर असिया का या में किया है जिसमें मूल ग्रंथ की कथा वन्तु के शितिरकत अन्य कथाओं का मिशण हैं जो असम प्रदेश में प्रवित्त थीं। भिणाचंद्र े अश्वकणों सिंश्युक्ताओं की कथा असम प्रदेश की सामग्री कही जा सकती हैं क्यों कि मूलग्रंथ में इनका उल्लेख नहीं है। शंकरदेव के शिष्य अनंत कंदिल और महाभारत काच्य के रचयिता राम सरस्वती को अनेक ालोचकों ने सक व्यक्ति माना है। यह विवाद अनेक वर्षों तक चलता रहा। सर्व शी दीनानाथ बैज़ बरुआ, गुणाभिराम बरुआ, कालिराम शर्मा बरुआ तथा लक्ष्मीनाथ बैज़बरुआ और अन्य समालोच की का मत है कि दोनों वैष्णव कवि सक ही हैं। इनकी रचनाओं की संदित्त व्याख्या यहां दी जाती है।

शादिपर्व :- कोच राजसभा में प्रवेश करने के पूर्व किन ने इसकी रचना पूर्ण की है र वयों कि इसमें उनके आश्रमदाता का उत्लेख नहीं हुआ है। यह उनके युवावस्था की रचना है। राम सरस्वती के वनपर्व के श्रंतर्गत श्रनेक खंड ग्रंथों की रचना हुई है। वधासुखवन्न में नरनारायण की मृत्यु का पष्ट उत्लेख है।

घोषयात्रा तथा निहि यात्रा जो वनपर्व ग्रंथ के लंड हैं की रचना धर्मनारायण के राजत्व काल में हुई। विराट पर्व, उथोगपर्व और भी स्म पर्व की रचना उनके जीवन काल में समाप्त हो गई थी। इन रचनाओं के पश्चात जयदेव का व्य की रचना हुई शांतिपर्व में सावित्री की कथा है, रचना इनकी अंतिम कृति है।

⁸⁻ A. E. A. L. BO- 78,00

२- वनपर्व -- ११८६ पद०

३- तेंते वैकुंठक पाइला धमियश था कि गहला वर्वनंत महंत सकले

कर्णपर्व, सिंध्रूरपर्व, व्यासात्रम, और भीमनरित के रननाकाल के समय का संकेत नहीं मिलता है। यह कत्यना करना कठिन है कि राम सरावती ने सम्पूर्ण महाभारत का असमिया रूपांतर किया। कामसारी ने भी इस ग्रंथ के कतिपय ग्रंशों जा रूपांतर काव्य में किया, जिनका मिलण विराटपर्व उद्योगपर्व और भी स्थप्त में हुत्रा है।

स्क मात्र वनपर्व रचना इवारा कवि ने लोकप्रियता तथा स्थाति प्राप्त की।
महाभारत के वनपर्व के अंतर्गत पांडव साध्युत्रों जैसा जीवन व्यतीत करते हैं और किसी
विशेष घटना का चित्रणा नहीं हुत्रा, किन्तु राम सरस्वती कृत वनपर्व में पांडव अनेक
प्रकार की निन्धि विपित्त और बाधा का दमन करते हुए त्रिममान करते हैं। पुष्पहरणा,
विजयपर्व, मिणाचंद्र घोष कालकुंज वक्ष, मोजकूटवधा, जंधासुर वधा, सिंध्युयात्रा, कमलपर्व,
पातालपर्व, और घोषयात्रा इस ग्रंथ के खंड हैं कालिकाल वधा, वृष्टइद्रचवधा, हिमसर्ववधा
अभी तक प्राप्त नहीं हो सके। राम सरस्वती ने तीस हज़ार से अधिक पत्नों की रचना
की है। वनपर्व की विषय व्याख्या:- पुष्पहरण:- वनवास में एक बार पांडव सरसों
से लेत से चल रहे थे और मीम ने अज्ञानवश इन सरसों के पुष्पों को नष्ट कर दिया।
युधाष्टर ने उन्हें परामर्श दिया कि वे इस लेत के स्वामी की सेवा करके उसके हानि
पूर्ति करें इस लेत के स्वामी कालू ब्राइमणा ने इन्हें धान की लेती में लगाया।

मिणांद्र घोष :- एक दूसरे दिन पांचों पांडव द्रोपरी सहित मनरावि वन से होकर जा रहे थे, उन्हें एक सरोवर के निकट शरण तेनी पड़ी। पुंडरीक सपे ने मीम को छो कुकर अन्य पांडवों को काटा और वे अवेत हो गए। भीम को यह सूचना प्राप्त हुई कि उनके सब माई एक मिणा के स्पर्श से पुनिजी वित हो सकते हैं। सपेराज के राज्य में मीम का अभिमान अत्यन्त उर्चजक है। भीम को एक पत्नी और मिणा प्राप्त होती है, जिसके स्पर्श से द्रोपदी और बार माई जी वित हो जाते हैं। इस कथा का कुछ अंश मनसा कथा से लिया गया प्रतीत होता है।

विजयपर्व :- इसमें राम सर्विती ने घृतराष्ट्र की विजयतिष्सा की पूर्ति का वर्णन किया है। विष्णु के मनत विदुर ने त्रिसिरा दैत्य का संहार किया

कात्सुंजनघ :- म्लेन्डों के शासक कात्सुंज ने पांचों पांडवों की हत्या की, द्रोपदी ने उसके सैनिकों के साथ युद्ध किया। इन्द्र की कृपा से पांडव जी वित हो गए और म्लेन्ड पराजित हुए।

व्यासुर वधा:- द्रोपदी ने गौरी की उपासना की और देवी ने अवल सौभाग्य वर्दान दिया। अगस्ति ऋषि ने पांडवों से को आदेश दिया कि व्यासुर का वधा करें पांडवों ने असुरों से युद्ध करना स्वीकार किया और द्रोपदी को एक ऐसा हार दिया गया जो मुतकों को प्राणदान दे सकता था। व्यासुर का मस्तक व्याघ्र का था, उसे महादेव तथा वंडी से आशीविद प्राप्त किया था। भी षण संग्राम में युधि ष्ठर के अतिरिक्त सभी पांडव मारे गर, द्रोपदी के हार के स्पर्श से सभी पांडव जी वित हुए- भीम ने व्यासुर का वधा किया।

विहंगम-मोरा: - देवताओं ने स्क गंधार्व की अभद्र व्यवहार के कारण शाप दिया कि वह पत्ती हो जाय और वनवास में जब पांडव उसका वधा करेंगे उसकी शाप मुक्ति होगी। इस पत्ती ने अपने पंत फैला कर द्रोपदी को पकड़ लिया अर्जुन ने इसे मार डाला।

खटासुर वधा :- द्रोपदी को अकेले कुटी मैं देल कर इस राजास ने उससे विवाह प्रस्ताव किया कि वह दरिद्र पतियों का परित्याग कर उसकी पत्नी होना स्वीकार करे। प्रोपकी की दृढ़ता देख कर राजास ने कुटी को गिरा दिया और द्रोपकी को खींचने लगा। पांचों पांडंव पराजित हुए- द्रोपकी ने कृष्णा से प्रार्थना की। इनको आदेशानुसार द्रोपकी ने कंकण इवारा दानव का स्पर्श किया, वह मर गया।

गश्वकणविध्य :- एक दिन भीम और अर्जुन एक कुएं मैं जल मैं देल रहे थे, नीचे एक सुंदरी

पिलाई पर्ज़ा। उसने वाहर निकालने की प्रार्थना की। भीम को कुछ संदेह था पर अन्त मैं

दोनों ने उसकी रक्षा का निर्णय किया। भीम ने धनुष्य का एक माग नीचे कर के

उसको उठाना चाहा पर वे नीचे लींच लिए गए, अर्जुन ने भाई की एक्षा कर्मा चाहा

किन्तु दोनों भाई पाताल ले जाए गए। राजा उष्यनार की पुत्री शिव तथा के बरदान से
अत्यन्त सुन्दर रूपवती थी। अश्वकर्ण रादास ने उसके पिता का अंत किया। अर्जुन ने हेमा
के पिता के शत्रु अश्वकर्ण की हत्या कर उसके साथ विवाह किया।

जंशासुरवधा: - शिव के अनन्य उपासक जंशासुर दैत्य ने भीम को एक बार बंदी बनाया भीम की प्रार्थना पर कृष्णा ने भीम की रुता के लिए गरुणा मेजा। अंत में असुर पराजित हुआ।

कुलाचलवय :- पांडव ऋगत वास कर रहे थे, एक दिन घूमते हुए वे एक महात्मा के कुटी के समीप पहुंचे। साघु इनका स्वागत कर शादर सत्कार किया और यह प्रार्थना की कि श्राप लोग इस वन में प्रवेश न करें क्यों कि घूमराचास अथवा कुलाचल देत्य इस राज्य का श्रीधापति है जो साधु-संतों को सदैव दारुण दुल देशा है। घूमराचास के पिता पर्म वैष्णव थे किन्तु वह वैष्णवों का दमन करता था। ऋष्णि के शाप से घूमराचास का सिर ककरी का सिर हो गया और उसके पिता और सैनिकगण पाष्पाण की शिला हो गर। एक दिन कुलाचल के सैनिकों और पांडवों से मीषण युद्ध हुआ युध्विष्ठर के अतिरिकत

नारों पांड्य युद्ध में मारे गए कृष्ण एक्यं युध्यिष्ठिर की सहायता के लिए शाए। मोना के लिए बुलाचल कृष्ण के चरणों पर गिर गया । कृष्ण के पद-रज स्पर्श होते ही वह अपने समस्त सैनिकों समेत वैकुंठ गामी हुआ ।

सिंध्यात्रा :- अर्मनीत्र के समीप पांडव एक कुटी में निवास कर रहे थे, सिंध्यूरा यहीं यह कर रहा था । नवगृह और विष्णु की पूजा हो रही थी अनेक दरित्रों ने पांडवों की कुटी के निकट के कुछ बृत्त तोड़ दिये । इस पर दोनों पत्तों में संघर्षा हुई। जिस समय अर्जुन कुछ दूर युद्ध कर रहे थे, राजा के महारिधयों ने चारों पांडवों की हत्या की । अर्जुन ने कालकेतु सहित अनेक योद्धाओं को पराजित किया । अर्जुन और सिंध्यूरा में ग्यारह दिन तक युद्ध चलता रहा । अंत में देवताओं के हस्तदोप द्वारा दंवद युद्ध समाप्त हुशा । चंद्र और कुमारी कुंती के गर्ध से सिंध्यूरा का जन्म हुआ था--- माता ने भय के कारण नवजात शिक्षु को सागर में वहा दिया, सुरविंद राजा ने यस शिशु का पालन पोष्णण कर ससे अपने राज्य का उत्तराध्यकारी नियुक्त किया ।

रामसर्त्यती के समस्त काव्य की नायक-नायिकार पर्म वैष्णव है। भागवत पुराण की क्या का वर्णन अनेक काव्यों में हुआ है। भागवत के कुळ श्लोकों का अन्वय कवि ने असमिया में किया है। यथा:-

> हेनतो ईश्वर कृष्णदेव सनातन शतुभावे मुक्त होवे करिया अवण प्रेमभाव स्मरण कि कहवो महत्व - कुलाचलवधा पु० ४०४

देशा केन हरि मकतिर महत्वक येमने तेमने मात्र स्मरोक कृष्णक वैर्भावे मायमाने सेमने तेमने प्रेम मजनीर सीमा कहिबेका कोने

- कुलाचल वधा पृ० ३६२

रामसरस्वती ने अपनी रचनाओं में कृष्ण और अर्जुन को नारायण और किए रूप में चिन्ति किया है :-

देवकीर गर्भे नारायण वक्तार कुंतिर गर्भेत चित्त नरर विहार --- वनपर्वे- प्रथम भाग

हिन्दी वैष्णव का य

सूरवास की रचनाएं :सं० १५३५-१६३६: ठा० व्रजेश्वर वर्षा केवल गुरसागर को प्रामाणिक रचना मानते हैं डा० मुंशीराम शर्मा, डा० दीनद्याल गुप्त तथा प्रमुद्याल मीतल सूरसारावती और शाहित्य तहर्दा को तूर की कृति मानते हैं। हिन्दी के बहुत से विद्वान साहित्य तहरी तथा प्रसारावती को प्रदास की रचना मानते हैं। जब जक हन रचनाओं को अप्रमाणिक सिद्ध नहीं कर दिया जाता है, एन पर विधार करना समिति। होगा।

्रुतागर: - विड्वानों के मतानुतार तूरसागर तूरदास की प्रामाणिक स्वता है, इसके विभिन्न खंडों के पदों इवारा की स्वतंत्र स्वतात्रों की सृष्टि हुई को भाग की विवादा- स्वद हैं। भागपत पुराण की समस्त कृष्णतीला का वर्णन इस ग्रंथ में हुआ है कहीं कहीं

मागवत पुराण- सप्तम - १,२६ वही - दशम - २६-१५ स्क कथा का वर्णन रक से अध्यक बार हुआ है। अन्य पुराणों की कथाओं का समावेश मी रस ग्रंथ में हुआ है। डा॰ दीनदयालु गुप्त सूरसागर के अंतर्गत निम्नलिखित सोलह रचनाओं को प्रामाणिक मानते हैं:---

Š	मागवत भाषा	-3	दशम स्कंघ माषा
?-	सूरदास वे पद	१ ०-	नागलीला
3-	गोवधीन लीला	११-	सूरपनीसी
% –	व्याहलो	85-	मंबरगीत
¥-	शूर रामायण	83-	दानतीला .
ξ-	सूर साठी	१४-	मानलीला
9-	राधारस केलि कौतुह्त	१५-	सेवाफल
C -	सूरसागरसार	१ ६-	सूरशतक

सूरसागर का प्रथम और दशम का पूर्वार्ध और उत्तरिक्ष जाकार की कृष्टि से
महत्वपूर्ण है। संप्रति उपलब्ध सूरसागर में द्वादश स्कंध हैं और सम्पूर्ण पद संख्या
४५७८ है। वैकटेश्वर प्रेस बंबई, नवलिक्शोर प्रेस, लखनक, और नागरिप्रवारिणी समा काशी
थे सूरसागर का प्रकाशन हुआ। प्रथम दो प्रेसों के संस्करण में अष्टलापी सूरदास के पदों
के अतिरिक्त अन्य कवियों के पद भी सूरसागर में प्रकाशित हुए हैं।

सूरसारावली: इसमें सूरसागर तथा भागवत की कथा का मिश्रण हुआ है, और वह रवतंत्र रचना है। पर ब्रह्म की सृष्टि विस्तार आदि का चिश्रण मनोहर रूपकों द्वारा प्रकाशित किया गया है। नवीन कल्पनाओं के संयोग से कृष्णा की मधुरालीला का आकर्षक वर्णन किया गया है। यह ११०७ द्विपद इंदों में पूर्ण हुई है।

साहित्यतहरी: - यह ११८ पतों का संगृह है जिसमें राधा कृष्ण नायिका और नायक के रूप में श्रंकित किये गर हैं। यह सङ्गविलास प्रेस, वांकी पुर से प्रकाशित से प्रकाशित हो नुकी है।

नंदरास की रचनारं:- :सं०१५७०-१६४०: उनकी रचनाओं के संबंध में प्याप्त सीज की जा चुकी है। डा० दीनदयालु गुप्त के अनुसार निम्नलिखित १४ रचनारं प्रामाणिक हैं:-

१- रस मंजरी

प्- विरुष्ठ मंजरी

र- अनेकार्थ मंजरी

६- रूप मंजरी

३- मान मंजरी

१० - रु निमणी मंगल

४- दशम स्कंघा

११- रासपंनाध्यायी

५- श्याम सगाई

१२- मंबरगीत

दं- गोवधिन लीला

१३- सिद्धान्त पंनाध्यायी

७- शुदामा चरित्र

१४- फ्डावली

पं० उमारंकर शुक्त गोवध्नि तीला को स्वतंत्र रचना नहीं मानते और सुदामा चरित भी अप्रमाणिक रचना जान पद्धी है। गोवध्नि लीला और दशम रकंध में अधिक साम्य होते हुए भी हसे स्वतंत्र रचना माना जा सकता है। पदावली के आकार और पदसंख्या के लंधंध में विद्वानों में मतभेद है। प्रभुदयाल मीलल के मतानुसार पदावली में ४०० पद प्राप्त होते हैं। पं० उमारंकर शुक्त ने पदावली के पदों की संख्या २८३ ही दी है। दशम स्वंध :- यह गूंध शीमदमागवत का अकारशः अनुवाद नहीं है। कवि ने शीमदमागवत की टीकाओं का मान तेकर गूंध को रचा है। यह गूंध काव्य की दृष्टि से उतना उत्कृष्ट नहीं है जितना कवि की रास पंनाध्यायी है। फिर भी हसमें अनेक स्थानों पर वर्णन कहुत सजीव हुए हैं। रास पंनाध्यायी की मांति इस गूंध में भी कवि ने अपने मानों को तीव्र और स्पष्ट कर्न के लिए अलंकारों का प्रयोग किया है, काव्य की दृष्टि से नंददास का यह गूंध महत्वशाली नहीं है, एक साध्यारण कोटि की रचना है। स्थान स्थानों है। हसमें राधा अपनी सिक्यों से कहलाती है कि मुक्ते काले सप ने काट लिया है। यशीदा ने राधा अपनी सिक्यों से कहलाती है कि मुक्ते काले सप ने काट लिया है। यशीदा ने

^{8 -}

कृष्ण को विष उतारने के लिये बुलवाया, अंत में कृष्ण राधा के घर गए। वहाँ जाकर राधा का विष उतार कर उन्हें स्वस्थ किया। की ति ने राधा की लगाई कृष्ण के साथ कर दी। डा० दीनदयालु गुप्त के अनुसार यह किव की कोई स्वतंत्र रचना नहीं है। इतमें किव ने बारंम में न कोई बंदना दी है और न अंत में लीला माहात्म्य ही है जैसा कि किव ने बन्य स्वतंत्र गृंधों में किया है।

गोवधिन लीला :- नंदरास ने शीमदभागवत में विधात कृष्ण लीलाशों में से इस प्रसंग को लेकर एक छोटी सींक रचना की है। ग्रंथ के शारंम में गुरू की वंदना की गई है शौर श्रंत में कृष्णलीला रित की इच्छा कवि ने व्यक्त की है। यह संक्षिप्त वर्णनात्मक रचना रहे।

सुदामाचरित: - नंददास की इस रचना का उद्देश्य कृष्ण की मक वत्सलता, दीन प्रतिपाल कता और मैत्री निवाह मावादि का दिलाना है। नंददास कृत सुदामा चरित बहुत साधारण रचना है। डा० दीनदयालु गुप्त का मत है कि संमव है यह रचना नंददास की आरंभिक रचना हो।

विरहमंगरी:- इस ग्रंथ में नंददास ने चार प्रकार के विरह की ज्याख्या की है-:१: प्रत्यदार:२: पत्कांतर:३: वनातंर:४: देशांतर। वारहमासे में कवि ने विरह की
दयनीय दशा का चित्रण किया है। नंददास ने प्रकृति के ज्यानार और वस्तुओं को विरहि
णी व्रज्याला की विरह विकलता का उद्दीपन बताया है।

ह्रपमंजित :- सुंदित ह्रपमंजित निर्मेयपुर के नरेश की पुत्री थी। माता-पिता ने स्क ब्राइमण को उसके अनुरूप वर लोजने का कार्य सींपा किन्तु उसने लोग वश अयोग्य वर से असका विवाह करा दिया। रूपमंजित ने गोवधीन पर्वत और स्वान में कृष्णा का दर्शन किया। कृष्ण प्रेम में उन्मक्त इंदुमती तथा रूपमंजित ब्रज-कानन में जा पहुंची, यहीं उन्हें कृष्ण के रास का जानन्द प्राप्त हुआ।

१- वहीं - पु० ७८९

^{- 5 4&#}x27;s:

३- त्रव्व सं -- पृ ७८६

रु निमणी मंगल : इस रचना की कथा श्रीमद्रभागवत के दशम स्कंघ के उत्सद्धें के प्रत्र श्रीर प्रश्न वे अध्यायों में रु निमणी हरण और उसके साथ कृष्ण के विवाह की कथा से ली गई है। राजा मीष्मक की पुत्री रु निमणी 'कृष्ण को पति रुप में वरण करना चाहती थी किन्तु उसका माई रुक्म शिशुपाल के साथ रु निमणी का विवाह करना चाहता था रु निमणी ने कृष्ण को स्क पत्रिका ब्राह्मण के हाथ मेजी, इसमें हरण विधि का भी उल्लेख था कृष्ण विध्र के साथ कुंडिनपुर पहुंचे। गौरी पूजन के पश्चात कृष्ण ने रु निमणी को अपने रथ पर बेठा लिया। इस समय सपरिथत नरेशों ने कृष्ण पर आकृमण किया, अंत में वे पराजित हुए। नंददास ने युद्ध का वर्णन तीन रोला छंदों में समाप्त कर जिया है और कृष्ण के विवाह का वर्णन विधा ही नहीं है।

रासपंनाध्यायी:- इस रचना में गौपी-कृष्ण की रासलीला का वर्णन पांच अध्याय में निक्ति किया गया है। ३०१ रोला ंदों में रास का विशद चित्रण प्रस्तुत किया। नंदनास के काव्य का आधार मागवत किन्तु यह उसका अनुवाद नहीं है। यह नंदनास की प्रसिद्ध कृति है।

मंवर्गात: - नंददास की यह रचना भागवत के ४७ वें अध्याय के तीसरे श्लोक से आरंग होती है। गोपियों ने उद्धव का समुचित आदर सत्कार किया और उनके बाने का कारणों का अनुमान किया। शिमदभागवत में गोपी- उद्धव के कुशल दोम के पश्वात प्रमर का जागमन होता है। नंददास ने नवीन प्रसंग का योग कर कुछ प्रसंगों में परिवर्तन किया है, जिससे उनकी व्यंजना में मौतिकता का सा आनन्द आता है। इस रचना के आरंम में न वंदना है न भूमिका जिससे यह प्रकट होता है कि कदा चित यह किसी वृद्धत रचना का अंश हो । ७५ इंदों में गोपी- उद्धव संबाद समाप्त हुआ है।

सिद्धांत पंचाध्यायी :- इसका विषय कृष्ण की रास लीला ही है। इस ग्रंथ में नंददास ने कृष्ण, वेणू, गोभी और राल की आध्यात्मिक व्याख्या की है रास का सेद्धांतिक विवेचन १३ ८ रोला इंदों में हुशा है। जो लोग रासलीला पर पहली होता का दोषारोपण करते हैं, नंददास ने इस ग्रंथ की रचना कर रास की दिव्यता प्रकट की है।

१- म० व० सं० ---- पु० द१६

नंदरास कहते हैं जो लोग इसमें दिव्यता शृंगार-कथा का जारोप करते हैं, वे वारतव में कृष्ण के स्वरुप को तथा कृष्ण मिलत में माध्य माव के रहत्य को नहीं जानते हैं। पदावली :- इस रचना के अंतर्गत कृष्ण जन्म बधाई, हिंडोला, लंडिनामाव, रूप वर्णन मत्हार तथा वसंत होली का सुन्दर वर्णन हुआ है। होली वसंत के वर्णन में कवि ने राध्या और कृष्ण की होली तथा उनकी संयोग लीला के वित्रण बहुत तत्लीनता के साथ किया है। नंददास ने जन्म लीला संबंधी कोई स्वतंत्र रचना नहीं की है किंतु राध्या और कृष्ण जन्म की कवि द्वारा लिखित अनेक वधाइयां वधात्स्व कीर्तन संगृहों में उपलब्ध हैं।

कुंमनदास की रचनाएं :सं०१५२५-१६३६: केवल दान लीला जो ३१ विस्तृत ंदों की रचना है का प्रकाशन हुआ है। इनका सम्पूर्ण काव्य स्फुट पदों में प्राप्त होता है। हा० दीनदयालु गुप्त को विधाविभाग कांकरौर्ला में इनके १ दर्ध पदों का संग्रह प्राप्त हुआ है और नाथइवार के निज पुरतकालय में ३६७ पदों का संग्रह मिलता है। कुंमनदास ने दानलीला युगलस्वरुष, मिलता विरह, मान खंडिता तथा रास आदि विषयों पर पदों की रचना की है।

कृष्णदास की रचनारं :१५५२-१६३८: इनके स्फुट पद ही उनकी प्रामाणिक रचना स्वीकार किये जाते हैं। इनकी ६७६ पदों के इस्तिलिखत संग्रह की दो प्रतियां सक कांकरौती तथा सक नाथ इवार में प्राप्त हुई है। कुछ अन्य संग्रहों में इनके पद दिलाई देते हैं। भूमर्गीत, प्रेमसत्व निरु पिता तथा वैष्णाव वंदना को डा० दीनदयालु गुप्त ने संदिग्ध रचना माना है। प्रेमरसरास में ३१ इंदों में रास का वर्णन है। प्रमुदयाल मीतल

१- जे पंछित शृंगार ग्रंथ मत यामें साने । ते कहु मेद न जाने हिर को विषर्ध माने ।

⁻⁻⁻ सिद्धान्त पंचाध्यायी--शुक्त पृ० १ ८६-१ ८७

२- व्यव्यव संवर -- पृव ८७०

ने प्रमर्गात प्रेम तत्व निरुपण, मकतमाल की टीका, वेष्णाव बंदना, वानी, प्रेम, रत्नराशि, हिंडोरा तीला बादि को इनकी एचना ध्वीकार किया है। गोविंद स्वामी की रचनाएं :सं ०१ ५६२-१६५२: इनके पदों की कई उस्तिलिखत प्रित्यां कांकरौती तथा नाथद्वार के निजी पुस्तकालय में उपतञ्च हैं, इनमें संग्रहील पदों की संख्या लगभग २५२ है। गोविंदस्वामी के पदों का संग्रह बनेक इत्तिलिखत प्रितियों के बाधार पर कांकरौती में किया गया है, उसकी पद संख्या ७६० है, इनमें से कुछ पद प्रिताप्त कहे जा सकते हैं। कुंजलीला तथा किशोर तीला संबंधी पदों की संख्या इन संग्रहों में अधिक हैं।

शितस्वमी की रचनाएं :सं०१५६७-१६५२: इनकी रचना के रूप में कुछ रफुट पद प्राप्त होते हैं। डा० दीनदयालु गुप्त ने वल्लम संप्रदायी मुदित की तैन संग्रहों के बाधार पर इनके पदों की संख्या ६४ स्वीकार की है। प्रभुदयाल मीतल उनके रचित पदों की संख्या २०० मानते हैं जिनका प्रकाशन की तैन संग्रहों में हुआ है। विभिन्न इस्त लिखित प्रतियों के बाधार पर हजारी लाल शर्मा ने इनके पदों का संग्रह विध्या है जिनकी संख्या २३२ है। कृष्ण की नाना ली लाओं का चित्रण इन पदों में हुआ है। दान, मान, संमोग, वालकी ला बादि विषयों के बाधार पद सिलते हैं।

परमानंददास की रचनाएं :सं०१ ५५०-१ ६६०: परमानंदसागर ही परमानंद की प्रामाणिक रचना है, घृष्ट परित्र और दानलीला भी इनकी रचनाएं कही जाती हैं किन्तु अभी तक इनकी प्रामाणिकता सिद्ध नहीं हुई है। प्रमुद्ध्याल मीतल ने इनके दो और ग्रंथ उद्धव लीला तथा संस्कृत रत्नमाला का उत्लेख किया है किन्तु उनकोंने इन ग्रंथों की प्रामाणिकता सिद्ध नहीं की है। नाथ इवार तथा कांकरौली में प्राप्त परमानंद्रशागर के पर्ते की संख्या २००० तक है। दशम रखंधा मागवत के प्रशंगों का आकर्मा वर्णन परमानंद्रशागर में हुआ है। परमानंद ने अपने काव्य का विषय कृष्ण की प्रेमपूर्ण रखती व्रवलीलाओं को ही बनाया है, कृष्ण निरंत्र के रादास वधा को जोड़ दिया

है। बार्स्सीला, गोचारण, वनकी ड़ा, पनघट सीला, रास निकुंब सीला, राधा कृष्ण की मुगल दीला के शृंगारिक चित्र, रांद्यिता गोपी विग्र वादि विषयों पर विषक पद प्राप्त के होते हैं।

नतुमुण दास की रचनाएं :- :सं०१५६७-१६४२: विधा विभाग कांकरौती के ऋंगीत हलारी लाल शर्मा ने नतुमुण्यास के पदों का संग्रह किया है, इन पदों की सं त्या ४३६ है। डा० दीनदयालु गुप्त ने इनके कई हस्त लिखित पदसंग्रहों का उत्लेख किया है, जिनके पदों की संख्या स्मामग ३०० है। डा० गुप्त ने इनकी कृति दानलीला को प्रामाणिक रचना स्वीकार किया है, वस्तुत: यह एक लंबा पद मात्र है। मध्युमालती, मिकतप्रताप द्वादश-यशे, तथा हितूज को मंगलें भी इनकी रचाएं वही जाती हैं किन्तु इनके रचयिता राभ्यावल्लम संप्रदाय के चतुंमुख्यास हैं।

वितहरिवंश की वाणी :- इनकी है रवनाएं ी दित चौराणी तथा शिक्ति स्फुटवाणी जी का प्रकाशन हो चुका है। दितचौरां ती जैसा नाम से प्रकट है दे पदों का संग्रह है, राजा कृष्ण के अनुराग, संमोग, कुंक्क्रीड़ा रास, मान, नवित्ति जादि का वर्णन इन पदों में दुजा है। असिया महापुरु िषया संप्रदाय में जिस प्रकार की निन की उपासना की जाती है उसी प्रकार इस रचना का पूला राजावत्स्मीय संप्रदाय में होता है। स्फुटवाणी कि की प्रारंभिक रचना जात होती है, इसमें १५ पद , ३ सकेंग्रे, २ कुंडिल्यां, २ कृष्ण्य १ शित, जुल २३ मुक्तक पद संग्रहीत हैं।

सेवन जी की वाणी :- सेवन जी ने वाणी का विषय मुख्य रूप से अपने गुरु हितहरिवेश की प्रशस्ति है, हित रसिति प्रमर्ण तथा 'जी कितमक्तमजन प्रमर्ण में राधाकृष्ण की निकुंज लीला का वर्णन भिल्ता है। मिश्रवंध्युत्रों ने इनकी रचना 'मिल प्रवावली मंगल का उत्लेख किया है किन्तु यह रचना अभी तक प्राप्त न हुई। इनके मुक्तक पदों की संख्या लगभग २०० है।

व्यास जी की वाणी :जन्म से १५६७: इरिराम व्यास हितहरिवंश के प्रमुख शिष्य थे तथा बोद्धा नरेश मध्यूकर शाह के गुरू भी थे। इनकी तीन इस्तप्रतियाँ के बाजा। पर इनकी समस्त एकता का फ़्लासन दो भागों में हुआ है जिनके पदाँ की संख्या ७५६ है इसके बाति एकत १४६ सा सिमां और दोहे भी हैं। सिंद्धांत रस के पत :- व्यास जी ने प्रारंभ में नृंदावन, मधुरा, यमुना, नामरूप की स्तुति तथा गुरुभ हिमा का वर्णन किया है, इसके शंतर्गत समी पद मिद्धांत परक नहीं है। कवि ने `साधान की स्तुति `में प्रस्थात मनतों का यशगान मात्र विया है। वंदना, विरह, मनित ज्ञान आदि के पत्नौं द्वारा युगल रूप की उपासना की पुष्टि होती है। रस विहार के पद :- राघा कृष्ण की युगलती ला कुंज विहार, श्या बिहार, जलकी ड़ा, षटक्तुरास, षोडरात्रृंगार, नलसिलमान मोजन जिलास, विंडोला जादि का वर्णन हन पड़ों में हुआ है। इनकी रास मंबाध्यायी में रावा रास का वर्णन है जो भागवत में नहीं मिलाहै। कुछ पदौँ में संख्ति। का भाव भी प्रकट हुआ है। गडाधार भट्ट की वाणी :- रामचंद्र शुक्त के मतानुसार इनका कविताकाल सं० १५८०-१६ के बाद है। गदाधर की भोहिनी वाणी में कुछ लंदमूल के पद बीर वृंदादम की प्रशंसा में लिसे ५४ रोता छंद हैं जिसका प्रकाशन हो चुका है। इस संग्रह के कुल पदों की संख्या co के लामग है। शब्दकाप के कवियों की मांति मटु जी ने मी कृष्ण की जाल तीला के विविध प्रशंगों पर पद लिया है। राजा कृष्ण के रास, विलास, संतीम मान वादि का व वर्णन कोन पदाँ में भिनता है। कतिपय पत्तों में उन्होंने दैन्य गाव भी प्रकट किया है।

सूरदास मामोचन की वाणी :- इनकी एक मात्र रचना 'सुदूति' का प्रकाशन हो चुका है जिसमें १०५ स्फुट पद संग्रहीत हैं। कृष्णा की वालतीता, मुरती वादन, रास, संक्रिया, चौती, भागार हिंदीता वादि ही इनके काव्य के विश्वय हैं। राष्ट्रा-कृष्ण के नसरित , कुंजविलास का मनौरम चित्रण इनके पतीं में हुआ है।

शीमटु की रकता:- राधा कृष्ण के सुगतस्त्य का चित्रण `जुगतसते में छुता, कुल पड़ीं की संख्या १०० है यह रचना के नाम से छी प्रसंद है। प्रत्येक पड़ के साथ सक दोखा भी युक्त है, जो उन पतों का संदोप रूप मात्र कहा जा सकताहै। शीमटु स्क सहस्त्र पतों वे िन्त्रीता करे जाते हैं किन्तु 'सुना के गिति के गिति है। हित्यास की रचना :- अनकी स्क मात्र रचना महावाणी है। उपस्क्त है जो 'सुनस्सत की टीका कही जाती है। सेवा, उत्साह, सुरत, सहज सिद्धांत- ये पांच महा सुख हैं। अष्ट्याम सेवा दा पर्णन सेवा सुस में है। जिलांत सुस में समीनामावली तथा महावाणी के गूढ़ विषयों का परिचय है। उत्साह हुस गीर सहज सुस में संभोग गुंगार का उदय विकास हवं पर्यवसान शंकित हुआ है। हनकी महावाणी का विस्तार सी मित

परश्राम देव की रचना :- इनकी कृति परश्रामक्षागर क्ष्मी तक प्रकाशित नहीं हुई है निम्यार्थमाध्युति में इस का व्य का जुछ केश प्रकाशित हुगा है, जिससे यह प्रकट होता है कि इसमें बाइस सौ दोहा हुन्ये, हुंद और सहत्त्रों पद हैं, ये सभी ज्ञान, वैराग्य गुरु निष्ठा, प्रेमलंबंधि तथा उपदेशात्मक हैं। निम्बार्थमाध्युति में प्रकाशित पदों में गृंगार विषयक पदों का ग्रमाव है।

स्वामी हरिवास भी रचना :- इन्हम हिक्कित काल संव ६६००-१६१७ है लगभग माना जाता है। पंठ रामचंद्र हुनल ने इनकी कीन स्वनाओं हिरिवास की को ग्रंथ , स्वामी-हिर्मास की के पद हिर्मास की की वानी का उत्तेल किया है। डाठ रामकुमार वर्भी वे अनुसार अनेक लंग्रह प्राप्त हैं हरिवास की की वानी और हिरिवास की के पद इनकी प्रमुख स्वनाएं हैं। प्रमायल के हिर्मास की के स्व इनकी प्रमुख स्वनाएं हैं। प्रमायल के हिर्मास की को स्व इनकी की रचनाएं उपलब्ध हैं, प्रमम स्वना में सिद्धांत के १८ पद हैं और द्वितीय के लिगाल में राध्याकृष्ण के नित्य विद्यार नल सित्त मान, वान, होती तथा रास आदि विश्वयों पर १०८ पद हैं।

विट्ठलविपुलोव की रवनाएं :- इनके पुरुषः ौदल चालील पद प्राप्त होते हैं, इन पदाँ का विषय राजाकृष्ण का नित्यविद्यार है। निम्यार्थ गाधुरी में ३६ पद प्रगासित । हो पुके हैं। विधारिनदेव की रचनाएं :- इनके दृवारा विर्वित ७०० दोहे और लगभग ३०० पड उपलब्ध हैं। मिक्त, ज्ञान, वैराग्य, नीति, उपदेश श्राचार्य निष्ठा, ंगार शादि विविध विषयों पर काव्य रचना हुई है। इनके ६० पड निम्वार्क माध्युरी में प्रकाशित हुए हैं।

मीरा की रचनाएं :- इनके स्फुट पदों के कई प्रामाणिक संस्करण फ्रकाशित हो चुके हैं िनमें परशुराम चतुर्वेदी का मीरावाई की पदावती, महावीर सिंह गहलौत का मीरा जीवनी और काव्य विशेष महत्व के हैं। मीरा के पदों का विषय उनका कृष्ण के प्रति फ्रेम, विरह, मिल्म, आत्म निवेदन आदि हैं, इनमें निर्मुण तथा सगुण मितपरक माव्य भी व्यंगित हुए हैं।

चतुंथै बध्याय

प्रस्तुत अध्याय में विनय, तंदना, तथा श्रीकृष्ण की तमक की का को तूलनात्मक अध्ययन अधित दिया गया है। प्रभू का नाम स्थरण मकत की दीनता, इन्द्रित की महता, उद्धार की प्रार्थना, तंदना आदि समस्त विष्यां पर प्राप्त अविभया तथा हिंदी तेष्णव का की लमानता पर विचार किया गया है। श्रीकृष्ण की लीलाओं के तीन माग व्रव्हीता, मधुरा लीला तथा दारका लीला किए गए हैं, दीनों मानालों में प्राप्त विविध लीलाओं की तुलना इस अध्याय में की गयी है।

विनय- वंदना- शीला गान

विनय - वंदना -- लीला गान

१ नाम स्मरण :- नाम स्मरण कर मक्त मोद्दा की कामना करता है। शंकरदेव कहते हैं -- राम नाम का उच्चारण करों इसी से भव वैतरणा सुल से पार कर सकते हो, नाम के समान जन्य वृद्ध मी नहीं है- नाम उच्चारण सिंह के शब्द से श्रधिक भयंकर है, इससे पाप रूपी हाथी भयभीत हो जाता है। बोलने में एक बार बोलते हैं पर सुनने में यह सेकड़ों सुनाई देता है, यह नाम का विपरित है, मुख से राम नाम बोलो-यर्म, ऋषी, काम तथा मोता सुब से प्राप्त कर सकोगे सबसे अधिक परम सुकृद राम नाम है, इसका स्मरण मात्र करने से यम का मय नहीं लगता है। नारद्र शुक्तमुनि ने नाम के ऋखिरि अतिरिक्त किसी और गति को नहीं कहा है। ऋत: सार्तत्व राम नाम को ग्रहण कर मायायुक्त विधियों का त्याग करों। मेरे मन पर्मानंद के पद मकरंद की सेवा करो उसके शतिरिवत श्रन्य कोई भाव ताप मुकत नहीं कर सकता है--- तीर्थ, ब्रत, तप, जप, योग तथा मंत्र इत्यादि घर्म कर्म से मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती । भेरे बंघो मन माता-पिता पत्नी-पुत्र के मायापाश का त्याग कर हरि चरणों को पकड़, और गोविंद के नाम का जप कर । कमल नयन का चिश्व से चिंतन करो राम नाम न बोल कहां मर रहे हो । राम नाम के श्रामिय को छोड़ तुम श्रूकर की मांति विष्ठा अर्थात मोगों में लो हो। धन, जीवन, यौवन तथा पुत्र परिवार समी ताणा मंगुर हैं और यह सब मनित विरोधी माया के विष्य हैं। संतर कहते हैं कि हरि मिनत विना उदार पाना असंभव है। मेरे मन तुम राम को विषयों के मोह में पढ़ मूल गया है। राम चरणा का चिच से चिंतन करो- यही स्क मात्र साधान मोदा प्राप्त करने का है। उसी का जीवन सफल है जो नित्य राम नाम का जय करता है और जो कीट की मांति विषयों में लिप्त हैं, उसका जीवन किस काम का है। पापियों ने भी प्रमुकी सेवा कर शुभ गति लाम की। शंकर कहते हैं कि उस **हरि की मर्नेन्स म**ित क्यों न करें। राम नाम में ही निखिल पुण्य है, ऐसा निगम का मत

१- शंकर्षेव -- बरगीत = पृष्ठा ६

र- वही -- वही **६** पृष्ठ १०

३- वही --- ११ पु० ११

४- वही १२ पु०१२

है। वेदों , शास्त्रों में यह पढ़कर भी इसका मर्भ न जाना कि कलिसुग का परम धर्म हरि नाम है। कृष्ण किंकर कहते हैं कि यह देह दाण मंगुर है, तुम नर जन पुन: न पान्नो-े ग्रा: कमें के सब गर्व को छोड़ हरि के युगल बरणों का चित्र से चिंतन करों। पामर मन राम-बरणों में श्रमना मन लगाओं-- जीवन श्रस्थिर है, माध्यव के नाम राम का संबत ले संसार पार करों। रात दिन शायु पीण होती जा रही है और ग्रंत निकट शा रहा है कब मृत्यु होगी यह कोई नहीं जानता-- मानस पशु श्राशा के पाश में बार बार बंदी होता है। हरि मिनत के जिना कोई श्रन्य मन कारागार से मुक्ति नहीं दिला सकता है, ग्रत: रात दिन परम प्रमु राम की बेना करों। कृष्ण किंकर कहते हैं राम नाम परम धर्म भरने के उपरांत भी संग नहीं छोड़ता।

माध्यव देव कहते हैं रे मन अपनी मृत्यु निकट जान कर हिर के चरणों की सेवा करो-- देखों हिर के चरण के बतिरिक्त अन्य कोई मन से पार नहीं कर सकता है। चार केंद्र पुराण, मागवत गीता आदि समी कहते हैं कि हिर के बिना और कोई तारक नहीं है। सक सनातन, मुनि हुक, नारद, ब्रह्मा तथा महेश हिर के गुण का गान करते हैं। कृष्ण का नाम अमिय रस के सदृश है, इसका गान करने से मुक्ति मिलती है परम मंदमति, मूर्ल माझव दीन शंकर गुरु का उपदेश कह रहा है। माई। राम नाम का जप करों इस किलताल में और गित नहीं है। जिसके मुख से राम नाम का शब्द निक्तता है में उसके परी की घूलि अपने माथे पर लगाता हूं। राम चरणों की जो उपासना करता है, में उसके दास का दास हूं। माझव दास कहते हैं कि मन मलतों की चरणा रज स्पर्श कर। मेरे बंधा मन गोविंद का चिंतन कर -- हृदय फंज में राम गोसाइ निवास करें -- कोटि कत्यत है के तुत्य काम पूर्ण करने वाले प्रमु मेरे हृदय में वास करों-- माध्यव दीन कहते हैं कि राम किना और मेरा कोई बंधा नहीं है। में राम के पदीं की सेवा करता हूं अन्य

१- वहीं १३ पु०१३

२ वहीं । १६ ए० १८

३- माध्यवदेव - वर्गीत १

४- वही है ४ पुठ ३

५- वही ५.0

की पूजा नयों करं -- राम घट घट व्यापी है -- राम के अतिरिवत आत्मा नहीं है -- नैतन्य को छोड़ कर जड़ की सेवा क्यों करूं -- राम विना और देव नहीं है। सब लोग सुन लो राम के बिना मुक्ति न होगी । मेरे मन इदय से परम धन हरि पद पंकल का चिंतन कर - दुल मंजन भव की नाव, परम चिंतामिण हरि केचरण हैं, हरि चरणों की शरण ही मतिहीन की एक मात्र गति है। जिसकी सेवा देवता और महेश करते रहते हैं -- देखों वह देवताओं का स्वामी है । हमारे मन राम चरणाँ में लग--यह संपूर्ण संसार मायामय है जिस प्रकार बादलों से उत्पन्न विजली थोड़े समय बमक फिर लुप्त हो जाती है, इसी प्रकार धन, जन, जीवन, जाया बादि दिणय के घंघों हैं। हरि पद पंत्रज मव मंजक हैं -- इनका स्मरण चित्र से हैं करों । मेरे पामर मन हरि पड मेरा परम घन है, उसे कैसे मूल गया -- हरि पद मजल जनों का मनौरंपन करने वाला निज का धन है और मन मंजक है। गोप नंदन केउम्य पदों की वंदना देवतागण करते है। धन, जीयन, संसार असार है केवल नारायण की सत्य है। भेरे मन मनतों के संग हरि गुण का गान कर हरि का नाम पतित पादन है, उसे तत दिन अविराम सेता रह-- हरि गुण का अमिय मार कर मनता का मनोर्थ पूर्ण करता है सकत निगर्नों ने विचार कर कका कि हरि के विना यन्य सिद्धि नहीं है । भाई हरि चरण तार घन का व्यवसाय करना । भी चतुर नर मुख में राम नाम की रखते हैं वे मुख की रख, मव क नदी पार वर जाते हैं राम नाम ले अन्य आशा को दूर करी -- राम नाम रत्न से अपनी नाव को परिपृश्ति कर दो-- मक्तों का महाजन राम नाम है। है। माधव

१ - माधावदैव वर्गीत ६

२ - वही ६

३ - वही १०

४२ वही १५

प् - वही १ = पु० १३

दास दीन मित हीन कहते हैं कि राम धन के बिना अन्य धन्य किसी काम के नहीं
नारायण तुम्हारे चरणों की सेवा करता हूं, तुम्हारे अतिरिक्त मेरा को ह सुहुद नहीं
है, मुक्त पर दया करों । निगम निगृद सार तेरा नाम मेरे मुंह में रहे -- मिकत विंदु आनंद
का दान करों -- मैंने आशा का परित्याग कर दिया है -- तुम्हारे पैरों का स्पर्ध कर
केवल तुम्हारी शरण मांगता हूं । रे मन राम चरण धन की सेवा कर-- वेदों का
वचन है, राम नाम के बिना मव पार नहीं हो सकता-- यह मानवी शरीर नष्ट हो
जायगी, हिर के चरण पकड़ उनकी शरण में जाओं । माध्य दास मुरुख मित कहते हैं
गोविंद के दो चरण ही गित हैं।

सूर की कहते हैं -- अनेक जप-तप करने और करोड़ों तीथों में स्नान करने से वह सुत नहीं प्राप्त होता है जो गोपाल का स्मरण करने से मिलता है। जिसके हुन्य में नंद-नंदन का नास हो जाता है वह देने पर भी चर्तु - पदार्थ नहीं तेता । प्रमु अत्यन्त कृपालु हैं, वे शरणागत की रक्ता करते हैं -- हरि की समा में छोटे बड़े का मेद नहीं है-- वहां सभी बैठ सकते हैं --।

सूरवास करते हैं किलेसे पारस के स्पर्श से लोहे का खोटा पन चला जाता है, वेसे
राम नाम लेने से विकार दूर होते हैं । प्रमु तुम्हारी वाणी पर और विश्वास करना
ही सच्चा है । तुम विश्वम्मर हो, जो चिंता करता है वह कच्चा मकत है । जन गजराज
को ग्राह ने पकड़ा, उसे अधिक दुस हुआ, नाम लेते ही हिर गरु हु लोड़ कर उसकी सहायता
के लिए दौड़े और उसे हुड़ाया । जब दु:शासन ने द्रोपदी की चीर पकड़ी, तब तुमने उसके
वस्त्र को बढ़ा दिया । सब लोग हिर का स्मरण करोहिर का स्मरण करने से ही समस्त
सुस प्राप्त होते हैं । शुति-स्मृति को देस कर कह रहा हूं कि हिर के समान दूसरा कोई
नहीं है । जो कुछ होना है हिर के स्मरण से ही होगा, हिर चरणों को चिन्न में छिपा

१ - माधवदेव वर्गीत २० पृ० १४-१५

२ - वहीं २६ पु० २४

३ - वही ४७ पु०३७

४ - सुक्सा० - पद- १६ पृ० २०

ध - वहीं - पद-१५ // //

६ - सूर्वित पर पद ३३ पृत ४४

कर रही । यदि कोई करोड़ों उपाय भी करे तो भी हरि के त्मरण के विनामुक्ति नहीं होती । हरि सकु-मित्र का निवार नहीं करते, जो उनका त्मरण करताहै, उसी की गति होती है । सब तोग हरि का त्मरण करो । सूरदास जी कहते हैं -- सो बात की स्क बात यही है कि दिन-रात हरि का स्मरण करो । रै मन हरि का बार बार स्मरण कर । यह विश्वास कर तो कि प्रमु नाम के समान कोई सात्त्विक यज्ञ नहीं है । हिरण्यकश्यिमु ने हरि नाम को मुला दिया, वह शीष्ट्र ही मक्त हो गया । जिस प्रमु ने प्रहलाद के लिए असुर को मारा उससे वह सदा हरता रहा । गजराज नी घराज, गणिका और व्याय के का गल गर । रे मन राम नाम के स्मरण विना तूने जन्म व्यर्थ सो दिया । तूने अत्म सांसारिक सुस के लिथे अपना अन्त क्यों विगाड़ा १ साधु संग्रीर मितत के बिना जीवन नष्ट हो रहा है । जुबाड़ी की मांति तुम्हें भी हाथ फटक कर चल देना है । स्त्री प्रमु शरिर और मक्न जो तुम्हें सुस देते हैं, शाद की अवधि आ गई हमने देश सुद्ध मी नहीं है । सब बांडो को कोड़ राम नाम मज लो ।

तुलगी दास करते हैं 'अरे पगले ! राम जप, राम जप, राम जप । देव, इस मयानक संगार ऊरपी लमुद्र से पार जाने के लिए, जन्म मरण से छूटने के लिए, एक राम नाम ही नीका है, इसी के सखारे पर तू मोदा पा सकता है अन्यथा नहीं । इसी एक साधान के वल भरीसे पर इदि-सिक्कियों को साधा ले, क्यों कि फिर दूसरा जाधान नहीं है ।

१- सूर्व विव पर-- पद- १४७ पृत १४७

२ - वही - पद- १० - पु० ११०

३ - वही - पद- १३० पु० १३२

है जीम ! तू बदा राम-नाम रटा कर और राम-राभ जपा कर । हे मन तू मी राम नाम मैं नित्य नवीन प्रेम रूपी मेच के लिए जैसे बने-तैसे पमी हा जन जा । है मन ! यदि तुम मेरे कहने पर स्वमाव से ही श्रीराम नाम से प्रेम करेगा तो तेरा सब प्रकार से

१ - वि० प० पद - वैदे पृ० १४५

२ - वहीं पद- ४६ पु० १०२

३ - वहीं पद- ६७ पु० १४६

४ - वहीं पद- ६५ पु० १४३

मला होगा । राम-नाम के प्रमाव से कलिकाल अपनी सेना समेत हरकर ऐसे माग जायगा जैसे आग के आगे से जूड़ी बुसार । राम नाम के प्रमाव से वैराग्य, योग, जप, तप आदि बाप ही जाग्रत हो उठेंगे । राम-नाम कल्प वृदा है, इससे हे तुलसीदास ! उससे तू जो जो मांगेगा, वह वह पायेगा । राम-नाम मूले कंगालों का माता पिता है और जिनका कहीं ठौर जिनका नहीं, उनका सहारा है । राम-नाम के समान पतितों का उदार करने वाला और दूसरा नहीं है, तुलसी के समान उत्तर उसे समरण करने से उपजाऊन मूमि हो गया ।

दीनता वर्णन : शी राम मैं पापी, पामर हूं, मुक्ते तुम्हारा च्यान नहीं शाता है, मैंने चिंतामणि को कांच समफ दिया है। िन भर विषयों में लिप्त रहता हूं रात सोकर व्यतीत करता हूं--मन निरंतर धन से विमो हित है ऐसा लगता है हमने ग्रल को अमृत समभा पी लिया है। माधव हम पर्म मूर्ल हैं, भवित को नहीं जानते। विषय वासना के लोभ में में सब कुछ मूल गया धन, जीवन, यौवन तथा सुहुद अस्थिर हैं। का मिनी के मुख के अरुण अधरों पर मेरा मन श्रासक्रत है उससे में विरक्त न हो सका और मनोर्थ बढ़ गया । केशव हमारे मोह पाश को तोड़ दो । गोविंद क्या गति की गोविंद कैसी मत दी, नाथ सारी श्रायु व्यथित होकर व्यतीत किया । यह संसार गहन बन के समान है, इसमें मोह का जाल है उसमें हम मृग की मांति फंस गये हैं, मायापाश में हम उत्का गये हैं और काल रूपी व्याध दौड़ रहा है, काम, क्रोध रूपी कुरे ब दौड़ कर ला रहे हैं में अनेत हो गया हूं, सोचते सोचते जीव दग्ध हो गया, लोभ और मोह रूपी बाष हमें कभी नहीं होड़ते -- सदाशिव रद्या करी । मेरा शरीर मव मय के ताय से तप्त हैं, हम तुम्हारे चरणों की बाशा में हैं -- मेरी पामर लुव्धमति कामिनी और क्नक के श्राकणिंग में मूली हुई है । रूप, रस, स्पर्श, शब्द, गंधा से मेरा मन श्राकुल है, तुम्हारी भिवत कभी न की - यौवन, घन तथा जीवन चा णिक हैं तथा पि विर्वित नहीं होती । काम, क्रीय मद मत्सर से मति सनी हुई है।

दुल सागर में दूवा हुआ किस प्रकार हरि के चरणों को पाऊंगा। इस संसार के गहन कन में जीव मृग के समान है और काल व्याध केसमान है, इम पशु माया जाल में वंदी हो चुके हैं, मागने का कोई मार्ग इन्हीं दिलाई देता है -- काम क्रीध रूपी कुला इमें काट रहा है, विष्यों के विष्य से यह जीव आकुल है। रूप रस के पंच वाण से इमारा इन्द्रय फट चुका है। मेरा चंचल मन स्थिर नहीं होता, गोविंद तुम्हारी सेवा कैसे करें १ मेरा जिन विष्यों पर लुव्ध है वे कमल के पत्तों के उत्पर के जल के समान अस्थिर हैं। यह पामर मित तुम्हारे चरणों के प्रति अनुराग न कर रूप, रस, स्पर्श, शब्द की और दौढ़ती है। इस मब संसार में निमण्जित हो मैंने क्या किया १ अमय चरण की सेवा मुक्त पापी ने न की - शब से सहश शरीर को अपना समका -- हरि जुम आत्मा हो यह मैंने न जाना। मैं बड़ा अज्ञानी हूं, तुम्हें तज धन का ध्यान विधा - में बड़ा पापी हूं मुक्त अधम की गति मरने पर कथा होगी १ मैंने अपना विनाश किया।

सूरवास करते हैं -- त्रिमुवनपति, मेरे स्वामी यदि आप मेरी अध्यमता को देखें, तब तो कुछ नहीं कहा जा सकता । हरि, जब से जन्म हुआ और मृत्यु काल के पूर्व तक पाप करने से संतोषा न हुआ, आज तक मन कामनाओं में मग्न है, उससे विर्वित नहीं उत्पन्न हुई । परम कुबुिद्ध ज्ञान से अनिभिज्ञ हूं-- हृदय में जड़ता का निवास है । गोपाल में अब बहुत नाव कुका । काम, क्रोध्न का चीला पहन कर विष्यय की माला गले में डाल कर, महामोह रूपी नूपुर बजाता हुआ जिनसे निंदा का रस मय शब्द निकलता है । भ्रम से भ्रमित मन पत्नावज बना है और वह असंगत चाल चलता है । अनेक प्रकार के ताल दे तृष्णा हृदय के भीतर नाद कर रही है । माया का फेटा बांध्न कर माल पर लोम का तिलक लगा लिया है । इसी प्रकार में अनेक जन्मों में पागल बनारहा हूं । हिर के चरण कमलों का त्थाग करके विमुख रहा मन में संतोषा नहीं आया, जब जब जल या पृथ्वी पर मेरा जन्म हुआ तब तब

१ - माध वदेव - बर्गीत दश

२ - वहीं

^{3 -} বহী ৩০

४ - बुद्धावि०प० - पद- २२१७ पु० २२२

५ - सू० वि० प० - पद - २०० पु० १६६

मुफे शरीर धारण करना पड़ा। काम क्रोध मद लोम तथा मोह के वश हो मैंने बनेक महापाप किए । अनेक दिन हरि स्मरण के बिना सो दिया मेरी जीम का रस परनिंदा ही था इसी में कितने जन्म नष्ट हो गए। शरीर को तेल से मदीन किया और मल मल कर स्वच्छ किया । तिलक लगा कर स्वामी बन कर चले किन्तू विषयी होगों की पीछे पड़े रहे। वली काल से समस्त जग कांप्सा है , ब्रह्मा भी रीते हैं । सूरदास कहते हैं --मैरे जैसे अध्यम व्यक्ति की कौन गति होगी जो सदैव उदर भरकर सो रहता है । संसार की उलकारों में पड़े पड़े ही जीवन समाप्त हो गया। विवेक हीन होने के कारण राज-काज क्त और धन के बंधन में फंसा रहा माया की कठिन गांठ तोड़ने से भी नहीं टूटती न तो हरि की मक्ति की न सज्जनों का संग किया -- बीच में बटका रह गया । मिथ्या सुखों के लिए मैंने जीवन गंवा दिया । हिर् से प्रीति न कर के स्वप्नवत सुल में मूला रहा । कमी जानंद पूर्वक पुत्र को गोद में लेकर लेलाता रहा कभी सभा में बेटकर मुंखों पर ताव दिया सिर पर हैढ़ी पगड़ी लगा कर कुमार्ग की और दौड़ता रहा । माधव जी !! में पतित शिरोमणि 🧃 हूं। में किसी योग्य नहीं, हूं, मेरे रोम रोम में सेकड़ों पाप हैं । हे स्वामी मेरे समान और कोई पतित नहीं है। मैंने बहुत प्रयास किया किन्तु अवगुणक मुमासे नहीं बूटते । जैसे बंदर घुंघु चियाँ को स्कन्न करके रखता है किन्तु उनसे उसे कोई लाभ नहीं मिलताहै वैसे में अनेक जन्मों से भटकता आ एका हूं। कनक और का मिनी के रस से मो दित उसी के प्रति श्राधिक श्रासकत हो रहा हूं है। जैसे महली चारे के लोभ से उलकती है वैसे में जीम के स्वाद के लिए उलका रहा, मृत्यु का फंदा नहीं दिलाई दिया । हिर मेरे समान कोई पतित नहीं शिवर्र्ड शिष्ठ है । मैंने मन, वाणी और कर्म से जो पाप किए हैं उनका कोई परिमाण नहीं है। यमराज के चित्रगुप्त भी मेरे पार्पों को न लिल सके,

१ - ब्रुव्वि प० - पव- २८ पु० ४०

२ - वहीं पद - ६० पृ० ६६

३ - वही पद - १४ पु० १००

४ - वहीं पद - १०२ पु० १०६

५ - वही पद - २०७ पु० २००

६ - वही - पद - १६४ पृ० १८८

हार मान कर कागज़ फैंक दिया । मेरे अपराष्ट्रा और अध्यमता को सुनकर कोई मेरे निकट नहीं आता । जन्म तो स्से ही बीत गया । जैसे कंगाल को कोई वस्तु मिल जाय, उसी प्रकार लोम ने सरीद लिया है । बहुत जन्मों तक मल के पीछे लो रहने वाला शूकर और श्वान होता रहा । मेरी मेरी करके इस बार भी वही बीज बौता रहा । अब में माया के हाथ बिक गया हूं, रस्सी में बंधो पशु के समान परवश हो गया हूं, तीपति का मजन नहीं किया । हिंसा, गर्व मनता के रस में भूला हुआ आशा से लिपटा हुआ हूं । अपने ऋगन के तिमिर में अपना परम निवास मूल गया ।

शरे मन ! तूने कभी विशाम न माना । शात्मानंद में मूलकर दिन-रात चलकर लगाया करता है शौर हिन्द्र्यों की ही लींच तान में लगा रहता है । यद्यपि विष्यों के साथ तूने बढ़े बड़े दु:ल मोगे हैं,किन जाल में फंसा रहा है,फिर भी शरे मूर्ल ! तू उसे नहीं तजता। जान लेने पर भी कुछ नहीं जानता सो- रहता है । शनेक जन्मों से तू शनेक प्रकार वेकमें करता बला शा रहा है,उन्हीं के कीच में लिप्त हो गया है सो है चिए । यदि तुभे प्रकल होना है,तो विवेक प्राप्त कर क्यों कि बिना विवेक रूपी जल के तू निर्मल नहीं हो सकता, यह वेद शौर पुराणों ने कहा है । तुलसीदास कहते हैं कि उस तालाव से कब प्यास कुफ सकती है, जिसके खोदने में ही सारा जीवन बीत गया । है हिर मेरा भन हठ नहीं खोड़ना । नाथ । यशिप दिन रात जनेक प्रकार का उसे उपदेश करता हूं पर वह अपने स्वमाव का ही करताह, अपना स्वभाव नहीं छोड़ता । जैसे युक्ती प्रसव पीड़ा का अनुभव पुत्र बन्स के समय करती है और उस समय उसे असह्य कष्ट होता है पर वह मूर्ल सारे विगत दुलों को पूलकर फिर प्रसन्न विद्य से दुष्ट पति के समीप जाती है, उससे संमोग करती है । तुलसीदास जी कहते हैं कि मैं अनेक प्रकार के प्रयत्न कर कर हार गया हूं । हाय दिन रात नाकते सामते ही मरा, बार बार जना और वार वार मरा । हे हिर ! जब से शाप ने

१ - पूर्वि पर - २०० पृर २०१

२ - वहीं पद - म्प् पु० ६३

३ - वही पत - ५५ पु० ६६

४ - विक पक पद क दद पुक १७०

५ - वही पद- म्ह पु०१ ४

जीव नाम रखा, तभी से यह कभी शांत नहीं हुआ। नाना प्रकार के उच्छा हूमी वस्त्र तथ्योम बादि बलंगार धारण कर जड़ और देतन्य एवं पृथ्वी, पाताल और बाकाश में देसा कीन सा स्वांग बवा, जो न किया हो। देवता, देत्थ मुनि, सर्प, मनुष्य बादि ऐसा कोई भी न रहा, जिससे मैंने कुछ न कुछ मांगा न हो, पर इनमें से किसी ने भी भैरा यह दारुण दु:ख दूर न किया कव नेत्र पांव, हाथ और बुद्धि तथा कत सभी थक गये हैं, सबने मुक्त कोला छोड़ दिया है। अब हे रखनाथ जी संसार के मय से हरा हुआ बाप की शरण में बाया छूं। हे नाथ जिन गुणों पर किन कर बाय प्रसन्न होते हैं, वह सब में मूल गया हूं। हे प्रमो अब तो बाप तुलसीदास को अपने द्वार पर खड़े रहने दें। हे माध्यव जी मेरे समान कोई भी मूर्स नहीं है यथि मछली और परंगे मूर्स कहे जाते हैं किन्तु वे मेरी बराबरी नहीं कर सकते हैं। परंग ने सुन्दर हरप देवकर दीपक को बरिन नहीं अमकता और मछली ने बाहार के वश हो लोहे का कांटा नहीं जाना, दोनों ही बिना जाने जले और फंसे, किन्तु में कहट देख- देखर भी विषय का संग नहीं छोड़ता छूं। बतस्व में उन दोनों से अधिक काानी शूं हूं।

हस्टेव की महता : माध्यवदेव कहते हैं ठाकुरि हरि द्या करों, अश्रम तुम्हारा लेकर कुता रहा है, नारायण कृपा करों, जिससे हमारा बंबत मन तुम्हारे बरणों में लगा रहे। स्क विश्र अजामित मंदमति पाप शीत था जिसने पुत्र माव से तुम्हारा स्मरण किया-कम वंश्रम नाश कर उसे केबुंठ में स्थान मिला यह सम्पूर्ण संसार में विदित है उससे भी करोड़ गुना अश्रम पापमति निदारुण में हूं जिसने तुम्हारे नाम की शाशा की है। में परम पतित हूं, तुमपतित पायन हो यह जान तुम्हारा मरोसा करता हूं। राम तेरे बरणों के प्रति अनुराग तथा तुम्हारी मिलत की यावना करता हूं, तुम्हारी निर्मत मिलत और नाम गुण के बिना और कोई उद्धार नहीं सकता -- हम पतित हैं तुम पालक हो। इस बार गोसांड न क्यूंगा। मुके अपने दास के दास का अनुवर बना दो। माध्यव कहते हैं मुके और काम नहीं चाहिए। नारायण करुणा के सागर प्रमु मुक्त पर इस बार

१ - वि० प०- पद- ६१ पु० १७३

२ - वही पद- ६२ पु० १७५

३ - भार वर प्र

४- वही ४०

करुणा करो, तुम्हारे अभय चरणों की जाशा में में हूं। सतत कुनार, नारद, शंकर आदि भानंद से तुम्हारे चरणों की सेवा करते हैं - उन्हीं को देल में भी तुम्हारे चरणों की सेवा की आशा करता हूं। तुम सत्यव्रत हो अपने क्यन को सत्य करो । प्रमु मुफे अपने दास के दास का किंकर समफारे। तुम्हारी अना दि अविधा के अंधकार में मैं अंधा हो गया। भ्र इस बार मुके अपना दास बना लो । माधव देव कहते हैं गोपाल कृपाल राम, करुणा सागर स्वामी हम तुम्हारे पद मकर्द विंदु की बाशा करते हैं -- भव ताप से मेरा मंद तप्त है, तुम्हारे शीतल पदा रविंद की याचना करता हूं, प्रमु जन्म जन्मान्तर मेरी यही आशा है। इन तीन मुननों के तुम्हीं बड़े ठाकूर हो- मेरा मन और किसी को नहीं जानता । मेरी काया संसार में चारों और फिर्ती है, इसका अंत नहीं होता है । नारायण इस बार थोड़ी करनणा करके मुके तार दो- में सब पापियों में महा अध्यस पापी हूं। माधव कहते हैं कि प्रमु तुम पतित पावन हो ,तुम्हारा ही मरोसा मुफे हैं। करुणा नाथ मुक्त अध्यम पर करुणा करो सहस्त्र बदन मिन्न मिन्न मुलौं से तुम्हारा गुण गान करतेहैं, तथापि तुम्हारे नाम ,गुण, यश तथा महिमा को न जान सके । महामुनि बृह्मा , शंकर जिसकी माया से मोहित होते हैं, चार वेदों ने विचार कर जिसका अंत न पाया- सनक सनातन योगी जन जिसकी महिमा नहीं जानते । माध्य कहते हैं कि हम मूसे हरि की कैसे जानेंगे । हे जगन्नाथ मुक्ते क्यों नहीं देखते ही में पापियों में सबसे बढ़ा पापी हूं -- तुम्हारे चरणा को न पकड़ संसार कूप में पड़ गया हूं। कितनी तपत्या के बाद नर तन मिला, उसे भी विषयों में लगा दिया, जिस प्रकार अमृत्य रत्न चिंतामणि कांच के मृत्य पर किक गया । तुम्हारी अमृतमयी मिनत को तज विषय गरल पान किया-लीम, मोइ, काम, को ब, मद मान बेरी साथ में हैं। अपनी इच्छा से पापाचरण विधा।

³⁵ OF OTH - 9

२ - वहीं ३६

३- वही ३५

४- वही ३४

पर नारी, पर थन के लोभ से सदैव बाकुल रहा तुम महाधन हो तुम्हारी सेवा न कर मैंने जीवन निष्फल िया। यम की यातना को सुन कर हमारा हुन्य कंप रहा है। तुम्हारे अभय चरणाँ की शर्ण के अतिरिक्त अन्य गति नहीं है। मूर्ल माधव तुम्हें द्यामय जान क कह रहा है । रे हरि । मैं पापी कैसे पार हुंगा यदि तुम करुण न करोंगे -- पाप मति वासना नहीं होड़ता - मैं घोर संसार में निमाज्जित हूं। नयन कामिनी के रूप का मोह नहीं हो हो , रसना घटरस का त्थाग नहीं करती है-- अवण मध्रा गीत ध्वनि के प्रति श्रासवत हैं -- त्ववा कोमल स्पर्श की कामना करती है--शीतल सुगंध का मोह ना सिका को है--मन स्त्री तथा धन का परित्याग नहीं करता है लोग,मोह,काम क्रोध, मद मान साथ नहीं हो हो-- इच्या, असुया, हिंसा, पेशून्य एक तिल केलिये भी नहीं कूटता । काल क्रपी अनगर आगे बढ़ शरीर को भीरे भीरे निगल रहा है। प्रमु मैं अनेत हो गया हूं। हरि का नाम निगमों का सार है जिसका स्मरण कर अन्त्यज जाति के लोग भी भव नदी पार कर जाते हैं। पापी अजामिल हरि का नाम सुमिर कर्म के बंधन को तोड़ वेबुंठवासी हुआ। यह जान कर मनुष्यों हिर नाम का विश्वास करो-- सकत वेदों का तत्व मूर्व माधावदास कहता है। शंकरदेव कहते हैं धारण मेरा ठाकुर वही है, जो नाम लेते ही छ्रप आध्रक्षा कर प्रकट होता है, हम उसी के दास हैं। पंक्ति शास्त्र मात्र पढ़ते हैं, उसका सार मनत ग्रहण करते हैं। कमल के अंतर से जल बूटता है, उस मध् को मध्यकर पीता है-- जो मनित करता है, वही मुनित का अधिकारी है इस तत्व्भेनत जानता है। जिस प्रकार विणक चिंतामिण के गुण की व्याख्या करता है, उसी प्रकार भिवत का मूल्य भवत ही जानते हैं। पंडित वही है जो हिर गुण का गान करता है । हरि तुम्हारे पांव पड़कर प्रार्थना करता हूं कि प्रमु मेरी रता करो-विषय विषय ने मुके फड़ लिया है,यह जीवन थोड़ा ही शेषा है यह संसार, थन,

१ - मा० व० २१

२ - वही १६

३ - वही ११

४ - शंनार्देव - बरगीत १०

जीवन, अस्थिर है - पुत्र परिवार सभी असार हैं किसका मरोसा करूं-- जैसे कमल के दल पर जल स्थिर नहीं--रहता, ठीक उसी मांति हमारा विच मी वंबल है। विषय मोगों में वास्तविक सुल नहीं है। शंकर कहते हैं हुणीकेश इस दुल सागर से हमें पार करो। नारायण की लीला कौन जानेगा-- सनक सनातन ब्रह्मा चिंतित हो श्रधिक विमोहित हो उठते हैं, जिसके रोमरोम में कोटि कोटि ग्रंड हैं, जिसने शूकर जवतार से पृथ्वी का भार हरण किया था । नृसिंह रूप में प्रकट हुआ था । सुत, विच, शरीर जो दिलाई देते हैं वे माया के घंघों हैं। हम जितने जीव है सब तुम्हारे ग्रंश हैं। शैंकर कहते हैं प्रमु मैं तुम्हारे पद के अतिरिक्त और कुछ नहीं मांगता हूं। नारायण तुम्हारी मिनत कैसे करूं-माध्यन- मेरा पामर मन पाप का त्याग नहीं कर रहा है-- मनक्तन जितने जीव, जंगम कीट, पतंग, अग, नग तथा जगत तेरे शरीर के अंग मात्र हैं-- सब मर कर उसी उदर में पढ़ते हैं जीव क्या नहीं करता , ईश्वर द्वप में हरि घट घट में स्थित है जैसे जाकाश सर्वत्र व्याप्त है। इस पापी निंदा, पिशुन तथा इस्ता ही करते रहते हैं। करुणानाथ शंकर केऊ पर कृपा करो, जिससे में राम शब्द का बोलना न छोडूं ! तुम्हारा नाम सवअपराध्नों के पाप से मुक्त करता है यह जान तुम्हारी शरण लेता हूं। नारायण के चरणों की पुकार कर रहा हूं विषय के विलास के के फंदे में फंसा, डाकू इन्द्रियां मुके तूट रही हैं। ना सिका गंध के लिये, जीम मध्रुर रस के लिये, कान विविधा प्रकार की ध्वनि के लिये दौड़ते हैं। श्रांस रुप का दरीन,त्यवा कोमल स्परी चाहती हैं। काम,कीघ,मद,मान तथा मोह जैसे विशाल वैरी मेरे पी है हैं। शंकर कृहते हैं तुम्हारे विना हमारा अन्य रताक नहीं हैं।

सूरदास जी कहते हैं -- मेरे प्रमु किसी के कुल का नहीं विचार करते हैं। अविगत क कीगति नहीं कही जा सकती है वे व्याध्य और अजामिल का भी उद्धार करते हैं उन्होंने जाति पांति के मेद भाव को भुला कर विदुर कैंबर में जाकर मोजन किया। मेरे स्वाभी

१ - शंकरदेव - बरगीत १७

२ - वही ७

३ - वही ४

४ - वही ५

का यही स्वमाव है कि मनत वत्सल होने की अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करते हैं। उनके अतिरिका मनत की लज्जा दूसरा कौन बचा सकता है। वेद और पुराण सान्ती हैं कि प्रभु जाति-पांति एवं कुल की महता नहीं मानते हैं। संसार जनता है कि प्रभु ने अपने अनेक मनतों को स्वयं अपनी भुजाओं को शमित करके सुती किया है। ऐसा कौन है जिसका उदार प्रभु की शरण तेने से न हुआ हो । सूरदास कहते हैं -- यदुनाथ ने जन हित के लिए क्या क्रमा नहीं किया । पहले दयारत होकर जो वचन दिये थे, उसके वश होकर गोकुल में गाये नरायीं। नरकेशरी का सप प्रश्न थारण दैत्यराज का हुदय फाइकर मार डाला, अदिति के पुत्रों के हित के लिए पराकृमी राजा बलि से तीन पग पृथ्वी मांगी । इसी फ्रार गर्नेड्रोबार लीला हुई। इस फ्रार की अनेक अंतर कथाएं हैं , जिनका स्तुति गान होता है । स्थाम तुम्हारे गुणाँ का कहां तक वर्णन करंद्र । कुळ्या विदुर, दीन दिवज सुदामा,तथा गणिका के कार्य तुमने संवारे। जिस पर प्रमु कृपा करते हैं वह कभी भी संसार सागर में नहीं गिरता, उसकी अभय दुदुं मि बजा करती है। स्थाम ने सुदामा को की निधि दी और युद्ध में गरजते हुए अर्जुन विजयी हुए विभी जाण लंका के राजा हुए और ध्रुव त्राकाश में विराजने लो । कंस-केसी जादि दुष्टों का वधा करके मधुरा की बराजकता समाप्त कर दी उग्रसेन के सिर पर पुन घारण कराया, रात्त स दशों दिशाओं में भाग गर नीर हरण के समय द्रोपदी की लाज बनाई और श्रंटो जृतराष्ट्र के पुत्र को लज्जित होना पड़ा । मेरे स्वामी केवल महान मिलत से उच्च नीच सभी को श्रेष्ठ कर देते हैं । हे यदुनाथ श्राप का सबसे बड़ा प्रमुत्व यह है कि श्राप का नाम प्रत्येक दिन प्रत्येक मकत के कमीं को उन कर्मों की वासना के साथ हरण कर लिया करता है । अपने अद्भुत यश का विस्तार करने के लिए हरि का मुफ्त जैसे सेवकों पर बहुत प्रेम है, क्यों कि कोई भी उन्हें मकत पावन

१ - सूर्विवप्य- पद- १३ पुर २७

२ - वही - पद- १६ पृ० २६

३ - वहीं - पद-७ पृ०२०

४ - वहीं - पद- २८ पु० ३८

५ - वरी - पद- ३६ पृ० ४८

६ - वहीं - पद- १५४ पु० १५२

नहीं कहता, सभी पतित पावन कहते हैं। सूरदास कहते हैं -- है प्रमु जिनके वश में अनेक देवगण त्राज्ञाकारी सेवक बन कर रहते हैं, वे भी तुम्हारी कृपा चाहते हैं। त्राप के मय से वायु बल्ता है, चंद्र और सूर्य घूमते हैं तथा शेषा नाग तक अपना शिर नहीं हिलाते, त्राण्य अपनी उष्णाता त्याग नहीं कर सकती है, सागर अपना जल नहीं बढ़ाता। आप अनादि तथा और हैं -- अनंत गुणों से पूर्ण पर्मानंद स्वस्त्र में ।

तुलसीदास कहते हैं दीनों पर दया करने वाला और उन्हें दान देने वाला दूसरा को र्ड नहीं है । मैं जिसे अपनी दीनावस्था सुनाता हूं,उसी कौदीन देखता हूं । देवता, मतुष्य, मुनि, दैत्य, सर्प आदि बहुत से साइब हैं जब तक आपने अपनी दृष्टि टेढ़ी नहीं की। मृत,वर्तमान और मविष्यत् तथा त्राकाश,पाताल, श्रीर मूलोक सर्वत्र यह बात प्रकट है श्रीर चारौँ वेद भी कह रहे हैं कि जादि, अंत और मध्य में हे राम जापकी ही एक रस प्रभुता है। श्राप से मांगकर कोई फिर मिलमंगा नहीं रहा। श्राप का ऐसा उदार स्वभाव और शील सुनकर यह दास बाप से मांगने के लिए बाया है। बाप गरीबनिवाज हैं, में आपका गुलाम है । हे रघुनाध जी । श्राय दीनों के सहायक श्रानंद के समुद्र, कृपा के सागर शौर करुणा के घारण करनेवाले हैं। हे नाथ ! सुनिए मेरा मन संसार के तीनों तापों से जल रहा है ,इसी से वह पागलों की तरह बकता फिरता है । तुलसीयास का संसाररूपी रोग राम के चरणाँ के प्रेम के बिना दूर नहीं हो सकता । चारौँ वेद कहते हैं कि श्राप नीचाँ का उदार करने वाले, दीनों के स्तिषी और जिन्हें कोई शरण न दे उन्हें भी शरण देने वाले हैं तो क्या में नीच, भयभीत दीन नहीं हूं क्या वैदाँ ने भूठ कहा है। पत्ती, गणिका, हाथी बहे लिया बादि इनसब की पंक्ति में बैठने योग्य हूं। ज्ञाप मक्कर से ब्रह्मा और ब्रह्मा से मक्कर बना सकते हैं, ऐसा आपका प्रताप है । मगवान अपने सेवक पर इस प्रकार प्रेम करते हैं। अपनी महिमा मूलकर वह मकत के अधीन हो जाते हैं, उनकी सदा से यही रिति चली जाती है। जिसने देवता देत्य , सर्प और मनुष्यों को कर्मरू-पारस्थी से बांध रता है उसी को उसी अलंड परमात्मा को यशोदा जी ने बलपूर्वक बांध लिया और उस बंधम को आप सोल भी न सके। जिसकी माथा के अधीन होकर ब्रह्मा

१ - सुव विवयं - पद- २६६ पृव २६०

२ - वहीं - पद- २३२ पु० २३२

३ - वहीं - पद- 6% पु० १६०

४ - वहीं - पद- ६८१ पृ० १६३

५ - वहीं - पद- १६ पूर्व १७०१

भीर शिव तक ने नाच नाच कर पार नहीं पाया, उसी को गोपियों ने करताल बजा बजा कर नाच नवाया। जिसका नाम स्मरण से संसार के जन्म मरण रूपी मार से पिंड छूट जाता है, वही कृपा सिंध्यु अम्बरी जा मजत के लिए दस बार इस मूमंडल पर अवतीण हुआ। वहे बहे ज्ञानी मुनि जिसे योग, विराग, ध्यान, जप और तप करके सोजते फिरते रहते हैं उसी नाध ने बंदर री छ आदि नीच पशुओं से प्रेम दिया। दीनों पर कृपा करना ही रामचंद्र का बाना है, उसे वेद पुराणा, शिव, शुकदेव आदि सभी गाते हैं और उनके नाम का प्रभाव तो प्रत्यवा ही है। ध्रुव, प्रह्लाद, विभी जाणा, सुगीव, यमलार्जुन, ज्यायु, पांचों पांडव और सुदामा, इन सबको भगवान ने इस लोक में सत्की ति और परलोक में मोदा दी है, पिंडला, गुह, निजाद से बुरा कौन है। प्रमु नाम लेते ही प्रसन्न हो जाते हिंगीर सबको पवित्र कर देते हैं। यह उनकी सहज प्रकृति है।

उदार की प्रार्थना: शारंग पाणि मुक्त पामर मिल का उद्धार करो-- तुम्हारे बरणों के बिना मुक्ते नरक देवना होगा जरा मृत्यु मेरे अत्यंत निकट है, किसी समय शरीर पह सकता है। पाप करते करते सारी आयु समाप्त हो गई, किन्तु तुम्हारे बरणा को न मज सका-- आधि व्याधि के आघात से प्रतिदिन शरीर प्राणा होता जा रहा है। शंकर हाथ फैला कर कहते हैं प्रमु अंतकाल मेरी गिल तुम्हारे हाथ है। राम गोसाई तुम्हारे बरणों को पुकार रहा हूं मेरे हुक्य में बरणा पंकज स्थित रहे। में तुम्हारे बरणा मध्यु का पान कर मिलत करना बाहता हूं। भाध्यब देव कहते हैं हिर रे बाप मेरे पतित पावन प्रमु मेरी क्या गिल हो गई है -- दुलम मारत वर्षों में नर तन पाध्यर भी तुम्हारा नाम न ले सका। कितने स्थावर, कंगम, कीट, पतंग, पश्च आदि जन्मे, उनकी गणना नहीं की जा सकती है। तुम्हारी महिमा को न जान बौरासी यो नियों में जन्म ले मटकता रहा -- तुम्हारी क्या से हस मानवी शरीर का उद्धार हो सकता है। मेरी बुद्धि नष्ट हो गई है, मैंने विषय की लालवा के कारण हाथ की नव निध्न को लो दिया। मोह के कारण ही

१ - स्विविष्य - पद- हम् पुर १म२

२ - वहीं - पन- ६६ पु० १ प्य

३ - वही - पद- १०७ पू० १६५

४ - शं० ब० - पृ० ७

५ - माञ्च बदेव वर्गीत ३

मैंने तुम्हारा विरोध किया, इससे मुफे अधिक कष्ट हुआ- तुम्हारा नाम मुख से ले मनतां की सेवा न की । प्रमु कृपामय मुफ पर कृपा करो-- में तुम्कारे दास का दास हूं भेरा नाश न करना । माधव कहते हैं गोपाल तुमने मुफे कैसी मति दी कि मैं तुम्हारे चरणों की सेवा नहीं करता इं। पुराण श्रादि समस्त ग्रंथ तुम्हारी महिमा का गान करते हैं, यह जान कर भी मैं पामर मति तुम्हारी सेवा नहीं करता हूं। श्राज इस माव सागर में नाव फंसी हुई है और यह पाप के मार बो फिल है। मुफ पापी ने विषा को अमृत समभा कर पान किया । तुम प्रियतम मेरे पर्मात्मा हो , सृहुद , श्रीर निज देव हो । तुम्हारे अमय चरणाँ की शरण भैंने ली है माध्य नास कहते हैं में तु-हारे दास का दास हूं। प्रमु में तेरे दास का दास हूं-- मुरारी करुणा करो इस भन सागर से पार करने वाला तुम्हारा चरण है। हम पामर मति पाप की श्रोर दोड़ते हैं,तुम्हारी मनित नहीं जानता हूं,माथव तुम पतित पावन हो । प्रभु तुम मन्त वत्सल हों ,रेसा वेद वहते हैं। माध्यव वहते हैं प्रमु तुम्हारे बिना मेरी शन्य गति नहीं है। हरि हे बाप मुके देतों में तुम्हारे शरणागत हूं -- बंध्यु जीवन मरण में न होड़ता--सनक, सनंद शादि योगी जिसका ध्यान करते हैं-- सहस्त्र मुख भी जिसका ऋंत नहीं पाते हैं, फिर अश्रम तुम्हारी महिमा कैसे जानेगा -- विषयों के प्रति शातुर ही अत्थन्त व्याकुल हं -- चरण कमल मेरा उदार करी । कृपा के सागर एक बार कृपा करो--नारायण नेरे मोड पास को तोड़ नेरी मुक्ति करों माध बदेव कहते हैं गोविंद तुम मेरे साहब हो, में तुम्हारा अनुवर हूं विनती कर में तुम्हारे बरण लगता हूं, तुम्हारी सेवा के बति रिवत बन्ध काम नहीं मांगता हूं। मेरा जन्म जहां मी हो में तुम्हारा मन्त रहुंगा । मतिशीन माधावदास कहते हैं कि तुम्हारे विना नेशी और गति नहीं है ।

सूरवास जी कहते हैं -- प्रमु अब की बार नेता उद्धार करी । हे कृपा सिंध्यु मुरारि मैं भवसागर की मैं हुवा हूं। माथा का जल सत्थन्त गंभीर है और लोम लहररूदी तर्गें

१ - माथाबदेव - बर्गीत २२

२ - वहीं - २६

३ - वहीं - ३७

४ - वहीं - ४१

u - वही - 88

उठती हैं -- काम मुक्ते अगाध्य जल की और लिए जा रहा है। इंद्रियरूपी मछली मेरे शरीर को काट रही है, सिर पर पाप की गठरी है। मोह रूपी सिवार के कारण पर इथर उथर ठीक से नहीं रखा जा सकता है। क्रोध्न, दंग, गर्व और तृष्णा-- रूपी पवन भाकिकोर रहा है। पुत्र और पत्नी प्रभुनाम की और नहीं देखने देतीं। है करुणा-मय ! मैं मध्य समुद्र में थक कर विङ्वल हो गया हूं, मेरे हाथों को पकड़ कर ब्रज के तट पर निकाल ली जिस् । हे दीनानाथ । अब की जाप की बारी है । जाप पतिलों के उदारक हैं,यह समफ कर श्राप मेरी विगड़ी को सुध्यार ली जिए । वचपन, मैंने लेल कर गंवा दिया शौर युवावस्था विषय- सुत में व्यतीत कर दिया वृद होने पर सुफे ज्ञान हुआ है, इससे दुखित छोकर पुकारता हूं। मेरे पुत्र और स्त्री ने मुक्ते छोड़ दिया यहां तक कि शरीर त्वना भी पृथक हो गई है। करुणा सागर प्रमु मेरा उदार करने मैं तुम्हीं समर्थ हो । सुरदास जी कहते हैं -- कब मला मैं किसके द्वार जाऊं १ तुम जगत के पालक परम चतुर चिंतामणि हो,तुम्हारा नाम दीनबंधा है मैंने सुना है माथा ही कपट का जुना है और लोम, मोह, और मद मारी दोषा कौरव है। मेरी बृद्धि रूपी स्त्री परवश :प्रोपदी: पर्वश है, यह हार गई है, इसकी पुकार सुने । क्रोध रूपी दु:शासन कम्बास्त्रपी वस्त्र पकड़े है, नेश वशा अंधो भूतराष्ट्र की मांति हो गई है। प्रमु मुक्ते हिर की दासी समभा कर देवता, मनुष्य तथा मुनि मेरे निषध नहीं बाते । श्राप ही उद्धार करें । प्रमु में बहुत देर से सहा हूं। तुमने बन्य पतितां को जैसे उदार किया है, उन्हों में मेरा नाम लिस कर मुके बाहर निकाल ली । अनेक युगों से घापना सुथश नला जाया है, इसी से पुकार कर कह रहा हूं। पांच पतितों के बीच में सम्जा से मरा जाता हूं कि में अब किससे कम पतित हूं। है स्वामी यदि मेरा उदार न कर सकते हों तो पराज्य मान कर बैठ जाओं । सूरदास कहते हैं -- प्रभ मेरे जैसे परित का बचार की जिस । में कामी कृपण , कुटिल अपराधी और पाप के मारी मार से पूर्ण हूं। तीनों अवस्थाओं में मक्ति न की, कज्जल से मी अधिक काला

१ - सूर्विष्प - पद- १५८ पृ० १४५

२ - वहीं -पद - १७२ पुर र्देह

३- वहीं - पन- २३४ पु० २२७

४ - वहीं - पद- १ वर्ष पु० १ वर

हूं। अब तुम्हारी शरण आया हूं जैसे भी हो मेरा उद्वार करों। मेरे समान कुटिल, दुष्ट और कामी कौन है १ हे करुणामय आप से क्या िया है ? आप तो सब के ऋंग्यामी हैं। में ऐसा कृतव्न हूं कि जिसने शरीर दिया, उसको मुला दिया ग्राम के शूकर की मांति उदर पूर्ति के लिए विष्या की और दोड़ता रहा। सत्संग को सुन कर जी में आलस्य होता है विषयी लोगों के साथ विशाम प्राप्त होता है। शी हिर के चरणां को छोड़ कर हिर विमुख लोगों की सेवा करता हूं। में तो परम पापी, अथम अपराधी और पतितों में प्रसिद्ध हूं। शीपति स्वामी आप पतितों का उद्वार करते हैं।

तुलसीदास जी कहते हैं है नाथ ! यदि कहीं आप इस दास वैदो जो मन में लायेंगे, उन पर घ्यान देंगे, तो में पुष्यरूपी नल से पाप रूपी बढ़े बढ़े वन समूह कैसे काट सकूंगा । मैंने जितने पाप, अर्थ, कर्म, वचन और मन से किये हैं, उनकी प्रशंसा मला कौन कर सकता है ? स्क-स्क दाण के किये हुए पापों का लेता लगाने में अनेक शेषा सरस्वती शौर वेद थक जायेंगे। डां, श्राप के मन में श्रपने नाम की महिमा और उद्वार करने की गुणावर्ता का प्रुष्ट प्रण जा जाय तो जाप यमदूतों के दांत तो कुकर मुके संसार सागर से पार कर की । हे हरि । जाप दु: लों के हरने वाले हैं। हे मुरारे फिर जाप मुफ पर द्या क्यों नहीं करते १ जाप संसार के तीनों ताप, क्लान, शोक, जनश्चय और भय के नाशकर्ता हैं। कितकाल से उत्यन्न पापों से मेरी बुद्धि मंद्र पढ़ गई है और मन पापी हो गया है, तिस पर है नाथ श्राप रता। नहीं करते । इस जीव का निवाह कैसे होगा । क्या यह जान कर मुक्त पर कृपा नहीं करते कि मैं अभागा हूं। मैं अपने मन में यह समके बैठा हूं कि शापने समान कृपा करने वाला दूसरा देवता नहीं है। हे नाथ जिस साधान से श्राप प्रसन्म होते हैं वह साधन इस तुलसीदास के पास नहीं है । वे वे हे माध्यय । अब किस कारण से कृपा नहीं करते १ तुम्लारी प्रतिज्ञा तो मक्ताँ पर कृपा करने की है और मेरा मी प्रण है कि तुम्हारे चरणार्विंदों को देल देख कर ही जीवन व्यतीत ककं। जब तक में दीन और तुम दयालु में सेका और तुम स्वामी नहीं हुए तब तक मैंने जो जो कष्ट मोगे

१ - सूर् वि०प० - पद - २०५ पूर् १६६

र- वही - **पद -** १६५ पृ० १८६

३ - वहीं - पद - ६६ पृ०१००

४ - वही ० - पद - १०६ पृ० १६७

वह मैंने तुमसे नहीं कहै, यथि तुम जानते सब थे क्यों कितुकुदारा नाम ही अंत्यामी है। तुम पित्र हो और में पापी हूं। तुम मेरे माता, पिता, गुरू, माई, मित्र, स्वामी और सब प्रकार से हिते की हो। अतस्व कुछ रेसा उपाय बता दो, जिससे अब मैं अविधारु पी अंटोरे कुछ में निगर । है कमलोत्र तुम्हारी करू जा का कोई पार नहीं है। वह संसार के बढ़े मारी मय से छुड़ा देने वाली है। है रघुनाथ मुक्ते कुछ रेसा समक पढ़ता है कि है द्यालु है भवत हितकारी बिना तुम्हारी कृषा के न तो मोह ही दूर 4 होता है और न माया ही, यह प्रवृत्व सिद्धांत है। कोई वावय ज्ञान में कितना ही कुशल वर्धों न हो पर वह संसार सागर पार नहीं कर सकता है। घर में रात के समय दीपक की बातें करने से कहीं अंटोरा दूर होता है। है नाथ किसके आगे हाथ फेलाऊं १ रेसा कौन है जो मेरी याचना को सदा के लिए दूर कर देगा १ अब तुलसीदास मिलारी की इच्छा जानकर उसे मी निहाल कर दे। हे जी रामचंद्र तू चंद्रमा है मुक्ते बकोर बना है।

बंदना : यदुक्तुल कमल प्रकाशक कंस के प्राणा नाशक तुम्हारी जय हो, मुक्तिदाता जगनायक शारंगधारी, दुष्टों का विनाश करने वाले, जय हो— गोबद्धेन घारण करके इन्द्र के मद को चूर्ण कर दिया— श्रिश्वन को कंपित करने वाले कालि सर्प का दर्प नष्ट कर दिया। नंद नंदन की वंदना समस्त देव करते हैं। गोकुल के लोगों के शत्रु कुबल्ध आदि की हत्या कर तुमने इन लोगों की रत्ता की, पूतनिका का स्तन पान कर तुमने उसका प्राणा शोषणा कर लिया, व्रज वासियों को संतोषा हुआ। कृष्ण का गुण नाम ही समस्त दुर्लों को दूर कर सकता है। इस संसार में मुरारी के वरणों के अतिरिक्त और कुछ भी चिंतनीय नहीं है। ब्रह्मा, महेश्वर आदि जिसके वाकर हैं और उनका नाम सदेव लेते हैं। बंध्यु काधव मुक्ति की साधना करी, उनके वरणों का ध्यान करी। वही ईश्वर संसार का कर्ता, विधाता और विनाशक है, उसी की सेवा करी। दीन द्यानिधि मुक्ति पद दाता,

१ - सूर्वाविवयं - पद - ११३ पृत २०२

२ - वहीं - पन - १२३ पृ० २१६

३ - वहीं - पद - प० प०१६१

४ - शेकरवेब- बंकीय नाट पुष्ठ २-३

यादव जलनिधि जाधव धता, जय हो, जगजनजीवन मजन जनादैन, मनुजदमन दुसहारी, महदानंद्र, कंद पर्मानंद्र, नंदनंदन बनचारी, विविध विहार के विशार्द्र, शरद की चंद्रमा के भांति प्रका शित, केशी विनासन, पीत वसन श्रविनाशी हैं और जो मुक्तों के अंतपाप की दूर करते हैं-- कैशन के सरोहर चरणों की शंकर अभिलाणा करते हैं । यादन देन की जय घो जिसका त्रादि त्रन्त कोई नहीं जानता, जिसके कमलवत चरणाँ की सेवा ब्रह्मा, महेश्वर सदैव करते हैं -- जिसने नृसिंह सूप घारण कर हिरण्यकस्थप का हुद्य विदिर्ण कर मूमि के भार का घरण किया--संसार की रचना कर वह अनेक लीलायें करला है , जो पद नल-स्पर्श के प्रहार से ब्रष्ट्मांड को भेद सकता है, कलिमल को दूर करने वाला उसका यह चरित्र है-- जिसके पद-पंत्रज की रज स्पर्श कर गंगा मनुष्य तथा देव को पवित्र करती हैं अय, वक, धोनुक को मार कंस तथा केशी का अंत कर, मधु, नरक का निवारण कर, कुवल्य के जीवन का छरण कर, इंद्र के दर्प की चूर्ण कर ब्रज्वासियों का जीवन सुकी किया । रास में गोपियाँ के साथ हास परिरंभन द्वारा उनके मनोरथ को पूर्ण किया। यमुना हुद से कालि को निकाल कर उसका मदीन किया- सुट्या का काम मनोरथ पूर्ण किया । उसका गुण नाम संसार के पातकों को नष्ट करता है, जो इसे अविराम मजता है उसने पाप समाप्त हो जाते हैं। माध्य वदेव कहते हैं हरि में तुम्हारी भवित किस प्रभार क कें में मूद्रमति दुवासना द्वारा बंदी किया गया हूं,तरने का उपाय नहीं जानता, तुम्हारी माया ने मन को मो क्ति किया है और ऋतान अंध्यकार में मुके पार नहीं दिलाई देता है तुम्हारे नाम का दीय जलाकर तुम्हारी शरण में हूं-- प्रभु मुक्त से दुर्मित चीनमति और कोई नहीं है,में वंदना, स्तुति तथा सेवा नहीं जानता - प्रभु तुम कृपा रस के सागर हो मुके अपने चरणाँ की क्या दो - करुणा सिन्धू, नारायण हरि तुन्हारी मैरी गति हो । तुम्हारा गुण नाम ही मनतों का परम घन है। पतित पावन प्रमु तुम मुक्त जैसे पतित का परित्याग नहीं कर सकते । दया के सागर राम कृष्ण नारायण मुक्त पर दया नयों नहीं करते - दांत से तृणा दवाकर और मस्तक पर तृणा रख कर कहता षुं प्रभु मुफ्त पर क्या करी । परम पतित बत्यन्त बातुर हो,नारायण तुम्हें पुकार रहा है,तुम्बारे गुणा नाम अमृत की आशा से वह तुम्हारे चरणों के लिये विक गया है, तुम्हां चरण पकड़ कर यदुपति विनती करता हूं कि प्रमु मुकेन न कोड़ना । कृपा सागर कृष्ण

तुम्हारी ज्य हो, जिसकी सेवा ब्रह्मा और खिन करते हैं, महा विश्व द्रोही भी जिसका नाम सेने से तर जाता है उसी कृष्ण को प्रणाम करता हूं, जिसके यायीन गुण, भाया क्म है, जो स्म कटा ता से सृष्टि की रचना पालनक तथा संहार करता है -- वह महेश्वर कृष्ण नित्य निरंजन है, उसके अरुणा बरणा को सदैव नमस्कार करता हूं । प्रवर्षक नारायण तुम मेरी चिष्यवृत्ति हो - मैं सेवल हूं और तूम मेरे स्वाभी हो, मगवंत कृपा कर मुके अपने चरणों की हाया दो और माया को दूर करो - तुम मेरे अंतरयांनी हो,में तुम्बारा सेक हुआ ,यह जानकर हुणी केश मुक्त पर कृपा करी । प्रमु कृपा कर मुक्ते मिकत रस का सार प्रवान करोरतुम मक्तों के कल्पतरु हो- प्रमु तुम मेरे मीतर-बाहर के गुरु हो , मुफे ऐसी मति दो जिससे मेरा प्रेम तुम्हारे नाम के प्रति शिधक हो । कृपासागर वंध्यु कृष्ण मुक्ते कृपा दृष्टि से देखें- वासना लिप्त को शर्णा दें जिससे उसका अहंकार दूर हो । में दैक्की के पुत्र कृष्ण को नमस्कार करता हूं - में परम बनाथ तुम्हारे चरणां को प्रणाम कर मितत का प्रसाद मांगता हूं। ब्रह्मा, महेरवर तथा इन्द्र जिसके शरण में जाते हैं, उसी करुणा सिंधु के बर्ण के अतिरिक्त मेरी अन्य गति नहीं है, प्राण यदुमति माया के निग्रह में परम श्रातुर हुआ हूं। श्रनाथ के नाथ हरि तुम्हारे किना मेरी और कोई गति नहीं है। हे प्रभु मगवंत इस लंसार में जितने पापी हैं, में उनकी सीमा हूं प्रभु मुक्ते अपने चरणाँ में स्थान देना । नंद नंदन बाल गौपाल परमानंद की जय हो जिसके पद कमल की ध्रासि की बंदना सन्पूर्ण संसार करता है, जिसके रोम रोम में अणु परमाणु-. शों की मांति को टि को टि शंड हैं -- नंदनंदन कितने नाम धारण कर लीला करते हैं इसे कौन जानता है, संसार के जनों के तारने के निमित्त की दीनदयाल अवतार लेते हैं --परम मूर्व माध्य दीन कहता है कि मेरी गति नंद कुमार है । बनमाली गोपाल जिसके हाथ में शंब, बड़, गदा, फेल है, वह पीतांबर भारी, स्यामसुन्दर हिर मनत बनों के भय को वूर करता है-- पत्मानंद्रपरम पुरुषोत्तम्रपरम करुणा सिंध्यु गोपाल, क्यलाकांत क्यल दल लोचन मनत जारें का बात्मीय बंध्यु है । मूर्लमति माध्यव दीन जगदानंद, जगत-जन जीवन, यदुकूल कुमुदिनी के इंदु गौपाल की प्रेम मन्ति का एक विंदु मांगता है । बाल गौपाल गोविंद का चिंतन करी, जो रत्न की स्थ्या पर सोता है और जिसके नेत्र विशाल है, जिसके

१ - माधावदेव- माधावदेवर वाक्यामृत पृ० ४२

२ - वही पु० ४

३ - माधाबदेव - वर्गीत पृ० ३६

४ - वही - पुष्ठ ३६

दोनों हाथों में कमल है और जिसा मुत विशाल पंकज के तुत्य है। मुनि गण अमृत का त्याग कर किस प्रकार तुम्हारे पद पंकज का रस पान करते हैं। आप की बास लीता अभिय रस सागर है, माधव प्रमाण सहित के कहते हैं। राम, राघव, एसुकुल पंकज, दिनकर, राम मुरारि क्य हो - जिसके पदकमलों की सकल मुतन अधिकारी सुरासुर मी लिए करते हैं -- बालि की हत्या कर, सुग्रीव का पालन कर सागर में सेतु बांध्या- जग जन के मंगल निभित्त रावण का नाश किया -- जानकी, तक्ष्मण, सुग्रीव विभी- घणा तथा मारु ति सहित रावण का नाश किया -- जानकी, तक्ष्मण, सुग्रीव विभी- घणा तथा मारु ति सहित पुष्पक विभान पर अयोध्या आए। प्रदूषा, इंद्र, शिव, गंधा के कि-नरों ने एसुनंदन की जय जगनार की

सूरदास कचते हैं - हिर के चरण-कमल की वंदना करता हूं जिसकी हुपा द्वारा भें। गिरि पर बढ़ सकता है, बंधों को सब कुछ विखाई दे सकता है, बहरा सुन सकता है शौर गूंगे बोल सकते हैं और रंक सिर पर इत्र घारण कर व चल सकता है । सूरदास करुणानय स्वामी के उन्हीं चरणाँ की बार वार वंदना करते हैं । प्रभु कृष्ण भनाध के नाथ हैं। है जारंगभर नाथ गरुड़ पर बलने वाले, संपूर्ण पापों के नासक हरि मुक्त पर भूपा गरी । मैं संसार जलिय में पड़ा हुआ, मोगों को बास्ता हूं, किन्तु आप मेरे इन दोशों की बीर ध्याननदें। नंदनंदन धुनी, सूरदास बिनती कर रहा है -- ब्राप से क्या स्मन्द कक्षे भाप तो कंत्यामा है । सूरवास जी कहते हैं -- हे जिलेंगि प्राणाप्रिय कमल-पल-लोचन श्याम में शाप के चरण कुमलों की वंदना करता हूं। जो पद-कमल शिव के परम जन हैं, जिन्हें लक्ष्मी अपने हुस्य, क्ष्मी दूर नहीं करतीं, पिता के क्रीधा से कच्छ सहते हुए भी प्रहलाद जिन पादपद्भों को भन वचन कर्म से सम्हाल एका जिन पाद-कमलों के स्मरी से सुरवारि का जल पावन हुआ, जिसका दशन करने से भारी पाप भी नष्ट हो जाते हैं। आप के वही चरण-कमल हमारे तीनों तापों और दुलों को हरण करने जाले हैं। प्रमानंद दास कहते हैं -- मैं कादी श के उन चर्ण- कमलों की वंदना करता हूं जो गोधन के लंग दौड़ते थे, जिन पदों की धूल को गो पियों ने घृदय से लगाया, जिन नरणाँ को शिव भीर ब्रङ्गा ने हुदय में रसा है है

१ - माध्यवदेव - वरगीत पृ० ११=

२ - वहीं - 90 १२४

३ - युवसाव - पन १ - पूर १५

४ - सूर्वित पर - पद - र्दंग्र पुर रप्ट

थ - यु० सा० - पत - १७ पु० २१

वंदना : तुल्ही दाश की कहते हैं में वरुणात्य रहुनाथ की वंदना करता हूं कि जिससे मेरी रंसारी बुद्धि का नाश हो जाय । राम रहुकुत रूपी कुमुद पुत्रप दी चंद्रमा के समान प्रकृति कर विवास हैं, उनके नरणों की सेवा ब्रह्मा और जिल भी विधा करते हैं । वह असे मनतों के हृदयक्षत में प्रमार की मांति निवास करते हैं । वह अहे प्रनंह कान रूपी कंप्रकार के नाश करने के लिए दूर्य रूप और अविधा रूपी वन मत्म करने को अग्निरूप हैं । की रामचंद्र की की जय हो । जो शुद्ध सचास्वरूप, वेतन्य, व्यापक, अधाति कंप्रयमि जानंदरवारूप ब्रह्म हैं वही मूर्तिमान होकर नर्रतीला करने के लिए वव्यक्त से व्यक्त कथाति वाकार रूप में प्रकट हुए हैं । जिल्ही का धनुषा तो दूक्षर अभिमानी राजाओं जा गर्व क्षे कर दिया और विकास परशुराम का उन्तत महतक नत कर जिया, उन की रामचंद्र की की जय हो । में करुणा के स्थान ध्यानाविध्यत और ज्ञान के कारण की नमरकार करता हूं । वे समस्त संसार के हित वरनेवाले, दयानु हृदय वाले तप:शील, और मक्तों पर अनुगृह करने जाते हैं । शीरामचंद्र रंसार के दारुण मय को दूर करने वाले हैं, जनका वींदर्य काणित कामदेवों के तमान है, शरीर नवीन मेथ जैसा सुन्दर है देशे पुष्पश्लोक जानकी रमण की स्थान कामदेवों के तमान है, शरीर नवीन मेथ जैसा सुन्दर है देशे पुष्पश्लोक जानकी रमण की सुनाथ की भी में नमरकार करता हूं ।

१ - ार्विक पर्क - पद - ६४ पृक्ष १४१

२ - वहीं - पद - ४३ पु० ६६

३ - वहीं - पर - ६० पु० १३३

४ - वहीं - मन - ४५ पु० १०१

बाल लीला

प्रभात जागरण : है वत्स गोपाल उठो उठो, कमलनयन प्रभात हो गया 'यह बार बार कह यशोदा कृष्ण को जगा रही हैं मेरे सुन्दर मुख प्राणधन निद्रा त्याग करो, बापु गोविंद तुम पुरुषा शिरोमणि हो-- अपना पुत्र जान गोपी यशोदा ने अपने जाती से लगा गोद में बांधा लिया-- उनके मुख को बार बार चूम कर ऋत्यन्त मण्न हुई, सिद्ध मुनि गण जिस हरि का चिन्तन नहीं कर पाते हैं वही यशोदा के गोद में है -- मूर्स माधव करते हैं कि वह मनित इवारा मिला । चंद्रमुखी वत्स उठी सश उठी यशोदा यह बार बार बील पर कृष्ण को जगा रही हैं -- मलय पवन भीरे भीरे वह रहा है, को फिल ने पुलिस रव त्याग दिया, रिव के स्पर्श से तिमिर का नाश हो गया । मेरे ठाकूर उठो, गोप वालगें के साथ दिघा, दुग्या, मृत, व्यंकन तथा भात, शिंगा, वेत, वेणू हाथ में लेकर गोष्ठ की भोर बलो । यशोदा के ज्ञव्द सुन हुकी केश गोप बालकों के लाध गोष्ठ में गये। क्मलापति प्रभात में नित्र नित्रा का त्याग करो गोविंद उठो , हम तुम्हारा चंद्र मुख देखें-रिव की किरणों इवारा श्रंभकार नच्छ हुआ और दिशायें धवल वर्ण की हो गई/ विकासित सतमत्रों पर भ्रमर उड़ रहे हैं, ब्रजबध्यू एं तुम्हारा गुणा गान गा दिना मंधन कर रहा है। दाम, बुदाम तुम्हारा नाम लेकर बुला रहे हैं देली वलराम उटकर आ गया, नंद गोष्ठ गर भीर न्वाले दूर पहुंच गये -- गोपाल उठी, सुरभी चर्ने लगी । प्रात: समय यशौदा जननी स्थाभ को जगाने के लिये उनका मुख चूम रही हैं, मेरे लाल मदन गोपाल उठो, गोप वाला तुम्हें बुलाने शाये हैं -- संचित नालन, रोटी तथा बनाने के लिये मुरली लेकर मुंदाबन थायो और का बिंदी के कूल पर गायों को चरायो, यानंद करो-- नंद नंदन घर छोड़ गोधन चराने बलो ।

पूरवास की यशोदा कृष्ण को जगाने के लिए बार बार कहती हैं जानंद निधि धारे नंद नंदन प्रात:काल हो गया है,गोपाल बाल जागो, तुम्हारे नयन कमल दल के समान विशाल हैं,ये प्रेम रूपी वावली के इंस हैं,तुम्हारे मुल पर करोड़ों कामदेव उत्सर्ग कर दिये।

१ - मा अवदेव - गरगीत पु० १०६

२ - वडी - पुष्ठ ११६

३- वही - 90 १११

४ - संवित्व कु० व० - जेतीय गाट १ थ्व

देखों सूर्योदय हो रहा है, चंद्र की किरणें प्रकाशहीन हो गई तारों का तेज नक्ट हो गया, दीपक का प्रकाश मंद होने लगा,मानो ज्ञान के प्रकाशित होने से संसार के भोग विलास हूट गर श्रास मास रूपी श्रंधकारको संतोष रूपी सूर्यकी किरणों ने जला दिया। पितायों का समूह मध्रुर स्वर में बोल रहा है। मेरे लाल तुम मेरे जीवनधन हो, पितायों का गान ऐसा लगता है मानों वंदी जन बेद पाठ करते हाँ की टिमार ! तुम्हारी जय जय कार कर रहा है कमलों का समूह खिलने लगा है, चंचरीक कमलों को छोड़कर दूर चले गए, मानो वे वैराण्य प्राप्त कर समस्त शीक और घर का त्याग कर तुम्हारा गुणा गान करते हों। मां के इन रस मय शब्दों को सुनते ही अतिसय दयाल प्रभु जग गर। जागी, जागी गोपाल लाल, मेरे परम प्रिय पुत्र प्रात: काल बत्थन्त पवित्र छोता है , इतनी देर तक नहीं सोना चाहिए। ग्वासे प्रत्येक दाण त्रात्रा कर तुम्हारे मुख को देख लीट जाते हैं, जैसे श्रविकसित कमल को का को देख भी रों की पंक्ति लौट जाती हो । तमाल के सदृश स्थाम वर्ण वाले मेरे पुत्र यदि तुम्हें मेरा विश्वास न हो तो तुम स्वयं ही निद्रा का त्याग कर अपने विशाल नेत्रों से देलों। जानंद विभोर हो माता यशोदा कहती हैं मेरे लाड्ले जागो, शुंवर कन्हाई उठो, तुम्हारे लिए मैं मालन, वृघ-दिघ और मिष्री लाई हूं ,उड़ी भीर पनवान मिठाई लाभी । तुम्हारे सता गण प्रात: से ही द्वार पर सड़े तुम्हें पुलार रहे हैं श्यामसुंदर सूर्योदय हो गया बन को चली । इन शब्दों को धुनकर यदुराम जाग गर मेरे लाड़िले भीर हुआ, जागी, हे यदुनाथ तुम्हारे सब सला इवार पर सद्दे वें उनके साथ सेती । मुके अपना मुख दिखला कर तीनों ताप का नाश करी । मेरे नेत्र तुम्हारे मुखद्भपी बंद्र के बकीर हैं इन्हें मध्युपान करात्री । तल इसते हुए हरि ने अपने मुल पर से वस्त्र इटा दिया और सेज से उठ गर i यशोदा के साथ केला : गोविंद यशोदा के साथ केल एवं हैं -- गुष्टि, स्थिति तय का बी ारण है कितनी सासा कोई नहीं जानता है,वही महेरवर गोप कुनार के रूप में

संसार के लिये विकार कर रक्षा है। जो कृपाम्य देवों का देव है, जिसकी सेवा इवारा

१ - कृ०बा०मा० १२६ पु० १२५

२ - वडीं - १२८ - पु० १२६

३ - वहीं - १३० - पु० १२७

४ - पद - १५२ पु० १४४

मुनित प्राप्त होती है, वही नाना रस में सेल रहा है। यशोदा ने कृष्ण को गोद में लिया और बार वार मुख मर चूमती हैं, हाथ मर प्रयोध र पकड़ कृष्ण ने प्रय पान किया, ज्यात के हिर यशोदा की गोद में कभी मुख देख इंस देते हैं। जिस देव की सेवा सनक, सनातन करते हैं वही यशोदा के गोद में शो मित हो रहा है। मनतों के परमधन जग जन जीवन कृष्ण यशोदा को देख इंस एंस पर धिस रहे हैं, कभी बैठ कर कभी यशोदा को देख कर हांफना आरंभ करते हैं, टूटे फूटे शक्दों में यशोदा को भाइ माइ कह कर बुलाते हैं, यशोदा को देख उनका मन शीतल होता है। सुंदरी यशोदा के स्तन पकड़ कृष्ण प्रयमान करते हैं। यशोदा इंस कर कृष्ण को चूमती हैं।

यशोदा के साथ केता : सूरदास ने कृष्ण यशोदा के केत का वर्णन विया है। यशोदा घर में मोजन बना रही हैं कृष्ण नंद मकन में केत रहे हैं और कितकारी मारते हुए बोल रहे हैं। इसी तमय यशोदा ने बुताया किमोहन दौड़ कर क्यों नहीं बाते हो। यह शब्द सुनते ही कृष्ण माता के निक्षट के गर । यशोदा ने उन्हें गोद में उठा तिथा बंबत से खूल पाँछने तथीं। माण्यवती यशोदा जी घन्य हैं, वे कृष्णा को केता रही हैं। छोटी छोटी मुजाओं को पकड़ कर खड़ा होना सिकाती हैं, वे तहकड़ा कर गिर जातेहें फिर सुटनों के बत बतने तगते हैं। पुन: मुजाओं को पकड़ कर दो एक पग बताती हैं। कृष्णा सुक हुमुक कर बते हैं , वे देहरी तक बतकर पुन: वहीं चते बाते हैं। वे देहती नांघ नहीं पाते हैं, बार बार गिर पछते हैं। करोड़ों ब्रह्मांड दाण मर में वे पार करते हैं और उन्हें समाप्त करने में विसंव नहीं लगाता है। उसे नंदरानी गोद में तेकर नाना प्रकार के तेत तेताती है। हिर अपने बांगन में कुछ गाकर नाच रहे हैं -- मुजा उठा कर कभी कभी कजरी-धौरी गायों को पुकारते हैं कभी बावा नंद को बुताते हैं, कभी घर में बले बाते हैं। अपने हाथ से मातन ते कुछ मुख में डातते हैं। कभी सी में दिलाई देने वाले अपने पुताबिक को नवनीत तिलाते हैं। यशोदा यह सीता देस कर अत्यन्त हिंतत होती है।

१ - माध्यवदेव - बर्गीत पृष् १३७

२ - वही - पृ०१४६

३ - वहीं - पुंठ ११५

४ - वहीं - पद - ५४ पु० ६६

प - वहीं - यह - प्र पृ० ७०

^{4 -} यू० सार पद - २१ पुर ३4

७ - वहीं - पद - २७ पुर ३७

रोदन: माभव के नेत्रों से श्रविरल श्रवारा वह रही है, उनकी कटि रस्सी से कस कर बांधी हुई है। लाल लाल बाल ं उनकी छोटी छथेली से ढंकी हैं, नवनीत चौर मंद मंद रोते हैं स्थाम के प्रत्येक क्रंग पर नवनीत के कण सुशी मित हो रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है जैसे गगन के मध्य तारे हाँ। योगी मक्ति इवारा जिसकी पद धू लि तक लाम नहीं कर सकते - उसी का शरीर मिनत के बल से बंधा हुआ है। माधवदास कहते हैं मां शुन इस पुत्र को तुमने कैसे पाया है। हे वत्स गोपाल तुम दुली न हो में तुम्बारी बलि जाती हूं। तुम्हारै दोनों अधर मणि के समान प्रज्वलित हैं, शेषा- दुल के कारण तुम्हारा मुल मलीन हो गया है। सभी दास- दासियां हाट-बाट चली गई -तुम्हारा चंद्र मुल आंसुओं से मलीन हो गया है -- तुम्हारे फिता नंदघीका घर पर नहीं हैं मैं यमुना में जल मरने गई थी । सब मक्सन पाले हुए बंदरों ने सा लिया इसके लिये तुम क्यों रोज करते हो । मेरे माणिक पुतली तुम्हारा शरीर घूल से सना हुआ है, रोते रोते गला बैठ गया है। मैं तुम्बें साने के लिये मलाई का लड्डू और मक्सन दूंगी। यह तुन कृष्ण ने रोना बन्द कर दिया । स्वयं की पात्र दुग्ध मालन ता कृष्ण मूमि पर लोट रहे हैं। यदुमिण हुम हुम कर रो रहे हैं कि किस्ते 4 हमारा नवनीत ला लिया। पात्र को इधार उधार फैक वह यह कहतर रो रहे हैं कि मैंने अभी इसमें दही रखा था, यहीं पर वंशी रही थी उसे किसनै लिया यह कह और गाली दे यदुराय रो रहे हैं।

तूरदास की गोफियां यशोदा से कहती हैं यशोदा श्याम तुम्हारा मुख देख कर हिनकी ले ले कर रो रहा है, उसके वंधन छोड़ दो । यथिम तुम्हारा पुत्र उधम करता है तो भी वह तुम्हारे गर्भ से उत्पन्न हुआ है -- क्या हुआ यदि घर के लड़के ने चौरी करके मालन ला लिया । मैंने कोरी मटकी मैं देव पूजन के लिए दही जनाया था इसने जूठा कर दिया पर क्या में कोबा करती हूं । सकी देलों कान्द हिनकी ले- लेकर रो रहा है । छोटे से मुख मैं मनलन लियटा है - उसे भी वह मय भीत हो आ सुंशों से घो रहा है ।

१ - मा अवदेव - वर्गीत पृ० १३७

२ - वधी - १३=

३ - वहीं - १४६

४ - बार मार - २२८ पुर २०२

मनलन के लिए मोहन करबल से बांधा गया है और वह व्रज के लोगों को देल रहा है। गो पियाँ को देल लम्जा से वह अपनी बाल किपाता है । सूरदास की कहते हैं कृष्ण बार बार नेत्रों में शांषु मर लेता है। यशोदा-बालक के मूल को देखों इस प्रकार बुद्धि सोकर अप्रे कृो वर्यों करती हो ? इसके पेट की दुसह दुस दायिनी रस्ती को सोल दो और हाथ का बैंत डाल दी । क्या होटे कन्ने पर इस फ्रार क्रोध किया जाता है । मालन लीला : नंदनंदन गोपियों के सम्मुल हाथ फैलाकर नवनीत मांग रहे हैं। गोपियों मुफे गासन दो यह कृष्ण बोल रहे हैं, जो हरि चार पदार्थों की प्रदान करता है वही हु मुरारि मारन मांग रहा है, जिस देव की सेवा शिव तथा बिरिंच करते हैं वही नवनीत मांगता कि रता है। जिन हाथों से अभय-दान करता है वही हाथ शाज गो पियों के निकट फैला हुआ है। मिलत के अधीन हो प्रमु नवनील मांग रहे हैं। बो मेरी मां यशोवा में त्राज मत्यन्त पूला हूं,जो मनसन तुमने दिया था वह रूखा था, इस लिये नहीं साया । शाज प्रभात से ही मैं सेल रहा हूं कुछ भी नहीं साया । मां तुमने मुके नहीं बुलाया में दाया से अत्यन्त व्याकुल हूं। कृष्ण के साली पेट को देलकर यशोज की यांतों से यांसू बड़ने लगा पूत पूत कड़, कंबल से स्थाम के शरीर की चूल पाँकी तथा गले लगा दूथा पिलाने लीं । गोपाल वृथ तथा नवनीत ता कर माग रहे हैं - यशोदा उनके पी हे उन्हें मारने के लिये दौड़ रही हैं। वेद शिरोमणि चराचर हिर को भारते के लिये नंद की घरती दौड़ रही है। मुरारि मय के मारे रो रहे हैं। यशोदा ने दोड़ाबर कृष्ण का हाथ फकड़ लिया । जिल्लानाम स्मरण करने से यम कंपता है वही प्रभु यशोदा के भय से कांप रहे हैं। घर ला गोपी ने अत्यन्त वे क्रोध से उन्हें बांधना आर्म किया, मास्न चीर को गासी दे यशोदा बांध रही हैं, पर रस्सी का हो जाती है इस पर गो पियां इंस रही हैं । गोविंद गो फियों के सम्मूल नाच एहे हैं, हाथ फैला कर मालन मांग रहे हैं, जो कर मनतों का मा दूर करता है, उसी हाथ को फैला मुरारि मालन मांग रहे हैं। गो पियां कहती हैं गोपाल तुम सुन्दर हंग से नृत्य करो, हम तुम्हें नवी नत्देंगे । मालन की बाशा से गोविंद नाच

१ - बाज्या० - २२६ पु० २०३

२ - वहीं - २३१ पुंठ २०५

३ - मा०व० - पु० ४४

४ - वहीं - पृ० प्रध

५ - वहीं - पूर १००-१०१

रहे हैं, गो पियां ताल दे रही हैं। जो हरि तीन मुबन का अधिकारी है वही गोकुल में मालन याचना करता है। कृष्ण यशोदा से हाथ फेला कर मालन मांग रहे हैं। मां तुमने पहले मालन देने को कहा था वह अब मुके दो, आज बिना नवनीत पाये तुम्हें न हों होंगा। मां का अंबल पकड़ कर नारायण कहते हैं भां आज तुम्हें न हों होंगा। असं ह्यंगवी हरि की पूजा के निमित्त जो मालन मां ने रखा था, उसे बाल कृष्ण को दिया। वरावर शुरु हरि ने प्रसन्न हो नवीन नवनीत लाया और पुन: नाचना प्रारंम किया।

भाज कहां जाओं ने पिथां ने कृष्ण से कहा, बनमाली उनकी मांत देवते मयभीत हो गये द्वार पर हाथ फैला कर गोपी सही होगई कि बाज मुरारि किस प्रकार मासन नुरायेंगे घर में चौर है, घर में चौर है, यह कह गोपियां विल्लाने लगीं और गांव की सब गोपियां वा गई। सब ने मिल कर हरि को चौर पत्रहा। गोपियां यशोदा से कहती हैं मेरी मां बाप दुल न करें हैं इनने बाप के पुत्र कानाइ को देशा है। कन्देया चौर चतुराली कर रहे थे, गोपियां ने उन्हें पत्रहा है गारा के लोग हरि की शाकी को मानते हैं उन्होंने बपने हाथ का नक्तीत गोपियों के मुल में लगा दिया और कहने लगे में कैसे चौर हूं, तुन्हों चौर हो तुन्हारा मुल इसका साचा है। गोपियां अत्यन्त लिकत हुई और निरुचर हो गई। यशोदा कृष्ण से कहती हैं कि तुमगोपियों के पारा में न जाना में कब तक तुन्हारा यह फगड़ा सुनुंगी कोई कहती है कि तुमने चौरीसे मासन सा लिया, कोई कहती है दिया हुए अवस्था में तुम कर दिया, कोई कहती है कि तुमने चौरीसे मासन सा लिया, कोई कहती है दिया हिए सम्बन्ध हो। करने जाते हो। जितनी इन्ह्या वेद भर कर साबी, दिरह के पुत्र की भारत है करने जाते हो। जितनी इन्ह्या हो पेट भर कर साबी, दिरह के पुत्र की भारत हुई से पीर्ट्गी।

पूरवास की यशोवा ने दही मधनर कृष्ण के छाथ पर नवनीत रस दिया । मोहन थोड़ा सा मक्तन अपने अवरों से स्गाते हैं, इसे देस यूशोवा माला अत्यन्त प्रमुदित हुई । स्वयं ही मालन रोटी सा पर उसकी प्रशंसा करते हैं । यशोवा किसी गोपी से कस्ती हैं ऐकी सबी आज प्रात: सम्ब्रा जब में दिखा मधने की आई और दही से भरे मटके को मणि मध

१ - मान्बन पुर १४३

२ - वहीं पु० १४७

३ - वडी पु० १३३

४ - वहीं पु० १४२

प - श्रंo नार रूप

लेंने के निकट रख मैंने मथनी की रस्ती फाड़ी । दिधा मंथन का शब्द सुनते ही स्थाम मेरे समीप इंसता हुआ चला आया । मालन के गोले के दो भाग कर के दोनों हाथों पर रख कर एक साथ दोनों हाथों से मुंह में डाल्ते हुए मुसकराता जाता था। यशोदा कहती हैं मेरे कुंवर वन्हाई में तुम पर बलि जाती हूं कुछ मधुर स्वर से गात्रों , प्रथने बावा नंद को अपना नृत्य विवाशों मेरे कंठ में अपनी मुजाएं डाल दो दूसरे जंतु की व्यान सुनगर ल्यों भयमीत होते हो ? तनिक नाच कर मेरी इच्छा पूरी कर दो । माखन चौरी : सूरदास के स्थाम उस ग्वालिन के घर में प्रवेश करते हैं जिसके द्वार पर कोई नहीं है हरि को बाता हुबा देस गोपा छिप गई । शून्य सदन में मथनी के निकट बैठ गई। मन्त्रन की मरी क्योरी देख वे मन्त्रन खाने लो श्रीर श्रपने प्रतिविंब को भी संगी समभा कर विलाने लगे । सबि । गोपाल को मनवन बाने दे, चुप रह, उसके मुल पर दरी लिपटने दे । इसकी मुजा पकड़ कर यशोदा के सम्मुख ले बलूंगी -- इसका चौगुना नवनीत यशौदा से मार्गुगी । क्या तुम सइसर सम्भती हो कि हरि कुछ भी नहीं जानते हैं २ वे कान देकर सुन रहे हैं । हरि सलाओं को शून्य घर के बाहर छोड़ कर मीतर गर, नवनीत पा कृष्ण ने अन्य सलाओं को जुलाया और हाथ मर मर मनलन उन्हें दिया। दिधा के बूर्वें इथार उथार हुक्य पर छिटक गई, जिसे देख के मन ही मन डरते थे । हिर शाज तुम कहां जाशोंगे। सदैव तुम मेरे ही के का दिन माखन नुरा कर खाते रहे हो ! शाज ब्रज सुन्दरी ने कृष्ण को द्वार पर रोक लिया । बताओ जाज दूध-वर्धा पी के कैसे मृगोगे ? गिरवार ने गंडूका से दिखा सुन्दरी के नयनों पर छिड़क विधा और माग गर । सूरवास की एक गौपी नै चौरी करते कन्हाई को पकड़ लिया । स्थाम वे तुमने रात-दिन मुक्ते बताया अब मेरे हाथ में बार हो । मेरा सारा मनसन बीर दही तुमने ला लिया उध्यम विथा । लाला अन तो तुम मेरे हाथ में पड़ गए हो में तुम्हें अन्ही तर्ह पहनानती हूं। दौनों हाथ फड़ कर उसने कहा भन कहां जाओं ने र में सारा मनसन

१ - बार्मार - पद १०७ पूर १०६

२ - वर्श - पन - १०६ पृ० ११०

३ - सु०सा० - पद - ४२ पु० ४१

४ - वहीं - ४४ पृ० ४१

५ - वहीं - ४६ पु० ४२

६ - वही - ४७ पृ० ४२

यशोदा की है मंगा हुंगी। तब स्थाम ने कहा 'तेरी शमध मैंने थोड़ा मी नवनीत नहीं खाया, मेरे सता तब सा गर। कृष्ण ने उसकी और देख विहंस दिया उसका क्रोध शांत हो गया। गोपी ने कृष्ण को हुदय से लगा लिया। माता यशोदा कहती हैं पुत्र गोरस के लिए दूरी केयहां क्यों जाते हो ? घर की सुरमी, कारी, खौरी का मासन क्यों नहीं खाते हो ? ये गोपियां प्रतिदिन उताहना देने के बहाने प्रतिदिन प्रात: उठकर बती शाती हैं। क्किट जातें बना कर वे बनहोने दोषा लगाती हैं — निपट निशंक गोपियां नंद के सम्मुख फगड़ा करती हैं जिसे सुन कर नंद अप्रयन्न होते हैं और कहते हैं कि तुम कृपण हो तुम्हारे घर पुत्र का पेट नहीं मरता है।

स्नान न करना : यशोदा के आगे कृष्ण कहते हैं आज में स्नान न करंगा । हमारा शरिर तृण से कट गया है, दिन मर नाय ढूंढ़ता फिरता रहा हूं - स्नान करने से पानी लगेगा तथा मेरा उर्दार जलने लगेगा । मां, में बिनती करता हूं कि आज बिना मोजन किये ही सो रहुंगा । पुत्र की बात सुन यशोधा के नेजों से आंधू फरने छते लगा । यशोदा ने कृष्ण से अनुरोधा किया, पुत्र दुवी न हो, में नवनीत लगा कर तुम्हें शिवल जल से स्नान कराजंगी, तुम्हारा शरीर ठंडा होगा जलेगा नहीं, स्नान करके अनुत अन्न साओ । सूरदास की यशोदा ने जब स्नान करने को कहा, तो स्थाम रोने लगे और मूमि पर बोटने लगे । तेल, और उबटन आगे रह कर लाल को पुक्तारने-दुलारने लगीं । भोडन में तुम पर बिल जाजंन, तुम स्नान न करो किन्तु व्यर्थ रोते क्यों हो १ उबटन तेलादि को हिपा कर पांछे रह दिया । अनेक प्रकार से यशोदा उन्हें सगरनाती हैं किन्तु वे नहीं मानते हैं । माता कहती हैं भोडन श्रम आओ सुन्हें स्नान कराजंन यमुना से जल लाकर उसे सुरन्त पात्र में भर कर बुत्हे पर बढ़ा हूं । केशर का उबटन तैयार सुन्हारे शरीर का मैल हुड़ा हूं । यशोदा खीफा कर कहती हैं कि इस नंबल को कियी मी प्रकार हाथ में नहीं फलड़ पाती हूं ।

बन में भोजन : प्रभात होते ही हुन्या ने बंशी बजा अपने ससाओं को बुता लिया और कहा माह्यों याज हम तोग थन में भोजन करेंगे । सता गण दिन अन्य तेकर बार । गांव गांव

१ - सुवसार -- पद ५० पुर ४२-४३

२ - वही -- ५७ पृ० ४४

३ - यही -- 90 40

४ - वहीं -- पद-२० पु० ३७

५ - सूर बार मार - ११० पुर ११२

से सहस्तों गायें चरने बाई कृष्ण ने असंस्थ बहुड़ों को अपने भाग में ले लिया । पीतांबर घारी कृष्ण के मुकुट में भयूर एंस लगा हुआ है और शिंग-केत उनके हाथ में है । इंस इंस गोपाल गोप बालकों के साथ वंशी बजाते हैं उनके रूप की तुलमा कोटि कामदेव से नहीं की जा सकती है । गोपाल के चारों और गोप वालक गण देखे बैठे हैं, जैसे कमल के चारों और पते हों -- उसके मध्य में नंद सुत दंकज केशर के समान सुशो मित हो रहे हैं । सुंधित चारु भीजन को विभिन्न आकार के पतों के ऊपर रखा है । दिखा दुग्य नवनीत आदि प्रेम पूर्वक खा रहे हैं और उनके वाम काका में शिंगा, बेत, वेरिट तथा दंशी विराजभान है । बार्ये हाथ के नीचे अन्य व्यंजन को दबाकर यदुरायर भोजन कर रहे हैं -- कहीं कोई करताल बजाता है, कोई गाता है, कई कोई प्रसन्न हो नृत्य कर रहा है । गगन से देवता गण इस दृश्य को देल प्रमुद्धित हो रहे हैं और शिर पर पुष्प वक्षा कर रहे हैं ।

गोनारण तीता : अन सिंत नंद गोपाल को देखी -- उनके बंठ में कदंब की माला तथा सार, निराट बुंडस मणि शोमित हो रहे हैं, हाथ में वेणा है और गार्थों के शागे ये हैं और गार्थों के शागे ये हैं और गार्थों के पिछे बख़ें दों हु रहे हैं। साम सुदाम शादि बालक गण दिन मर उनके साथ सेतते हैं। भरे देखी, और यह देखी, स्थाम का शरीर कोटि मानु के तमान प्रकाशित हो रहा है, बिहार करने चले जा रहे हैं। पाछे शहीर बालक हैं और शागे गार्थे चल रही हैं, सुन्दर मुख से कान्सा वेणा बजा रहे हैं, मध्युर मध्युर हुए हास्य कर वे अरुण नेत्रों से देख रहे हैं। वेशी के स्वर से माध्युर्थ कर रहा है, गजराज की मांति वे बारि बारि चल रहे हैं। स्थन इस काले शरीर में कितना माध्युर्थ है। स्थाम के शरीर का निर्माण किस विधा के जन्में देख कामदेव मी जिय जाता है। मां देखी कृष्ण मध्युर रूप बना, यमुना पुलिन पर सुरमि बरा रहे हैं। मनमोदन स्थाम का स्तप मदन को लिज्जा करने वाला है, उनका मुख करोड़ों जंद्रमा से शधिक सुन्दर है, जिसे देख संसार मो दिता हो जाता है, उनका शरीर तीन स्थान पर वह है, मीई सुवलित तथा नमन वसल गेंजे हैं।

१ - वहीं पु० ११६- ११६

२ - वही पु० १२० - १२९

३ - वहीं पुठ व्ह

४ - वहीं पुर पर

५ - वही मध

गोविंद गोप रिक्षुत्रों के साथ वृंदावन जा रहे हैं, मोस्न वेणु बजाते हैं, गार्थे प्रसन्न हो दौड़ती जाती हैं समस्त वालगों में पृष्णा ही सुन्दर हैं -- शिंगा-वेणु का स्वर नम मंडल तक फैल जाता है बहीर बालक बागे वढ़ 'जय हारे' जय राम बोलते हैं। कोई नाचता है, जोई बजाता है, जोई बजाता है, जोई बड़ों की पूछ फाड़ कर उन्हें दोड़ाता है । क्यत लोचन स्थाम शिहुओं सहिल वृंदावन जा रहे हैं, सुर्मी आगे चलती है, वे वनक पांचनी हाथ में लिये अनले पांछे पोछे दौड़ते हैं। कानों का बुंडल बुटिल बुंतल हिलता है, मयूर पंत सिर पर फल्मला रहा है। कटि हिल्मे के कारण पीत वर्ण की घोती उघार उघार उड़ वाती है, परणों का मंजिर बजता है, उनकी दोनों मोहें मदन वेध नुष्य है । उनके स्थाम सरीर पर रत्न मुजाण रेसे सुशो फित हो रहे हैं जैसे नव धन में जिल्ली का प्रकाश। वृंदाअन में गायों को सकत कर कुष्णा शिलुकों के साथ तेल रहे हैं । भेरे गोविंद गोधन के संग वंशी बजाते हुए दोड़ते जा रहे हैं। उनने शरीर पर गौरज उस प्रकार शोभा देला है भानों उदय होता हुआ नैह । व्याकुल प्रज की स्मिणियों को उन्हें देव हर्षा हुआ परम मुल का की प्राप्त कर वे मुल मर देलती हैं।

सूरदास के कृष्ण कहते हैं जाज में गाय चराने जाकंगा । बुंदावन के अनेक प्रकार के फलों को अपने हाथ के तोड़ कर साऊंगा । इस माता यशोधा कहती हैं केरे लाल रेसा न कही, अपनी और तो देशी-तुम्हारे पग छोटे हैं, यन में देसे चलोगे घर लौटते सौटते रात्रि हो जायगी । गोप बालक गण प्रात:शाल गायों को चराने के लिए ले जाते हैं और संध्या तक घर वापस जाते हैं तुम्हारा मुख कमल ध्रूप में घूगते घूगते कुम्हला जायगा ! स्थाम ने उत्र किया तेरी अपन मुके चूप लगती ही नहीं, मूल भोड़ी भी नहीं है । धनस्याम वन से गार्थे चरा कर बा रहै हैं। संख्या समय उनके स्थामल मुख पर गोपद रण लगा हुई है। मधुर पिन्छ के समीप ब्रक्ते ऐसी शौना देती हैं मानो भीरे अमृत पूर्ण सिले कमल के समान मुल के चारों और रूपि पूर्वक वेठे हों और वे उड़ाने से भी नहीं उड़ते हैं। हुक्य पर मुख्या माल सुशो भित है। नीलमणि माला यशोदा से कहते हैं मैया, बलदाका बहुत

१ - वहीं पु० ११२

२ - वही पु० ११४

३ - वर्षी पृ_{० ११६} ४ - सूर्वार पर ३ पृ० ४६

u - वही पद ११ पुर पर

बुरा है। उसने सब वाक्नों से कहा वन में बड़ा अइमुत दृश्य है सभी वाक्त एकत्र होकर का जात्रों। मुक्ते भी कुक्तार कर स्थन फाऊ में से गया -- और वहां पहुंच कर यह कह कर माग गया माग वसी नहीं तो हाऊ काट कर सा जायना। में वहां मयभीत हो रीता - कांपता रहा, किसी ने मुक्ते करें घोर्य न दिसाया। में मयभीत होने के कारण न माग सका , वे आगे मागते चसे जा रहे थे। मां, में गाय न चराऊंगा। सब ग्यास मुक्ते घसीटते हैं, मेरे पेर में पीड़ा होती है। यदि तुम्हें मेरी बातों का विश्वास न हो तो बल्डाऊ से अपनी शपय दिला कर पूछो। यह सुन कर यशोदा ग्यालों को गाली देती हैं। में अपने पुत्र को मन बहलाने के लिंह वन मेजती हूं और ये मेरे अबोधा बात्क को दौड़ा हारेण देता कर मार हालते हैं। सूरयास के गोपाल ने वृंदावन को दावाणन के कोप से बचाया। केवल ग्यालों के आंख मूंदते ही सारी अण्य बदन में समा गई और ज़ज बाल अमय हुए। यह वृंदावन की रेणु धन्य है जहां नंद किसोर वेणु बजावर गाय चरा रहे हैं।

वंशावादन: पीतांवर घारी कृष्ण वेणु बजाते हुए बा रहे हें, बंदन का तिलक, बुंदर बलों बीर वारू भूव बीर मुजाएं सबत हैं। स्थाम के शरीर पर पीत वस्त्र ऐसा सुशोधित होता है मानों भेष की विश्वत हो। जिस प्रकार निमंत गगन में तारक गण प्रकासित होते हैं उसी प्रकार स्थाम के बंगों पर रत्न-भूषणा सुशोधित होते हैं। सिंह, कृष्णा बृंदायन जा रहे हैं, मेरे दो बकोर क्ष्मी नेन उनके बंद्रमुख का पान करना चादते हैं, बधारों पर वंशी रख, नथन के एक कोने से सुबा बणां कर रहे हैं। उनके मुख की कांति मणि के समान है बीर दांत मुखता की पंकित के तृत्य हैं। सिंह, हम तो विरहणी नारी हैं, उनके क्रम को देख पुष्पानन्या मी चुम हो जाता है।

मुर्ती : पंशी वादन: - सूरवास के हरि ने जब मुरती अधार पर रखी । बर् अबर् तथा पवन स्तंभित हो गथा और यमुना का जल स्थिर हो गथा- स्थाम की मदन हवि का दशैन

१ - पुरुतार पद १२ पुरु ५१

२ - वहीं - पद - १३ पु० ५१

३ - वहीं - पद - १० ५० ५१

४ - वही- पन - १४ पु० पर

५ - मार न पुर ६४ - ६५

६ - वहीं पु०१०=

कर पितायों तथा मृगों का विभोर हो गया । पशु मोहित हो गए: सुरमी दांतों में तृण दावे सड़ी रहीं। सुन सनकादि मुनि मो छित हो गर । इयाम के अधार की मुरली सुनते ही सब नारियां अपने तन की सुधि विसर गई -- जो जिस अवस्था में थी वैसे ही रह गई उनका सुल - दुल नहीं कहा जा सकता है -- चित्र लिखी थी सब गो पियां हो गई । जिस रस के लिए गो फियाँ ने बाट ऋतुओं में तम किया वही रस मुरली भी रही है। यह क्सं थी तत्तां से बार्ड विसने इसे बुलाया १ वृज नारियां इसे देख चितत हुई । ससी स्थाम को मुरली बनाने दे, अपने कानों से क्यों नहीं सुधापान करती हो, उन्हें वर्णित न करना । सुनती नहीं हो वह बार बार राधा का नाम ते रही हैं। तुम सोचती हो कि प्रमु तुन्हें मूल गर हैं। सती । मोहन ने वंशी बजाकर मुक्ते मोहित कर लिशा है, मैं उन्हीं पर मो हित हूं। संघ्या के समय वे मेरे द्वार के सम्मुल से होकर निकले तभी से में उन्हीं की श्रीर देख रही हूं। किसका शरीर घर की सुधि किसे, हिर कीन हैं और मैं भी कौन थी, मुके पता नहीं । जब से उन्होंने मेरा मन श्राकित कर लिया वे नहीं श्रार । काली दमन लीला : कृष्ण गायों को चरा, घूल प्रमुख प्रमुख रित हो लौट रहे हैं। ग्वाल बाल कालांधूय के निकट पहुँचे, वे यह नहीं जानते थे कि यह जल विष्णाच है जत: उन्होंने पेट मर पानी पिथा । विषा के प्रमाव से गोप बालक गण मूर्कित हो मूमि प्र गिर पड़े। बृष्णा ने अपने अनेक सलाओं का शरीर उलट पलट कर देला, वे सब मर चुके थे। कृष्णा ने पीत वस्त्र को कमा से कस कर बांधा दिया और स्वयं कदंब बुता पर चढ़ कर काली हुद में कृद पढ़े। यदुराय ना लिंदी ने जह में वंशी नजानर की हा नर रहे हैं, उनका नीला शरीर तथा पीत वरत्र मेथ और प्रकाश की मांति शोमित हो एहा है, पानी में कृष्ण दोनों मुजाओं की फेला बार की हा कर रहे हैं, इस में रव करती लहरें उठ रही हैं। सेलते हुए कृष्ण के

१ - मार वि पद - ३८ पुर पूर

२ - वहीं - ३६ पू० ५७

३ - वर्श - ४३ पुर प्र

४ - वहीं - ५२ पु० ६०

५ - च० मा० - १३= पु० १०६

६ - बद्धवा - वं ना० पृ० ४

७ - वही - ६

मर्भ - स्थान को काली नाग ने इस लिया और अपने फण में कृष्ण को लपेट कर रसा। वृष्णा उसी अवस्था में पड़े रहे । इस तमय गोवृत में मूलंप शाया, वृता गिर पड़े स्त्रियों के दाहिने और पुरुषों के बाम शंग फ क़ाने लो। यशौदा अत्यन्त आयुल हो जन्य गो पियों सहित वर्ती । है बंधा माधव, देखो देखो तुम्हारे विना धमारा जीवन न रहेगा -- सला तुम्हारे शोक में शरीर जल रहा है। घर के मोह का त्याग कर तुम्हारी शरण ली थी, तुम भी हमें होड़कर जा रहे हो, अब हम बनाध हैं -- बद गो पियां वंशी बादक का मुख कैसे देख सकेंगी । कमल नयनों से निहार कीन हमारे दुख दूर करेगा --वृष्ण की विरहा कि से व्याकुल हैं और प्राण जल रहे हैं। यशोदा तथा गो पियों के दुल को देल कृष्ण काली-काल के सिर पर बढ़ कर नाबने लगे और देव, तथा भुनि गण पुष्प वर्षा करने लगे -- सिद्ध गण जिन- जिन मृदंग बजा रहे हैं और गा रहे हैं। बरण घूम फिरा कर कृष्ण नृत्य कर रहे हैं। जगत के परम गुरु का भार काली नाग सहन न कर सका और अनेत हो गया । उसके नाक-मुंह से एकत निकलने लगा, उसका मद बूर्ण हो गया । नाग नारियों ने कृष्ण से प्रार्थना की प्रमु मेरे स्वामी पर कृपा करों, आप को न जान कर दुष्ट में दंशा और उसको आपने समुचित दंड दिया, आप से इम आंचल फेला कर पति के प्राणों की मिला मांगती हूं, पापी के सब दो जों की मुला दें। इस प्रकार कह नारी-गण रो रही हैं। नाग नारियों की विनती धुन कृष्ण संतुष्ट हुए और काली नाग को अभय दान दिया और रमण द्वीप जाने का बादेश दिया । कृष्ण के अपने यादेशानुसार काली सपरिवार तत्पर हो गया और कृष्ण को प्रणाम कर यागे वहा । काली दमन : सुरदास ने इस क्या का चित्रण भिन्न सूप में किया है। नार्द इकि के परामरी के अनुसार कंस ने जम्ना के काली हुद का कमल मंगाया और पत्र लिख कर स्क दूत को दिया त्रीर उसे कुल मेल दिया त्रीर मी सिक सेंदेश मेजा कि कंस ने यह कमल का पुष्प मंगाया है। पत्र पढ़ते ही नंद मय मीत हो जाते हैं। कृष्ण ने कंस के समीप पुत्रम भेजने

१ - बरुषा - गं0 ना० =

२ - वहीं - ह

३ - वहीं - १२

४ - वही - १५

ध - वही - १७

^{4 -} सुवराग्व - १६ पृव पर

का आस्वासन नंद को दिया । स्थाम अन्य संकाओं सिंहत गेंद सेल रहे थे और आपस में स्म दूसरे गेंद मार रहे थे, लेलते लेलते सब सखाओं सहित कृष्ण यमुना तट पहुँचे कृष्ण ने अशीदाया को लत्य कर गेंद फेंकी किन्तु उन्होंने मुद्द कर अपने को बचा लिया । गेंद काली वह मैं गिर पड़ी । उन्होंने श्याम को पकड़ा कि मेरी गैंद दो । विसी प्रकार से फैंट हुड़ा कर कृष्ण करंब पर बढ़ गए और कालीवह में गेंद निकालने के लिए कृद पड़े। किन्तु शंकरदेव ने इस प्रसंग में न तो नारद - कंस मिलन की चर्चा की है न गेंद काली दह में गिरने की । यशोदा पुत्र कह कर यमुना के तीर की और दौढ़ पढ़ीं और उनके साथ वृज की अन्य गोपियां मी साथ वलीं । वलराम ने जननी को प्रबोध दिया तो भी माता यशोदा घरती पर गिर पड़ीं। नाग ना रियों को फिड़क कर नाग के पूंछ पर लात नार कर् शहि को कन्स्या ने जगाया । काली नाग ने को धित हो विषा वमन किया जिससे जल मस्म हो गया किन्तु पूर् के स्थाम के शरीर को यह स्पर्श न कर सका उरग ने हरि को लेप्ट लिया और अहि राज ने गर्व से बोलना आरंम किया । इदि ने अपने शरीर का विस्तार किया,तब काली नाग व्याकुल हो गया । जब काली के अंग पट पटा कर टूटने लो तो उसने शरण की मिला मांकी । क व्याल की नाक फोड़ कर उसे शविलंब नथ दिया और उसके माथे पर बढ़ गए। तब नाग ने सहसा मुख से प्रमु की स्तुति की --नाग नारियों ने भी प्रमुकी स्तुति गाई और पति मिला मांगी । गरु इने त्रास से नाग यहां आया था प्रमु के बर्ण-कमल का चिन्ह उसके प्रत्येक मस्तक पर पढ़ा । सुरवास जी कहते हैं कि प्रमु नै उसे अभय वरदान देकर हरम द्वीप पहुंचाया । रास लीला : वृंदावन बुतुर्मों से परिपूर्ण है, शरत चंद्र का प्रकाश श्रधिक उज्ज्वल है, वीरे भीरे मल्य वल रहा है, कभी कभी वल कर रूक जाता है। इतने में ही वन में प्रवेश कर कृष्ण ने वेणु बजाया । उसे पुन सब गो पियां-कृष्ण के समीय शाई । बच बालाओं ने शपने पति सुत का त्याग कर प्रेम में निमिष्णत हो कृष्ण को हुदय वंशु स्वीकार किया।

१ - सु०सा० - २१ पु० ५३

२ - वही - २६ पु० ५४

३ - वर्षी - पद - ३१ पु० ५५

४ - वहीं - पन - ३४ पुर पूर्व

५ - वहीं - मद - ३६ पु० ५७

^{4 -} बन्बं नान - पुन १०२

पति पुत्र की उपेजा कर वे सभी कृष्ण के दर्शन करने चलीं - पुकृद - सहोदर के निर्माध करने पर भी वे वती गई। राधा को गोपियों ने साथ न लिया । हरि को गोपियां न देल समीं -- उन्हें अधिक कच्छ हुआ विरह ताथ से उनका शरीर जलने लगा, हरि का व्यान थारण कर गीपियां जोर जोर से चिल्लाती हैं, एकाग्र कि से इरि के पद पंकज का ध्यान कर रही हैं, उनकी बांसों से अशुधारा वह रही है, मक्ति ने कर्म वंधन को शिथिल कर दिया, उनका शरीर मिनत मावना से पुलकित है । कृष्णा ने गो पियों को बन के मध्य रात में देखकर प्रश्न किया कि तुम लोग यहां अपने पिता पुत्र पति आदि को छोड़ कर नयाँ बाई हो १ स सियाँ, यदि तुम्हारी इच्छा वृंदावन देतने की थी, वह पूर्ण हुई अब तु तुम लोग अपने अपने घर लौट जाओं , का मिनी मुफे क्लंकित न करों में पर स्त्री का स्पर्श नहीं करता, तुम्हारे पति, पुत्र, वहोदर तुम्हारे लिये व्याकुल हैं, कुल का मिनी हो कर मी राति में प्रिय का साथ क्यों होड़ दिया है चिंतित गी फियों ने बत्यन्त निराश हो अपना मुंच सटका दिया और फॉकर फॉकर रोने लगें,तन मन फामर हो गया और नेत्रों से महायात बरने लगा। गोपियाँ ने पृष्ण से मनुरीय किया, प्रमु पति-सुत सब का परित्याग कर इस जाप के चरणाँ में पड़ी हैं, मक्त कृपाल गोपाल, तुम्हारा नव जनुराग के टूट गया, हरि इमने समफ लिया तुम ऋत्यन्त निर्दय हो, वाणी रूपी वाण हैं से तुमने क्यारे हृदय को विदीर्ण कर दिया माधव, इस विरष्टणी तुम्हारे विना जी वित न रहेंगी । तुम जगदीश हो, हमें निराश न करी । यादवराक, तुम्हारा मनमोहन मुख्य घन्या स्प देवते ही मुक्ति प्रदान करता है। प्रमु क्टू वचन बोल हमें निराश न करी, तुम्हारी बंशी की घुन को धुन प्राणा विकल हो जाते हैं। कृष्णा ने गो पियाँ को समकाया कि तुम लोग दुलित न हो,मैं मनौरथ पूर्ण करने वाली क्रीड़ा करंदगा, प्राणा सली उठी । जिस प्रकार वृष्टि-जल से दावा ग्नि शीतल हो जाती है, इसी प्रकार विर्व से दग्ध गोपियां शीतल तथा शांत हो कृष्ण के सहित केलि करने लगीं। सनि देशों कान्य कितना निदेशी हैं पयोधार की नल से बधार को दशन से वायल किया है केश-पाश दीला होकर निर्मया,

१ - व० वं० ना - १०३

२ - वडी - १०४

३ - वही १०५

४ - वर्षा १०६

५ - वही १०७

हार टूट गया, हमारे कहुवे के तुत्य कठोर कुव को फोड़ डाला, मुजाओं से बार बार या लिंगन किया, ऐसा प्रतीत होता है मानों चंद्र को राहु ग्रस रहा हो, हरि के ध्यान में मग्न होने के कारण इन्हें ज्ञान न रहा । कृष्ण किसी को इंस कर देखते हैं, किसी को मुंह लगा कर वे बूमते हैं, गो फियाँ को ुं शालिंगन से रित का सुख प्राप्त हो रहा है। कृष्ण किसी गोपी कांचूरि को छोड़ कुच को प्रकाशित कर देते हैं, गोपी हंस कर अपने हाथ से उसे ढंक लेती है, हरि ने किसी का अंबर हीन लिया गोपी लज्जित हो अपने अंग मोड़ रह गई । कृष्ण ने गो फ्याँ से निवेदन किया, सिंस मेरे दोषा को मूल कर कटाचा से देखो और कामारिन का आ लिंगन दौ,नव रस का विहोह कैसे होगा, हंस कर मुफे एक बार देखों, मदन ने मेरे शरीर को मुला लिया है। गोविंद ने गोपियों का गर्द देला और स्वयं राध्या नामक गोपी को साथ से अंतध्यान हो गर । गोपियों ने संपूर्ण वृंदावन हुंदा, किन्तु उन्हें कृष्ण का दरीन न हुआ, वे अत्यन्त दुखित हो रीने लगीं। देशो दिशाओं में उन्हें षंधकार दिलाई देता और वे बार बार मुर्हित हो गिर पट्ती थीं। गोपाल प्राण के बिना स्मारा जी वित रहना संभव नहीं , विलाप करते वे कृष्णा के नूणा गा रही हैं। माध्यवी से गोपियां कृष्ण के संबंध में पूकती हैं बकुल, वंदु लि, क्यंब बक, तुलसी, तुम लोग बढ़े उपकारी हो, कही हमारा वंधा वन के मध्य कहां गया १ वंपक चुत, हम आंवल फेलाकर तुमसे याचना करती हैं कि मुके प्राण बंध्यु के दर्शन करा दो प्रमु के बिना तन-मन धारण नहीं किया जा सकता है। गोषियों ने कृष्ण तीला का शारंभ किया, कोई कहती मैं गोपीनाथ हूं मेंने काली नान का कन किया है। राष्ट्रा का कृष्ण ने विशेष सम्मान विथा भत: उन्हें भी गर्न हुवा कृष्ण से उन्होंने कहा में पेवल नहीं वल सकती हूं। कृष्ण ने राष्ट्रा का मान समक लिया और अपने कंधी गर बैठा लिया । राष्ट्रा ने कटाका न समका और लंडो पर चढ़ने के लिये तैयार ही नई । राष्ट्रा कृष्ण से प्रार्थना करती हैं,

१ - व० ग्रं० ना० - सक्ष १०८

२ - वही १०=

^{3 -} वहीं ११०

४ - वही १११

प्र - वही ११२

^{4 -} वही ११३

B 25 + 6

मेरे वंध्यु मुके का के मध्य वरीन दो, दासी पर कैसे रूष्ट हुए हो, गौरवक्षमी मेरे दो कां को दामा कर दो - मुरारि मुक पर करूणा करो, रात्रि में मुके अतेले होड़ अनाथ न करो -- में पापी हूं मैंने आप से गर्व किया । गौ पियों की पुकार सुन कर कृष्ण पुन: प्रस्ट हुए । कमल नयन गोपी प्रेम सुघा रस से अत्यन्त व्याकुल थे तथा उनके नेत्रों से वारि की घारा प्रभाहित हो रही थी । कोटि इंद्र के समान प्रकाशित कृष्ण के रूप को देख गौपियों का दुल दूर हुआ । गौपियों ने कृष्ण का आलिंगन किया, कोई उनके हस्त कमल और कोई उनके स्कंघ को सूंघने लगीं।

यमुना पुलिन पर कृष्ण ने रास क्रीड़ा बारंम की -- बानंद विभीर हो गोपाल क्रब वालाओं के साथ खेल रहे हैं, किसी ने हरि का मकर कुंडल ते लिया, किसी ने हाथ का कंकण ते लिया, किसी गोरी ने इंस कर वंशी ते लिया, किसी ने पीलांबर और वर माला ते लीं । विश्वविमोचन गोविंद गोपियों को कंठ से लगा नाव रहे हैं, जिलनी गोपियां हैं उतने ही माध्यव के रूप हैं, वे बीरे बीरे इंस कर वल रही हैं, स्था लगता था मानों हैम मणि के मध्य मध्य में मरकल मणि प्रकाशित हो रही हों । गोपी-कृष्ण की मंहली तिह्न जहिन है मेथ के समान है बलो हुए बालाएं कृष्ण का मुख बूमती हैं और माध्युर गीत गाती हैं, गोपियां प्रेम से गले में बाहें डाल देती हैं हसे देख देल-रमणियां मूहिन हो गई । शहाधार का स्था स्तंमित हो गया । शहास केति करते को पियां दुनेस हो गई, किसी गोपी के लिये पीलांबर हुलाया जा रहा है, उनके शशि मुख पर अम जल के बिंदु सुशोमित हो रहे हैं, किसी के केश केशन अपने हाथ से बांधा रहे हैं ।

वृत्तमाणा में इस विषय पर शूरदाश के बहु संत्यक पद और नंददास की रास पंचा-ध्यायी आदि रचनाएं हुई हैं। रास के दाशिनक महत्त्व पर प्रकाश डालने के लिए नंददास ने सिद्धांत पंचाध्यायी की रचना की, असमिया में इस डेंग की कोई रचना नहीं हुई।

१ - वं गं ना - ११=

२ - वहीं ११६

३ - वही १२९

४ - वही १२३ १२३

५ - वही १२४

शंकरदेव तथा धूरदास के रास वर्णन में अत्यधिक साम्य है।

स्थाम की मुरती की ब्युनि जब गोप बन्धाओं के कान में पड़ी, उन्हें उनका काम घाम मूल गया, कुल की मयादा और वेद की बाजा से किंचित मात्र न हिं। जो जिस अगस्था में थीं वैसे ही रात्रि में वन की और वल पड़ीं। माता-म पिता- वंधा के रोकने पर भी गोमियां नहीं रूफती हैं जिस प्रकार मार्दों के जल प्रवाह कौनहीं रोका जा सकता है, वैसे ही गौ फियों को रोधना असंभव हो गया । जैसे मुजंग केनुरी तथाय देता है वैसे ही गोपियाँ ने भाता पिता का परित्यान किया । सूरवास के कृष्ण ने गोपियाँ को वेद मार्ग सुनाया । सिंब, जाकर पति की पूजा करों, इस संसार से मुनत को जाकोंगी । उन्हें त्थाग कर विभिन्न के मध्य रात्रि में क्यों बाई हो १ गोषियों ने उधर दिया 'हम व्रज वयों जांय, श्राप का दर्शन तीनों लोकों में दुलेन हैं। इस घम श्रोर पाप को नहीं जानती हैं, हम केवल तुम्हीं को जानते हैं संसार निरक्षि है, स्थाम इतने निष्ट्रर न बनी । स्थाम गोपियों के इस अनुपन अनुराग तथा बुढ़ प्रेम को देस प्रसन्न हुए और उनका आ लिंगन किया। ब्रज युवितयों के मध्य सुन्दर स्थाम हैं और उनके साथ राध्य हैं। सूरदास जी कहते हैं कि नव-जला के समान उनके शरीर की व्यक्ति-के, कांति है,इस म इंदु की अनेक पंक्ति के मध्य उसकी छवि वढ़ जाती है । द्वप निधाम स्थाम सुन्दर के साथ नृत्य करते करते ब्रबना रियाँ वी गर्व हो गया । इसी सम्य हरि अभी क्रिया राज्या सहित कंतव्यान हो गर्गी प्यां हरि के लिए अत्यन्त थाकुल होकर वृंदाका के कुलुमों-वृत्तानों से स्याम के लंबंधा में पूंढ़ने लगी। नागरिक के मन में भी नर्व हुआ, भेरे समान बन्य स्त्री नहीं है, मैंने गिरिधार को वशीमूव किया है। क्या वे केंद्र कर हिर के हाथ पकड़ लेती हैं क्यी कहती हैं, में अधिक थक गई हूं। सूरवास के स्थाम ने मामिनी को कंडो पर विठाया । कुछ देर पश्चात घोडा कुमारी को वर्धा छोड़ कर अंतथानि को गए। गोपियों ने देशा कि राध्या प्रुप के तले मुस्माई सड़ी हैं। फिली की जास नहीं कि मीइन किस मार्ग से बले गए, कहां बले गए १ राध्या स्थाम

१ - मुक्सार पद्म- ७६ पुर 44

२ - यही - द पु ६६

३ - वहीं - म्यू पुर ईम

४ - वहीं - म्ह पुर ६म

५- वर्श - ६२ पुक ६६

के विरह से दग्ध हो रही थीं। इस दशा को देव कर करुणामय के हुदय में स्नेह उत्पन्न हुआ। प्रेम के वशीमूत कन्हाई अंतर से प्रकट हो पुन: रास करने लो और प्रत्येक गोपी के साथ स्थाम नृत्य करने लो/गोपियों ने समका कि हरि आरंम से उनके साथ हैं। रास-वर्णन के विभिन्न अंशों का तुल्तात्मक अध्ययन : मगवान ने वृज में लीलाएं इसलिए की कि मुक्त जीवों का ब्रह्मानंद से उद्धार होकर उन्हें मजनानंद मिले। इस प्रकार लो किक विध्यानंद तथा काव्य रस से इतर रस रूप त्री कृष्ण :रसोवेस:: के संसर्ग की लीलाओं में जो रस समूह मिले वह रास है। और यह रस समूह गोपी-कृष्ण की शरह रात्रि की लीला में अपने पूर्ण रूप में स्थित बताया गया है। रास क्रीड़ा इवारा मानतिक अनुमय से रस की अमिव्यक्ति होती है, देह इवारा अनुमव से नहीं -- रास क्रीडायां मनसो रसोदगम: नतु देहस्य।

वल्लम संप्रदाय में रास के तीन स्त्य माने जाते हैं : १- नित्य रास २- जवतरित
रास या नैमिस्कि रास १- अनुकरणात्मक रास, यह दो प्रकार का होता है :क: मावनात्मक
या मानसिक :त: देहात्मक । गोलोक में ज्याता निजधाम तृंदावन में मगवान ीकृष्ण अपने
जानंद विग्रह से धर्मा जानंद- प्रसारिणी स्वित्यों के साथ नित्य रस मग्न रहते हैं ।
उत्पर्का यह ग्री हा जना दि और अनंत हैं । यही मगवान का नित्य रास है ।

वल्लभाचार्य ने धुनौधिनी द्वारा यह त्यन्द व्यक्त िया है कि कृष्ण के रास में कानुक चेन्दारं अवस्थ हैं किन्तु उनमें काम का अभाव है । गोपी-कृष्ण में लोकिक काम का अभाव है और लाथ ही यह मुक्तिदायिनी है । इस लीला के अवण मात्र से लोग निष्काम हो जाते हैं, इससे किसी फ्रकार काम की उत्पत्ति नहीं होती । रास लीला का एक बाच्या-रिमक अर्थ यह भी किया जाता है कि मावान की यह लीला अपनी ही लीला है । मागकत पुराण में कहा है विजेस जातक अपने प्रतिबंध को वर्षण माणा आदि में देल कर कृष्टा करताहै वैसे मगजान रभाषति ने हास्य आर्टिंगना वि द्वारा कुल सुंदर्शि के साथ लेल किया। मगजान ने आत्मा राम होकर भी अपने अनेक रूप करके प्रत्येक गोपी के साथ प्रयक्त-प्रकार ह वर कृष्टा की । इसलिए कुछ लोग इस लीला के अभिनय या अनुकरण के पता में नहीं हैं।

साचारण कोटि ने संसारी भनत इस सीला की मानस मावना नहीं कर पार्येंगे और यह गृढ़ गड़न दार्शनिक अनुमृति मात्र रह जायगी । राष्ट्रावल्लम संप्रवाय में दारीनिक गूढ़ता को क्वाकर फ्रेंस की स्मिन्य मूमि पर राघा-कृष्ण के नित्य विहार की स्थापना की नह है, क्यों कि फ्रेंसी मकतक भी अनुक्रणात्मक लीला में पावन फ्रेंस रस का आस्वादान कर तृप्त हो सकते हैं। अत: इस लीला का अनुक्रण विध्येय माना गया है। श्री वर्त्त- भाषार्थ तथा वैतन्य महाप्रमु के अनुयायियों ने मावनापरक रास लीला का ही अधिकांश में वर्णन किया है क्यों कि उन्हें अभिनयात्मक लीला में बुटियों के समावेश का मय था। रास पंचाध्यायी के प्रसंगों को लेकर नंदवास शादि मक्तों ने बढ़े ही मनोमुख्य कारी लीला चित्र श्रंकित किर हैं किन्तु स्थूल अनुक्रण पर विशेषा बल नहीं दिया।

शंकरदेव के केलि गोपाल नाटक में गोपी-कृष्ण का संभोग और विरह कृंगार व्यंकित हुआ है तो भी हसे प्रधानता नहीं मिली है। यहां श्रीकृष्ण केवल कृंगार रस के नायक की मांति उपस्थित नहीं हुए हैं, वे मावान, जात सृष्टि-स्थिति- लयं कर्या प्रभापुर का है, उनका स्वप्नार्थ, शिवत अलो किक अप्राकृत तथा लीला मनना मात्र हैं। गोपियां भी शृंगार रस प्रधान नाटक नायिका मात्र नहीं है उन्होंने मगवान परमात्मा को समस्त आनंद स्वरुप श्मभ कर ही उनसे प्रणय किया। शंकरदेव ने इस नाटक को मोदा का साध्यक कहा है।

जल केलि: गोपाल जल केलि कर रहे हैं, चारों और से गोपियां कृष्णा के मुस को लब्ध कर पानी फेंक रही हैं -- हिर ने किसी का अंबर हीन लिया किसी का आलिंगन किया, किसी को मुला कर चूम लिया, किसी के कुब को नल से नात किया। जिस प्रकार मच गज कारिणी के सिहत सेलता है, वैसे ही कृष्णा गोपियों के साथ क्रीड़ा करते थे। गोपाल की इस लीला को देस सुर रमिणयों का हुद्य मनमध के वाणों से घायल हो गया। सूरवास के मोहन रास रस से अमित सोलह सहस्त्र नारियों को निश्च सुल प्रवान कर उन्हें यमुना तट पर ले गए। रिव तनया के जल में नंद-नंदन सुकुमारियों के संग जल बिहार कर रहे हैं। नंदवास ने भी जमुना जल के की हा का वर्णन मनोहर और रसात्मक ढंग से किया है।

१ - राज्यक संक- विक स्नाक - पृक २७३

२ - 'हे सिंख । तो हो यशौदानंदन नद, जनत रा सिते ब्रह्म प्रार्थत से निमित्त तो हो सब्बे कंतयों मी श्रीकृष्ण केवत स्थाह ।

३ - भी भी समासदा यूर्व त्रृण्त सावधानत: के ति गीपालं नामेर्च नाटकं मोदा साधक्य ।

मूणण का लोना: गोपाल का मूजाण कहीं लो गया, घर जाने पर मां मारेगी इस मय से वे भाग रहे हैं। कंदंब के तले कृष्ण कोले सोथे हुए थे, राजा पानी लेने गई और गोपाल के निकट का उनका मूजाण कीन लिया। मूजाण को किया, राजा ने कृष्ण को जगाया और पूका तुम्हारे शरीर पर कलंकार क्यों नहीं है ? मूजाण लोकर तुम यहां सोथे हुए हो, यशोदा सुनने पर कवश्य तुम्हें मारेंगि। कृष्ण मूनि रहे, राजा पानी लेकर चली गई। कलंकार यशोदा को केकर सम्मूण वृद्यांत सुनाया।

मां मेरा मूषण को गया, एक ग्वा लिन ने मुके बुला, काने के लिये मिठाई वी, उसको साते ही में अनेत हो गया-- सिर क्कर साने लगा शांसें क पर नीचे होने लगी ज्ञान हीन ेही में क्वंब तले सी गया। राधा ने स्मारा मूषणा चुरा लिया और वात करने लगि, में अनेत अवस्था में पड़ा था क्या विचार कर कहता र मां यही मेरा दोषा है । इसके उपरांत कृष्ण ने राधा को देला और उनके सम्मुल अपना चातुर्थ फ्रस्ट करने लो । राधा तुनने मेरा भूषण कैसे चुराया, स्मारे इस गोकुल नगर में राष्ट्रा चोर है, में करेले सीया था शीर तुमने मेरा भूषण चुरा लिया, दिन में राजमार्ग में रेसा साइस किस का होगा शीर रात में राधा तुम कैसी नोरी करती होगी। मैंने विचार विधा है, राधा के बतिरिक्त बौर कोई चौर नहीं है। राघा नै गोबिंद से कहा तुम गोपी के निकट मेरे दोषा की स्थात्या क्यों कर रहे थे २ तुम क्लेतावस्था में कदंब के तले पढ़े हुए थे, मैंने तुम्हारे प्राणा मुजाण की रजा की हीन कर नहीं लिया। जब मैंने तुमसे प्रश्न की लिया तुम निरुधर रहे, भयभीत हो तुम ग्वालिमाँ ने घर में किपे थे अब मुजाण पाकर चातुराई पिता रहे हो, यदि में चोर होती तो तुम्हारी मां के बामे मूजाण क्यों देती ? शोली : देव दुलेंम के लि फागु का विद्यार नंद कुमार लेल एहे हैं, फागु के पढ़ते ही स्थाम का शरीर रेसा सुन्दर लाता जैसे मरकत गिरि पर रिव की किरणें सुशो कित हों --कपूर तथा शुंकुम से फागु बत्यन्त सुगंधित है जिसे गोप-गोपी गण जानंद ने लेल रहे हैं-- बन्य लीग कंजिल मर मर कर फान् मार रहे हैं तथा नाच, मा रहे हैं। फान् से सम्पूर्ण तन

१ - नन्दवास - शुनल पृ० २३६

२ - वही २४०

३ - वही २४९

४ - वही २४३

डोल लीला : मेरु शिवर के उत्पर जैसे नवनील घन प्रकाशित होता है वैसे ही- कृष्ण कौ के उत्पर विराजमान हैं, स्थाम के शरीर पर जलंकार देशा मन लकता है, जैसे निर्मल गगन में तारे ज्योतित हों- किरीट/कुंडल, कार के मुरक्तिकणी, रतन, नूपूर रिन फिन रिन फिन बज रहा है -- किम्मतपति सिंहासन सहित होता रहे हैं, जैसे रिव-शिश आकाश में बलते हों। नंद तथा यशोदा आनंदित हो रहे हैं, गोम गोमी हिर की जय बीत रहे हैं। इस प्रलंग के वृद्ध पदों में नंददास ने वर्जा अतु विहील के शब्द वित्र अच्छे विधे हैं। कृष्ण विहील पर फूलते हैं उनके संग वृष्ण मानु नंदिनी हैं जिनके अंग अंग से रूप प्रकट होता है। स्थाम राज्या की और देश कर इंतते हैं और भीरे भीरे फूल रहे हैं। बृज्जाताएं प्रमु की खिंच देखते ही वश्वामूत हो गई नंददास ने होती के तथ्ये तथा सात की को गोम का को तथा की तथा है। वेददास ने होती के तथ्ये तथा तथा में के कर होती गाने वालों के तथ्ये तथा में तथा के तथा में तथा की तथा होती है। इस आनंद के समीर का स्था होती ही पुष्प धन्ता पर के तथा पता विह होते हैं। इस आनंद के समीर का स्था होती ही पुष्प धन्ता अभीर हो गया।

१ - समाधानवैव - वर्गीत पु० १२२-१२३

२ - सूरवास - इ० वर्गी - पृ० ३२६

३ - माञ्चवेव - वर्गीत पु० १२३-१२४

४ - नंदरास - शुक्स पु० ३३५

५ - नंदवास- क्षुत्रस पुरु ३६२

मथुरा लीला

मधुरा लीला : अकूर के साथ कृष्णा का मधुरा समन : असमिया वैष्णाव साहित्य में इस विष्य पर कोई रवतंत्र रचना नहीं हुई है शंकरदेव के दशम रकंघ में अकूर का प्रसंग पर्याप्त विस्तार से अंकित है । सूरदास के अतिरिक्त हिन्दी के किसी कवि ने इस विषय की और घ्यान नहीं दिया है ।

शंकरदेव ने शुक- परी जित संवाद का अनुकरण करते हुए अक्रूर का प्रसंग उपस्थित किया है। गौविंद के पदाचन्हों का दर्शन कर वे ऋत्यन्त हिंडीत हुए -- ध्वज, वज्र पंकज तथा अंकुश से सुशो भित चरणां की छाप ने समस्त पृथ्वी को अलंकृत कर दिया है -- इन्हें अक्रूर ने प्रणाम किया । कुछ देर पश्चात अक्रूर पुन: स्वस्थ हुए और राम-कृष्ण को रथ पर विठाया । राम-कृष्ण के त्रलो किक सींदर्य को देख ऋषूर प्रेम से विक्वल हो एथ में गिर पड़े - राम-कृष्ण के वर्णों को पकड़ ऋर उसी अवस्था में पड़े रहे ऋरूर की भवित से प्रसन्न हो राम- कृष्ण ने उसका जातिस्य स्वीकार किया । गोपियों ने जब यह समाचार सुना कि कंस दूत अपूर कृष्ण को रथ में विठाकर मधुरा ले गया, तो उनकी स्थिति ऐसी हुई जैसे वे बड़ी लड़ी मर गई हों -- हुदय बत्यन्त बाकुल हुआ, मुख से एक शब्द भी नहीं निकलता था उनके केश पाश तथा वस्त्र ढीले हो गर् मूच्या केप्रेम में विभोर हो वे अपने नेत्र मुकुलित नहीं करती थीं। गोपियां ऋषूर को शाप देती थीं कि उसने इनारै प्राण को हर लिया । गोप तथा गी पियों ने कृष्ण के एवं को दोनों और से घेर लिया और फूट फूट कर रोने लो। मनत बांध व कुष्ण ने इनका दुस देस, इनकी और घूम कर देशा और गोपियों को संबोधित करते हुए कहा देन लोग मेरे परम प्रिय हो ,तुम्हारे इस दुल को मेरे प्राणा सहन नहीं कर सनते हैं। सस्त्यों मुके छोड़ कर लौट जानों में मत्त क्रीड़ा समाप्त होते ही लौट माऊंगा। इस संदेश से गो पियां स्वस्थ हुई ।

१ - वशम स्वांधा - प० - १७५६

३-वही १७६६

३ - वही १७६६

४ - वही १००६

अक्रूर को जल में कृष्ण दरीन : भागवत का अनुसरण करते हुए शंकरदेव ने भी अक्रूर को जल में कृष्ण का दरीन कराया है। स्नानादि करने के निमित्त ऋषूर यमुना के जल में उतरे वहीं उन्हें राम - कृष्ण का दर्शन हुआ। शत्रुओं के मय से अकूर ने इन दोनों माझ्यों को एथ पर बेठा दिया था, जल में इन्हें देल कर उन्हें ग्राश्चर्य हुत्रा कि ये किस प्रकार जल मैं चले श्राए । जब रथ की और दृष्टिपात किया, तो राम-कृष्ण रथ पर बैठे थे । दूसरी बार उन्होंने जब हुनकी लगाई तो देशा कि आदित्य के सदृश सहस्त्रों फणां की मणि प्रशासित हो रही है, और सर्प नायक अपने फण को फुकाकर कृत्रण को प्रणाम कर रहे हैं। अपूर चिनत ही ,इस दृश्य की जांत सील कर देत रहे हैं। कृष्ण ब्रह्मा आदि श्रन्य पाणदों से थिरे हें प्रवलाद, नारद शादि मनत गण उनकी उपासना कर रहे हैं इस दिव्य रूप को देत कर अकूर अत्थन्त विस्मित हुए। अकूर कृष्ण की स्तुति करने लो-प्रमु जगत के कारण तुम्हारी नामि पद्म से ब्रह्मा उत्पन्म हुर, पंतमूत, देह, इन्द्रिय आदि सभी तुम्हारी मूर्ति हैं तथापि यह जड़ जात तुम्हें नहीं जानता है । मशुरा प्रवेश,रजक वथा : शंकरदेव ने राम-कृष्ण का मथुरा प्रवेश वर्णन मागवत के बनुसार विया । व्रजमाणा के कवियाँ के श्रंतगीत केवल सूर ने ही सूरसागर में इसका चित्रण विया मथुरा नगर के गृहाँ का निर्माण स्फ टिक से हुआ और स्वर्ण के कपाट द्वार में लगे हुए हैं , हेम के सदृश तोरण सुशो भित हो रहे हैं । शंकरदेव ने दशम स्कंघ और कीर्तन में रजक वध की घटना का उत्लेख किया है। राम-कृष्ण ने मार्ग में जाते हुए एक धोकी को देलगर उससे कहा कि इमें सुंदरतम वस्त्र दौरतुम्हारा कत्याण होगा । घोकी अत्यन्त कृषित हो कृष्ण की मत्सीना करने लगा-- 'ग्वाल होकर राजा के वस्त्र पहनना चाइते हो क्स के दूत सुनेंगे तो तुम्बें प्राणा दंढ देंगे। यह सुनते ही कृष्णा ने घारेकी का वधा किया उसके बन्य साथी वस्त्र फैक कर भाग गए । कृष्णा तथा बतराम ने सुन्दर वस्त्रौं को ते लिया शेषा गोप बालकों को वितरित कर दिया ।

१ - वशम स्वध्य - १८२६

२ - वहीं - १६६०

३ - कीर्तन- ११२५-११३१

माली पर कृपा : रजक का वधा करने के उपरांत कृष्णा सुदाम माली के घर में प्रविष्ट हुए । दूर से इन्हें देल माली ने प्रणाम किया और उचित जातन प्रदान कर इनका सत्कार किया । मालाकार ने शौरभी पुर्व्यों की माला कृष्ण को पहनाया और अवला मिन का वरतान प्राप्त किया । सूर ने भी मादी का नाम सुतामा लिला है । बुठ्या उदार : सूरदास ने बुठ्या सुन्दि। का चित्रण केवल एक पद में किया है। शंकरदेव ने की तीन तथा दशम स्कंघ में शुळ्या की मनित का वर्णन किया है। सुदाम माली को बर दे कृष्ण राजमार्ग पर बले जा रहे थे और कुटजा कंस के लिए चंदन पात्र ले जा रही थी। कृष्ण की रूप माधारी को देख वह लुख्य हो गई, दोनों माहयाँ के शरीर पर सुरंभित चंदन का लेम किया । मकत की इस प्रीति को देख कृष्ण ऋत्यन्त प्रसन्न हुर और उसके साथ काम क्री हा की । कृष्ण का रमरी पाकर कुळा युक्ती दिव्य सुन्दरी हों गर्ह । शंकरदेव ने सूटजा का नाम सरंघ्री भी लिखा है । ध्ननुभंग तथा लंख वधा : शंतर्देष ने कीतीन तथा दशन एकंचा में इन घटनार्थों का विस्तृत तणीन निया है। पूर ने भी अनुमंग का उत्लेख कंस वाश के पूर्व किया है। कृष्ण के स्मरी करते ही आनुषा टूट कर भूमि पर गिर पड़ा- आनुषा मंग का शब्द सुन कर कंस की श्रत्यन्त श्रारन्ये हुशा । शंकादेव ने इस घटना का विश्व विश्वण विया है । यज्ञशासी में सूर्य के सदृश बनुषा प्रकाशित हो रहा था- बस्त्र शस्त्र से सुसज्जित सेनिक उसकी रचाा कर रहे थे। रताकों की वाध्या की अवहेलना कर कृष्ण ने धनुषा को उठा लिया- उनके छूते ही धनुषा देसे दूटा ैसे मच मर्जा इंस को तोड़ दे। कंस ने अनेक सेनिकों को कृष्ण- राम को वेदी बनाने के लिए मेजा किन्तु वे असफल रहे । कुष्णा ने धनुष्णमंग और सैनिकों का वध कर चापरि बजा कर गोप बालता के साथ मृत्य किया । शंकरदेव ने कीर्तन ने कृष्ण व दिध-मात लाने का उत्लेख किया है।

१ - कीर्तन - ११३१ - ११३६

२ - बुक्सा०- पन सं र पृष् १२६

३ - कीतीन - ११४३ + ११४६

४ - दशम स्योधा- १७९४

प - पू०- पू०सा०- पर २१

६ - वहान - १७३ - १७४२

७ - कीर्तन- ११५६

कृष्ण इतारा संपूर्ण सेना नस्ट किये जाने के उपरांत भी कंस ने वासुदेव को कारागार से मुक्त नहीं किया और उन्हें मारने का प्रशास करने लगा । मार्ग में कुकल्य कृष्ण की हत्या करने के लिए कैठा था, उसे देख कृष्ण ने अपना वस्त्र संमाला और हाथी से मार्ग छोड़ने को कहा किन्तु हाथी ने उनके अनुरोध की और ध्यान न दे उन पर प्रहार किया । जिस प्रकार सिंह हस्ती को मूमि पर गिरा देता है, उसी प्रकार कृष्ण ने हाथी करें गिरा उसके दोनों वांत तोड़ दिया । सूरदास ने गज की हत्या राम-कृष्ण द्वारा कराई है दोनों माइयों ने हाथी का एक एक दांत अपने कंधी पर रख लिया । इसके उपरांत कृष्ण ने वाणूर का वधा किया- जिस प्रकार वायु के प्रवल मनोंके से वृता उसह कर गिर पहले हैं, वैसे ही वाणूर कृष्ण के आधात से गिर कर मर गया -- बूट आदि अन्य सभी मल्लों का वफर कृष्ण ने किया । सूरदास ने भी संकरदेव की मांति वाणूर तथा मुस्टिक वधा का वर्णन किया है । तथिमा गुण द्वारा कंस के सिंहासन पर कृष्ण जा बैठे - कंस भी खंग तेकर कृष्ण पर आक्रमण करना वास्ता था किन्तु कृष्णा ने कंस के केश किरीट सहित पकड़ कर मूमि पर गिरा दिया और खाती पर चढ़कर उसका वधा किया । सूरदास के अनुसार कृष्ण ने कंस को चतुर्गुंक रूप का वर्शन दिया था और कंस को निर्वाण पर प्राप्त हुआ । कंस वया से प्रसन्त हो देवताओं ने सुमन वर्षा की ।

जगरेन को राज्य दान, वासुदेव-देवकी को कारागार से मुक्ति, उपनयन संस्कार : असमिया और हिन्दी के कियों ने इन प्रसंगों का वर्णन किया है । शंकरदेव ने अन्य कियों की अपेता इन घटनाओं की ओर अधिक ध्यान दिया है । शंकरदेव के अनुसार कृष्ण-राम ने शत्रुओं का संहार कर माता-पिता के समीप आर तथा उन्हें लौड वंधन से मुक्त किया । वासुदेव देवकी पुत्र को देख परम हर्षित हुए वेष्णावी माया का विस्तार कर चक्रपाणि ने उन्हें मोहित किया । वासुदेव अपने पुत्र की वीरता पर हर्षित हुए और कृष्ण को वासुदेव देवकी ने कंठ से लगा लिया - विप्नों को बुलाकर गोदान दिया । कृष्ण ने कंस का राज्य उग्रसेन को दिया, समस्त पुरवासी कृष्ण को चंवर हुलाने लगे और कंस के भय से मागे

१ - कीतीन - ११६८ - ११७८

२- बुब्बुड सा०- २२-२३

३ - कीरीन - १२२०

४ - यु० यु० सा० - २६

u - कीतमें - १२३३

६ - बुल्सा०- २७

लोग लोट श्राए । सूरदास के अनुसार वासुदेव कुल व्यवहार का विचार कर हिर तथा क्लथर का यशोपवीत संस्कार किया श्रीर नाना प्रकार के व्यंजन को खिलाया । व कृष्ण ने गर्ग से गायत्री मंत्र लिया । शंकरदेव ने भी दशम स्कंथ में इस घटना का विवरणा सूरदास की भांति दिया है । गर्ग से गायत्री मंत्र लेने के पश्चात वे दौनों माई अवंती देश के गुरु संदीपनि के यहां चले गर । दौनों माइयों ने गुरु की श्राला का पालन राजाला के समान विया । चौसठ कला तथा सांगोपांग वेद का श्रध्ययन हु कृष्ण राम ने गुरु के यहां किया ।

गुरु पत्नी के अग्रह पर कृष्ण प्रभास दोत्र से उनके मृतक पुत्रों को लाते हैं। पंत जन्य नामक दैत्य गुरु के पुत्रों को सागर में लाया है, यह सागर ने कहा । इस शब्द को सुनते ही कृष्ण ने सागर में डुककी लगाई और दैत्य का वधा किया। शंकरदेव के अनुसार कृष्ण को यहां उनके गुरु के पुत्र न मिले। यत: वे यमपुरी की और चले और संजनिण यम की नगरी में शंख बजाया। शंख कह, घुन को सुनते ही यमराज ने कृष्ण के आदर सत्कार की व्यवस्था की। उनके अनुरोध पर यमराज ने गुरु पुत्रों को उन्हें लौटा दिया। इन दिवल पुत्रों के सहित दौनों माई गुरु के यहां वापस आए इन्हें उन्हें मेंट किया। विश्र ने हिंबत हो कृष्ण राम को अनेक आशीवाद दिये।

कृष्ण द्वारा उद्धव को ब्रज मेजना : शंकरदेव ने मामक्त का अनुसरण किया है। कृष्ण उद्धव को अपना संदेश देकर नंद यशोदा को प्रसन्न करने तथा गोपियों की विर्ष्ट व्यथा को दूर करने के लिए ब्रज मेजते हैं किन्तु सूरदास के कृष्ण के उद्धव गोपियों को ज्ञान की शिक्षा देने के लिए महीं जाते हैं +6 वे वहां जाकर स्वयं अपने ज्ञान की अपूर्णता का वोध करते हैं। असमिया में मामक्त का अनुकरण किया गया है। शंकरदेव के कृष्ण केउद्धव वृहस्पति के तुत्य बुद्धिमान है और वे गोपियों तथा माता पिता को शांत करने के लिए ब्रज जाते हैं।

१ = बुल्सा०- रूट

२ - वही - ३०

३ - दशम स्वांज- १६४६-१६४६

४ - वहीं - १६६६- १६म्ब

५ - वशम स्बंध - २०२५

नंद यशौदा को उद्धव का सांत्यना दान : उद्धव के आगमन का समाचार पाते ही नंद यशोदा आनंदित हुए, उद्धव का आलिंगन करते ही उनके लोचनों से अशु धारा प्रवाहित होने लगी । मागवत की मांति शंकरदेव के उदव भी गोध्यु लि वेला में व्रज पहुंचते हैं । उद्धन ने यशोदा को समकाया कि नारायण अवतार हैकर नरलीला वर रहे हैं और आप लोग उनके दश्ने के लिए त्राकुल न हों । संपूर्ण ज्यात के स्थावर जंगम पदार्थी में कृष्ण विषमान हैं, कोई भी वस्तु उनसे मिन्न नहीं है। उद्भव के प्रबोध द्वारा यशोदा को शांति प्राप्त हुई और उनका संताप कम हो गया । नंद यशोदा से वार्चालाप करते उद्धव की रात्रि व्यतीत हो गई । सूर्तास ने भी नंद यशोदा और उद्धव की वार्ता का उल्लेख किया है । गोपी उद्धव संवाद : शैंकर्देव ने दशम स्कंघ मागवत की तीन तथा वर्गात में इस प्रसंग का विशद वर्णन किया है। दशम स्कंब का वर्णन मूल मागवत के अनुसार है। की तैन में गो फि यों की विरह दशा को संदित प्त वर्णन है, उद्भव उन गो पियों को अपने ज्ञान संदेश द्वारा शांत कर देते हैं। शंकरदेव ने वरगीत में कृष्ण और गो पियों की विरहावस्था का सम्यक चित्र उपस्थित किता है। गोपियों के वियोग से कृष्ण स्वयं दुवी है वे उद्धा को प्रज मेजरे हैं और शफ्य देशर कहते हैं कि सला वृज नास्थिं को शांत करी । बरगीत में केवल कृष्ण तथा गो पियों के संदेश का वर्णन उद्धव के मुख से कराया गया है। इस गूंध में उद्धव के उपदेश जी उन्होंने गो पियाँ को दिया था का सर्वथा अभाव है। शंकर देव के दशम स्कंथा में एक प्रमार का भी प्रसंग जाता है , जिस समय गोपियां सदन से वाति लाप करती हैं उसी समय एक प्रमर उद्भा हुआ गोपियों की और जाता है। इसे देख गोपियां इसकी और संकेत कर उद्भव से वार्ता करती हैं। हे मध्युकर तुम धूर्त कुंट्रंब के ही ,सपत्नी के कुब का कुमकुम अभी लगा हैं, दूर रह दूर रह मेरे चरणा को न स्पर्श करें। उद्धव ने गो पियों को कृष्ण के वास्त किक रूप से परिचित कराया और ज्ञान का उपदेश दिया । कृपा मय माध्यव ने भक्तों के दुस के परिचारार्थं ही उद्भव को क्रव मेजा था । गो पियों की परम मनित देल उद्भव ने उन्हें प्रणाम

१ - दशम रमध्य - २०४०

२ - वही - २११३

३ - सूर्वा - २८

४ - कीतीन - १२५६

^{# =} शंo वo पुo ३२

औ क्शम खोश पर २१४४

७- वहीं - पद सहछ

विया तथा उनकी मनित मावना की प्रशंता की । जो ऋतानी , बजाति, तथा पापी
कृष्ण का मजन करते हैं वे महात्मा हो जातेहें । कृष्ण मनित के लिए जाति, आचार
का निकार नहीं है । गोपियों का गुण गान करते करते उद्धव आनंद विमोर हो गए ।
जूज भाषा के कियों ने गोपियों द्वारा उद्धव के खंदेश की आलोचना, परिहास तथा
तिरस्कार कराया है, ज्ञान और योग साधना का उपहास किया गया है उद्धव अंत में प्रश्रिष्ठ
पराजित होकर भनित की श्रेष्ठता स्वीकार करते हैं किन्तु शंकरदेव के उद्धव ने ज्ञान-योग क
की चर्चा गोपियों के सम्मुख न की, उनके उद्धव ने गोपियों के प्रेम की अत्यधिक प्रशंसा
की है।

उद्धव का कृष्ण के सम्मुल ब्रज दशा का वर्णन : सूर्दास के उद्धव ब्रज का विस्तृत वर्णन कृष्ण को देते हैं और गो पियों की अगाध मित्त के महत्त्व पर अधिक बल देते हैं। नंपदास ने भी इस प्रसंग का संचित्र व वर्णन मंदरगीत में किया है। शंकरदेव ने दशम स्कंथ के पूर्वाद्ध में इसका उत्सेख मात्र किया है।

मुठा रमण , अकूर गृह गमन : गोपी उद्धव संवाद के पश्चात गृष्णा ने सुव्या की वांछा पूर्ण की भीर उसे मोदा प्रदान किया । शंकरदेव ने इस प्रसंग का वित्रण भागवत के अनुसार विधा है । सूरदास ने इसका वर्णन गोपी उद्धव संवाद के पूर्व किया है । असिया और हिन्दी के कांच्यों ने इस संबंध में कोई विशेषा विवरण नहीं दिया है । शंकरदेव के अनुसार सुव्या रमण के पश्चात कृष्णते अकूर के निवास स्थान पर जाकर उसका भातिस्थ स्वीकार किया । अकूर ने कृष्ण का स्वागत करते हुए कहा प्रमु आज मेरा घर आप के आगमन से तीर्थ तुत्य पवित्र को गया है । भागवत में अकूर तथा पांडव मिलन का वर्णन नहीं मिलता है किन्तु शंकरदेव के कीर्तन में कृष्णा ने अकूर से पांडवों का समाचार प्राप्त करने के लिए आदेश अवस्थ दिया है ।

जरासंब्र , कालपन और मुनसुंद वघ : शंकरदेन ने इन घटनाओं का सिनरतार वर्णन िर्तन ग्रंथ में िया उं पूरवास ने सन कथाओं का वर्णन अत्यन्त संक्षिप्त रूप में किया है। कंस वध के पश्चात उसकी दो पत्नियां अपने पिता जरासंघ्य के यहां गई। कृष्ण के इस कार्य से जरासंघ्य अधिक को घित हुआ, तैइस अन्ती हिणी सेना सहित मधुरा नगर

१ - दशम स्वीधा पद २२५५

२ - वही - २२६१

३ - कीर्लन - १२७६

४ - वहीं - १२८३

पर शाकृमण किया । कृष्ण ने तीन मास में स्कान्नत इस विज्ञाल सेना का संहार कर किया, जलमा ने जरासंघ से मरलसुद्ध किया । इसी यवन महाराज कालस्यन ने तीन कोटि म्लेच्यों को लेकर मथुरा को धेर लिया । कृष्ण उसे द्वारका से गए और वहां के विविध स्थानों को दिराया । कालस्यन ने कृष्ण को तेलि जाति का वंश्रज तहा और पालायन धर्म को अनुचित ठहराया । इतना कहते ही नारायण किसी पर्यंत की कंदरा में दिप गए -- कालस्यन ने देला कि स्क मनुष्य मीतर हो रहा है --इसे कृष्ण अनुमान कर उस यवन ने प्रहार किया मुचुनुंद के दृष्टिपात करते ही कालस्यन अपने शरीर की जिन्न से जलकर मस्म हो गया । शंकरदेव के मुचनुंद ने केवल कृष्ण की स्तृति की -- उसका वध कृष्ण ने नहीं किया है ।

च्या का बीबा

ह लिमणी हरण : इस विकाय को तेकर संकरदेव ने एक का व्य और एक नाटक लिसा है हा निमणी हरण का व्य उनके युवाकात की रचना है, हिन्दी में इस विकाय पर मिलक नहीं लिसा गया । नंदवास का रू किमणी मंगल और पूर सागर में श्री कृष्ण रू किमणी विवाह सेबंजी कुछ पद मिलते हैं । सूरवास तथा नंद दास ने मागन्त में विणित क्या का अनुकरण किया है किन्तु असमिया विष्णाव कवि संकरदेव ने हरिवंश की अनुत कथा में मागवत कथा को मिश्र कर विया -- वोनों की कथा का मिश्रण कर पद रचना आरंभ की । संकरदेव ने कथा की सरसता बढ़ाने के लिस ऐसा किया -- उन्होंने कहा है --

ेवुयो कथा पद बंधो करो मिसलाइ

येन मध्य मित्र दुग्ध स्वाद ज्ञाति पाय ।

संतर्देव के रु विमर्णी इरण नाट में काच्य की मांति सरसता नहीं है। इस नाटक की कथा रु विमर्णी के सींक्य वर्णन से बारंम होती है सुरिम नामक माट रु विमर्णी का संदेश पत्र देशर न्वारका पहुंचता है। दूसरी बोर कृष्ण का संदेश तेकर हरिदास नामक मिन्नुक माट रु दिनणी से मिला है और कृष्ण के सूप-गुण की व्याख्या करता है । सूरदास और नंदरास ने दिवल का नाम हरिदास नहीं दिया है यथिप पित्रका देते समय स्क दिवल का उत्लेख मिलता है । सूरदास की रु विमणी कहती है दिवल पाती दे कहियों स्थामहिं। विम्र सुम द्वारकाश्वीश से जाकर कहना कि सुंद्विनपुर की राज्युभारी रु जिमणी सदेव सुम्हारा नाम जफी है । उसने अपना शरीर तथा जात्मा श्वाप को संस्थित समर्पित कर दिया है ।

कृष्ण के नाम रु क्मिणी की पत्री : शंकरदेव ने रु क्मिणी द्वारा भेजे गए पत्र का भी उत्तेल किया है ,इस पत्र से तत्कालीन असमिया समाज का शिष्टाचार प्रकट होता है। पत्र इस प्रकार है:

१ - बंब्नाव - पुर 🖴

२ - सूर्वा०- वा० व० - ३-४ पूर्व १६७

३ - बंव नाव - पृव एप

४ - वहीं - पृ० ७४

शंकरदेव की रुविमणी सिंख तीतावती से वेद निश्चि द्विन को बुलाकर पित्रका देती है और उन्हें द्वारका जाने के लिए प्रेरित करती है। सुर्वास की रुविमणी ब्राइमण को प्रणाम कर द्वारका जाने के लिए निवेदन करती हैं और पुरस्कार की घोषण करती है।

गोरी पूजन: शंगरेन की रुविमणी ने सिल्यों सिल्त मनानी के मंदिर में प्रवेश किया स्थेक नैनेच प्रदान कर उन्होंने दश मुजा की पूजा की — माता प्रशन्न हो, मुफे ऐसा बर दो कि मेरे स्वामी माध्यव हों, रुविमणी ने इतना कह कर देनी को साष्टांग दंढनत किया। दुर्गों के शरीर की माला गिर गईं, रुविमणी को मनोनीत वर मिल गया। पूरवास की गौरी की रुविमणी की स्रवीना वंदना से प्रसन्न हो मुस्करा उठीं तथा उन्हें मनोवां छित वर प्रदान किया।

रु विमणी हरण तथा कृष्ण का अन्य राजाओं के साथ रण : गजामनी रु विमणी ने मुस्कराते हुए राज्य समा में प्रवेश किया, जिन राजाओं पर उनके कटाचा पढ़ते थे वे काम बाण से विंथ कर क्यांथित हो जाते थे। सभी वृद्धा रु जिमणी के रूप का दर्शन कर पुष्थित हो उठे, पुष्प की गंधा पा प्रमर रोर करने तो। पुष्पथान्या ने पुष्प वाण छोड़ा-प्रभान राजाओं का मन विचलित हो गया, वे रु विभणी के रूप को देख कर पृथ्वी पर देखें विरा रु विभणी के दिव्य रूप को तृष्ट्या भी मोखित हो गए। कृष्ण ने रु विभणी के दोनों हाथों को पकड़ कर अपने रूथ में विठा लिशा और दारु को तीव्र वेग से रूथ हांकने का आदेश दिया। लालों राजा कृष्ण को देखते ही रह गए, लज्जा से उनका मस्तक नत हो गया।

शिशुपाल अन्य राजाओं की सहायता से कृष्ण को पराजित करना चासता था , उसने माध्यव के उत्पर ब्रह्म अस्त्र का प्रयोग किया -- अक्षेत्रं के प्रहार से शिशुपाल का धानुष काट दिया और एक शर से सार्थी को मार गिराया, कीस वाण के प्रहार से रथ को नष्ट

१ - गंजनार - पृष् ७०

२ - स्वता०-द्वा ७न०- पद- ३

^{3 - 100 50 - 544-540} do 50

४ - युव्याव- इवाव वव- ६

^{1 - 520 20 - 502-50€ 20 56}

६ - वही - रम्ब पु० २२

मृष्ट कर दिया । शिशुपाल ने गता उठाकर युद्ध किया, उसे भी शृष्ण ने चार शर के प्रकार से लंड लंड कर दिया शिशुपाल साठ वाणों के श्राधात से भूमि पर गिर गया, भूमि पर पड़े हुए शिशुपाल को देल थादवों ने कृष्ण की जय जय कार की ।

विवाह वर्णन : शंकरदेव ने कृष्ण- रु विभागी का विवाह द्वारका में देवकी की उपस्थित में संपन्न होना किहा है। कृष्ण के विवाह की कथा सुन विश्व के प्रत्येक मांग से लोग द्वारकापुरी पथारे। इस समय ब्रह्मा और नारद पुत्रों सहित उपस्थित हुए और विवाह गंडम में होम किया। इस समय ब्रह्मा और नारद पुत्रों सहित उपस्थित हुए और विवाह गंडम में होम किया। इस समय राजा मीक्सक ने अपने साथ से कन्या दान किया। इसके उपरांत कृष्ण ने ब्रह्मा रुष्ट्र इन्द्र आदि देवता पाताल के वासुकि और नागीं पृथ्वी के सक राजाओं को सुगंध पुष्प तांबूत वस्त्र अलंकार दे कर संतुष्ट किया। शंकरदेव के रु विभागी हरण काव्य में विवाह के लोकाचार का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसमें शिक्षप्रमा का उत्तेख प्राप्त होता है। शंकरदेव की मांति सूरदास ने भी विवाह का विश्व वर्णन किया है ब्रह्मा उन्द्र की उपस्थित में कृष्ण- रु विभागी का विवाह संपन्त करते हैं। नंददास ने विवाह का संज्ञान वर्णन किया है।

पुतामा दा दिय मंजन : संगर्देव ने सुदामा के स्थान पर दामोदर निप्र लिला है। इस दिए निप्र की कथा को लेकर उन्होंने की तैन का एक संह लिला है। पुरदास तथा संगर्देव दोनों ने ही एकही कथा का वर्णन किया है -- सूरदास के अनुसार सुदामा की उपस्थिति में कृष्ण के साथ क किमणी थीं, संगरदेव के अनुसार लक्ष्मी थीं। दामोदर निप्र की पत्नी ने आकर स्वामी के कहा कि प्रमु हम लोग कब तक इस प्रकार दुख मोगते रहेंगे, याप के मित्र माध्य द्वारका में हैं वे हमारी सहायता कर सकते हैं। ब्राह्मणी ने कुछ वावल मांग कर एक दोटी सी गठरी सुदामा को कृष्ण को मेंट देने के लिए दे दिया । सुदामा यह सीचते सीचते चल रहे थे कि किस प्रकार कृष्ण मुक्त मिलेंगे। राजव्यार पर सुदामा को किसी रहा के न रोका, वे प्रसाद के मीतर पहुंच गए। बाल मित्र को देख प्रभु नेंगे पर मिलेंगे याए। कृष्ण ने स्वयं अपने हाथों से सुदामा के वरणा खोया और स्वर्ण आसन पर

१ - स्०६० - ३७० - मृ० ३०

२ - वैवनाव - हर्द

३- वहा - ध्य

६ - ५७.० ६० - तदे- हता पे० तं

ए - कीतीन - १५=३ पृ**० १४०**

वैठाया । जम वृष्ण सुदामा की पत्नी- की मेंट को प्रस्णा कर एहे थे, कमला ने उनका सथ पन्द तिता । इसके उपरांत सुदामा को कृष्ण ने छात्रावत्था की वह घटना सुनाई जिसमें बुदामा ने वृष्ण की सहायता की थी । प्रातः काल वृष्ण ने हुदामा को विदा किया । सुरामा मन है। मन सोच रहे थे कि मैंने कृष्णा से बुख न मांगा न उन्होंने बुख दिया ही। पर पहुंचते उनकी पत्नी ने नवनिर्मित दिव्य प्रताद में उनका स्वागत किया । रयमंतक हरण : शंतरदेव ने एस प्रसंग का विस्तृत वर्णन की तीन में किया है । सक्याप्त सूर्य के परम मक्त थे और सूर्य ने प्रसन्न छोला उन्हें स्थमंतक मिण दे दी, जिसे वे सदैव कंठहार में पहनते थे। स्यमंतक मणि प्रति किन बाठ भर स्वर्ण प्रक्ति कर्ती थी और जहां वह रस्ती उस देश में दुर्मिता न पड़ता था । कृष्ण ने सक्ताजित से मणि मांगी किन्तु उन्धीन न दिथा । दूसरे समाजित का माई प्रसेन मिण धारण कर मुगया करने गया, वहीं उसे सिंह ने मार डाला । जांबवंत ने इप्र इस सिंह की इत्या कर स्थमंतक माण छीन किया शीर जंबरा में मिण को छिपा दिया । जब प्रसेन दूसरे दिन भी घर न लौटा तो समाजित ने यह अनुमान विथा कि वह स्थमंतक मणि धारण कर वन में गया था, निजैन वन में बृष्णा ने उसे मार दिया होगा । कृष्णा अपनी सेना सहित माण के संभान के लिए वल पहे । कृष्ण तथा जांबवंत बट्ठाइस दिन तक केंद्र त में युद्ध करते रहे । अन्त में प्रमु के प्रभाव से उसे शाम हुआ और स्थमंतक माणा कृष्ण को लौटा की और अपनी कन्या का विवाह कृष्ण से कर किया । समाजित को राज्य समा में जामंत्रित कर कृष्ण ने स्यमंतक मणि दे दी । और अपनी पुत्री संस्थमामा का कृष्ण से विवाह कर दिया, कृष्ण ने सरप्रज समाजित को स्थनंतक मणि लौटा दिया । वृजमाणा में सत्यमामा के विवाह का उत्सेख नहीं मिलता है। पूरदास के अनुसार कृष्ण ने जांबवंती से विवाह किया था।

१ - वीली - १६०६ पु० १४३

२ - वरी - १५००-१५१६ पृ० १२४-१२५

३ - यही - १४२४- पु० १२६

४ - वहीं - १४६६ - १४७९ पु० १३०

सत्यमामा का मान तथा नरकासुर वघा : शंकरदेव ने इस प्रसंग की लेकर पारिजात हरण नामक स्कांकी नाटक की रचना की है। नारद स्वर्ग से पारिजात कुसुम लाकर कृष्ण को अपित करते हैं और उसका महिमा वर्णन रु किमणी की उपस्थिति में करते हैं जो इस पुष्प को घारण करेगा वह सदैव सीमाग्यशाली होगा। इतना सुनते ही रुविमणी ने कृष्ण के चरणाँ का स्परी कर विनती की प्रमुयह पुष्प मुके प्रदान करें। कृष्ण ने सप्रेम पारिजात कुसुम को रु किमणी के केश में लगा दिया । सत्यमामा के मंदिर में प्रवेश कर नारद ने इस घटना का अतिरंजित वर्णन किया और सत्यमामा के दुर्भाग्य पर दुख प्रकट विया । मानिनी सत्यमामा को कृष्ण ने पारिजात पुष्प देने का वचन दिया । सत्यमामा सकित कृष्ण गरु ह के स्कंथ पर चढ़ प्रागज्यो ति वापुर पहुँचे और शंत वलाया, इसे सुनते ही नरकासुर युद्ध के लिए दौड़ा । कृष्ण ने वाण प्रहार् कर उसका मस्तक और दिया देकताओं ने कृष्ण पर पुष्प वर्णा की तथा दुंदु भि बजा कर उनका अभिनादन किया । नार्द कृष्ण के अनुरोध पर इन्द्र की सभा में गए और सत्यमामा के लिए पारिवात पुष्प मांगा। सनी नेपुष्प देना अस्वीकार कर किया । इसके उपरांत सनी तथा सत्यमामा ने पारिजात के लिस नलह निया । सनी ने इन्द्र ने पुरु बार्थ की मत्सीना की,इन्द्र ने कृष्ण के रूपर वज्र प्रहार किया किन्तु कृष्ण ने उसे नष्ट कर दिया । इन्द्र ने भाया से मोहित होने के कारण ईस्वर से सुद्ध विया, इसके लिए उन्होंने पाश्वाताम विया और कृष्ण की करवद वंदना की । पारिजात पुष्प को इन्द्र ने सहर्ष अन्य संपित के साथ कृष्ण को शर्मित कर दिया । सत्यभामा के उपवन में कृष्ण ने पारिजात रोमण किया और उनका मनोरथ पूर्ण हुआ । नंद-यशोदा और गोपियों से ती कृष्णा-बलराम का कुरु होत्र में भिलन : मागदत के दशम के उरताई की क्या को लेहर शंकरदेव ने इहा सो को पर्वों की : हुक पोत्र की रचना की है। वृष्ण-बसराम इवारका के नागरिकों सक्ति कुरु दोत्र जाते हैं श्रीर वहीं रनान कर विश्रों को दान देते हैं । इसके उपरांत प्रोपदी कृष्ण की प्रमुख रानियाँ से मिसी और उनका श्रादर

१ - शंब्साव - पुर १३६

२ - वरी - पु० १३६

३- गं०ना०- १५६

४ - वही - १५६

प् - वहीं - १६१

६ - वही - १६४

७ - गू० - ३१ पु० ३

सत्कार किया । कृष्ण के कुरु दोत्र ज्ञानमन का समाचार जब गोकुल वासियों को प्राप्त हुना तो वे अस्थन्त हिंगत हुए भीर कृष्ण के दर्शनार्थ यात्रा का प्रबंध किया । सर्वप्रथम वासुदेव नंद से मिले और उनके प्रति शाभार प्रकट किया कि शाप ने पिता तुत्य मेरे पुत्रीं का पालन किया - इसके उपरांत यशोदा कृष्ण बलराम से मिल कर रौने लीं, कृष्ण की बाल लीलाओं का स्मरण कर उनका दुत दस गुणा अधिक ही गया । कृष्ण की व्रवसुंदिर्शों ने मंडल के मध्य बैठा कर उनकी आंख मर देला, उनका संताप दूर हुआ । गो पियां व्रज से द्वारका जाने वासे पथिकों से कृष्ण के लिए सँदेश मेजती हैं । इसके उपरांत रु विमणी से कृष्ण व्रव की क्रीड़ायों का वर्णन करते हैं। रु विमणी स्वयं कृष्ण को वृज जाने का अनुरोध करती हैं। यादवीं सहित कृष्ण सूर्व ग्रहण के अवसर पर कुरु दोन पधारे और जननी यशोदा को सूचना देने के लिए दूत नेजा । नंद-यशोदा, गोपियां श्रीकृष्ण के दरीनार्थ कुरु दीत्र पहुंची । रु निमणी ने मी पियाँ का वृद्ध समुदाय देव कर कृष्णा की सती राधा के विषय में पूछा। कृष्ण ने राधा की बीर संकेत किगा ही था कि वे दौनों बापस में ऐसी मिलीं जैसे एक पिता की दो बिहुड़ी हुई पुत्रियां मिली हों -- राषा को रुक्तिणी अपने मंदिर में ते गई सीर नाना प्रशार के आमूनणों से अलंहर दिया । वका वर्णन : सैन्दिव का वर्षा वर्णन दशन स्कंध भागवत का क्रायानुवाद मात्र है, कहीं कहीं लौक प्रचांका उपनायों के योग से यह वर्णन अधिक याकर्णक हुया है। तुलसी दास नै राम सन्मण के संवाद इवारा वर्णी वर्णन किया है। शंकरदेव के दशम स्कंब में शुक्नुनि स राजा परिचित्त से वर्णा का वर्णन करते हैं। वर्षा काल में पूर्व, चंद्र तथा जारागण मेगों से दक जाते हैं जैसे जीवात्मा शरीर से हिम्म होता है। पूर्वी ग्री व्य के तप से तप्त हुई, वह अब वर्षा के जल से पुन: हरी मरी हो गई जैसे तप करने से देख पूल जाता है और मीन मोगने से शरीर मुख्ट हो जाता है। बर्का की रात्रि में घर घर त्रीन जलती है आजाश में तारा गण नहीं दिलाई देते हैं जैसे कलिसुन में वेद-शास्त्र गादि ग्रंथ लुप्त हो व गए हैं और

१ - कु० - ४० पु० ४

२ - वहीं- ११३ पु० ह

३ - वहीं - १३६ पु० ११

४ - पूर्वा - व्वा व - २७ पुर २०३

प् - वडी - प० ३५ पृ० २०५

^{4 -} वही - प० ५० पृ० २००

लोग पालंड को सुनते हैं। मेघों का नाद सुनने पर मेडक रेसे बोलते हैं जैसे गुरु के पाठ देने के पश्चात शिष्य गण पाठ पढ़ते हैं। सुद्र निद्यां अपने कगार को तोड़ कर हमर उमर से कहती हैं। नदी- का संगम सागर एक हो गया है जैसे जिस योगी का काम कष्ट नष्ट नहीं होता है वह विषयों को पाते ही प्रष्ट होता है। मुसलामार वृष्टि से पर्वत को कुछ भी कष्ट न हुआ जैसे जिस व्यक्ति का मन कृष्ण में लग गया है उसे वलेश का मय नहीं। सारे मार्ग तृण द्वारा ढक गए हैं, जिससे लोगों का आना जाना बन्द हो गया है, जैसे दिवन वैदाम्यास नहीं करते हैं और अपना मार्ग मूल गए हैं जिससे केंद्र मार्ग नष्ट हो गया है। मेघों में विजली क्मक कर लुप्त हो जाती है जैसे महापुरु जां के मिलने पर भी वैश्या का मन स्थिर नहीं होता है। मेघ का गर्जन सुनकर मयूर प्रसन्न हो नाचने लगते हैं, जिस प्रकार परम दुल से दुलित गृहस्य हिर मन्त को पा प्रसन्न होता है। क्कोवा पत्ती कंटक पूर्ण सरोवर के तट पर विआम करता है -- गृहवास के दुल को जानते दुए भी दुराश्य प्राणी उसे नहीं छोड़ते हैं। मेघ की प्रबल वर्जा से आलि सब मार्ग रहे हैं जैसे किल्युग में वेद पय का त्याग कर लोगों ने पासंड को ग्रहण कर लिया है, वायु के चलने से मेघ चारों और से वृष्टि करते हैं जैसे वैदिक विधान के पुरोहित राजा से दिए को दान दिलाते हैं।

तुलसीदास के राम चरितमानस और कंकरदेव के दशम स्कंध्न के वर्णा वर्णन में अधिक साम्य दिलाई देता है। तुलसीदास के राम लदमण से कहते हैं जैसे सल की प्रीति स्थिर नहीं होती है वैसे ही घन में दामिनि दमक कर लुप्त होती है सल के करू क्वन को भी संत सहन कर लेते हैं जैसे गिरि बूंदों के आधात को सहते हैं। कोटी निद्यां वर्णा होते ही कगारों को तोक़कर इध्यर उध्यर से बहने लगती हैं, जैसे घोड़ा धन पाते ही सल उन्भव हो जाता है, भूमि पर निरते ही मेध पानी हो जाता है जैसे जीव संसार में आते ही माया द्वारा आच्छादित हो जाता है। भूमि हरित तृष्णों से ढक गई है, मार्ग दिलाई नहीं देते हैं जैसे पासंह्वाद के कारण सद्भंध लुप्त हो कर ए हैं। बार्ग और मेढकों का शब्द सुनाई

१ - शं० व० - ७७५-७व्ह पु० ६५

च्रे- वहीं - ७६२-७६६ पु० ६६

३ - वहीं - ७६५

४- वहीं - ७६७ पु० ६७

देता है -- जैसे बृह्मनारी गण वेद पाठ कर रहे हों। अर्थ जवास के परे गिर गर हैं, जैसे सुन्दर राज्य में सल का उद्यम समाप्त हो जाता है। उपकारी की संपित की मांति पृथ्वी शस्य स्थामता हो गई है। चक्रवाक पत्ती नहीं दिलाई देता है जैसे कल्सुग में धर्म दूर हो जाता है। प्रवल पक्त के वेग से मेथ इघर उघर हो जाते हैं जैसे कुपुत्र के उत्पन्न होने से कुल का सद्ध्यम नष्ट हो जाता है। सूर्य दिन में कभी दिलाई देता है, कभी घोर अंध्रकार हो जाता है, जैसे सत्संग में ज्ञान उत्पन्न होता है और कुसंग में नष्ट हो जाता है। वर्जा ख्रु का वर्णन सूरदास ने संयोग और वियोग दोनों पत्तों के रित माव उदीपन के लिए किया। वन वन में को किल कंठ सुनाई देता है, दादुर शोर करते हैं। घन घटा के बीच नम में श्वेत बग-पंगति दिलाई देती है। जैसी घोर घन घटा है, वैसे ही दामिनी दमकती है। पपीहा रटता है और वीच-बीच में मोर बोलता है। हरी हरी मूमि शोभित होती है और उसके उज्यर लाल रंग की बीर बृह्टी चिच चुराती है। मरी मरी सरिताएं मर्थादा तोड़ कर सरीवर के लिए उमंग वलीं।

शरद वणीन : शंकरदेव ने दशम में शरद बहु का वणीन किया है । मेघों के हट जाने से गगन निर्मेंत हो गया -- महासुकर सुरिम शीतल वायु वहती है, सरोवर के तट पर पुष्पों के उधान में पत्ती कलरव कर रहे हैं, जिस प्रकार योग प्रष्ट का दूसरे बार के अस्थास करने के उपरांत मन निर्मेंत होने लो-।- हू-मृष्की हो जाता है । आकाश के समस्त नदात्र प्रकाशित होने लो। पृथ्वी का पंक नष्ट हो गया, सरोवरों का जल स्वच्छ हो गया, मार्ग चलने योग्य हो गए । मेघों ने जल वर्षा करके अपने शरीर को शुम्र कर लिया, जैसे मुनि गण विच लाम का त्थाम कर शुद्ध होते हैं। प्रत्येक स्थान से पर्वत अब जल दान नहीं करते हैं जैसे जानी गुरु शिष्यों से समस्त गुप्त जान नहीं कहते हैं । अत्य जल की मछालियों ने यह न जाना कि जल सूख जाय-गा, जैसे बायु नित्य घटती जा रही हैं, किन्तु मृद्ध प्राणी ध्यान नहीं देता है । सूर्य के ताम से तालों में मछालियों की संस्था कम हो रही है, जैसे महादुती कुटूंब का मनुष्य दुत्व का जन्त

१ - राज्यान - पुरु ४८६-४६०

२ - ब्रह्में व० यू०- पू० ४६५

३ - शं० वशम- ६२९-६२४ पु० ६८

नहीं देखता है। शरत काल के सागर में उमियों का रोल नहीं सुनाई देता है जैसे वेद पा स्माप्त कर मुनि चित्त शांत करने के लिए बैठा हो। शरत काल में सूर्य ताप के दुल को चं दूर करता है जैसे विरह तप्त गोपियां कृष्ण का मुख देख शीतल होती हैं। दूर्य के प्रकारि होते ही पद्म वन विकसित हो जाताहै, जैसे राजा के उदय से सभी सुली होते हैं किन्तु चौर शाकुल होता है।

तुल्यीदास ने शरद ऋतु का वर्णन रामचरितमानस में किया है। कास फूल गए हैं ऐसा लगता है कि वर्षा का वृद्धत्व शा गया हो अगस्त ने पंथ का जल सुला दिया जैसे लोम संतोषा का शोषाण करता है, सरिता सर का जल निर्मल हो गया है जैसे संत के हुन्य से मद मोह का नाश होने पर वह शुद्ध हो जाता है सरिता-सर का पानी भीरे घ सूल रहा है जैसे जानी ममता का त्याग करता हो। नीति निपुण नृप के सुकृत्य की मां पृथ्वी पर पंक नष्ट हो गए हैं जल की कमी के कारण मीन व्याकुल हो गई जैसे कज़ानी हीन सुदंवी वितित होता है। जैसे हरिजन समस्त शाशाशों का त्याग कर देतेहें वैसे ही किना मेचों के शाकाश शोमित हो रहा है। कमल के फूलने पर सर ऐसा शोमित होता 'जैसे निर्मुण श्रृष्ट्म सगुण हो गया हो। रात को देल क्लाक दुलित होता है जैसे दुर्जन प ई संपित को देखता है। संतों के दर्शन से पातक नष्ट हो जाता है, जैसे शरदाताप का हर रात्रि का शिश करता है। ककीर हंदु को देखते हैं जैसे हरिजन हंश्वर को देखते हैं।

वर्गा के उपरांत शर्द इत का भी भूरदास ने किंचित उत्लेख विधा है "सरोवरों निस्त पर नर सरोज और कुमुदिनी फूल गई, चारू चंद्रिका उदय हो गई, घटाओं की किलमा अं तेज नष्ट हो गया। आकाश निर्मल हो गया, पृथ्वी पर काश कुसुम छा गए, स्वाति नचा अंग्या, प्रक्रिसेंड श्रीकिंड कुछ सरिता और सागर का जल उज्जल हो गया, जिसमें अल्कुल के सर्व कमल शोमित हो गर पर शर्द समय भी श्याम नहीं आए।

१ - शं० दशम - दर्ब - द्वश पु० ६६

२ - रा० च० मा० - पृ० ४६९

३ - व०- स० - पु० ४६७

पंचम अध्याय

विद्यान्त पदा

प्रस्तुत बच्चाय में अवस्थित तथा तिंदी तैच्याव कवियों के वार्शितक दृष्टिकीण को उपस्थित दिल्या गया है। ईश्वर, जीव प्रकृति, माया जादि विषयक खिलान्तों का प्रतिपादन कर शंकर-देव तथा माध्यदेव के एक शरण थां, नाम धमं, भर्तिंग तथा मिकत की जुलनात्मक गमीदा। की गयी है। तथ्यिमिचारिणी और प्रमित्ताणा भिक्त की भी समाजीचना इराजच्याय में की गयी है। मिकत एवं तथा वैष्णाव काच्य में प्रयुक्त शांत रख की भी जालीचना की गयी है।

नार्द के उपदेश के अनुसार महाकी व्यास देव ने जब ईरवर का ध्यान किया तो उनके हुदय में यह रूप प्रकाशित हुआ। कृष्ण के रूप का ध्यान किया तो कृष्ण को त्रपने हृदय में विद्यमान देखा-- व्यास यह देखकर रोमांचित हो गए कि उनके बाई और माया और दाहिनी और मिलत है, माया ही बांधती है और भिवत ही मुक्त करती है, इन्हीं दोनों के मध्य में भावान हैं। द्वितीय स्कंथ मैं कहा गया है, ब्रह्मा ने जब पृष्टि के लिये तप किया उस समय मगवान ने अपना रुप उनके सामने प्रकट किया था । ब्रह्मा ने देला अली किक नित्य बेकुंठ लोक में चतुर्मुज्र, बुंडलन्नारी, अनुपम सुन्दर, और आनंद के आधार लमीपति, यत्तपति श्रीकृष्ण पाष्ट्रिण हैं और संसार के नाना मोगों द्वारा उनकी सेवा हो रही है। पृष्टिक्ता ने इस रूप को प्रत्यना देला और परम पुरुषा ने चतु:श्लोकी मागक्त द्वारा इसे व्यक्त किया कि सुष्टि के बादि मध्य अंत में वे ही हैं। उनके बतिरिक्त शैषा मिथ्या माया में विलास मात्र हैं- उनकी शक्ति का नाम माया:माया वास्तिक वस्तु को टाककर उसके स्थान पर अन्य वस्तु को प्रकाशित करती है, इसीनी लिये प्राणी ईश्वर के वास्तिक रूप को न देल केवल वासना के विषयों को देखता है। जिस प्रकार से पंत्र महामूत स्थावर जंगम में स्थित हैं इसप्रकार माया भी समस्त जगत में व्याप्त है, तो भी उसका गुण दोषा मुके स्परी नहीं करता है। साध्याँ की संगति द्वारा मेरे स्वरूप का विचार करना चाहिए वहीं से ज्ञान क्ति। का ज्ञान होगा। ज्ञान का साधन मेरी अवण कीर्तन मिक्त है। जिस रूप में

१- वृष्णार मृतिक पाके करिलंत घ्यान दृष्यते वृष्णाक देखिला विष्मान वाम पाके माया दिशाणत मिलत माव देखि च्यास श्रष्टिश रोमांच मेलं गाव ।। ६४।। प्रथम स्कंथ मागवत-शंकरदेव

में तुम्हारे सम्मुल प्रकट हुआ हूं यह मेरा निज स्वरूप है । शंकर्देव ने यहां भी माय और माया के कार्यादि का प्रकाश मावान के स्वरूप के मीतर किया है ---

ैनाहि देहेन्द्रिय समस्त कर्तार् ,शक्तिक घरा अकले । तुमिसि स व्यक्त कर्ता, तोमाक सेवे सकले ।।कीर्तन १६६५

जानिलो धाताते तुमि पुरुष पुराण निरंजन भानंद स्वरूप धर्वजान ।। तुमिसे केवले धना सने मायामय

तोमातेसे हन्ते होवे शृष्टि स्थिति लग । १० स्कंघ पर इन उक्तियों की श्रालोचना कर हम ईश्वर के स्वरुप के विषय में इस सिद्धांत तक पहुंचते हैं--जो सर्वशक्तिमान, सर्वेश, सत्यस्वरुप श्रानंदस्वरुप, सर्वकर्ता, शृष्टि स्थिति लग का श्राघार और निमित्त कारण सर्वफ लदाता जो है वही ईश्वर है। कालमाया श्रादि उनकी शक्ति हैं, वे उनसे भिन्न नहीं हैं।

> जन्म मरणरो मिटो कार्ण प्रकृति जीवको बावरे सिटो तौमार शकति ।। कुठपो० १६३४४ किनादि रुपिणी ईश्वर बद्धेकाय । व्यक्त मेला महामाया ईश्वर इन्क्लमा। बनादि पतन ४५

१- कातर पूर्वी मह मात्र थाको जान कार्य कारणार किछु ना छिलेक जान मोक माल देखियोक सुष्टिर मध्यत देखा शुना माने अवे मन्मिं विचारत मिकं मात्र अवशेषो थाको हो अंतत कुंडल मां मिले येन शौना स्वरुपत । ६४६ दिक्तीय स्कंब - शंकरदेव अवस्तुक देखाक्य वस्तुक जाविरि ए हिसे मो होर माया जाना निष्ठ करि । ६५० ८ ए हिमते माया जार करि ईस्वरक जाशार विषय ताक देखाने जीवक ।। येन महा पंचमते करिया निवास शुनियो प्रकृति स्को गुणे नाहि हीन तोमारे बामारे किंनितेको नाहि मिन ।। मोर निज शक्ति साधाने देखो प्राण सत्त्वरे करियो माया जात निर्माण ।। तोमाक तेजाइली श्रामि रहि श्रमिप्राय । जानि मोक माले तुमि मोर श्रद्धेकाय ।। तोमारे श्रामारे किंछू नाहि मिन्नामिन्न मौते यातो लीन माडा रहिलानि हीन ।।४६-५०

नंदरास के मतानुसार ईश्वर अवन्या है, उसको किसी ने उत्यन्न नहीं किया। वह अनंत रूप होते हुए एक है। वह जगत का निमित्र और उपादान दोनों कारण है। वह ज्योतिमय रूप मी है। इसी ज्योति रूप का योगी घ्यान करते हैं। वह रेम रुप भी है और रस रूप विधि तथा नित्थ भी। मकत जन इसी रुप का ध्यान करते हैं इस प्रकार नंददास ने ईश्वर में अनेक घर्मी का बारीप कर उसे भामी बताया और उसके व्यक्त-शव्यक्त आदि भामी को बता कर उसे विरुद्ध य मैत्व का श्रास्थ कहा । दशम स्कंघ माजा में नंददास ने ईश्वर विष्यक श्रपने माव कृष्ण की अनेक स्तुतियों में प्रकट किए हैं। उनत गृंथ के दशम् स्कंघ वे कहते हैं- हे प्रभु शाप परम पुरुष हैं, सब बढ़ बेतन के श्राप ही कार्ण हैं, श्राप ही पालनक्तर्भाप ही तारने वाले और अप ही संहार करने वाले हैं। जो विश्व व्यक्त अव्यक्त है, वह आपका ही रूप है। काल का विस्तार भी आप की लीला का विस्तार है। सब प्राणी भी श्राप ही के विस्तार स्वरूप हैं ऋगति प्राणीमात्र श्राप की के स्वरुप हैं। श्राप सर्वव्यापी श्रंतयमि। हैं। सन के ईश श्रोर अव्युत हैं। सम्पूर्ण प्रकृति और सम्पूर्ण शक्ति तीनों गुण, जीव, जीवन सब वृक्त आप ही हैं। सर्वत्र श्राप के सिवाय और कोई दूसरा नहीं है। है करुणानिध्यान श्राप मुफे बदद अक्षमनी मान मनित दी जिए । इन पंक्तियाँ में नंददास ने वल्लमाचार्य के अद्वैत बृहुम कथवा बृहुमवाद का प्रतिपादन किया है ।

तुलिधीदास जी के राम जगत प्रकाशक असिल ब्रह्मांडनायक, विराट रूप जगत की मयदा और गरुड़ पर चढ़ते हैं। आप ब्रह्म हैं, वर देनेवासे देवताओं के आप स्वामी हैं। वाणी के अधि फाता , सर्वे व्यापक निर्मल, महान वलवान और मुक्ति के आप रवामी हैं। महामाया, महत्त्व शब्द, रूप, रक्ष, गंध, स्पर्श, सत्व, रज, तमी-गुण सर्वेदेव, आका श, वायु, अग्नि, निर्मेल जल और पृथ्वी, बुद्धि, मन, इंद्रियां, पंचप्राण, विच्र बात्मा, काल, पर्माणा, महावैतन्य शक्ति शादि जो कुछ प्रकट और अप्रकट है, वह एवं है राबराजेश्वर है विष्णु मगवान ज्ञाप काही रूप है। ज्ञाप जमेद रूप से सन में रम रहे हैं। यह सारा वृह्मांड श्राप का ही आंग है। श्राप के दोनों चरणां की शिव जी वंदना करते हैं और वही चरण गंगा जी के उत्पादक हैं। श्राप ही शादि हैं शाप ही मध्य भौर शाप ही ऋंत । बृह्मवादी ज्ञानीजन शापकों है हीश सर्व व्यापी देखते हैं। वैसे वस्त्र में तंतु, घढ़े में मिट्टी, शांप में माला, तकही के बने हुए हर हाथी में लब्धि और कंकरण में सोना देला जाता है,उसी प्रकार श्राप विश्व में दिलाई देते हैं। शाप का तेज बड़ा ही तीएण है, संसार के नित्य नूतन और प्रांड ताप संतापों के जाप नाशकर्ता हैं। राजा का शरीर होने पर भी जापका रूप तमोमय है। श्राप अविधा से तप:शील हैं। मान मद्र, लाम, मृत्सर, मनस्कामना, श्रीर मोहरूपी एमुद्र को श्राप मंदाचल है। श्रीर विवारशील हैं। तुलसीदास के राम सुद्ध सचा स्वरूप, नैतन्थ व्यापक बृह्म हैं वहां मूर्तिमान होकर नर्लीला करने के लिए साकार रूप में प्रकट हुए हैं। जब कृह्मा प्रभृति देव और सिद्ध दैत्यों के ऋचाचार से व्याकुल हो गए तब उनके संगोच से ग्रापने विश्रद गुण-विशिष्ट नर शरीर भारण किया ।

वृह्म

निरुपाधिक केतन्य ही पर्ज्रह्म अथवा ब्रह्मत्य है। यह वावय, मन इन्द्रिन्या दि से अगोचर है। समस्त , वस्तुओं के निर्णेश करने के पश्चात जो निर्व्विशेष

१- वि०प० पद ५४ पु० ११६

२- वि०व० पद० ५५ पु० १२१

३- वि०प० पद ४३ पु० ६६

अपरिच्छिन्न निराकार् तत्व शैष रहेगा वह यह है :--

नेपावै इन्द्रिय सवै माहार श्रोवर मिटी नोहे मन बुद्धि ववन गौचर ।। येन फि रिंगतियम वहिर बजाइ नकरे प्रकाश सिटो यक्ति दुनाइ ।। से हिमन शादि तान्ते हुआ शाहे जात। मायात था किया तांक नाजाने साजात ।। नैदेशो माञ्चाक निरुपिव नपारम । निषेष र शैष बुलि प्रकारे कह्य ।। मात बिने काहारी ना हिके एकी सिद्धि यिटो गुइमतत्व होवे सवारो अविधा ।। निमिनवसिद्ध संवाद

१८२-१८४ -- शंकारदेव ।

ृरदास के कृष्ण आदि, बनादि बनूप और सर्वातयिमी हैं। श्री कृष्ण ही श्रंश शीर कला रूप में बनेक रूप धारण करते हैं। जीव रूप में जगत रूप में तथा सन्पूर्ण देवला रूप में, लो कुछ भी इस जगत में है सब उन्हीं का अंश है। ी कृष्ण अलंड रस-रूप से अपना त्रादि रस शिवत राभा के साथ युगल रूप में विहार करते हैं। वे की बतार बृह्म रूप हैं बीर वे ब्रह्मा, विष्णु और शिव हैं। ये सम्पूर्ण रूप उन्हीं से श्रंश रूप बन कर प्रमूत हैं। उनके निर्मुण रूप तक स्मारा मन और हमारी वाणी नहीं पहुंच सकती, इस लिए उनके सगुण रूप की ल लीला का गुणागान ही पूर ने जाच्यात्मिक सिद्धि का साधन माना है । ब्रह्म को सगुणा बीर निर्मुण दोनों बता कर सूर ने ब्रह्म के विरुद्ध धर्मत्व के भाव को स्वीकार विया है। सगुण रूप में वै युगल-रूप से नित्य रास-विहार करते हैं। उनका शौंदर्य अमित है उनके अनेक रूप हैं। सूर ने ब्रह्म, प्रशृति, पुरुष आदि की अव्वेतता स्वीकार की है तथा पर ब्रह्म और श्रीकृष्ण का स्कीकरण किया है अथित पूर्ण पुरुषा कि पर ब्रह्म ीवृष्ण ही हैं। वह एक है, रस रूप है, अवंदित है,

१- अवनवर्गक पुरु ४०६

अना दि, और अनुपम है। पुष्टि के आदि में भी वही था, उससे पहले अन्य कुछ नहीं था। पुष्टि के सम्पूर्ण देवता, माया प्रकृति तथा आदि पुरु वा श्रीपति लडमीनारा-यण ये सब कृष्ण के ही अंश हैं। पर ब्रह्म के अंतयिमी स्वरुप और उनके विराट रुप का वर्णन सूरदास ने दशम खंधा सूरसागर में अनेक स्थानों पर विस्तार से किया है।

नंदरास अद्वेत ब्रह्म को मानते थे। वल्लभ मतानुसार उन्होंने भी अनेक स्थानों पर कृष्ण के पर ब्रह्म होने के मान को व्यक्त किया है। पर ब्रह्म श्रीकृष्ण गोकुल अथवा गोलोक में रस रूप से नित्य तीला मग्न रस्ते हैं। वह रस-रूप ब्रह्म नित्य, आत्मानंद, तस सक रस, अलंड और घट घट में अंत्यामी हैं। नंददास स्थी रिक्टिएम के उपासक थे। सिदांत पंताक्यायी में कृष्णा की स्तुति करते सम्य वे करते हैं कि कृष्ण के अपार रूप, गूण और कर्म हैं। जिस माया शक्ति ने यह स्थि रवी है, वह उन्हीं कृष्ण की है। उनकी माया ही इस विश्व का शूजन पाला और संसार करती है। पर ब्रह्म श्रीकृष्ण घट गुण संपन्न हैं और समय सम्य पर वे ही अवतार घारण करते हैं। नारायण हैस्तर वे ही हैं। परमानंद के श्रीकृष्ण ही सानात पर ब्रह्म परमात्मा है, कृष्ण ही स्क से अनेक रूप पारण करते हैं जोर उन्हीं को वेद नेति नेति करते हैं। पर ब्रह्म गुण रहित तथा स्नुण दोनों हैं। निर्नुण ब्रह्म ही स्नुण रूप धारण करता है। परमानंद यह मी करते हैं- निर्नुण ब्रह्म ही स्नुण रूप धारण करता है। परमानंद यह मी करते हैं- नेतृण ब्रह्म ही स्नुण रूप धारण करता है। परमानंद यह मी करते हैं- नेतृण ब्रह्म ही स्नुण रूप धारण करता है। परमानंद यह मी करते हैं- ने मुख्य तीन देनता ब्रह्मा विष्ण्या और रुप्ट कृष्ण के ही गुणायतार हैं ये अनेक प्रकार के वर देने में समर्थ हैं। परन्तु मेरे उपास्थ देन दो राधिका वल्लम श्रीकृष्ण ही हैं।

१-व्याविक से पृत् ४०७

र- अ०व० सं०- पृ० ४०६

३- वहीं - पु० ४१४-४१५

४- वहीं - पु० ४०

५- वर्गी० - पृ० ४१३

प्रकृति : सांस्थानायों ने प्रकृति को जगत का मूल कार्ण कहा है-किन्तु उनके मतानुसार प्रकृति का धूजन किसी ने नहीं किया है- यह अनादि और नित्य है वहां किसी नेतन व ज्ञानी पुरुष की अर्थात ईश्वर की प्रेरणा व इच्छा की अपेता नहीं। योग दाशैनिक गुण यद्यपि ईश्वर नाम के एक सर्वेज व्यक्ति का अस्तित्व मानते हैं तथापि वे प्रकृति के शृष्टा नहीं हैं। असमिया वैष्णावों का मत इन लोगों के मत मिन्न है।

श्राचार्य रामानुज के अनुसार प्रकृति श्रवित :जह: पदार्थ, मगवान का विशेषा स्व है अत: नित्य है। माध्यव के मतानुसार मगविद्यक्त को प्रकृति व माया कहा जाता है। श्राचार्य वल्लम के अनुसार ब्रह्म व ईश्वर की अमिव्यक्ति चार प्रकार की है— अतार, काल, कर्म स्वमाव। अतार— ब्रह्म की प्रकृति और पुरु का रूप में अमिव्यक्त होता है इनके मत से प्रकृति ब्रह्म का कार्य है निम्बार्क और गोड़ीय विष्णावों के मतानुसार मगवान अपनी असाधारण शक्ति व श्रवित्य शक्ति के प्रभाव में जगद रूप में परिणित होते हैं। प्रकृति की उत्पत्ति के अंबंध में असमिया विष्णावों का मत इन लोगों से मिलता है, यधिप उसके स्वरूप और लेगाण श्रादि अद्वैतवादियों के साथ मिलते हैं।

वल्लम मतानुसार, सिन्बद, गणितानंद, अतार जुक्स से पूर्ण पुरु को एम की इन्छानुतार अग्न के विमगारी के समान उसके विद अंश से जीव और सत अंश से जढ़ जगत की उत्पित्त हुई। ज़क्स की इन्छा इस सम्मूर्ण प्रपंत पृष्टि का कारण है। ज़क्स के आनंद और विद धमों के तिरोधान से ज़क्स का सद् ग्रंश जगत बना। य यह जगत अनेक रूपात्मक है, परन्तु यह अनेक रूपता ज़क्स के एक सद ग्रंश का ही परिणाम मान है, पर ज़क्स तो त्रीकृष्ण ही हैं, कृष्ण का वृह्त ग्रदार रूप सिन्दानंद स्वरूप है। वल्लमानार्थ ने कहा है कि वह अदार ज़क्स ही रतत प्रकारण इस प्रकार जगत का रूप हो जाता है। वल्लम संप्रदाय कथना पुष्टि मार्ग ज्ञात के संबंध में अक्तूत परिणामवाद को मानता है। वल्लमानार्थ जी ने कहा है कि श्रु हिंदि के जादि में परम तत्व के परिणाम से २८ तत्त्वों का ज़रू प्रादुर्माव हुआ। इन तत्वों के नाम ये हैं -- सत्र रूप, तम, पुरु का प्रकृति मस्त्र ग्रंकार पंततन्माया

१- वा वा तं - पु ४३५

र- वहीं - पु० ४३६

शिव्द, वायु, तेज , जल, पृथ्वी। पंच कमें न्द्रियां, पंच जाने न्द्रियां । कान, त्वक, घ्राणा नेत्र, विद्वा। और मन। कार ब्रह्म हरी पुरुष, काल कर्म और स्वभाव रूप धारण करता है। तभी कतर ब्रह्म के चित् रूप से जीव रूप पुरुष और सत ग्रंश से प्रकृति का प्रादुष्णीव होता है। जगत का उपादान कारण प्रकृति है-- जो वस्तुत: ब्रह्म का ही अविकारी परिणाम है।

जीव : पूर्वाजित कर्मवाक्ता के फल के अनुसार, उन्हीं कर्मों के मोग के लिये अन्तर्थामी परमात्मा इवारा प्रेरित हो पूर्वोक्त 'पांच जाने द्विय, पांच कर्मेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय, पांच तन्मात्र रूप विषय और मन साथ मिलकर रहते हैं। इसे ही सूक्ष्म शरीर या लिंग शरीर कहा जाता है। सोलह पदार्थों द्वारा गठित होने के कारण हसे घोरशकल या सोलह कला विशिष्ट कहा जाता है। मन को केन्द्रित कर शैषा अनेक पदार्थ मिलते हैं अत: इसके मीतर मन या अंत:करण ही प्रधान है। स्वमाव से यह समस्त पदार्थ जड़ और अनेतन हैं अत: एक दूसरे के साथ मिल नहीं सकते। बुद्धि का स्वरूप निश्चय ज्ञान, विच की वृद्धि अनुसंधान व स्मरण, अहं, अथवा में, में, की अमिमान वृद्धि ही अहंकार और संकर्म- विकल्पात्मक वृद्धि का नाम मन है। इस समुदाय को ही अंत:करण कहा जाता है और कभी कभी मन शब्द के द्वारा मी इसे अंत:करण कहा जाता है। यह अन्त:करण अत्यन्त स्वच्छ, निर्मल वस्तु, वह पूर्वोक्त फल व मगवान की कृपा से प्रतिफ लित होता है। तब वही प्रतिविक्ति वैतन्ययुक्त मन व अंत:करण वेतन रूप में प्रकाशित होता है। यही प्रतिविक्ति वैतन्य ईश्वर ही बीव है।

भाके मन समस्त प्राणारि हृद्यत ।
हैश्वरर प्रतिविम्ब लागिके मनत ।।
ताके बुलि बीव मन एरे मिन्न न्युह।
एक पिण्ड मेला येन लोहा श्राग्न दुइ ।।श्र०पा०६६-६७
शंकरदेव

१- माव्यक संव - पृत ४३८

२- वहीं - ४३६

मनौरंजन शास्त्री- अस्मर वैष्णाव दर्शनर रुपरेला- ११६ पृ०

४- वही ॥ ॥ - पु० ११७

तुम्हीं सत्य वृत हो तुम्हीं में यह अनंत जगत प्रशाशित होता है सदैव जगत में अंतर्या मानान तुम्हीं प्रशाशित होते हो । हिन्द्रयों के साथ जीव विष्यों को मोगता है और मायामय शरीर को आत्मा मानता है । बूरदास के अनुसार ब्रह्म ही अपने विच अंश से अनेक जीव रूप में स्थित है । जीव और ईस्तर की अद्भैतता का मान सूर ने कई स्थानों पर बताया है । बूरदास ने जीव को मगवान की वैतन शक्ति का ही स्वरूप माना है । सृष्टि का सम्पूर्ण प्रशार, सम्पूर्ण तत्व, प्रकृति, पुरूष किमीनारायण दैवता तथा सम्पूर्ण जीव सब गौपाल कृष्ण के अंश हैं । उन्होंने इस कथन से ईस्तर और जीव के अंशी-अंश संबंध का समर्थन किया है । पर ब्रह्म शीकृष्ण का अंश- रूप-जीव इस संसार की माया में पड़कर अपने सत्य स्परूप को मूल जाता है । वह जीव अपनी आत्मा में स्थित, परन्तु प्रक्रून्न आनन्दांश और ईस्वरीय रेख्यांदि गुणां को मूल जाता है । घट घट में क्या प्त ईस्तर के अंतर्यांनी स्वरूप से मी वह अनमित्र रहता है ।

नंदरास ने अपने गृंध देशम स्कंब मा जा में कहा है-- हेश्वर ही जह नेतन का कारण है। सम्पूर्ण प्राणी उसी हेश्वर के विस्तार रूप हैं। हंश्वर ही जीव रूपों में है और हंश्वर ही इस सम्पूर्ण सुष्टि रूप में है । इस प्रकार नंददास ने हंश्वर और जीव की अद्वेतता स्वीकार की है । नंददास कहते हैं कि जीव की देह पाप-पुष्प कमी से निर्मित है और संसारी जीव की विषय विदृष्णित हंन्द्रियां इस अंतर्भी जूझम को नहीं पकड़ सकतीं। बुद जीव और ईश्वर में यह अंतर है कि ईश्वर काल, कमी और माया के वंश में है, वे विधि-निर्णेश और पाप पुष्प के विकार से प्रमावित है ।

शात्मा बुलि मानै मायाम्य शरीरक ।। नि०न० ११० शंकरदेव

१- तुमि सत्य बृङ्म तोमात प्रनाश कात इटो अनन्त ।

जगतती पदा तुमिसे प्रकाशा मन्तर्यामी मगवंत ।।की०१६६३ शंकरदेव

इन्द्रियर संगे जीवे मुंबे विषयक ।

भ शवव संo - पु**० ४**२८

४- वही - पु० ४३२

५- वहीं - पु ४३३

तुर्लिशास जी के ऋनुसार जब से यह जीव मगवान से पृथक हुआ,तभी से इसने शरीर और घर को अपना मान लिया । माथा के वश होकर उसने निजस्वरूप को मुला दिया और उसी भूम के कारण यस असह्य दु:ल मोगने पढ़े। अविधा के कार्ण संसार दु: लमय दिलाई दिया धुल का स्वप्न मैं भी नाम न रहा । जीव का निवास स्थान ज्ञानंदसागर में है वह पर बृह्म का ग्रंश है, इसने मृगजल को सञ्चा मान रखा है अपना स्वामाविक अनुभव गम्य रूप मूलकर संसार में पड़ा है। तुलसी दास जी कहते हैं प्रमु में जड़ जीव हूं और श्राप विभु हैं ईश्वर हैं, श्राप माया के स्यामी हैं और में माया के वश होकर रहता हूं । यहां स्पष्ट रूप से जीव और ष्ट्रस् का अनेक्य सिद्ध कर दिया गया है। जीव अपनी विशुद्ध अवस्था में ज्ञानी और निर्विकार भुवस्वरूप है किंतु माया इसे मलीन कर देती है । जीव स्वयं आपने अपने क्मों का फल भोगता है तो मी इसका संवालन हिए के हाथ में हैं। दर्पण में श्या किस मार्ग से प्रविष्ट होती है और किथार जाती है यह रहस्य है जीव की वहीं गति जीव के नाह ने की है। जीव माया के अधीन है, और माया ईश्वर के अथीन है, बहेद जीव पर्वश है और मावान स्वतंत्र हैं, श्रीकांत एक हैं और जीव अनेक हैं। माया से प्रेरित विवनाशी जीव काल, क्मी, स्वभाव और गूणों के चवकर में पहकर चौरासी लहा यो नियाँ में निरंतर भूमता रहता है। जीव माया का स्वामी नहीं है पर माया ईश्वर के बनीन है, ईश्वर वंब मोदा दाता है ।

१- वि०प० पद २ पृ० २३३

२ वि०प० पद० १७७ पु० ३०४

३- मूमि पत मा डावर पानी। जनु जीवि माया लपटानी । रा०व०मा०

⁸⁻ दोहा**० वो**० २४४

५- शाकर बारि लता चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिल श्रविनासी
फिरत सदा माथा कर प्रेरा। काल करम सुमाउ गुन घेरा । -- मानस उ०
५- माथा ईश न शापु कर जानि कहिय सी जीव।

मंतकरणाविक्लन दैतन्य पुरुष है। जीव भौर मायाविक्लन दैतन्यपुरुष ही ईरवर है। अक्केदक :परिचायक: माया और श्रंत:करण के व्यवहारिक मेद होने के कारण ही ईश्वर और जीव भिन्न हो गये। मेदक अंत:करण न होने पर जीव की पृथक सत्ता नहीं रहती । जिस प्रकार से नाना वर्ण के छोटे छोटे कांच के दुन है व वृह्त दर्पण बनाया जाता है उसमें जब सूर्य का प्रतिबिंब पड़ेगा तो मिन्न मिन्न कांच के हुकड़ों में धूर्य का प्रतिबिंव अन्य वर्ण का होगा । यहां पर वास्त विक सूर्य निर्मेल नि: क्षंग होने पर भी मतीन कांच में प्रति विका होता है श्रीर उसके संपर्क में मलीन श्रीर नाना रूपों में प्रशासित दिखाई देता है--इसी प्रभार भगवान वास्तव में निर्मल, निष्ठिय, शांत, अविवारी सच्चिदानंद रूप होने पर भी मलीन, सिष्ट्य, दीन और किलारी ऋंत:करण में प्रतिबिंबित हो मलीन, सिष्टिं, दीन और किगरी दिलायी देता है। जिस प्रकार से आकाश घट घट में व्याप्त है उसी फ्रगर ब्रह्म मी समस्त प्राणियों की फ्रन्ट करता है। जिस फ्रगर से जल में पूर्व के भिना भिना प्रतिबिंग दिलाई देते हैं, इसी प्रकार से ब्रह्म भी भेड ही है । नित्य निरंजन स्वप्रका शित बात्भा एक है, माथा उपाधि के पद के कारण वह अनेक दिसायी देता है। प्रभु यद्यपि जीव तुम से पूथक नहीं हैं तथा पि वह तुम्हारै श्राधीन है। ईश्वर से जीव मिन्न नहीं है वह शांत शक्कारी हो, स्नान शावरण के कारण अपने को न जान, प्रमता है। मन के दुख पाने पर जीव कहता है

तथा पिता मेल प्रमु तीमार त्रयीन ।। द० १६६८

३- एक ब्रह्म बाह्या सब्बे देहक प्रवटे।
येन एक बाकाश प्रत्येक घटे घटे ।।
जलत पूर्यांक येन देशि मिन्न मिन्न।
सेश्मिते जानिका ब्रह्मरों मेद होन ।।मा० १२ स्कं० २०१४६ शंकरदेव
४- नित्य निरंजन स्वप्रकाश बात्मा एक ।
माथा उपाधिर परे देखिय बनेक ।। कुरू ० ५१० शंकरदेव
४- यथपि तोमात करि जीव नोहे मिन्न ।

में तुख पाता हूं। यन जहां जाता है जीव कहता है में जानता हूं, यन जो करता है जीव कहता है में नरता हूं। जल के स्थिर होने पर बिंग पूर्वत रहता है किन्तु पूर्य का प्रतिबंध नंशल जत हथार उधार दौढ़ता दिलाई तेता है। यन के कर्म को जो अपना कहता है, यही कर्मपाश में बंदी जीवों का लगाण है। आत्मा के प्रशं से जीव स्वेतन हुआ। मनों मन में चौदह मुबन हैं।

पूरतास ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि यह सम्पूर्ण हुन्धि प्रमु हक्ता रचनी है माया कै क्रम से रचा हुआ यह जगत नहीं है । माया के वहा में उनके मतानुसार ब्रह्म नहीं है वरन् प्रह्म का श्री-रूप जीव गाया के प्रम में स्वयं अपने आप पह गा। है । जीव और जगत में है स्वर के विद् और सत् श्री की सख सार रूप से विष्मान है जीव स्वयं अविधा या प्रम वह अपने है स्वरिध अंश रूप सत्य रूप की मूल जाता है और हं क्रिय अपने देहहा में आदि की अपनी आत्मा केटामें समझ ने साता है । यही उसना अजान है यही स्वप्न है । सूर के मतानुसार प्रम अथवा अविधा में जीव स्वयं फंसा है , किसी अन्य ने उसे नहीं फंसाया। आप ही इस संवार के प्रम को खता है और बाता है और आप ही उसमें लिप्त हो अनेक बलेश उठाता है, जैसे मतारी का वंदर और विद्वामार का तौता । जैसे ब्रह्म सत्य और नित्य है उसी प्रमार अपन का श्री की मतारी का वंदर और विद्वामार का तौता । जैसे ब्रह्म सत्य और नित्य है उसी प्रमार अपन का श्री जीव मी नित्य और सत्य है । नाम और रूप परिवर्त-रूप नशील हैं नाश्वान हैं, परन्तु जगत और जीव की सार स्वया नाश्वान नहीं है।

१- मने दु:स पाडले जीवे बोले मह पात्रों।

मने येक गावे जीवे बोले मह पात्रों।

मने यिवा करे जीवे बोले मह करों।

मनर मरणो जीवे बोले मह मरों।

येन धूर्यविंब लरे जलर माजत ।

जल स्थिर मेले विम्ब धाके पूट्यत ।।

मनर कर्मक यिटो मोर बुलि माने ।

कर्म पात्रे बंदी जीव स्विसे निदाने।।

जात्थार प्रयंगे मन मेल स्वेतन ।

मनरोसे बाके जाना वेष्यय मुक्न ।। :श्र०पा० ६७-६६:

नंदरास कहते हैं कि जीव की देह पाप पुष्य कमों से निर्मित है और संसारी जीव की विषय-विद्वाणत इन्द्रियां, इस अन्तर्यामी ब्रह्म को नहीं पकड़ सितीं बद्धजीव और ईश्वर में यह अंतर है कि ईश्वर काल, कमें और माया के बंधन से अलग और जीव काल कमें और माया के वश्च में है । जो जीवात्मारं पुष्य और पाप से निर्मित गुणम्य शरीर के धर्मों को छोड़कर ईश्वर का नेकट्य लाम करती हैं अथवा ब्रह्म को जान लेती हैं वे अपने सत्य रूप आनंद तथा ईश्वरीय छ: गुणों को खा धराण करती हैं।

जीव ईश्वरादि का अभेद

एक ही पुरु क लहा जा उपा वि मेद से ईश्वर, जीव, ब्रह्म, परमात्मा मगवान, नारायण हत्या दि नाना रुपों में प्रतित और सेवित होता है। मृत्तिका का स्वरूप एकि है, पर घट पर कैमेद के कारण उसके आकार प्रकार अनेक दिलाई देते हैं। आत्म बुद अद्वेत हिंग प्रकार माया उपा कि और पद से वह नाना प्रकार का प्रकट होता है। हसी से ईश्वर जिसके वश्च में है परम आनंदम्य माया है, माया जिसका मदन करती है उसे ही जीव दुख का उद्य कहता है। ईश्वर की सेवा करने से जीव का माया प्रम नष्ट होता है, ब्रह्म पद शुद्ध जीव को ईश्वर परम ब्रह्म कहते हैं। समाधा में व्यक्त होने पर प्रम दूर होता है, उसी समय माध्यव को ब्रह्म कहा जाता है। समस्त हन्द्रियों में जो प्रवर्धन करता है उस समय माध्यव को पर्मात्मा कहते हैं। इस्म, परमात्मा, और मगवंत एक तत्व हैं, लहा जा और भेद

१- मा०व० सं० - पृ० ४३३

र- वही - पृ० **४३**४

स्वरुपत खेमात्र मृद्धिंग त्राकार ।
 घट पर मेदे देखि अनेक प्रकार ।।
 एहिमते अनेक अद्वेत ज्ञात्मबुद्ध ।
 माया उपाधिर पदै देखि नाना विघा ।। बु० ५१२

४- वेषिषे ईश्वर मार् वश्य भाया परम जानंदम्य । माया मद्दी पाक ताके बुलि जीव दु:खते तार उदय ।। म०र० १५०

प्- ईश्वर सेवा करिले जीवर गुक्य माया र प्रम । जुङ्म पदे शुद्ध जीवक कह्य ईश्वर परमजुङ्म ।। ला०घी० १७४

६- स्था थि बेक्त होवन्ते गुर्वे प्रम । तैसने बोल्प जाना माध्यक ब्रह्म ।। नि०न० १८०- शंगर्देव

के कारण एक ही के तीन नाम हैं। जिस समय सुष्टि स्थित का लय करते हैं, उस समय माध्य को भगवंत कहते हैं। सब का स्वरुप ब्रह्म से प्रकाशित है और वह सब में प्रकाशित हो रहा है, नुपति उसे ही नारायण जानो, उसकी चरण सेवा के बिना गति नहीं होगी।

स्ताण भेद का ऋषं क्या है ? यह न जानने पर ब्रह्म, नारायण मा वंत जादि का रेक्य ज्ञान होने में अनेक बाधा उपस्थित होती है एक स्थान पर जिसे ब्रह्म व परमात्मा का लज्ञण कहा गया है- हसी को अन्य स्थान नारायण का लज्ञण कहा गया है। ऋत! हस विषय में निश्चित जानकारी नहीं हो सकती है।

ज़रम को ज्ञातप्रपंतक और शृष्टि स्थिति तथ का कारण व ईश्वर कहा जाता है यहां पर शृष्टि स्थिति तथादि उनके उपलक्षण हैं, क्यों कि ज़्ड्म शृष्टि स्थिति तथ का कारण हो की शृष्टि स्थिति तथ न करने की अवस्था का ज़्ड्म भी परिचायक होता है। इसी ज़्ड्म को जो स्मुण, सिक्शेष्ट, साकार, ईश्वर कहा जाता है। वहां स्मुण श्रादि की बात उनके परिचायक उपाधि रूप है की है।

नंदरास ने इंश्वर और जीव की अद्वेतता स्वीकार की है। दशम स्कंथ मागवत भाषा मैं उन्होंने एक स्थान पर शंकर ब्रह्मा ,शारदा ,देवता ,नारद तथा अन्य मुनिस्वरों से श्रीकृष्ण की स्तुति कराई है। उस स्थान पर वे कहते हैं- है

१- जुड्म परमात्मा भगवंत एव तत्व ।

एकेरेसे तिनि नाम लग्न णमेवत ।।१ दर

- करंत येखने हरी पृष्टि- स्थिति ग्रंत ।

तेखने बौल्य माध्यवक भगवंत ।।१ द०

स्वारी स्वरूप करे ब्रह्में प्रकाश । समस्तते पिरों करि बाइंत प्रकाश ।। तैहेन्तें नारायण जानिवा नृपति । ताहान परण सेवा विने नाह गति ।।१८८८

बा बैठ देठ राठ रेठ -- मनोरंबन शास्त्री -- १२३

नाथ श्राप इम सब के स्वामी हैं सम्पूर्ण विश्व श्राप के हाथ में है। इस सब प्राणी श्राप से इस प्रकार प्रसूत हैं जैसे श्राप्त से श्राणित स्कृतिंग निकले हों । दशम स्वंधा भागका में उन्होंने बन्य वर्ड स्थानों पर जीव, जगत और ईश्वर की अद्वैतता बताते हुए जीव और जगत को ब्रह्म प्रकृत बताया है। क्तुर्मुज दास तथा इतिस्वामी ने ईश्वर और जीव की अपूर्वेतता स्वीकार की है। चतुर्मुजदास ने कहा है कि रसिक मकत रसमय मगवान की प्रेम रस मनित इवारा भगवान की रसता में मिल कर स्वयं रसमय हो जाता है। उसी प्रकार छीतस्वामी भी कहते हैं कि मैं जिन्नर देखता हूं उच्चर कृष्ण ही कृष्ण दिलाई देता है। इससे भी यही भाव निकलता है कि हीतरव्यामी सब प्राणी मात्र को कृष्ण रूप में देलते थे अथवा यह कहें कि वे ईश्वर और जीव की एकता की मानते थे। परमानंद दास ने भी ईश्वर श्रीर जीव के संबंध को श्रंशा-श्रंश का संबंध माना है । मायाविक्न नैतन्य ही इंश्वर और अंत:करणाविक्न-न नैतन्य ही जीव है, क्याति माया द्वारा परिचित होने पर ब्रह्म ही ईश्वर शब्द द्वारा संबोधित किया जाता है और अंत:करण के द्वारा परिच्छिन होने पर यक्ड यही ब्रह्म जीव शब्द का बोधक होता है !

जिस समय गंभी र निद्रा में व्यक्ति सौता है समस्त इन्द्रियां ऋहंशार के साथ आत्मा में जाकर लग होती हैं। इस समय श्रात्मा साची के रूप श्रामासित होता है। जागृतकाल में भी बात्मा नाम की वस्तु प्रत्यवा रहती है। बात्मा स्वयंप्रकाश, ज्ञान स्वरूप है इसे अन्य कोई प्रकाशित नहीं करता यह स्वयं स्वयं को प्रकाशित करता है और अन्य विषय की मी प्रभाशित करता है। नित्य निरंजन स्वप्रकाश श्रात्मा एक है, वह माया और उपाध्य द्वारा क्षीक रूपों में दिलाई देता है।

बेक्शिते शाल्पा शादा स्वरुपे थाक्य।। नि०न०१ ६८

१- श्रव्यव सेंव - पुर ४३३

⁻ Ao 838 र- वहीं 0

⁻ Ao 835 ३- वही ०

⁸⁻ वहीं 0 - yo १ २६

येखने निर्मर निद्रा होवे उपस्थित । इन्डिय काल गर्कगर्र सक्ति ।। तैसने चात्पात गैया सबै होवे त्य।

६- वही ० १३१

७- नित्य निरंजन स्वप्नाश श्रात्मा एक माया उपाधिर पदे देखिय श्रनेक ।

क्०डो० ५१०

वल्लमानार्यं जी नै मावान की शक्ति स्वरुपा माया के दो रूप बताये हैं--एक विधा माया और दूसरी अविधा माया। इस माया के अधीन जीव हैं, मगवान माया के अधीन नहीं है। अविया माया से जीव संसार में बंधता है और विया माया के द्वारा जीव इस लंसार में वंधता है और विधा माया के द्वारा जीव इस लंसार से छुटता है। वल्लम मत की माया धत्य और भ्रम दोनों प्रकार की है, कि परन्तु ये दोनों ब्रह्म पर प्रभावशालि निर्धा हैं। व त्तम मत में ग्रविया के नाश होने पर जीवत्य तथा जगत का नाश नहीं होता, जीव फिर्मी ब्रह्म से पृथक सत्य रूप में स्थित रहता है। उसका प्रम जन्य-संपृति-जाल अवश्य छूट जाता है। शूरवास ने भी ईश्वर की माया के विधानों को अविगत और अक्यनीय कहा है-- है प्रभु आपकी इस माया के विवान के कहने और समकने में नहीं बाते । रिक्त को बाप मर देते हैं और मरे को हुलका देते हैं, कभी तिनका पानी में कूम जाता है और शिला पानी पर तैरने लगती है। रैगिस्तानों की पानी से भर कर समुद्र बना देते हो और समुद्रों को रेगिस्तान । जल में भी आप ने अग्नि का संवार विधा है। इस प्रकार प्रभु जापकी गति विचित्र है। बहुता ममतात्मक संसार की सुष्टि करने वाली माया का वर्णन पूर ने बहुत किया है इस माया को उन्होंने सत्य की मुलानेवाली और मिथ्या में मोह उत्पन्न करनेवाली कहा है। इस माया के अनेक रूप हैं असे मन की मूढ़ता, तृष्णा, मनता, मोड, त्रहंकार, काम, क्रोध, लोम तथा अनेक मान सिक विकार । धूरदास ने त्रविषा माया को तथा इस माया जन्य संसार को अनेक पदों में भ्रमात्मक कहा है। एक पद में भूरदास कहते हैं-- संसारी जीव को फूठी माया सच्दी प्रतीत होती है,यदि मनुष्य ऋं की व्यष्टि दृष्टि को छोड़कर समस्टि दृष्टि से कात को देखे तो माया का सत्य रूप उसे दीसने लोगा । एक और पद में भूरदाश अपनी सफलता का चित्र राजा परी चित्र के वाक्यों में इस फ़्रार लींचते हैं है करुणानिथान प्रमुत्राप की कृपा- कटाचा से मेरा क्लान रूपी बंधकार् नष्ट हो गया । माया मोह की निशा, विवेक प्रकाश होने पर भाग गई। ज्ञान सूर्य के प्रकाश में स्मिष्ट दृष्टि सुस गई और सर्वत्र वात्म रूप दिलाई देने लगा, मेरी वहंता ममता कूट गर्ड, देह का अध्यास चला गया अब इस देह का जरा भी मोह नहीं है। अब कैवल यही

१- बव्द सं - मूठ ४५५

र- वहीं - मृ**०** ४५७

र- वहीं - पुo ४५ E

लालसा है कि मैं दिन-रात प्रमु की लीला का ही अवणा करुं । परमानंददास कहते हैं--जब तक विच से संसार के राग द्वेषा नहीं निकलेंगे तब तक मगवान का दास कहलाना किन है। इन सब कथनों मैं परमानंद दास ने अहंता-- ममतात्मक अविधा माया की ही निन्दा की है और उसी के कृत्यों का वर्णन किया है।

तुल्बीदाध जी के मनुधार मादि शक्ति सीता विश्व की पृष्टि- स्थिति संहार कारिणी हैं। माया प्रभु के अनुशासन के अनुकूल एचना करती है। अविधा का प्रभाव हरिमनतीं पर नहीं होता है, विद्या माया उनमें व्याप्त होती है। अविद्या माया के पहेएसर घीरपाश में पड़े हुए प्राणी जात को पूर्णातया मगवदूप में नहीं देख सकते। वस्तुत: जात और मगवान में अभेद दृष्ठि रखनेवाले तमस्त प्रमाँ से उन्मुक्त होकर भगवान के निर्मुण और गुणाकार स्वरुप में भी कोई अंतर नहीं देखते। माया माया ही है, चाहे वह अविधा माया हो, चाहे विधा माया। दोनों ही हमें परमात्मा के सामी प्य में ले जाकर हमारे मन को परम विश्राम नहीं दे सकतीं। महामलीन घविषा माथा तो सी घो ही पतन कुंड में फॉकती है और विधा माया भगवन्छ कित स्वरूप होने से मावान से श्रीमन्न होकर वह स्वयं जगत की उत्पिधि, स्थिति और वंहार् में दरविच है। गोस्वामी जी ने मूल प्रकृति स्वरूप विधामाया को ही नाना कृष्मांडों की शुन्टि, स्थिति और प्रत्म का कारण उहराकर मानती सीता से इसका तादातम्य अवस्य कर दिया । है। माया ऐसी है कि कितने उपाय करके थक जाओ पर जन तक प्रमुकी कृपा नहीं हो,तब तक इससे पार एा जाना असंभव है। माया की गति ठीक ठीक नहीं वैठती। जब तक इसका वास्तिक एहस्य ज्ञात नहीं हुआ, मन निश्वल और एकं शांत नहीं हुआ ,तब तक अविधा जन्य संसार की बड़ी बड़ी घोर विषाध्यां दुल देती ही रहेंगा ।

१- अव्व सं पु प्रदेश

र- वहीं पु ४६२

३- उद्मवस्थिति तंार्कारिणीं बलेश हारिणीम । सर्वेश्यस्करीं सीतां नतौ, हैं रामवत्तनाम । -मानस-बास्त्रमंगलावर्ण।

४- शुनु राक्न ब्रह्मांड निकाया। रचह जासु अनुसासन माया। --मानस० सूं०

५- वी पित-- तुलसी और उनका सुग- पृ० २००

६- वही पु० रदर

७ वि०प० पद-११६ पु० २०६

कात :- तुममें से जात की उत्पत्ति हुई ,इसी से तुम इसमें प्रशाशित हो रहे हो । माया गुण से तुम्हीं अनेक रूपों में प्रशाश करते हो । इन निमित्तों को देस सत्य का कुछ आभास मिलता है । जो पहले न था न बाद में रहेगा, केवल मध्य में ही कुछ समय के लिये व्यवहार का विष्य होता है, उसे ही मिथ्या कहते हैं । जिस प्रकार रज्जु को देस कर सर्प का प्रम होता है आगे वहां सर्प नाम का वस्तु न थी, रज्जु समक्षने पर भी उसकी प्रतिमा बाद में दिसाई न देगी, केवल मध्य में वह प्रकाशित हुआ उसे देस कर मय से व्यवित विधाह उठता है । जात भी परिवर्तनशील और विनाशी है । अत: यह भी मिथ्या है, इसका निज का स्वरूप और स्वा नहीं है ।

जात के पूर्व में ही था, कार्य कारण अन्य नहीं थे, शुष्टि के मध्य में वैवल मुक्ते ही देखेंगे, सब के रूप देखने सुनने में मेरा ही रूप है। मात्र में सब के अंत तक रहता हूं जिस प्रकार कुंडल टूट जाने पर सोना का रूप शेष रहता है। जिस कथा की अपने पूछा उसका परिच्छेद मेंने कहा, सब बुख्ण मय है, यह सत्य मेद कर मेंने कहा। वृह्म के अतिरिक्त जो मी देखते हैं वह निथ्या है, जिस प्रकार रस्सी को देखने से सर्प का प्रम होता है। जागरण और स्वप्न बुद्धि की शृथियां हैं, नाना प्रकार के रूप जो हम देखते हैं वह सब माया मय है। सक प्रणा में उत्पन्न हो अनन्त अवस्तु पाण में नष्ट हो जाती है। जिस प्रकार मुक्ट बुंडल आिं स्वर्ण से मिन्न नहीं, उनका नाम रूप मात्र मिथ्या है, हसी प्रकार शहंकार और पंचमूत तुमसे प्रका नहीं हैं। जिसे देखते और सुनते हैं, जिसका मन में चिंतन करते हैं, यह सब मायाम्य और

७-जागत सपोन बुद्धिरेसे वृक्तिय।

नाना विश्व देखा थिरो सिरो

माया मय।।

श्वनंत अवस्तु येन तातेकर नय।

पीणोके उपजि पीणोकेत नाश हय

२०९ ४९ 'शंकरदेव

प्नमुहुट कुंडल येन शुवणीर मिन्न न्यू हि, मिछा मात्र नामरूप यत ।

शहंकार पंतमूत तोमात पृथक न्यू हि प्रभु परमार्थे विचारत ।। कीर्तन- अंकर्दैव

१- असंत जगतलान, तोमात उड्मव मेला, सन्त हैन प्रकाश सदाय।

र- जानो माया गुणे बहुरूप थे रि तुमधे करा प्रकाश रिक्षे निमित्त सिक्षको दैसि तत्थर किछू त्रामास गो०व० ३ स्कंघ ८६३:

३- म०शा० - अ०वै० व०रे० - पुष्ठ १३४

४- ड्विं स्वाध

५- यि कथा पूक्ति तार् कैसौँ परिज्वेह। वने कृष्णमय दरों केसौँ पत्यभेद ।। १ स्कंध-शंकर्देव

६- प्रकृम क्यतिरेके मत येखा मिछा जान । वरित उपवि जाहे येन धर्फतान।।१२ स्कंथ २०१ ४० शंकर्वेव

स्वप्न के समान है। जहां भी देखते हैं वह सब मायाम्य स्वप्न के तुत्य है उसे हरिम्य देख मित प्रम को दूर करें। हे कृष्ण तुम्हों मात्र कैतन्यस्वरूप नित्य, सत्य, शुद्ध और अखंडित ज्ञानम्य हो, अन्य जितने हें, वे तुम्हारी माया के कित्यत विनोदरूप वराचर हैं। माया और उसके कार्य ज्ञात कारण रूप में स्त और कार्यरूप में अस्त् हैं, इस विषय में क्या मागक्त में कहा गया है — बिदुरे पूछंत है मेश्रेय निर्मुण मावन्तर गुणम्य धृष्टि ज्ञादि तीला कैमने हय, तुमि कहिदा जीवर अधे कर्न्त सियो नथ्टे काल दिये अधुप्तवीध ब्रह्म रूप जीवर केने अविधाम्य संसार हय, मौर एहि मनर संस्थ दूर करा। मेश्रेय कहन्त, जाना बिदुर एहरो हिरा माया यि विचार नहे मात हन्ते मिह्या संसार जीवत लिया। येन स्वप्न आपुन्तर शिर्च हेद आपुन देख। क्षमा०३।१ पृष्ठ १३:

पारमार्थिक रूप में इसे असत्य होने पर भी व्यवहारिक दृष्टि से हसे सत्य कहा जा सकता है। भगवान निज शक्ति के द्वारा स्वयं ही इस जगत की प्रकाशित करता है, अत: वही जगत का उपादान और निमिष का कारण है। उनके अतिरिक्त इसका कोई अन्य कारण नहीं है।

नंदरास करते हैं कि सम्पूर्ण बड़ और बैतन शुष्टि के मूल में एक हा सुद्ध तत्व है जो नाम और रूप केमेद से अनेक रूपता थाएण किये हुए है और वह सुद्ध तत्व त्रीकृष्ण हैं। ब्रह्मा और जगत की अद्वेतता बताते हुए नंददास ने ब्रह्मा को ति जगत का निमित्र और उसी को उपादान कारण माना है। नंददास करते हैं— एक ही वस्तु अनेक नाम और रूपों में हस प्रकार जगमगा रही है जैसे स्वर्ण से बने हुए अनेक आमूकाणों में:कंकण, कर्कानी कुंडल आदि में: नाम और आकार का मेद होते हुए भी स्वर्ण साथारण वस्तु, व्याप्त वस्ति रक्ती है। जगत में जो गुण मान हैं वे सव पर ब्रह्म से ही प्रसूत हैं जैसे समुद्र से बादल करते हैं और उससे जल तैमर प्रभूती पर बरवाते हैं फिर खंत में समुद्र उनको अपने में ही मिला देता है जैसे धानन से अनेक दीपक ज्योति जतती है, परन्तु सब मिलकर वे एक अग्निम्म हो जाती हैं। इस प्रकार उन्होंने जनत को ब्रह्म से प्रसूत ब्रह्म का ही परिणाम और अंत में

१- यत देला यत शुना यतेक मनत गुणा सबै मायामय स्वप्नसम:कार्तन १८९।:

रे यत देशा नायाम्य तने स्वप्नसम् । हरिमय देशि दूर करा भ्रमा। ११स्मेघ १६२६२-ग्रेसरदेव

³⁻ हे कृष्ण तुमि मान वैतन्यस्वरूप नित्य सत्य शुद्ध ज्ञान अशंख्ति । शावर् यतेक इटो तोमार् विनोदरूप चराचर् मायार् करियत।नाठ्यो०७७ --माय वदेख

४- अ०व० सं०- ५० ४४६

ब्रह्म में ही लीन होने वाला बलाया है। इस जगत का श्राधार ब्रह्म की सत्ता अथवा सत रूप है जब यह जात ब्रह्म की माया में लीन हो जायगा उस लम्म कैवल एक ब्रह्म ही रह जायगा । दशम स्कंघ के अट्ठाइसर्वे यथ्याय में नंदरास कहते हैं माया, लोक और पृष्टि का भूजन करती है। मगवान की शक्ति स्वरूपा सत्य माया का वर्णन कवि सिद्धांत पंचाध्ययि मैं इस प्रतार देता है -- पंच महामूत श्रादि श्रद्ठाइस तत्वों की की शुष्टि माया का ही परिणाम है। यह माया मगतान केवश में धदेव रहती है और मावान की इव्हानुसार जगत का धुप्त पालत और प्रत्य करती ै। राध पंताध्यायी में कवि कृष्ण की मुर्ला से जादि शक्ति योगमायां की तमता देते हुए कहता है- यह योगमाया अमटित घटनाओं को घटित कर्ने वाली है। इस कथन मैं भी कवि ने 'योगमाया' शब्द से मगयान की शृष्टि का रिणी शनित का ही सनैत किया है। इसी ग्रंथ में गोपी मिलन पर कृष्ण गोपियों से कहते हैं--है किशोरियों मेरी माया नै सम्पूर्ण विश्व की वश में कर रवता है, परन्तु तुन्हारी प्रेमम्यी माया ने मुके वश में कर लिया है जिसके साधान से तुमने लोक-वेद की शृंखलाओं को तिनके के उमान तोड़ दिया है । नंदरास गोफियों के बाक्य इवारा शुद्ध स्वरूपा माया मलमयी शविषा माथा दोनों का वर्णन किया है। उस संवाद का भाव इस प्रकार है-- हे उदव, तुम कहते हो कि ईश्वर निर्मुण है तो हमें बताओं बदि उसके गुण नहीं हैं तो इस श्रुष्टि में दीलने वाले गुण कहां से अपर हैं। वस्तुत: ईश्वर समुण है और उसके गुणों की परकाई ही उसके माया के दर्पण में पह रही है। ईश्वरीय गुणा से प्राकृत गुण क्यों मिन्न दी खते हैं २ अविया माया के संसर्ग से। स्वच्छ जस के समान ईश्वरीय शुद्र गुणा को जो प्रकृति माया के माध्यम में परिणाम रूप में व्यक्त हो एहे हैं, श्रविया माया की कीच ने सान दिया है और उन्हें धने हुए गुणा को वंसारी जन अपनाते हैं। जिस माया के दर्पण का नंददास ने यहां उत्सेत किया है वह शंकर की मिथ्या माया का दर्मण नहीं है यह दर्मण ब्रह्म की सित स्वरूपा प्रकृति की माया का पर्पण है इसमें जो विजातीय विकार है वह अविधा रुपिणी माया की कीव है, जो बन्धथा प्रती ति कराती है । रसमंजरी में नंदना स कहते हैं ेजो रूप प्रेम आनंद रस आदि गुण और माव इस जगत में हैं उन सब का मूल आधार

१- त्रव्यव संव - पूर ४४७

र- वहीं पु ४६३

३- वही ० पृ० ४६४

गिरिधार देव हैं। विद्या माया से अविद्या माया के प्रम को इटा कर भगवान की पृष्टि कारिणी सत चित और अानंद -- शक्ति रुपिणी माया का दर्शन होता है।

तुलिंदि की विनय पिक्का में कहते हैं "प्रमवश ही मैं असत्य कात की सत्य मान रहा हूं और अभी तक निश्चय भी नहीं हुआ है कि क्या सत्य है और क्या असत्य ! मृगजत सत्य नहीं कहा जा सकताहै ,परन्तु जब तक प्रम है तब तक सब सा दीसताहै ,हसी प्रम के कारण अध्यक दु:स होता है । जब तक ज्ञान का उदय नहीं हुआ है यह मनौर्म दिसाई देता है, वेद कह रहे हैं कि सांसारिक प्रपंत सकेया असत्य है । तुलिंदी दास जी कहते हैं कि प्रमु की शृष्टि का वर्णन करते नहीं बनता । आदिकर्ता निराकार परमात्मा ने माया रूपी दीवार पर अथवा अंतरिका पर जो शुन्य मास रहा है रेसे विचित्र चित्र सीचे हैं, जिनमें रंग का तथ नहीं है । प्राय: चिक्कारि भीने से मिट जाती है, पर इस कुशत चिक्कारि के चित्र भाग तथ वहता है । कोई इस रचना को सत्य कहता है और कोई मिथ्या । किसी किसी के मत से यह सत्य और मिथ्या दोनों का मिश्रण है। तुलसीदास जी का मत है यह तीनों सिद्ध ति प्रम हैं।

अवतार : जीव यथिप सत्य है भी हो वह ब्रह्म के अतिरिक्त नहीं है, ज्ञात तो पूर्ण कि मिथ्या है। अत: ब्रह्म ही एक मात्र सत्य उनका सजातीय या विजातीय अन्य कोई नहीं है। किमस्त रूप नायाम्य शृष्टि के हैं, यह जान कर कैवल ब्रह्म में पर दृष्टिपात करों। मायाम्य नामस्प आदि की उपेका कर कैवल मुक्त अर्त्वाभी ईश्वर को देखों। समस्त प्राणियों में बाहर और मीतर अनंत मगकंत व्याप्त है। जिस प्रकार सभी घट हि मुख्या के हैं उसी प्रकार से इन तीनों जात में व्याप्त हूं। तुम्हारे परम अड्वेतरूप आनंद

मायाम्य नामरूप स्वाको उपेता। वंतयामा मह हरवर मात्र देशा ।।कृ०पो०-संकर्देव

१- व्यव्या संव पुर ४६५

र- वि**०प० -पद १२९ पु**० २९३

३ वि०प० पद १११ पृ० ११ हे

४- यतेक त्राकृति माने मायामय पृष्टि । हैन जानि कैवल ब्रह्मत दिया दृष्टि।।

५- समस्त प्राणीक व्यापि त्राहोको त्रनंत ।

वाक्षिरे मीतरे समस्तते मगनंत ।।

येन घट सन माति मात्र विचारत।
सेक्मिते व्यापि त्राहों एकि त्रिकात ।।

पद में मेरा चित्त मग्न हो । तुम्हारे स्वरुप में किसी प्रकार का मेन नहीं है माया से ही अनेक परिच्छेद दिलाई देते हैं। चैतन्य रूप में एक निरंजन व्याप्त हैं, तुमको कौन ऋशानी द्वेत कहेगा ।

समस्त आत्माओं का परम बंध्यु हरि माध्यव प्रकृति और पुरुष दोनों का नियंता है। कृपामय प्रमु जिसके हेतु तुम कृत्य में हो, वहीं से समस्त जह जीव का प्रकर्त होता है। जिस लिये कृष्ण ही समस्त प्राणियों मैंनिरंतर आनंद लाम उठा रहे हैं। महाजन निश्चित ही जानेंंगे कि हसी लिये सर्वानंद नाम घ्यारण कर हिर हैं। समस्त जीवों में आत्मा नारायण आत्म सुत में सदैव रत रहते हैं। इसी लिये हिर समस्त प्राणियों में समान हैं। वेतन्य से लेकर माया में उपने जितने हें, उसे हिर रमाते हैं। इसी परमानंद पूर्ण परमात्मा की उपलिख्य के लिये ही देह, मन, प्राण आदि उनके प्रति आकृष्ट हो रहा है। जिस लिये हिर वेतन्य पूर्ण परमात्मा रूप में हृत्य में प्रकारित हो रहे हैं। वहीं हिन्द्रय गण मूत, प्राण, बुद्धि नन आदि जड़ राशियों का प्रवर्तन करता है।

वैतन्य रूपे व्यापि एक निरंजन । तौमाक बुल्नि द्वैत कोन ऋजन ।।:की० २९७८: शंकर्देव

१- तीमार् अद्वेत वर् रूप पर्न आनंद पद ताते भीर मग्न होंक विच। की ०१ ६७० :

र- मायातेसे देख्य विविधा परिच्छेद। स्वरूपत तौमार नाहिने किंदू मेद।।

३- प्रकृति पुरुष दुहरी नियंता माधन। . समस्तरे श्रात्मा हारे परम बांधन ।।नाव्यो ०-- अंव्यवेत माधनदेव

४- यिद्वते दियात बाह्य तुमि कृपाम्य। तातेसे समस्त जड़ बीव प्रवर्तय।।:१०म०१६६७:शंकर्देव

५- यिहेत कृष्णीसे बात्मा स्तेवेसे जीव रादित निरंतरे वानंद लम्य नाव्यो ०१४ हमाध्य वदेव

६- समस्तरे जात्मा नारायण जात्ससुते रति सन्वेदाण एडि हेतु हरि समस्त प्राणीते समा। वही ६३५:

जिस प्रकार अप्राकृत विधाशिक्त का विकासरुप स्वीकार किया गया, इसी प्रकार विधाशिवत का विकासरूप मगवान के चैतन्य लीला-विगृह की भी स्वीकार किया रवा जाता है। हम भाषा में या व्यवहार में जिसे श्राकार या विग्रह कहते हैं, वैसा श्राकार या मूर्ति मगवान की नहीं है। इसी ही माधवदेव ने कहा है श्रव्यक्त ईश्वर हरि की पूजा किस प्रकार करोगे व्यापक का विसर्जन कैसा और अपूर्त का चिंतन कैसे कर्गेगे, न्यनमक राम बौतकर मन को शुद्ध कर्गे । अतः उनका स्वरूप निराकार है और मकत के अनुगुड़ पर ही कभी कभी वै लीला विग्रह घारण करते हैं। एकांत ज्ञानी मकत कै पता में मगवान की लीला और निग्रह विहार आदि विपरीत और विस्मयजनक और परमञ्चानंद दायक बात है। है कृपामय हरि तुम परम दुर्बोध ज्ञात्य तत्व और उसके ज्ञान के लिये अनेक लीला अवतार घारण करते हो-- उसका चरित्र सुधासिंध्यु है, उसमें क्रीडा कर दीनवंध्यु चार पुरुषार्थं को तृण के समान करते हैं बंध्यु कहने में विस्मय और सुनने में विपरित है, ग्राप्ट्रम का विहार कहां है। जिसे सकल निश्म अनुमान के आधार पर कहते हैं,वही हरि गीप शिशुओं के समान केलि कर रहा है, सुनने में नित्य, शुद्ध,बुद्ध, निरंजन, निराकार शादि हैं और उसका विहार कौतुक के समान हैं। जो जगत का ऋंत्यमि। सर्वेशाची है उसके बलंगार गुंजा और मयूर पंत हैं, जिसके प्रकाश से समस्त चराचर प्रकाशित होता है, देश वही कृपामय प्रमु गोपवेश भारण किये हैं, श्रात्मा का विनोद सुनने में विपरित हैं, हरि के चरणों में माध्य का चित्र हुन जा। शुनने में अनुपम ब्रह्म का वर्णा

१-अव्यक्त है स्वर् हरि किमते पूजिया तांक व्यापकत किया विशवने । एतावंत मूर्ति शुन्य केनमते चितिपाहा राम बुलि शुद्ध करा मन।।:ना०यो०=: वही र-परम दुर्वोच जात्म तत्व तार ज्ञान जये हरि यत तीला अवतार घरा तुमि कृपामय। ताहार वरित्र धुषा सिंध्यु तात क्रीडा करि दीनबंध्यु नारि पुरुषाय तृण सम कर्य।।नाधावदेव र- कहिते विसमय विपरीत शुनिवार कोथा शुनि बाख नाई बृद्ध्मरे विहार।।

श्रुमाने कहे मान सकत निगमे।
से हि हिर केलि करे भौप शिशु समे
नित्य, शुद्ध बुद्ध निरंजन निराकार।
श्रुनिते कौतुक बर तादेर विहार।।
यिटो जगतर अंतयामी सर्व्य सासी
तादेर मूकाण गुंजा केल मेरा

याहार प्रकाश वरावर प्रकाशय।
गोपवेश त्राहे देख से हि कृपामय।।
त्रात्मार विनोद शुनिबार विपरीत।
हरि पदे मजि रहीं माधवर विहा।
बर्गीत—वहक्रवदेव

दुष्ट के निगृह और व्यक्त मक्त के अनुगृह के द्वारा विश्व में शांति स्थापना के लिये, मगवान जो लीला विग्रह घारण करते हैं, उसे अवतार कहा जाता है। जिस रूप में ऐश्वर्य, ज्ञान, घर्म, वैराग्य, श्री और यश आदि का पूर्ण रूप से प्रकाश होता है उसे ही पूर्ण अवतार कहते हैं।

सूरवास कहते हैं-- मादि मजिर वृंदाबन में पूर्ण पुरु कोत्तम की इच्छा सकित से राषा और गौषियों के साथ नित्य रास ही रहा है,इसी आदि पृष्ट का उन्हीं पूर्ण पुल बोदम की इच्छा शनित से राघा और गोपियों के लाथ नित्य रास ही रहा है, इसी श्रादि धृष्टि का उन्हीं पूर्ण पुरु को उन श्रीकृष्ण ने इस सम्पूर्ण धृष्टि को उनकर विस्तार किया है और वह बादि पुरुष मी जिसके परिणाम स्वरूप यह पुष्टि हुँई है उन्हों मैं से प्रकट हुआ। जिस कृष्म के स्मुणा-निर्मुण दोनों स्वरूप है वही इस जगत में अवतार मी धार्ण करता है। कृष्णावतार में प्रशटित श्रीकृष्ण स्वयं साकात पख़्म थै। एएके बतिरिक्त कृष्णा विष्णु रूप से वामें संस्थापन और बसुरों के संसार के लिए भी इस लीक में अवलार थाएण करते हैं। परमानंद दास का कहना है-- जो ब्रह्म प्राकृत गुणाँ से रिक्त निर्मुण स्वरूप है वही इस लोक में अवतार जारण कर सगुण स्प से शीलाएं करता है। और सब का ब्रादि स्तरुप वह पर ब्रह्म मावान श्रीकृष्ण शी हैं। ब्रादि वृंदाका विहारी पूष्ण का स्वरूप भानंदम्य है। उनका परिवार गाय, गौपी, यशौदा यादि भी बानंद नूति हैं। उसना बाम गोबुल भी बानंदस्वरूप है। कृष्ण नै संसार के ज्ञानंददान के लिए हैं। निजरूप से जनतार धारण किया है। कृष्ण धुल के गागर हैं और संतों के सर्वस्य हैं। वे ही इस जगत में तीला- अवतार रूप में आते हैं। नंदरास ने कृष्ण के अतिरिक्त भन्य अवतार राम, नृसिंह आदि में भी अपनी आस्था प्रभट की है। वे यह भी मानते हैं कि पर ब्रह्म श्रीकृष्ण अपने पूर्ण रक्ष- रूप से ब्रज में तथा यमें संस्थापन के लिए वा बुदेव राम या वि चौकी स लीला अवतारों के रूप में ,इस लीक में , भवतार थारण करते हैं।

१- शुन्ति कौतुक अनुपाम

- ज़हर वरण धनस्यामा। भाष्यवदेव

- ज़ब्द वर्ण धनस्यामा। भाष्यवदेव

- ज़ब्द वर्ण धनस्यामा। भाष्यवदेव

- ज़ब्द वर्ण पुरु ४०६

- वहीं वर्ण पुरु ४९६

श्री वल्लाचार्य जी मिक्त के विषय में अपने गृंध तत्वदीय निबंध में कहते हैं—
भगवान के प्रति माहात्म्य ज्ञान रखते हुए जो धुटुढ़ और सबसे अधिक स्नेह हो वही
मिक्त है। पुष्टिमार्गीय मिक्त केवल प्रमु- अनुगृह द्वारा ही साध्य है तथा मगवान
का अनुगृह ही पुष्टिमार्गीय मक्त के सम्पूर्ण कार्यों का नियामक है। इनका मत है कि
श्रविधा विधा से नष्ट होती है और मिक्त विधा का एक पर्व है, तब होड़ कर दृढ़
विश्वास के साथ श्रवण, कीर्तन श्रादि साधानों द्वारा हिर का मजन करो, इसी से
श्रविधा का नाश होगा ।

पुष्टि मिनत के सेव्य रस शी कृष्ण हैं। उन्होंने मिनत में अनन्यता के मान बहुत महत्व दिया है। उनका इस विजय में कहना है कि कृष्ण का पूर्ण आश्रय तेकर मनत को वृद्ध विश्वास इस प्रकार रखना वाहिए जैसे चातक का मेय से होता है। उनका विश्वास है कि श्रंथ रूप जीव का अपने श्रंशी परमात्मा के साथ प्रेम मिनत द्वारा ब्रह्म संबंध स्थापित होने से सब दोषा की निवृत्ति हो जाती है , अन्यथा निवृत्ति नहीं होती। इसिलए मगवान को बिना समर्पण किए कोई वस्तु मनत के ग्रहण योग्य नहीं है। वत्तम संप्रदाय का वस्तुत: श्रीकृष्ण शरणाम मम मजनिय तथा अन्युकरणीय मंत्र है। मयादा पालन के संबंध में जो पुष्टि मिनत की आरंपिक अवस्था है शाचार्य की आशा है-- मेनुष्य को लोकिक शौर वैदिक कार्य इस प्रकार से मावान को अर्पण करके करना चाहिए जैसे लोक में सेवक सर्व कार्य अपने स्वामी के निमित्त करता है। हिर्र के स्वरूप का सदा च्यान करना चाहिए, मगवान का दर्शन और स्पर्श, माव में मी होते हैं। उनके सबसे बड़े सेव्य स्वरूप शी गोवर्दन नाथ जी थे। गोस्वामी विद्वलनाथ जी ने किशोर कृष्ण की

स्नेहो मन्ति रिति प्रोचास्तया मुक्तिन चान्यथा । त०दीनि० श्लोक ४६ पृ० १२७

५- अ०व० सं०- पु० ५२६

१- माहातम्य ज्ञानपूर्वस्तु धुटुढ़ धर्वतौशिषाः।

२ अ०व०सं० - ५० ५१ म

३- वही - पृ० ५२६

^{%-} सेवकाना यथा लोके व्यवहार प्रसिद्धयति तथा कार्या समाप्येव सर्वेषां ब्रह्मता तत:

⁻सिदांत रहस्य कोड्स ग्रंथ मट्ट रमानाथ शर्मा- ७-८

युगल-लीलाओं का तथा युगल स्वरूप की उपासना विधि का भी समावेश अपनी मिनत पद्धित में कर लिया । भूरदास आदि मक्तों की रचना में युगल स्वरूप तथा राधा की स्तुति के अनेक पद विद्यान हैं। वल्लम संप्रदाय में राधा स्वकीया हैं और गोड़ी संप्रदाय में राधा परकीय रूपा हैं।

शीमद्भागवत में मिवत के नौ प्रशार दिये गए हैं जो इस प्रशार हैं— शवण, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्वन वंदन, दास्य, सख्य तथा श्रात्म निवेदन । वल्लम मत में मागवत की नवधा मिवत के श्रिति दिस्त दस्वीं प्रेम लगणा मिवत मी कहीं गई है और यही मिवत उस मत में मुख्य है जिससे मगवान के मिवत भेद

मगवड़ मिनत साधारणत: दो प्रकार की है- सगुण और निर्मुण । गुण का अर्थ है सत्व रण: और तम। इन तीन गुणों के योग की सहायता से त्रिमुणात्मक प्राकृत वस्तु को आश्रय कर प्राकृत जनों की जो मिनत है, वही सगुण मिनत है। निर्मुण अर्थात, सत्व रण तम गुणों के सहयोग से न होगुणातीत मगवान के प्रति अप्राकृत अर्थात त्रिमुणों के आधीन लोगों की शुद्ध सत्वमय द्वीमाव प्राप्त अंतकरण की अविच्छिन्नमाव से चलती मिनत है। निर्मुण मिनत है।

परम पुरुष मगवान माया का शृष्टा, प्रकृति का जनक अत: स्वाधीन और निर्मुण है। इसी कारण वह जीवों के विसदृश है। जीव जब तक प्रकृति के आधीन रहता है तब तक प्रकृति व प्राकृत विषयादि कीव को अनेक और खींच सुख दुख का भीग कराते हैं। जब तक प्राणी प्रकृति से संबंध विच्छेद नहीं कर सकते की सीमा में है--प्राणी का आंत: करण प्राकृत वस्तुओं के साथ आबद्ध होने के कारण यह मगवद् विमुखी नहीं हो सकता है

सगुण मिनत : भनत अपने अंत जरण को मावद विमुखी करने के लिये जिन वस्तुओं को गृहण करेगा यह सब प्राकृत त्रिशुणात्मक होगा , इनका चिव या त्रिगुण के अतीत

१- अव्यव संव - पृव ५२७

र- वहीं - पु धरम

३- मक्शा०-वर्ण वेर रेर पुष्ठ १८३

४- वही - पृ० १८४

वस्तु की कल्पना कर न सकेगा। प्राकृत वस्तु के भीतर जो सत्वप्रधान शुन्दर्भुतकर दुस और मीं ह का कारण मृत रज: और तमी गुण की अभिव्यक्ति रहित वस्तु को आश्रय कर प्रथम सिन्वदानंदात्मक मगवान में मन को अभिनिष्ट करना होगा। जिन वस्तुओं के प्रति मनुष्य की प्राणि शुलम लालसा नहीं, जो अभिनिष्टि होने पर भी अंत:करण में प्राकृत वासना शादि का उद्रेक न हो, तब तो अनन्या साधारण मगवन्म हिमा मंदित सात्विक विषय सूर्य, बंद्र जल आदि नहीं तो मगवान के निकट घनिष्ट माव से संरितष्ट रूप में प्रकाशित विष्णव मक्त के विष्णामूर्ति आदि ही मगवद्भित्वत के आलंबन हो सकते हैं।

वल्लम संप्रदाय में ईश्वर के दोनों रूप, सगुण तथा निर्मुण मान्य हैं। परन्तु उस मार्ग का इन्ट रस-रूप सगुण ब्रह्म ही हैं। सूरदास, पर्मानंददास जादि जन्ट मनतों ने भी स्गुण ईश्वर ही की उपासना का माव अपनी रचनाओं में प्रकट किया है। पूर्वास तथा नंदवास के मंबर गीतों का गोपी- उद्धव संवाद इसी सगुण-निर्गुण तथा भवित और ज्ञान के विवाद को प्रकट करता है। इन क कियों ने इस विवाद को प्रकट कर्वक अन्त में सगुण ईश्वर की मिनत को ही अधिक प्रभावन्यी सिद्ध किया है । सुरास कहते हैं-- निर्मूण ईश्वर की गति कहते नहीं त्राती, त्रीर न उस अव्यक्त पर मेरे मन की भावनयी वृधि ही ठहरती है, इसलिए सब प्रकार से अव्यक्त ब्रह्म तक पहुंचने में अपने को असमर्थ पाकर में सगुण ईस्वर की मिनत करता हूं और उसकी लीला के पद गाता हूं। पूर ने अनेक पदों में ज्ञान और योग मार्ग तथा निर्मुण ईस्वर की और अपनी उपेता के मान को प्रकट किया है और स्गुण ब्रह्म कृष्ण के रूप,नाम और लीला की प्रेम मिवत की ही महिमा गाई है। एक स्थान पर वे कहते हैं- में कर्म, योग/ज्ञान तथा वैथी मिनत के साधानों में मटकता रहा, परन्तु मेरा प्रम नहीं कूटा। क्रंत में वल्लभाचार्य की ने मनवान की लीला का रहस्य मुफे जीव की मगवान के साथ मिल जाने के लिये जो आकर्णण व प्रवनतारूप द्वीमूत ग्रंव:कर्ण की वृधि ही यदि ह भिवत हो, तो जिन क्रियाओं के द्वारा मगवान के साथ श्रभिन्न हो सकता है, वही क्रिया

१- म०शा०-- व्यव वैवरेव पृष्ठ १ म्प

र- अ०व० सं०- पृ० ५३३

३- अविगत गति कहु कहत न आवे-- पूoसTo

ही मिनत या मजन है।

श्रवणा, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, श्रञ्जीन, बंदन, दास्य, सास्य और श्रात्मसमर्पण। इन नव मित्तर्थों का यदि सात्विक, राजसिक और तान सिक भेदें किया जाय, तो प्रत्येक के तीन भेद होंगे। इसी फ्रकार स्मुण मिन्त के म्ह भेद होते हैं।

शवण : मगवरत्का तंत वैष्णव व गुरु के मुल से मगवान का नाम स्वरूप,गुण, श्रिया शादि की वेदादि शास्त्रों को स्किनिष्ठ माव से श्रुनना चाहिए। किसी एक वस्तु के नाम और स्वरूप शादि के विषय में श्रुनने से उसके संबंध में जो ज्ञान होता है, उसके द्वारा मी मनुष्य के मन में तिद्वष्यक संस्कार और वासना का जन्म होगा। श्रुत: श्रुवण द्वारा श्रंत: करण में भगवान का नाम गुण क्रिया का परोद्याज्ञान होता है। कीतन : उसे ही यदि बार बार अपने मुंह से श्रावृध्धि किया जाय या अन्य के सम्मुल हिसी कथा की अनेक बार कहा जाय, तब यही श्रुवण जित संस्कार व वासना स्पष्ट और गाढ़ी होगी।

स्मरण : भली तरह से मन में जमी और कंठस्थ बात भी रमरण न करने पर चिच पट पर अंभित उसके संस्कार व वासना भीरे भीरे सांसारिक या वास्तांतरर द्वारा अभिमू त हो नष्ट हो जायगी। मगन्त कथा संबंधी वासना चिरस्थायी हो उसके लिये स्मरण का विधान है। अनुभूत वस्तु का संस्कार उद्बोधन के द्वारा ऋंत:करण में पुन: पुन: प्रतिभास होने का नाम ही स्मरण है।

पाद सेवन : ग्रंत:कर्ण में स्मरणांत मिवत के से हुई मक्त के ग्रंतर के मगवद प्राप्तिकायक श्रमिलाका से मी जो मगवत्प्राप्ति विकायक जिल कृति का उदय होता है, यही पाद सेवन श्रन्थन और बंदन यही तीन प्रकार की केस्टा, क्रिया रूप में बर्डिन्द्रिय और शरीर में श्रमिव्यक्त होने पर ही मगवत प्राप्ति अनुकूल होगी । बेद शास्त्रों ने जिस प्रकार की सेवा का विधान किया है उसी प्रकार की सेवा से वे संतुष्ट होंगे । उनका प्रतिमास्थापन गृहतेपन, प्रतिमास्नापन और उनके मक्त वैष्णाव साध्यु लोगों की नाना प्रकार की प्रतिसाधाना ही मगनान का पादसेवन है ।

ग्रन्त : ग्रन्ति शब्द का ऋषे है पूजा । निज की मोगोपयोगी बस्तु और मगवान की प्रिय शास्त्रों में कहे गए नाना उपहार द्रव्य मगवान के उद्देश्य से त्याग करने को उनकी पूजा

१- वही- पु० १६६ ३- वही - पु० १६०

२- वही- पु० १८६ ४- वही - पु० १६०-१६१

या अर्ज्यनात्मक मिनत कहते हैं।

बन्दन : स्तव स्तीत्रादि गा नाना प्रकार की प्रार्थना कर्शास्त्रों के विधि के अनुसार प्रणाम करने की वंदन मिक्स कहते हैं।

नात्य : मन्त का समस्त कर्म उसका फल्ट्रिन्न्न्युम् अन्द्रम्पि प्रादि सब मगवान की होगी । हर प्रतार त्वयं को मगवान का दास समझने पर्ट्रसमस्त दर्भफल इत्यादि को मगवान को अर्पण कर देने का नाम दाऱ्य मिन्त है । दाऱ्य मिन्तमान महत जिन कामों को मगवान को प्रिय समकता है या जानता है उन्हें की करता है और जो कर्म मगवान को अप्रिय हैं तथाते वैदादि शास्त्रों द्वारा निशेष किये गए हैं उन्हें वह कभी न कुरेगा ।

संस्थ : इसी प्रकार स्कांतमाव से मग्यान की महित करते करते करते, जब प्रमु प्रसन्न हो मकत को अपना दास कह ग्रहण करेंगे। तब माया व ऋगन का आवरण पतला हो जायगा। मग्वान जो जिस प्रकार से प्रेम करता है मग्वान भी उसे वैसे ही प्रेम करते हैं। तब मकत मग्वान को प्रमुन कह, परम प्रिय प्राणाधिक सित अथवा सुहुद कहता है। परम प्रिय भगवान से मिलन की उत्कंटा अत्यन्त प्रवल हो उठती है।

आत्मसमर्पण : जन मनत ना देह,मन, इन्द्रिय समस्त मगवान नो अपित करेगा। देह,मन, प्राण समल जन प्रियतम ने हाथों में अपेण नर दिया गया और सर्व शिंदतमान भगवान ने उसे जन ग्रहण किया तन उसना चलना फिरना, प्रवृत्ति, निवृद्दि, उसने कृत पाप पुण्य शादि यह सन भगवान की क्रिया है उसना नहीं मी किसी प्रभार ना निजयन नहीं। इसी अवस्था को माध्य देन ने नहा है न हम बार जाति जानते हैं न बार आजम,न धर्म शील, दानी समस्ती और तीर्थगामी हैं, निन्तु पूर्णानन्द सागर के गीपीन त्तम के कमलवत नरणों के दास ने दास ना दास में हुआ।

अवण-कीर्तन श्रेष्ठ : श्रात्मर्थमपेण व मानान के एक शर्ण लाम तक ही स्गुण मित है। श्रात्म समर्पण होने के पश्चात मनित का सगुण माव गिर् जाता है। इस नव प्रकार की

वास री दासरी तान दास मेलों श्रामि।।:नाघी०--माधावदेव

१- नोहो आ मि जाना चारि जाति, चारियो आत्रमी नोहो आति नोहो भर्मशील दान क्रत तीर्थनामी । किन्तु पूणानिंद समुद्रर गोपी मर्चा पद कमलर

त्मुण मित के भीतर भी अवण, कीर्तन और स्मरण भेद माव के स्फुरण न होने पर भी निर्मुण अवस्था में भी बल तकता है। भेद माव व माया के बंध म न हुए निर्मुण मनत का भी तर्देव अवण, कीर्तन और स्मरण बल तकता है। भुभुता हरि कीर्तन से तर्देव रित करते हैं हती कीर्तन में जो निय नहीं देशा वह अवीगति को प्राप्त होगा। जितने एकां तिक महाभुनि हैं, निवित्ति विविध निष्ठांच में निर्देवर निर्मुण भाव में स्थिति हो, कुष्ण कथा मृत, तागर को पुरु आर्थ का तार तत्त्व जानकर के तदेव ही उसे कहते पुनते हैं। अवण कीर्तन के ताथ स्मरण भी अंतिकृत हो तकता है, न्यां कि स्मरण होने पर अवण कीर्तन नहीं हो तकता है। अतः अवण और कीर्तन को तक्ति हो तार हैं—क्या है। पूजा आदि जितने मितत के मध्याम हैं इनमें अवण कीर्तन ही तार हैं—क्या हुनने और ठीम कीर्तन के तमान अन्य कोई नहीं हैं। मेरी मित्र का रहस्य अवण और कीर्तन है—आकाश में मार्च विवस्य करना।

आवार्य मटुदेव ने मिवत विवेक में दास पर्यन्त मिनत का निरूपण किया है सख्य और आत्म निवेदन के संबंध में कुछ मी नहीं कहा । शंकरदेव ने भी मिवत रत्नाकर में मिवत के नाना विभाग की बात की है किन्तु सख्य और आत्मिनवेदन मिवत का निरूपण नहीं किया है । दास्य मिवत की पीछे माया का चावरण पतला हो जाता है और मेद जान दूर होने लगता है सख्य और आत्म समर्पण रूप मिवत के समय मेद ज्ञान का लेश रहने पर उतकों दूर करने के लिये किती देख कर्म के अनुष्ठान का विधान संमव नहीं ।

१- मुकुट राजलो हरिर कीर्तन करन्त सदाय रति। हेन कीर्तनत मिटो विस् ने दे याहवे सिटो अधागित।।ना०घो०२८८-मार्धावदेव:

२- रेका न्तिक महामुनि मत निर्वेरिया विधि निर्वोध त निर्मुण भावत थिति हुना निरंतरे । जानि पुरुषार्थ सार तत्व कृष्ण-क्यामृत सागरत कथने मधने स्वाय रमणकरे । नाठ्यो० ६४६-माध्यवदेव

३- पूजा आदि मत मिनतर मध्यत्र अवण कीर्तन सार। क्या अवणार, नाम कीर्तनर समान ना हिके आर।। रह स्कंघ :४७३-४७४:शंकरदेव ४- अवण कीर्तन मीर रहस्य मकति। आवेश करिका मात्र विकस्य सम्प्रति।।:२ स्कंघ ६५२:

५- म०शा०-त्रव्येव्यवरेवपुष्ठ १६६

शीमागवत में पुरंजन उपाख्यान वर्णन के प्रशंग में रूपक के द्वारा स्पष्ट किया गया है कि दास्वांत शात प्रकार की मिलत गुरके उपदेश द्वारा जन्मती है, अख्य और आत्मनिवेदन मिलत स्वयं उत्पित्त के कारणा गुरू के उपदेश व विधि की अपेता नहीं करती। मगवत् तत्व ज्ञान के पश्चात जो स्वयं उत्पन्न होती है अथवा स्वयं मगवान ज्ञान के पी है व मकत को इस शख्य मिलत का उपदेश हैंगे। मिलत विवेक में पहले ही जो शरण-निर्णय किया गया है उसके द्वारा आत्मनिवेदन मिलत का रूप कहा गया है। शंकर देव ने भी मिलत रत्नाकर में अनेक स्थान पर मगवान के एक शरण अब अनन्यशरण की कथा के भीतर आत्म समर्पण मिलत का स्वरूप निरूपण किया गया है। जब माया का आवरण और विदीप रूप कार्य नहीं रहता किन्तु शुद्ध सत्वमय, मगवद्कार में आकार की द्वीभावापन्न माथिक अंत:करण वृद्धि रहती है। यही एक शरणाता ताम है, इसे हमने निर्मुण मिलत कहा है। इस मिलत के उदय होते ही व्यक्ति जीवन्मुलत होता है। शंकरदेव ने कहा है जो समस्त जगत में विष्णामय देखता है, वह अविर काल में जीवित रहते ही मुलत होता है।

मनत गण मुन्ति की उपेना कर कैवल मनित की वांका करते हैं। े िस प्रकार हरि पद को कमल नहीं वाहिए, उसी प्रकार मुक्ते मुनित नहीं वाहिए। सुल का मोग में नहीं मांगता,न मुक्ते मुनित वाहिए। कैवल तुम्हारे बरणों में मेरी मनित रहे। तुम्हारी पद घूलि को छोड़ प्रमु मुक्ते मोन्न की अभिलाषा नहीं है। नारद, सनतकुमार, अनंत शुक्रमुनि इत्यादि मुनित के सुख को त्याग कर कैवल राम नाम लेकर विवरण करते हैं।

६- नार्व सनतकुगार अनंत शुक्तमुनि आहि करि।

मुकुति शुक्क ठेलि रामनाम सदाइ पूर्वे सुनिर्।ना०घो०३५३माघावदेव

१- म०शा ०-त्रवैवदारे पृष्ठ १६८

निष्णुमय देखे यिटो समस्त जगते। जीवन्ते मुकुल होवे अचिर कालते। की०१ ८२४:

३- नलागे तीन मुक्तुतिका तथा। नाहि हरि पद पंकल यथा।:की०११४:

४- न मागोचो शुल मौग न लागे मुझुति। तौमार चरणो मात्र थाकोक मकति।:वडीप्२३:

५- मोना तो शमिला का ना कि हरि। तौमार नर्ण रेणुक एरि। वही १६२:

जिन लोगों ने मिनत क्य का अवलंबन नहीं किया है अधवा मिनत के अना धिकारी ज्ञान को बरम काम्य कह लोबते हैं और ज्ञान लाम के निमित्त ही मिनत करते हैं, उनके पता में बरम वृष्ति अन्यान्य समस्त को दग्ध कर स्वयं मी दग्ध व उपशांत हो जाती है। इन्हीं लोगों को लहय कर कहा गथा है। जो अपने कर्मविपाक को मोग कर, तुम्हारी कृपा की और देखता है-- काय-वाक्य मन से तुम्हारी ही सेवा करता है, वहीं मोना प्राप्त करता है। ज्ञानी गण यहां बृष्ट्म में वितीन हो लाते हैं-- जो जन माधव का नाम धर कर जाते हैं, उनके पीछे देवी देवता स्तुति करते फिरते हैं पांच प्रकार की मुकत बूकी मुनित बूकी मुनित मूर्तिमय होकर कहती हैं जात मुक्त डो-- प्रार्थना करती हैं।

सगुण मन्ति साधन और निर्मुण मन्ति साध्य अर्थात सगुण मन्ति के द्वारा ही निर्मुण मन्ति की अभिव्यक्ति होती है भिक्त रत्नाकर में इस नात को एक स्लोक में कहा गया है।

स्मरन्त: स्माखन्तश्च मिली कौथ हरं हरिम।

मनत्था धंजातया मनत्या विभुत्यूत्युलगांडुम । 140र०१ ४ १ ४ थहां पर प्रथम मनत्था के अर्थ हैं साधान मनित। चित्त का द्रवमान निरनिन्दन्न होने पर इसे ही प्रेम मनित कहा जाता है। साध्य मनित से अनवरत मणवरत्य का स्फुरण होता रहता है। शंकरदेव ने कहा है भेरे लिये जिएके मन में प्रेम उत्पन्न हुआ , नंधा उसके हुन्य की में कभी नहीं होड़ता। इस अवस्था में मणवद्रति रहप्ता प्राप्त होती है अत: मुनित से मी अधिक इसका आनंद है। इसी को वैष्णाव वन रिसम्यी मकति या मनित्रस कहते हैं।

१- यिरी मुंजि निज कमीर विपाक तौमार कृपाक चावे । काय वाक्य मने तौमाकेसे सेवे तेइसे मोद्धाक पावे ।। :१० स्कंध - ४६४:

र- यिटोजन याम माधवर नाम धारि। पाई पाई फुरे देव-देवी तुति क्रि ।। गूर्तिमंत हुया पांच प्रकार मुकुति । मौक देशो वाप बुलि करंत काकृति।।:११ स्कंब १६३१६: अंकर्देव

३- मौक लागि प्रेम उपजिल थार मने। नेरो सिंख तालार हुन्य सर्वनाणी।:११ स्वंध १६२६०: शंगर्देव

बव्यमिनारिणी मिलत : निर्मुण मिलत कभी कमी विक्या तत्व को हो ने हीं सकती है, क्या: इस मिलत व्यमिनारिणी होने को कोई आरंका नहीं है। समुण मिलत व यदि किसी अवस्था में विक्या व परमहणास्य रूप गृहण किये तत्व को छोड़ उससे मिला अन्य देवता तत्व में आविष्ट होती है, तब यही मिलत व्यमिनारिणी होता है। अव्यमिनारिणी मिलत में अन्य देव बा अन्य धर्म की निन्दा का स्थान नहीं है। दूसरे के धर्म के प्रति कदाबित हिंसा न कर्ना- सकरूण विच से प्रत्येक प्राणी के दथा कर्ना। अन्य समस्त मतावलंबियों की निन्दा न कर्ना-थोग के फाल के लिये कर्म ना त्थाग कर्ना। आत्म योग में निष्ठा होगी, कामना छूट जायकी, शित उच्चा जा हि जाप और दुव को सहन करना। अक्ता, उपेका, द्वेण निन्दा काल्याग कर --कर्तिलाह में जितना हो सके कृष्ण की पूजा करों। आत्मा रूप में प्रत्येक प्राणी में हुं, उसकी उपेका कर जो मैरी पूजा करता है। उस पूजा को होम की मस्म की आहुति स्थिकना।

शवण कीर्तनादि मक्ति को परम धर्म कह शौर निर्मुण मिति में अंतर का बंधन नहीं रहता, इसमें मोदा शुल भी पाया जाता है और इसे मोदा से शिवक अलगक कहा गया है। समस्त धर्मों में मिति श्रेष्ठ है। अत: यह परम अर्मे और पूट्यों पांच प्रकार की मुक्ति के भीतर जहां मावद मित जिरति नहीं होती है, यदी तवाधिक का म्य-अत: यह :निर्मुण मिति :परम मोदा है।

ताकार चरित्र सुथा सिंध्तु तात क्रीड़ा करि कीन वंध्तु। चारि पुरुषार्थं तृणार् सम करय।। :ना०घो०६४०:

करिका मूतक द्या सकराण विचा।:म०प्र०९४२:- शंकरदेव

१- परा घर्मक निहिंसिवा कदा चित

नकरिवा निंदा ज्ञान नंधी समस्तक। योगर् फलर् क्ये तेजिबा कर्मक ।। ज्ञात्मयोग निष्ठा केवो कामना एल्वि। श्रीत उच्छा ज्ञादि यत बुलक सिका: म०र०प०६। ६३-६४: -माध्यदेव

अपता उपेता द्वेण निन्दान एरिबा।
कलित पिमान पारा कृष्णक पूजिना।:गिवतिविवेक-पद ६७०:

४- बात्पारुषे मह प्राणीत बाक्ष्मं ताराक उपेका करि। मोक पूजे तार पूजन जानिका भस्मत होमर सरि।:वही- ६७४:

५- भीग्य दाय होवे वर्ग धर्म माथाम्य। अवण कीतीन धर्म परम अदाय। ११ स्वीध २२२

वल्लम संप्रदाय वेखपास्यदेव सगुण ,रसरूप नीकृष्ण हैं। इस मत में कृष्ण के दो रूप मान्य हैं— एक पूर्ण पुरु षोचम रस रूप ब्रज कृष्ण, दूसरा धर्मसंस्थापक व्यूहात्मक रूपधारी मथुरा द्वारिका कृष्ण । अष्ट्याप मक्तों की आस्था ईश्वर के सगुण, निर्मुण, पंवदेव और वौकीस लीला अक्तार तमी रूपों में थी, परन्तु उनकी प्रेममिक्त के उपास्यदेव बाल, पोगण्ड और किशोर अवस्थाओं में लीलाधारी ब्रज कृष्ण ही थे । कृष्ण मिक्त के साथ इन अष्टमक्तों ने कृष्ण की पूर्ण रस-शक्ति राध्ना की मी उपासना की है और युगल स्वरूप के क्रिया कलाप का चित्रण करते हुए उनकी द्वस्तियां की हैं।

भगवत्प्रेमानंद: परम रसात्मक मगवान के प्रति जो शाकर्जणा य धारावाहिक माव प्रवाहित, मगवदाकार की आघारित, द्रवीमूत विक्रमृद्धि मक्ति व मगवद रित है। वास्तव में ब्रङ्म व आत्मा के साथ अभिन्न विमु नित्य, परिपूर्ण धुनोधात्मक मगवंत इसका आलंबन है, विषय संस्मर्थ अल्पमात्र नहीं है। अतः यह आत्म सादित क तन्मथ विच्वृत्ति उच्चत आनंद परिपूर्ण तत्वरूप में रहती है।

रेकां तिक महामुनि विधि निर्भेष में निर्वत हो, और निर्मुण माव में निरंतर स्थिर रह, कृष्ण क्या मृत सागर में पुरुषार्थ का सार समक कर, कथन मधन में सदैव रत रहते हैं। हिर के गुण की शक्ति देखी, इसे प्राप्त करने पर मोदा प्राप्त होता है। उन्हें सब जीग अपने पन में सींच कर लावों। जितने निपुण जन हैं, कृष्ण चरणों में मन लगाते हैं। हिर के गुणों को सार जान न हो हुना।

मोजाती शक्षिक इटो भक्तिर शुल श्रति परम बानंद निरूपम। मकतिये पुरुषार लिंग देव मण्न करे

बिना यत्ने मुक्तुतिल पावे ।। म०र० ४७६:माध वदेव

१- अ०व० संब - पु० १५२

रेशांतिक गहासुनि यह निर्विधा विधि निर्वेधत। निर्मुण भावत थिति हुआ निरंतरे जानि पुरुषार्थं तार तत्य कृष्ण कथापृत सागरत कथने मध्ये सदाह रमण करे।। हिर्र गुणर देशा वल समिलेक थिरो मौदा फल ताहारा स्वारों चिच्क श्रान्थ टानि।

काव्य, नाटक जादि कला के द्वारा व्यंजित पारिमाणिक नव रसीं से मध्यर अधिक प्रकाशमय और परिपूर्ण रक्षमयी मिवत है। कांतादि विष्यक जी रस और भाव आदि प्रकट होते हैं. इनके बीच पूर्ण आनंद का विकास नहीं होता । कांता दि विषयक रस इन मगवड्विषयक रति की तुला मैं श्रादित्य के प्रकाश की तुला मैं खगीत के पदृश दारु और जादित्य के प्रकाश की मांति महिमा मंख्ति । असिमया वैष्णवीं ने भी इसी कथा को नार नार दुहरा कर कहा है। कृष्ण के मनित सागर में अमृत से अधिक सुस बिना प्रयास के ही प्राप्त होता है। तुम्हारे चरणाँ में असं खित रति हो-- अवण की तैन का रस कदा पि न हो हूं। वह मनत तो मुक्ति में निष्णुह है उसे नमस्कार करता हूं,रक्षमधी मित्रत मागता हूं,हरि क्या के शमृतमध रस में निमग्न हो-- हरि कितिन के महा बानंद की बाशा में दिसने महाजन मुक्ति के शुल का त्याग कर महंत वनों की शंगति में कृष्ण के बर्ण को लोजते हैं। किन्तु भाषाव का जन्म कमें यह महाधार्म है, इसकी सीमा वेद मी पा सकता है। हरिताय कीर्तन में मीचा शादि मिला है, की तैन के शुल की सीमा नहीं है। मध्यूर से सुमध्यूर हरि की की तैन का रस है, मंगल में पर्म मंगल है। इसी से मुक्ति का त्याग कर, महंत गण हिए के गुण का मरण करते हैं परम निपुण शास्त्रों का तत्व तमक कर हरिपद का मजन करना, हरि की तिन के महा आनंद में डूब मुक्त के शुल की त्याण कर रही। हिरनाम प्रेम रस अमृत निधि को छिपा कर देवगणाँ ने रला है। कृष्ण का यश अत्यन्त निर्मल है, उसमें अन्य एस नहीं पड़ता है, परमानंद के समुद्र में हुने रही ।

१- म०शा०--वावेवनवरे०--पुष्ट राष

किंतु इटो महाधर्म माधवर जन्म कर्म बैदे यार नपावे सीमा। हरि नाम कीर्तनत मिले मोदा श्रादि यत कीर्तन सुबर नाहि सीमा

मध्रारो समध्य हरिर कीर्तन रस्मंगलरो परम मंगल। स्तैकेसे मुकुतिको तथाज हरि गुण गामा फुरे महा मसंत्रकते।।:नाठघोठ:माधानदेव

५- परम निपुण को बुजिमा शास्त्रर तत्व

र- कृष्णार् मकति पुत्र शागर् संकाश अमृततो धिक स्वाद ना स्कि प्रयास।।श्री शंकर्१०म० ३- केन तजु पदे अशंक्ति रति श्रोक।

श्वण कीर्तन रहे कदा पि नैरोक ।। ४- मुक्तित निस्पृष्ठ यिटौ सेहि मक्तक नमो रसम्भी मागोहौ मकति।

हिरि कथा अमृते समाके बालाप रसे। हिरि की तैनर महा जानंद सुसक आहे। कती कतो सन महाजने। मुकुति शुक्त को तैचि गर्का जनर ही। सौजे कति कृष्णार बरणो।।

मिन्त रस की वृद्धि कर समस्त संसार का नाश करते हो मिन्त रस में पूर्ण होकर हुन्य में स्थित रहते हो । समस्त लोकों का तापहारी कृष्ण का यश है, उसको गाते महाप्रेम रस मिनता है।

इस प्रकार नाना स्थान पर साध्युत्रों ने मानत को रस् की आनंद व निस्सीय पुत स्वरूप कहा है। किन्तु यह रस शृंगार आदि प्रसिद्ध रस का अन्यतम व उसके अतिरिक्त स्क प्रकार है अथवा शृंगार आदि रस ही मगव्दिवकायक होने पर मन्ति होते हैं शृंगार आदि रस से मूलीमूत रस मन्ति है, यह बात नहीं स्पष्ट नहीं की गर्र है।

रस शब्द पारिभाषिक दृष्टि से काव्यानंद व क्ला के द्वारा व्यंक्ति आनंद को क्ला जाता है। रस्मते इति रस: साहित्य दर्पणा १-३: इत कुल्पि के शनुसार उच्चत आनंद मात्र रेस शब्द का व्यवहार होता है। असमिया विकान ताहित्य में इसी योगिक अर्थ में मिनत में रस शब्द का प्रयोग किया गया है।

जिस प्रकार गौड़ीय वैच्यावों ने स्वावद्विषयक हुंगार हादि रहा को मिनतमूलक कहा है और काव्य रिक्तों के प्रसिद्ध सांत जादि रस स्वावद्विषयक होने पर मिनत रस होते हैं, कहा है। असिया वैच्यावों ने एस प्रकार स्मष्ट याव से इस बात को कहां भी कहा नहीं है। प्राणी को अपने को प्रेम करता है-इस वात्य प्रीति हो र वापालक विषयक प्रेम रूप सव्विषयक रित का मूल उत्स जो जाल् प्रीति है, इस दात को एन लोगों ने मी स्पष्ट रूप से कहा है।

जिस कारण नैतन्थपूर्ण परमातम रूप में इति पुट्य में द्वता कित हो रहे हो । वहीं इंद्रियगण, मूत, प्राण, बुद्धि मन का प्रवेतन जड़राशि में करता है । कृष्ण कात में ही निवास

परम धानंद अनुद्रै मणि रक्ष्य।। :नाव्योव: -माधावदेव

१- मनित र्स बढ़ाइ नाश करियों संसार।

भक्ति रस्त पूर्ण हुया धाकै क्या।

समस्य लोकर् तापहारी कृष्ण यशा। ताहाक गावन्ते मिसे महा प्रेम रसा। गोपाल चरण ३ स्कंध

हिरिलाम प्रेम रस अमृत निधिय बांधि गुद्ध वरि थैला देवगणी। परम मंगल बुक्ण यश मात परे गान नाहि रस

र− न०शा०-शब्दै०द०रे० २७४

३- वही--- २७६

४- यि हेतु चैतन्यपूर्ण परमात्म रूपे हरि हृदयमत बाइंत प्रगाशि जातेसे इन्द्रिय गण मूत त्राण बुद्धि मन

करते हैं हो, और जनत में ही रमणा करते हो । इसी से उसे वासुदेव कहते हैं नाम का यह निर्णाध है।

हाली द्वारा यह स्पष्ट हुआ, हसे लौकिक आनन्द कही या कला का रह कही, समस्त हुआं का स्वरूप मृत तत्व मावान हुआ और प्रेम का स्वरूपमृत पदार्थ हुआ यही मृती मृत मगवत्प्री ति, बात्मप्री ति व मिवत है। यही आत्मप्रेम व मगवदर्शत विषय आदि के मध्य में प्रकासित होने पर, उसका वास्त किक रूप मायावृद्ध रहता है और साहित्य आदि कलाओं से उद्गित रित शोक आदि स्थायी माव को ते प्रकाशित होने पर वहां कांता वि माव विषयक रत्या दि माव का प्रवाह होता है। यदि तमस्त रस मिवत निशेष के प्रकाश विशेष हों, तब तो उसको नाना रह के मीतर् अन्यतम नहीं कहा जा एकता, आत्मप्री ति, मगवतरित व मिवत और है रस वस्तुत: एक ही है, उना वि मेद के कारण दी यह नाना रसरप में प्रतित होता है। आतंका कि प्रवास की वृद्धि में नव रस के कारण दी यह नाना रसरप में प्रतित होता है। आतंका कि प्रवीकति स्व ते व रस के स्वीकर करने की प्रयोजनीयता एन लोगों ने उपलब्ध नहीं किया था। दिस्तीय स्कंघ में संगर देव ने प्रार्थना की है।

वही कृपामय, मेरे वाक्य को त्रलंकत करें-- त्रृंगार त्रादि नाना रह राज ही त्रोर त्रानंद पूर्वक लोग उसे धूर्ने। पूल श्लोक में त्रृंगारादि रह की पात नहीं है।

इसके ध्वारा मागवत कथा आतंका िकों के अभिनत से श्रृंगर आहि रस इवारा परिवेशन परिवेशन परिवेशन संगेठसी का संवेत किया गया है।

हुंगार रहा मैं जिलकी रति है, इसे हुन वह निर्मेल भवि का हो ।

यशं भी शृंगार रख का आस्वादन करने के लिये की रास कृ हा-कथा को सुनने का उपेदेश दिया गया है। मगवद विषयक कथा से व्यंजित हुए शृंगार रक्ष रवाय द्वारा विच निमेल व मगयनम्बित के लिए उपयोगी होता है रेसा कहा जाता है तथा पि उसके द्वारा रास कृ हा कथा असदानातमाय से मिक्त रस व प्रेम रस के हेतु छैं इसके संबंधा में कोई होगत नहीं दिया गया है। यदि मब्ति रस को असिरिक्त माननेवालों की तरह मगवदिवष्यक

१- जगतते कृष्ण करिक्का निवाध, जगते तान्ते रमय। रतेकेरे तांक बुलि वाधुदेव, नामर इटो निर्णय।। :नाधो०:-माधावदेव

२- मः शा ०--वःी०व ० रे०-पुष्ठ २७०-२७६

र- हुंगार रसे मार बाहे रति। बाय जुनि शीक निर्मेल मति।

४- म०शा०-- अ०नै०य०रै०-- युन्छ २८०

शृंगार को इन लोगों ने मिनत रस समका होता तो यहां पर मागवत शरण रस की मिनत रस कह स्मष्ट रूप से उत्लेख किया होता ।

मिनत रस

भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र में का व्य रक्षों की संत्या नी भानी है -- शृंगार,करण, शांत, रोद्र, वीर महभूत, हास्य, मयानक तथा वी मत्या उन्होंने भांवत की कोई स्वतंत्र रह नहीं माना । मरत मुनि के बाद काव्य शास्त्र पर स्थित वाले याचार्यों में से ब्रानार्य मम्मट ने भी भिक्त रस को दसवां रस नहीं कहा । मरत सुनि की नौर हों की बंधी हुई म्यादा को तोड़ना उनको अभान्य न था, इतिक उन्होंने मिलत को केवल मान की संता देशर है। ज़ोड़ दिया। काव्य शास्त्र के सभी बागायों ने स्त्री की स्वकांत में बौर एकात है की रबीट स्वस्त्री में रित को ही हुंगार रस का स्थायी मान कहा है। मिलत का प्रेम ईश्वर, विष्ययक छोता है, बराबिस इसे कुंगार एस के अंतर्गत नहीं एता गया। मित शास्त्र पर भी संस्कृत में क्षेत्र गृंध तिले जा चुके हैं जेशे महाभारत-शांतिपर्व का ना रायणीयाँ परव्यान, लांडित्य पूच,नार्द पांचराम,नार्दमित तूद, हिर मितत--रहा का-तिंश् बाहि जिनमें महित ही व्याखा की गई है। इस गुंधों में मन्ति रह को ब्रह्मांनन्य से भी अधिक पुक्तारी कहा गया है। मन्ति रस की निष्पत्ति के विषय में शि रुप्योस्त्रामी जी हरिमिक्त-रसामृत सिंध्यु में शस्ते हैं-- विकाव श्तुमावा दि की परिपुष्टि से मन्ति, परम सारुपा ही जाती है। विभाव, अनुमाव, सा त्यिक भाव तथा थि भिवारी मार्वों से भवतों के हुद्ध में स्वायत्व को प्राप्त कराई वर्ड ब्रो कृष्ण रति रूप स्यागीनाय दे,वर मन्ति में परिणत होता है। जिन्हे हुद्य में प्राचीन :पूर्वजन्म: की अयवा तात्का लि: इस जन्म की: स्थमित की वासना या संस्थार है, मन्ति एस का बास्ताय उन्हीं के पुन्न में होता है। जिनके पाप दौषा मिलत से दूर ही गए हैं, जिनका बिद प्रसन्न शीर उज्ज्यस है, जी पानका में रकत हैं, जी रसिकों के सत्संग में रंगे हैं, जो

[%]--

२- अ० व० वं०-- पृ० ५६० ३- वहीं -- पु० ५६४

जीवनी मूल गो विन्द के चरणों की मिलत को ही अपनी शुल श्री मानते हैं और जो श्रेम के अंतरंग कृत्यों को करनेवाले मकत हैं, उनके हुक्य में जो शानंदरूपा रित स्थित होती है वही दोनों प्रकार के : प्राचीन तथा इस जन्म के: तंस्कारों से उज्ज्वल बनी रित-रस रूपता को प्राप्त होती है। यही रित अनुमूत कृष्णादि विभावादि के लंधों से उक्त मार्वों के हुद्य में प्रोद्धानंद और चभरकार की पाराकाष्ठा को प्राप्त होती है। मक्तों को जिस मिलत रस की अनुभूति होती है वह भरतादि द्वारा परिमाणित तथा दृश्य अव्या कोर कला द्वारा श्रुमूत रस नहीं होता, किन्तु मक्तों के हुद्य की प्रथ प्रमाम रसानुभूति कृष्णा और उनकी लीला से लंधित रागानुमा मिलत के अनुभव तथा कृष्म साजातकार से ही होती है। वल्लम सम्प्रदाय में परभेश्यर के स्वरूपों की सेवा बहुधा वाल भाव से ही होती है। वल्लमानार्य की ने प्रेम मिलत की प्रथम सीदी वात्सात्थ मिलत को ही माना है। मिलत की प्रथम अवस्था में हसी माव से मगवान की सेवा और उससे स्वेह करने का उनका शादेश है।

मदित सन मार्गों से हो सन्ति है इस मान की अस्ट्राम मदतों ने भी व्यक्त किया है।

गूरवास भी कहते हैं किसी मान से मगनान को मजो, उनजा मजन सन प्रतार के संतार दुस से

पार करनेवाला है, तथा काम क्रोध, स्नेह, सख्य जादि किसी भी मान से जो व्यक्ति

नुद्धापूर्वेक हिर का भ्यात करता है वह हिर का हो जाता है। प्रेम मान की मिनत के

विकास में भी सूर का विचार है कि प्रेम के सभी संबंधों से मगनान नश में हो जाते हैं।

बस्टिशाम मनत यथि यह मानते हैं कि मगनान सर्वमान से मजनीय है, परन्तु उन्होंने जिस
भाव के भिक्त रस का जास्वादन किया और जिस मान की उन्होंने महिमा गाई, नह प्रेम
भाव और प्रेम म कारस था।

१-वाव्यव संव -- वेव तहस्र-तहत

२ वहा - पुरुष

३- व्याप do -- पुर प्रहह

४- अ०व० सं०-- पु० दंबर

प्राचीन अशिमया वैक्णाव शाहित्य में म्मवद् रित रूप समें स्थायी माव का शांत रि ही मूल, प्रधान व कंगी रि है। मगवद् रित व्यंजित होने के कारण, उसे ही मकत गणों ने मितत रि कह कर उत्तेव किया है। राध क्रीड़ा, हरिश्नंद्र उपाख्यान जादि मिन्न मिन्न का व्य व नाटक में शृंगार करुण जादि मिन्न मिन्न रि हैं, यदि यह सब उकत शांत रि के कंग व परिपो मक्साव से व्यमिनारी रिस रूप प्रतीत होते हैं। वेसे- के लिगोपाल नाटक में गोपी-कृष्ण का संगोग और विरह शृंगार रिस व्यंजित हुआ है, तथापि यह वहां प्राधान्य प्राप्त न कर सका। यहां पर केवल कृष्ण शृंगार रिस के नाटक के नायक के स्मान उपस्थित नहीं हुए, वे मगवान, जगत के सृष्टि-स्थिति विकारी परमपुरु का हैं उनका रूप कार्य, शक्त सब बौकातीत अप्राकृत लीला मात्र है। मौपियां भी कैवल शृंगार रिस नाटक की नायिका मात्र नहीं हैं, उन लोगों ने मगवान श्रीकृष्ण को नायको वित प्रणास के लिये ही- प्रेम किया था, हैसा नहीं-- उन्हें मगवान, परमात्मा समस्त आनंद का आनंदस्वरूप समक्त कर प्रेम किया था। इस कथा को कवि ने नाना स्थान पर प्रकाश किया है।

शीकृष्ण के प्रति जो प्रेम व स्तेष है वह नायक के प्रति ना यिना का प्रेम नहीं है। इस नाटक के द्वारा मगवद मनत सामाजिकों की कांता दि विष्यक रित उदिक्त नहीं होती, समस्त विष्य वासना विगत्ति हो, वाङ्य वस्तु के प्रति जो प्राकृत अनुराम है उसका स्पुरु एण नहीं रहता। अतः विच वहिं विष्य से विरक्त हो, परम निर्मल माव से अवस्थान करता है। मगवान के रूप कार्य जादि सकतों किक, लो किक नाटक में लो किक रूप, कार्य जादि के द्वारा उसका अनुकरण व अभिनय सक प्रकार से संमव यर नहीं है। इस और गो पियों का परिवृश्यमान रूप कार्य) दि द्वारा उनके हृद्यस्थ जो कांतविष्यक रित माव पाया जाता है, उससे अधिक श्रुत रूप और कार्य के द्वारा उसका विपरित

१- थ्रम- ये सकत पुरा शुर वंदित पादपद्म सकत संसार दाकेर पुजना, माकेरि नामे महापापी सब संसार निस्तरे सोहि परमेश्वर श्रीमोपाल। है सिंह, तोहो यशोदानंदन नह, जगत रा सिंते ब्रह्म प्रार्थेंस से निमित्त तोहो सर्व्य अंतर्थामी श्रीकृष्णा बेल्त स्थाद।

सनी मान का प्रकाश अधिक स्पष्ट को जाता है। ऋत: उक्त नाटक में विभन शादि जिस रूप में देता क्या है और धुना क्या है, इन दो रूपों का परस्पर मेल नहीं है। देता रूप प्राकृत न लोकिन इसिंधे अभिनेय और धुना रूप अप्राकृत न लोकातीत है, कत: अभिन्य से अतीत है। यद्यप देता रूप की शृंगार रस की व्यंजना करता है, धुना रूप शृंगार रस की प्रतिमा में आंत रस की प्राणा प्रति का करता है। अभिनन गुप्त के संश्रीत स्तीक में शांत रस की मीमा का हैतु कहा क्या है। इस नाटक के निन ने भी इसे मीमा का हैतु कहा क्या है। इस नाटक के निन ने भी इसे मीमा का हैतु कहा क्या है। इस नाटक में आंत रस की प्रधान और शृंगार रस उसका व्यभिनारी न श्रंग रूप में रह उसकी पुष्टि करता है, यही समका जाता है शृंगार जिससे अधिक समूद और परिपुष्ट ही, आंत रस के उत्पर रठ न जाय, उसके लिये किन ने नाना दिशाओं से स्पष्ट प्रयास किया है।

साहित्य में अनेन रहाँ ने समावेश के विकाय में व्यक्ति रों ने कहा है कि किसी रह को अंगी व प्रधान कर उसका विरोधी हो या अविरोधी हो अन्य किसी रह को अंगिरत के समान परिपुष्ट कर ठठाना न वाहिए तमी अंगामी रह का अविरोध व यथीं कित सांमकस्य की रहा होती है। असिम्या वैच्छावों इवारा प्रणीत अंकीया नाट व वैच्छाव साहित्य में इस का सुन्दर अनुसरण किया गया है। अर्थांत शृंगारा दि रह व माव के इवारा मगवड्मकित व शांत रह की पुष्टि साथन की गई है शृंगार आदि अन्य रह जिससे विति समृद्धि हो निज के प्राधान्य के समग्र वेच्छाव साहित्य के प्रधान भूत शांत रह की पहिला नष्ट कर नहीं सकता है इसित्ये मध्य मध्य में वस्तुमाण

अभिनव मारती-शांतरध :

१- मोता ज्यात्म निमित्तत त्वज्ञानमें हेतु संयुक्त:। नि:त्रेय शव मेशुत: ज्ञान्तर्सी नाम विक्रेय:।।

मी भी समासना यूर्व शुण्युतं साववानतः।
 केस गौपातं नामेर्व नाटकं भौपाकः केरदेव

३ विरोधी विरोधी वा खोद्दिगिन रक्षान्तरे। परिपोधां न नैतव्य स्तथा स्थादिती थिता ।।

[:] व्यन्शलीक: ३।२४

की हैयता, मगनवादत्व की परम उपादेशता, विच्छा के नाम, गुण, कमें की उपास्यता और कि विच्छा मनत जनों की श्रेष्टता उपस्थापन के द्वारा श्रुंनार श्रादि रखांतर की चारा प्रतिका की गई है। इसी कारण से संकीया नाट बन्य :नाटकों: परिपूणांग नाटकों की तुला में विकलांग हो नर हैं यद्याप उसके प्रति कवि ने मुहीप किया नहीं है। यहां पर पात्र पात्री की क्या ने बन्तिय से सूक्तियार की क्या ने बन्तिक स्थान वैरा है, बत: नाटक की भीता का व्यांश ही अध्यक है और साथ साथ नाटक की महिमा कम हुई है। तथापि श्रांत रस की रजा के कारण ही, यह नाटक का दोष्य न हो मूक्तिण हुआ है। यदि यहां पर शांत रस के बतिरक्का यदि बन्ध रस को मुख्य कह गृहण किया जाय, तब तो हस नाटक की विकलांगता दोषा पुष्ट होगा।

प्राचीन कालंका रिका में किया किया ने शांत रस को अभिनय के लिये अयोग्य समका। उन लोगों के क्लार इसी कारण से महामुनि मरत ने शांत रस को नाट्य रस रूप में परिकणित नहीं किया।

नाटक के द्वारा सन माव की पुष्ट नहीं होती, उसका धनुमन कथात जो स्तिर मैं सिम्ब्यक्त हो हुन्य में सन मान का उन्नेस समका स्के, तो नियद जव्यमिनारी मानौन्य का चिन्ह यहां नहीं है। कत: यह सिम्बय नहीं। हसी यह रस विकलांग है, किन्तु निकलांग होने पर भी रस सौंदर्य की दृष्टि से जेष्ठ है। रिति, शोक जादि जन्यान्य मान हत्यादि कला के सहयोग से देशांतिक सुलस्तरूप और प्राकृत लोकिक रित शोक जानि मान की संदेशा जिसक मान से व्यंक्ति होती है। किन्तु मगनद मिन्त रूप राम मान स्वरूप में परम जानंदरूप है। जत: कला के तहयोग से व्यंक्ति होने पर नहां प्रमूत जम से कोई जिस्स्य न रूपांतर नहीं होता है ज्यांत प्रकृत शांतमित मगनद मनत के मिन्त रूप पित्र वृद्धि में जो परिमित उण्लाल मध्युर और अलंड स्वरूप है, उसकी तुलाा में काव्य और नाटक के द्वारा उपस्थित निमान आदि के सहयोग से उद्गित सामाजिक के सम्बद रित की उज्ज्वतता और मध्युता जियक नहीं है। शांत रख: इस प्रशार प्राचीन असन के वेच्छाव सा कित्य में सुदीर्थ किया मिनता और विच्छा वेच्छाव के महातम्य प्रमाश द्वारा सा कित्य की अन्यान्य रस की जारा प्रतिहत कर उसके कापर शांत रस की छारा श्राधक देग से प्रवाहित की गई है। इन वर्णन के द्वारा श्रुंगार शांदि अन्य रसों की महिमा कम कर शांत रस को श्राधक महिमा न्वित किया गया है। श्रुंगार शांदि रस जिससे श्राधक परिपृष्ट हों, उनके सा हित्य का प्रवानी मूल शांत रस का गतिरोध कर न स्के, उसी तिथे उसी प्रकार अन्य रसों की मुन्टि में वासा यी गई है उनके भागवत धर्म का श्राहरी ब नी ति शांदि जिस प्रकार शांत रस के मध्य में हुना कर रसने की व्यवस्था की गई है। यहां की विध्योत क्यावस्तु शांत रस की पी कक श्रीन के कारण ही उसके द्वारा शांत रस का प्रवाह प्रतिहत नहीं हुआ

प्राकृत सांसारिक मानव के जांत रसोचित वासना की शक्त कम होती है कुंगार बादि अन्य रस की उपयोगी वासना स्वभाव से प्रवलतर है। अत: उन लोगों की दृष्टि में आंत रस की महिना बस्पन्ट रहने के कारण उसके मध्य बाज्य की क्यावस्तु का स्वरूप सम्पूर्ण मान से नहीं हून बाता ,यही कुंगार जादि रस की महिमा के साथ साथ इमारा मन बौर साहित्य की महिमा भी कम होती जात होती है।

इस साहित्य में विष्णु वेष्णवों का चरित्र शीर माहातमा वाच्य, वेष्णव धर्म की श्रेष्ठता और उपादेयता, लब्ब और शांत रस के व्यंग होने के कारण, यहां कोई परिपूर्णता और रसकात किसी सैंदेह का अकाश नहीं है।

शांत रख:- साहित्य दर्मण में शान्य रख का परित्य देते हुए कहा गया है-- बहां न दुल है न सुख,न चिन्ता है और न दुवेबा, जहां न राग है और न कोई इच्छा, इस प्रकार के. माव मैं जो रस होता है उसको मुनि जन शान्त रस कहते हैं। शांत रस के इस लड़ाणा पर लोगों को शंका होती है कि कब मनुष्य की उनत दशा होगी तो उस समय किसी प्रकार कै संवारी बादि का होना असंपव होगा फिर शांत रस कैसे उत्पन्न हो सकता है। शांत रस का स्थायी मान निवेद होता है श्री रूफ्गोस्वामी जी ने हिर्मकत रसामूत सिंघू में कहा है- निर्वेद जब तत्क्जान से उत्पन्न होता है तब वह गांत रस का स्थायी माव होता है और ज वह इस क्योग बौर अनिष्ठ-प्राप्ति में भाता है तब वह व्यभिचारी भाव कहलाता है। संसार की बनित्यता, वासनाओं का त्याग और ईश्वर मिनत अथवा ज्ञान द्वारा प्राप्त की गई विच की स्थिर भवस्था से जिस परमानंद की मकत अथवा ज्ञानी पाता है वही ज्ञांत माव है भीर काव्य में व्यक्त होतर काव्य शास्त्र के अनुसार वही ज्ञांत रस है। पत्थंग, उपदेश, मिनत अथवा जान संबंधी शास्त्रों का विचार इस एस के उदी पन क्मिन हैं। विच शांति को बढ़ाने वाले पवित्र विकार और मान जैसे निर्मेत ता, निरहंका-िता जादि संवारी हैं बीर रीमांच प्रकंपादि इनी घोतक विन्त बनुभाव हैं। अष्टक्राम काव्य की समस्टि रूप में देखने से जात होता है कि इस संपूर्ण काव्य के पी है ली किक वासनात्रों के त्थाग बौर बनंब पुत-प्राप्ति की लालसा किपी है। वैराग्य, बात्म-प्रवीध, विनय बात्य निवेदन बादि मावाँ के व्यक्त करने वाले इन कवियों के पदाँ में शांत रस की ही बारा प्रवास्ति हो रही है । पुरवास और परमानंद दास ने बात्मिक शांति व्यक्त करने वाले अधिक संस्था में लिले 🕻 i

रथ स शांत: कथिती मुनिन्द्रै: धर्वैका मावेका सम प्रधान:।।शाहित्य दर्पणा

मस्ति रसामृत सिंडा प० वि०१ सहरी पु० ३२५

करा कमी जानै राम बनी । :धूर:

वानि ए राथिका चरन - : परमानेद- बव्दवपुर ६५:

१-१-न यत्र दुर्वं न पुर्वं न विता,न दुवैका रागी न वका यि दिच्छा

रे निवैदो विषये स्थायी तत्त्वतानोदभवः स नैतः। इन्हानिविष्ट योगाचि कृतस्तु व्यक्तियाँ सी ।

[₹] मन्त्र do - ye 44e

⁸⁻ पणल तजि मजि मन नरा मुरारि । :बूर:

ण छ जध्याय

- ंकः शंकरिव तथा माध्वदेव की माणा का तुरुनात्मक गाणा वैज्ञानिक-अध्ययन
- :त: शंकरदेव तथा माधनदेव की भाषा ता कुलनात्मक ज्याकरणिक-वध्ययन

प्रस्तुत अध्याय में शंकरदेव तथा माध्यदेव की भाषा का तुंबनात्मक अध्ययन विद्या गया है - अनक वर्गीतों और नाटकों की माष्मा क्रज्युंवि है जिसका संबंध प्रजमाणा की लेपता तुंबतीदास की त्वधी से अधिक है। जन कवियों के व्याक रिणाक प्रयोग तथा स्विन-परिवर्णन के वाधार पर यह जित किया गया है कि शंकरदेव तथा माध्य देव के गीतों और नाटकों की माणा तुंबसीदास की माणा के समान है और अन्य काव्य-गृंधों की माणा व्यक्षी के विद्या निकट है।

ध्विन परिवर्तन :- शंकरदेव तथा माध्यवदेव की माजा में तद्भव तथा अर्द्धात्सम शक्तों के बीच अनेक स्थलों पर स्वर परिवर्तन हुआ है। यह स्वर परिवर्तन स्थूलत: इस प्रकार का

:१: त्रा- के स्थान पर म-कार

बाच स्वर परिवर्तन- यथा

परान:प्राण: पलाया ;पालायन: चंडाल:चंडाल:

र- मध्य:- यथा अवतरि : अनतार: विस्तर : विस्तार:

३- क्रेंत :- उपाम :उपमा: बाश :बाशा: बास :बाशा।

य-कार वा-कार विषयं यथा घाणी : ध्विन: काहिनी :कहानी: पाय :पद: साफल १३ :सफल: चांदा :चंद्र: बांधा :बंधा: कार्स :क्दो: हात :हस्त: हानय :हनय:ब्राणि २१ :बिंग: मार्च :मध्ये: बापार :पपार: तापित :तप्त:

मध्य श-कार के स्थान पूर शा-कार यथा:- श्वालास :शालस्य: कांडी :स्मंडी: दांत :दंत:

अनुपामे :अनुपन: जाटांसे :अटुहास:

इ-कार के स्थान पर अ-कार यथा :-

				anne noor kong ngha dana dana dalah keda keda nada nada dalah dala
१- वरणीत पृष्ठ	80	१ ५-	बरगीत	78
र- वही	200	84-	वही	30
३- माधव वाक्यामृत- २		80-	वही	33
४- केंगिया नाट पु ० १७		8 =-	वही	38
५- वही	830	-3 9	मा ०व०	१८
4- बर्गीत	१०८	50-	वही	99
७- वही	204	**	***	
क र्यंगा०	६ स्प	28 -	वही	35
६- माव्याव- ७		55-	वही	83
१०- वही	388	20		000
११- बरगीत	₹o	44-	वरी	११३
१२- वही	6.5	78-	वं0ना0	१६८
१३- वही	70	74-	मा०वा०	₹ २६
१४- वही	₹0		वही	१६८
* 9*	119	,		376-46

विप्रकर्ष :-

युक्त व्यंजन प्राय: विप्रकृष्ट व विशिष्ट होता है एवं वे के रे रे रवं उ विप्रकर्ष स्वरूप में व्यवकृत होता है।

में - शवर : शव्या: विरक्ति : विरक्ति: गरंव : गर्व: यतन :यत्य: वरण :वणी: पराण :प्राण: कांबी: इंकबी: समापित :समापित: बर्त :व्रत: इत: इन् : विराव: शिष्ट :शिष्ट :शिष्ट :शिष्ट :परमाणि :प्रमाण: वियान :च्यान: विनान: स्नान: पीरित :प्रीति: मुगुषि :मुग्ष: दुर्वित: विष्टिन :विष्ट्व: चुर्वित: मुगुषि :मुग्ष: मुग्ष: मुग्ष: मुग्ष: मुग्ष: मुग्ष: सुन्ति: सुन्ति: मुगुष :मुग्ष: मुग्रव: मुग्रव: सुन्ति: सुन्ति: मुग्रव: सुन्ति: सुन्ति: मुग्रव: सुन्ति: सुन

१- माञ्च० पु	4	१५- वही	٤٩	२६- वही	30
रे- वही	4	१६- यंबनाव	N=		
	\$\$		E 3	२७- मा०व०	स्य
४- मा०ब०	35	१७- वही	03	रघ- गं०ना-	包身
५- वही	50	१ क् वही	१५०	२६- वही	03
4- वहीं ७- वहीं	263	१६- शंब्ब	8	३०- वही	१६५
म मा ः वा०	१सर्द	२० वही	•	, , , , ,	- 1.4
६- शं०व०	E	२१ वही	¥		
0- वही	3				
११- मा०न०	58	२२ वही	88		
रि- वही	*	२३- मा०व०	74		
र नहीं	80	२४-वर्शवव	28		
१४- वडी	60	२५- वही	8.10		
			*1		

ेत व य और भेपद के मध्य स्थिति होने पर अनेक समय इनके स्थान पर ह हो जाता है। यथा ---

पहुं :प्रमु: लॉब :लोम: लिहिल :लिखिल: सीहे :शोमे: मुहे :मुखे: विहि :विधि: बादि में न स्थित होने पर स-कार के स्थान पर है हो जाता है :- यथा बाही :वंशी:

स्वरों के मध्य स्थित स्परी वर्ण का ववचित लोप और उसके स्थान पर ये श्रुति का आगमन होता है यथा :-

वयन :वदन: स्थनी :रजनी: स्थल:सकल: कुसुय:कुसुम: पाय:पद: राया :राजा:

ेर का रेफ प्राय: लुप्त हो जाता है यथा :-१४ वर्ष : पहु : प्रमु: फेब :प्रेम : प्रिय: प्रसारि: प्रसारि:

इंद के बतुरोध पर कहीं कहीं संयुक्त न :कभी इ एवं :म: लुप्त हो पूर्ववर्ती स्वर वर्षा को बतुना सिक कर देता है यथा :-

शांबीस :शाम्बीत: वांच :वान्च: चंत :वन्वत: पाति :पंक्ति: चांद :वन्द्र:

मेथित माजा में जिकार का उच्चारण 'स' के समान था। व्रज्वति में प्रायह का का के स्थान पर स देखने को मिलता है। असमिया में स और श का उच्चारण 'ह' के समान होता है। सथा :-

रेश्वर :शेषार: वांकी :वंशी: वृत्तव :वृश्यव: सिरिस :शिरिषा:

१- माण्याक १३८		११-मा०ब०नी			79-	मा०व०गी-१००	
र- स०व० गी	5			192	22-	वही	₹ 0⊏
१- वहीं	28	₹3-	शंववागि	20			
४- वही ४- वही	35	0.0	- मा०व०नी व - शं०व०गी०		53-	भाव्याव श्वेव्यवनीव	१ ६६ ३
	- 4-			-	28-		
	35	84-		3			
६- माव्यव्योव	*	84-		=	SA-	वही	8
० रीव्ववगी व	35	219-	वही	20	-\$5	मा०व०नी	284
भावनगीव	288	8 E-					
- रांव्यवनीर	35	-	- m, -	43	50-	र्वं0ना ०-	१६३
१०- गा०व०गी		78-	मा ०व०गी-	833	,		
	3	70-	वही	3¥			

ेत्से का च्छ अथवा च छ राम में ग्रहण कई स्थानों पर स्थायी राम से दिलाई पढ़ता है।

१ सांचा :स्रत्य: स्वय :स्रत्सव:

त्वा र व्यति में स्पांतर :- यथा

उज्ज्वर :उज्ज्वत: चंबर :वंबत:

क ना इ क्यवा य ब्लेन में रुपांतर यथा :-

लों : लोक: समेत: सम्ब:

यु ध्वनि व में बौर व ध्वनि में बू बौर य में रूपांतरित हुई हैं। जैसे ११ जीयन :वीतन: वाव :तायु: जियाबत :जियावत: वित्वारा :वित्यारा: माये :मावे: प्रत :प्यन: नियाण :प्यन: प्रत :प्यन: नियाण :प्यन:

१- गंगा० १५

र- माज्यान- प

३- वहीं ४४

४- शंब्वभी - ३

५- माव्यव्यी- १०८

⁴⁻ शेव्यवनी- २६

७- मा अवनी रह

क शंक्ता व

e माठनक्गी **५ ११०**

१०- गंजा- ५

११- वही ७

१२-वहीं ह

१३- वही ५६

१३- गांवां ४

ववन

रंतर्वेव की भाषा में समुख्वाक शब्द जैसे 'गण' समूद्द नय , सव , मेला , मेलें वादि का योग कर बहुवबन रूप बनाया गया है। प्राचीन असिपया में 'मो प्रत्थय का भी योग विशेष अर्थ में किया गया है। मेने का संबंध प्राठभाठमाठ 'मानव' से है। संत- इंत प्रत्थय का योग संख्या ताक विशेषण में किया गया है। तुल्सीदास ने बहुवबन रूप बनाने के लिए 'न' , न्ह, 'नि' निर्मू प्रत्यय का योग करते हैं। तूर की भाषा में ने अकरांत स्त्री लिंग शब्द का अंत्य स्वर् एं या एँ से परिवर्तित किया — अकरांत तथा इकारांत शब्दों में नि बोड़ कर कुछ सकरांत शब्दों में न चोड़ कर — जा को र से परिवर्तित कर यह तकन रूप बनाये हैं। कुछ एक ववन शब्दों के साथ बनी , अविश्व या अवती , गन : गण : जन , जाति , निकर मुंत वृंद , तेलुल, समाज, रामूह वादि चोड़कर सुरदारा ने बहुवका रूप यनाए हैं।

कः शुन तब तौर वकाव मोई सब तेजि मज दरि पाव ।

स: पेसल गैया सब दिवब कुमारि

तः हरिकी गोपिनि पेसमे न पाछ।

व: तेले संगे रंगे गोपरमणि-मेला ।

तः नवस्य यान्यकः पान्ति, पनततः कतनतः गान्ति ।

T.

:ল:

:क: नैननि श्रीं कवरों करिशीं री।

ट: अभर मुनिमन

:3: तापक्षा लीग

१- डा० ए० एफा०डी० २७७	द- वही ६ ८		
रू वही पुर २७०	६- वहीं ११६		
रू तुक्मार पुर २३	20-		
अ- शू०मा ० १५१ − १५३	994		
ध- वं ०ना० पृ ३०	? ?-		
६ वही ४ १	१२- बुक्मा० १४१		
७- वही 👢	१३- वही १५३		

:ह: परम कृपाल जी नृपाल लोकपालन पे।

:ह: श्रास रिड्न सचित नृप इवारा

त: मवनि पर सौभा श्रति पावत ।

थः मुजनि पर जननी वारि फेरि हारी

द: चलत राम सब पुर नरनारी। पुलक पूरि तन मर सुलारी। व: सब संपदा चहै सिनद्रोही।

शारक रचना

अश्विया और बंगाली में कारक संबंध दो प्रकार से प्रकट किया जाता है--
प्र: स्वतंत्र परसर्गों द्वारा : इं संयोगात्मक कारक विभिक्तयों द्वारा जो अब भी
करण और विधिकरण है कारक में प्रमुक्त होती हैं केवल संबंध : २: और विधिकरण
के तत्त्व परसर्ग मूल कारक रूप से प्रथक नहीं किए जा सकते हैं। संज्ञा जब सक्तंत्र क्रिया
को कर्ता कारक होती है, हसमें 'रे परसर्ग का व्यवहार होता है। तुल्लीदास जी ने अपने
पूर्ववर्ती अवधी किव जायसी की मांति अपने गूंधों में परसर्गों का प्रयोग अल्प मात्रा में
किया है। प्राय: या तो उनमें संज्ञाएं अपने मूल रूप में ही प्रयुक्त हो गई हैं, ज्ञ्यथा विभिन्न
कारकों में उनका अववीध कराने के सिए उनके साथ विभिन्ति-मूक्त प्रत्यय लगार गर हैं। इस
संबंध हो। वाकुराम सक्तेना की उस मणाना का उत्सेव कर देना अनुवित न होगा जिसके
बनुसार प्रथम २०० पंकित्यों के कंत्रीत १०३ संज्ञाओं का प्रयोग हुआ है जिनमें आध्युनिक
बोल बाल की प्रमृत्ति के अनुसार जाने कितने परसर्गों की आवश्यकता पढ़ जाती परन्तु
दुलसीवास जी ने उनमें से बेसल ४५ संज्ञाओं के साथ परसर्गों का व्यवहार किया है। रूप रचना
की दृष्टि से सूर काव्य में प्रयुक्त संज्ञा अवदी को दो वर्गों में रसा जा सकता है--मूल रूप
और विवृत्त रूप। सनी रूपों का प्रयोग सनी कारकों में समान रूप से सूरदास ने नहीं
क्रिया है।

कर्ताकारक :- शंकर्तिव की माणा में विभिन्नत सिक्त और विभिन्नत रिक्त दोनों सूप मिलते हैं। कहीं कहीं संज्ञा शब्द 'ए'का योग हुआ है। आकारात, और हकारांत संज्ञाओं में यह 'ए, ह 'हि' हो जाता है। तुलती की माणा में अवधी बोली का प्राधान्य होने के कारण यह स्वामाविक ही था कि 'ने परसर्ग का उसमें अभाव हो क्यों कि अवधी में उसकी कोई सला नहीं है। संज्ञा के मूल रूप :एक वसन: अथवा विकारी एवं अविकारी बहुनकन रूप

⁸⁻ EOEALOGIO - ÃO JE 8.

र- तु०मा०- पु० ३७

३- प्रमा० पुर १५४

४- ए०एफ ०डी०- रप्

ही कर्राकारक के करें में व्यवस्त हुए हैं जिनमें किसी विभिन्त पूचक प्रत्यय कथना पर्सर्ग का योग नहीं भितता है। इसके बति (कत कुछ ऐसे भी स्थल मिलते हैं जहां संज्ञाओं के बंतिम करार के साथ बंद्र बिंदु कथना कर्रस्वार के द्वारा धूचित किस गर अनुना सिक व्यवन के संयोग से इन स्त्रणों का निर्माण हुआ है। व्रवमाच्या की कर्या कारक विभिन्त 'ने'ने 'ने' का प्रयोग सूर ने कम किसा है। विभिन्ति की दृष्टि से देला जाय तो पुलिंग एक वचन विकृत अप के अंतर्गत दिये गर ताकी माता लाई कार्र में संयुक्त से को एक प्रकार से विभिन्ति रूप की स्वीकारना होगा, जिससे मूल संज्ञा रूप विकृत हो गया है। का वाल बुंबह बनमाली लागि मुख

हा: गोपी कटारा नाहि बुक्त ।

ल: भरत सन हि मिलि हरिल नोर माधन कह गति नो विंदू मोर

त्र: नाडुक केश केशन वांकी हाते शंतर कर बेसे गोपिनी नाथ।

ह: प्रणार कातरे इन्द्र पलाइ, पानु पानु हासि माधवे बाह ।

तः काटल बाण कृष्णे शर मारि।

कः पावा परम तत्व ज्नु जोगी। ज्यूत तकेड ज्नु संतत रोगी।

ान: तासु दसा देशी सक्तिन्द पुलम गात जलु मैन ।

:भा: मोजन समय जानि यशुमति ने लीने दुईन बुलाय ।

हः वहाँ ताबि विषक्त नै साई, गिरी थरनि उदि ठौर ।

कः संबर्धे गर्व बढ़ायी ।

१- तु०मा०- ३८

Ø¥\$ oTFO₽ ←

३- वंब्याव १०६

४- वडी ११५

५- वही २२४

६- वहीं १२४

७ वही १६०

क वहीं हर

क् बु०भाव ३६

१०- बु०मा १५७

क्षित्रान का क दोनों में हुना है। डा॰ वाणीकांत काकति का मत है यह पर्सा पूर्वी किन्दी कहा - कहे का क्षित्र रूप है। तुल्सीदास ने इस का क की रचना में - हि हिं क को को पर्सा का व्यवहार क्षित्र के निर्माण में तुल्सी की व्यवहार क्षित्र के निर्माण में तुल्सी की क्ष्माण स्पी रचना में के निर्माण में तुल्सी की लगभग स्पी रचनाओं के अन्तर्गत बहुस्ता से किया गया है। कहें ही कहीं कहीं कहीं कहीं कर में व्यवहृत मिलता है। व्रवसाया में क्षित्र की मुख्य विमिन्तियां सुं कूं को को की हैं। सभा के पूरसागर में की का ही प्रयोग अधिक मिलता है। इसके अतिरिक्त है के योग से भी क्षीकारकीय रूप बनार गए हैं।

कः पारिणात तथा चलव तथ ता से हासे हरिणे वरनारी !

जः कुंचित पास पिकृत विवृक भार कर चुंवन बनमासी ।

गः कोपै नुम सन कामारि नाहु चान्यस येन केवि पाह राहु ।

मः स्वत केश पात्र दूटस हार फोड्ड कांचूवा कुनक स्नार ।

: दे शि मुनिक यानि बदनत शाय।

ति । जातिंगि प्रियाक चाम अरि कोल करिया जास्वास वचन हरि वोल । गोविंद को राषा वोलल वाणी ।

क्षः वैषि राक्ष क्षं त्यु क्षक्ष नर् कर करिष वसान ।

ज: तुलसिनास तिन वास मास सब स्से प्रमु कहं गाउ ।

भा: नाम थारि रति नहुं वर दीन्हा।

ट: जन लिन न मनत न राम नहुं सोकधाम ताब काम

१- एक्पा व्हाव रहक

र- तु०भार ४३.

३- स्वान १५७

४- गंबनार १६२

५- वही १६५

⁴⁻ वहीं च्य

क वरी पुर १०६

क वही पुठ १३६

६- वही पु० १४४

e-ए गंजााo २५२

१०- तु०मा० ४३

ड: बहुर क्व वर्गे मास्यो ।

: इ: प्रथम मत्त बैठाइ बंब्यु की यह कहि पाइ मरे

:ण: त्याँ ये भुत्त यनहिं परिवरे ।

त: देशों ता पुरुष हि तुन नोह ।

शः वरुनपास तै अजमति हैं इन माहिं हुड़ावे

करण कारक:- असिया में रेप्रत्यय का योग करण कारक में किया जाता है। यह संस्कृत रेणों में में भाषा में-केर-ए, से किया क्यां के प्राचीन असिया में-केर-ए, एरें का व्यवहार अधिक हुआ है। - हि संस्कृत सर्वनाम के सप्तमी के प्रत्यय स्मिन अथवा पूर्वतर जानि आर्थ माजा के सप्तमी के: 'धि 'प्रत्यय से निकता है - विं संस्कृत तृतीया कुलका की विमन्ति - मि और जाकी के वहु कहन की की विमन्ति - नामे हन जोनों के संयोग से सत्यन हुई। - से साँ - संस्कृत बच्चय 'स्थम' से आया है। तुल्की ने शब्दों के साथ अनुनासिक व्यक्ति कामके- योग करके उन्हें करण कारक का रूप दिया है। परसाँ में 'तें 'सों' से विशेष रूप से सर्वेति से हुं इत्या का प्रयोग की विमन्तियों के रूप 'तें ते हैं पर पे से से से साथ का रूप विभावत्यों के रूप 'तें ते हैं पर पे से से सी सी सी प्रयोग सोता है। सूरदास ने करण कारकीय रूप में केवस तें सी का ही का ही प्रयोग मुख्य रूप से किया है। जन्म विभिन्तियों में से सुं और सेती के उताहरण भी कही मिस जाते हैं।

१- तु०मा - ४२

र- सुक्मा १४६

३- ए०एमा व्ही - रच्य

४- वहीं २८७

⁴⁴⁻ डा o स्थाने केन विविध साहित्य :स्थाने चटकी- वरना रतनाकर पृष् प्र,पर

⁴⁻ वहीं संह प्र

⁰⁻ gorto - 8=

क पुरुषा - १५०

```
कः कित काने हिष्टि नेतन केने करिस नैराशे
क्षः पेवन वनारिन वृष्टि जले निव्योण मेल ।
म: श्रोहि अपनाने प्राण नाहि घरवोहो मोरे कोंड्ल जीवनकु श्राशा i
धः हेपि वाणा गण हत्ति चैतन इंदुक हूद्य विदारि
: इंटर वासे वते रंगे संगष्टि बरनारी
त: हेन शिशुपाल केरे मह दिवी विया
 कः राम कृपा तै पारवित सक्तेतुं तव मन माहि।
जः तुलसी राम कृपाल तें मली चीव सो कोव।
:मा: एक एक धौं मदैषिं तो रि वतावि मुंह।
:फ: बामवेव सन काम बस छोड़ बरतेछ ।
ह: जिमि कोंच कर गराड़ सन तेला ।
:ठ: वावी उदा बन्न सीं मरे।
: को सित्या सौ कहति शुमित्रा।
: वहुरि सुक्र वेंती क्यूयो जाह ।
:ण: मन प्रसाद तें सो वह पावे।
तः जिन रचुनाथ साथ तर वृष्णण प्रान करे सरकीं।
```

संप्रदान कारक :- शंकरदेव और माधावदेव की माजा में 'र' क'- 'कि'- 'के' विभवित रूप का योग अधिक हुवा है। इस कारक के स्त्यों का निर्माण कर्म कारक स्त्यों के प्रत्थय

```
१- मै०ना० - १०६

- वही १०=

- वही १४३

- वही १४६

- वही १४६

- वही १४६

- वही १५६

- वही १५२

- वे०- २०७०- नाव्य पु०

- वु० भा०- पु० ५०

- वु०भा- पु० १६
```

ेडि और हिं तथा परसर्ग कहं, कहुं से ही हुआ है। केवल को ऐसा कर्नकारक परसर्ग है जिसका व्यवचार संप्रदान कारक रूपों के लिए तुलसी नै ऋत्यन्त ऋत्य मात्रा में विधा है। जुलभाषा में संप्रदान लारक की बूं कूं कों, को को की किमिनिसमां लिए कर्नकारक में भी रहती हैं। सूरवास ने संप्रमानकारक में की विभक्तियां का ही प्रयोग विशेषा रूप से किया है। कः ए सवी चलडु बहुरि गौरी गोवूले गोवारी ख: स्वामीक करों पावे परणाम कब्तु शंकरमति मति भेरि राम i ंगः सत्यभामाक बहुत गाति पारत । म: श्रुनि रिस्थासन राजीन प्रणाम नहस्त । ड़ : हे कृष्ण वोहार पद क्लंबे कोटि कीटि परणाम करोही । नः गोपये नाहि पारि मेरि मूचण देवत मावकु ठाइ । छः गर तनु मनवारिधि नहुं बेरी । जः एक सीर विश्व साथ वा सठ कहुं कहिन जाइ जी निधि फ वि गाई। :भा: बारत दीन बनायन की खुनाय करें निज हाथ की छाड़ । :भा : मानहं मदन दुंदुभी दी न्हीं। मनसा विस्व विजय कहं की न्हीं। द्र: कामजेनु पुनि सप्त रिष्म की वर्ड । :ठ: एक अंश कुच्छानि की दीन्हीं।

```
१- तु० मा- मृ० ४४ १०- तु०मा० ६६

- तु० मा०- १६२ ११- वही० ४४

- ग्रंबना०- १०५ १२- यु०मा०- १६२

- ग्रंबना०- १४६

- वही० १५५

- वही० १५५

- वही० २०७

- वही० २४१

- तु०मा० ४५
```

ड: तक्य जामाति की समदत नीर मरि बार है

अपादान कारक :- शंकरदेव और माधाबदेव ने केवल इन्ते स्मन्ते: परसर्गं का प्रयोग इस कारक की रूप रचना के लिए किया है। कुछ विभिक्त हीन उदाहरण भी मिलते हैं। प्राय: इस कारक के रूप करण कारक रूपों के साथ साम्य रखते हैं और केवल अर्थ वैभिन्य के सहारे ही दोनों का अंतर स्मन्ट होता है। ते तें, तथा साँ इस कारक के प्रमुख परसर्गों के रूप में व्यवकृत हुए हैं। संस्कृत की पंचमी विभिक्त के कुछ रूप कर कहीं कहीं रामचरित मानस में विशेष रूप से उपलब्ध हो जाते हैं। व्रज माणा में अपादान कारक की विभिन्त तें ते या तें है। समा के सूरसागर में तें का प्रयोग प्राय: सबैत्र किया गया है। साथ ही कुछ विभिन्त रहित अपादान कारकीय रूप भी सूर के काव्य में मिल जाते हैं।

ज़: बुके हन्ते कृष्ण नमावल ।

स: रास मंडल इन्ते एक गोपीक घ रिक्हु कोले तुलि वेगे स्वर देल ।

ा: गोपी प्रेम सुधारस बाबुल कमल तयने मुरी वारि

म: सो कि वृता की दुढ़ देवता दिव्य रूप धारिये वा जहुया कहु कृष्णा देखत ।

: हा : मानिनी माइ नयन-पंकल करे वारि।

च: श्री कृष्ण मध्या सिते हिर्मे पुरंदरत अनुमित पाइ ।

: नार्यक वरवाने **उहि** वृत्ता जनमते हामाक स्नरण क्य धिक ।

१- ए०एफाउडी ० २९९

२- तु०मा०- ४१

३- सू०मा०- १६२

४- वंग्ना- ११५

५- वही १२४

⁴⁻ वहीं ११६

७- वहीं २०६

म- वही १४१

६- वही १६२

१०- वही २०६

:ज: पुर तें निकसी रघुकीर वध्यू धिर घीर देंथे मग में छा द्वे। :क: गए कर तें घर तें श्रांगन तें ज़जहू तें ज़जनाथ। :फ: हुस्ट पुस्ट तन भए सुहाए। मानहु श्रवहि मनन ते श्रास्।

ट: कस्ना करत शूर कोसलपति नैनिन नीर फर्यो ।

:ठ: में गोवर्धन ते बायाँ।

:ह: देस देस तें टीकी श्रायी ।

: छ: जन तुम निकसि उदा ते जावहु।

:ण: ता बन ते मृग जाहिं पराइ।

संगंध कारक :- प्राचीन असमिया में संगंध कारकीय परसर्ग-केर.- स्र- कार- कं का व्यवहार हुआ है । संकर्षव तथा माधावदेव ने मी, के- को - किरि - आरे-, रे क्य- कही प्रत्यय का प्रयोग संगंध कारकीय रूप के लिए किया है । इस कारक के रूपों का निर्माण तुल्सी की शब्दावली में जिन प्रमुख परसर्गों के सहारे हुआ है उन में क, की, के, के, कह, को कर, केरा केरि केरि केरि केरि तथा केरों उत्सेखनीय हैं । इसकी मुख्य विभवित की हैं । इसके अतिरिक्त अवधी की संगंध कारकीय विभवित केरे केरि केरी केरें केरों रूपों का प्रयोग भी सूरवास ने किया है । इन विभवित रूपों से रिक्त प्रयोग भी सूर काव्य में बरावर मिलते हैं ।

१- तु०भा०- ५१

२- श्रु भा - १६२

३- सू०मा- १६३

४- ए०एफ ही- रदद

५- बि०मा०- ४३

⁴⁻ पुण्मा - १६३

```
कः पारा कही लोक मानत हरि साधी।
 .ख: प्रियाकेरि काहिनी श्रुनिए मुरारि
 म: हैरल त्रावर हिर की नाहि चरण
 ध: हरि कर घरल का मिनी कंठ मैलि केलि करति ह याह ।
 : मोहन वंशीक सान शुनिकहु जीका भूरण नयाय है
 व: गोपिनी संगे रंगे गोविंदे करत केलि ।
कः मौहन वंशीर साने निशि विपिन शानि कैने तेजलि मधाह ।
:ज: त्रावे गरु झोतु क्य परवेश, मदनक लाज हैरि रुद्ध तेश ।
:भा: अरिहुक अनभत की न्ह न रामा।
:भा: उमार्थत कह इस्ट बड़ाई। मंद करत जो कर्ह मलाई ।
ट: बंदह नाम राम रघुवर को । हेतु कृसानु मानु हिमकर को ।
:ठ: काई कुमति केकई केरी ।
: ह: एकि विधि जनम कर्म हरि केरे।
: इ: सिय कर सीचु जनक पहिलावा। रामिन्ड कर पारुन दुल पाना
:ण: बान रघुपति के ।
 त: सुमि मोहिनी की ।
थ: क्या विरक्ति केरी।
: इ: इतुरागिन इरि केर्
थः सुत विहर की ।
```

```
१- गंजा०- २२६
                 य- वही १३३
र- वही
                   e- वक्त तुव्याव प्र
र- वही
                  १०- वही
४- वही
                  ११- वही
५- वही
         009
                  YPS OTHOR -58
६- वडी
         $ OE
                  १३- वही
                             2 44
७- वही
         382
```

```
शकरदव तथा भाधावदेव ने - 'ए' हिं , महे इ भाज परसगी के
भाभभरण:
सहारे गिश्रिकरण कारकीय रूप की रक्ता की है। विभवित हीन रूप भी इस कार-
क के मिलते हैं। इस कारक के रूपों के निर्माण में तुलकी ने प्राय: में, में, मो महें, महं,
मां मार्धि, मार्शि, मामा, मकारी, पर पहं, पश्चिं पार्शि मादि की परसर्ग के रूप में
व्यवहुत किया है। इन परसर्गयुक्त रूपों के शतिरिक्त विभिक्त धूक्क प्रत्यय हि के योग
से बने हुए रूप भी उपलब्ध धौते हैं। इसकी मुख्य विभक्तियां और उनके अन्य रूपां
तर् पर्ये,पाखिं,पादीं,मंकार्मंकारि,मंकारेमांक,मधं,मधं,मखं,मखं,मार्च,मार्च,
माहीं माहें, में, मो, माँ शादि हैं। साथ साथ इनसे रक्ति अधिकरण कारकीय
प्रयोग पूर काव्य में मिलते हैं।
 कः हातक लन् गौपिनी मुहे मा बि ।
 : ब: घर हिं घर हि सब फिरत बनोवा रेसन बात जनाइ ।
 :ग: विपन प्योनिधि परलो मुरारा ।
 भ : पैने हैम मणि माफे माफे मणि मखत परकाशे।
 ड : हरि बाह्न वर फेज जल माजे ।
 व: मद गज येवन जल मह खेला तरुणी कणी सब सेंगे।
 छ : क्वाइं दिवस महं निविद्धाम क्वाहुंक प्राट प्रतंग ।
 ज: केंचि गिनती महं गिनती जस वन घास ।
 :गः वृंभारत मन दील विवारी। इति इन माम निसाबर थारी।
 :फ: तन महं प्रविधि निसीर सर जाहीं
 ट: तदिप मनाग मनहिं नहिं पीरा
 छ: बतियाँ छिषि शिष जात गरेजें।
 ड: कमल भरे जल भाभा
 : ह: नैनिन नार्ध समाजे ।
 :ण: ज़जिहें वसे जापुदि विसरायों ।
                                       3४ ० मि० म = ११
                        ६- वही १२३
 १- तु०मा० ५६
                           वहीं १२४
                                       १२- स्वमाव-१६७
  २- बु०मा० १६६
                           वही १२६
                                                    2 45
    399 -0TFOF
                        ध्न तुल्मा० ५७
```

१०- वहा प्र

99

प- वहा

-43

3 4 &

8 100

असिया में कराकारक के अतिरिकत, सर्वनाम में संज्ञा की मांति प्रत्यय तथा परसर्ग का प्रयोग होता है किन्तु संज्ञा के विपरित हसके निश्चित विकारी रूप अथवा सामान्य रूप है जिनमें प्रत्यय तथा परसर्गों का प्रयोग होता है। तुलसी की भाषा, उपलब्ध सर्वनाम रूपों के विश्लेषण के पूर्व हिन्दी में सर्वनाम रूपों के विश्लेषण की पूर्व हिन्दी में सर्वनाम रूपों के विश्लेषण के पूर्व हिन्दी में सर्वनाम रूपों के विश्लेषण की परिता के विषय में संकेत कर देना आवश्यक जान पड़ता है। इस संबंध में निम्नलिखित बार्ते प्रमुख रूप से ध्यान देने योग्य हैं।

- १- बहुत से प्राचीन विभवित धूनक जिनका प्रयोग संजाओं के साथ अब कहीं न मिलता है, सर्वनामों में प्राय: नियमित रूप से प्रयुक्त होते हैं।
- रे कतिपय राजस्थानी प्रयोगों के श्रति रिक्त श्रन्थ को लियों की शब्दावली में लिंगनेद सर्वनामों से प्राय: विलुग्त हो नया है।
- ३- अन्य पुरुषावाचन सर्वनाम ना पृथम अस्तित्व स्पष्ट नहीं रह गया है।
 इसना नीच भी प्राय: संबंध वाचन 'जो की तोल में प्रयुक्त होने वाले नित्य
 संबंधी सर्वनाम 'सो तथा दूरक्ती निश्चय वाचन सर्वनाम 'वह के रूपों से होने लगा
 है। व्रजमाचा में प्रयुक्त होने वाले मूल सर्वनामों की संख्या बारह है- में हों तू आप
 वह सो जो कोई कुछ कीन और क्या । पंडित कामता प्रसाद गुरु के अनुसार इनके
 अस्विधि है: मेद हैं परन्तु डा० घीरेन्द्र वर्मा ने इनके अतिरिक्त दो और मेद माने

१- ए०एफ ०डी० २६३

र− तु०मा०- ६३

३- पु०मा०- १७५

उत्तम पुरुष के कारकीय प्रयोग

१- कर्चाकारक: इस कारक में "हामुं , हामि, हामो , हाम, मोरे मियं, मेरि, श्रामि, के प्रयोग शंकरदेव तथा माध बदेव ने किए हैं। कचाकारक के अन्तर्गत मूल रूपों का ही प्रयोग हुआ है एक वचन में भे तथा है ही का और बहुबचन में हम का। कहीं कहीं हम एक वचन में प्रमुक्त हुआ है। सूरदास ने इस कारक में में हों और हमें ए के एकवचन प्रयोग मूल रूप में ही किया है। कः हामु एक विंशति बार् मूमि प्रमिये सक दो त्रियर मुंह मारलो । : ब: पावल कत पुष्ये हा मि। :ग: उहि दुष्ट द्विषक हामी दंह करनी । ध: कृष्ण विने हाम यव प्राण राखव तव हामार जीवन धिक थिक। ह : उचि अपमाने प्राण नाचि ब खोही मोरे होहल जीवनकु आशा । व: तव पावे अतये साधि मित्रं पापी अपराधी। : इ: शांचल पातिया मागो शामि स्वामी दान । :ज: राजकुमारि विनय इम करही। १० :कः: अव डर रासेड जो इम कहेड i :फ: नाथ न मैं समुके मुनि बेना । :ट: तुव क्षत को पढ़ाइ इस हारे। :ठ: में मबत वक्ल हाँ **मे**

```
१- तु०मा०- ६४ =- वही १५
२- तु०मा०- १७६ =- तु०मा०- ६५
३- वं०ना०- ४६ १०- तु० मा०- ६४
४- वही ५०
५- वही ५२ ११- सू०मा० १७७
६- वही ७०
७- वही १६
```

शंक (देव तथा माध वदेव ने इस कारक में 'हामाक') मोक' - -मने मे हि हामाके, मोहे, मेरि, मोह का प्रयोग किया है। इसके अंतर्गत एक वनन में सामान्यत: भोडि इसी के अनुना सिर्सक रूप भोडि तथा दीर्घस्वरांत रूप भी हि का और बहुवचन में हमिंह तथा हमहीं रूपों का प्रयोग मिलता है। इन विकारी रूपों के अतिरिक्त परार्म युक्त रूप मी यत्र तत्र प्रयुक्त हुए हैं जिनमें मोकहें, मोको े, हमको इत्यादि उत्लेखनीय हैं। उत्तम पुरुष एक व्यवन सर्वनामों के मूल रूप रुपों- में और हों- का प्रयोग सूरदास ने कहीं कहीं पर कर्मकारक में किया है। सूरसागर में कर्मकारकीय विभिन्नतयों को और हिं का प्रयोग बहुत हुआ है। कः मायि माधव अब कमित मेरि नेराश

सः वंकिम नयने हैरह हसि मोह

:ग: गोपी तेजि हामाक ज्ञानल है

धः सतिनीर लोज देखि हुदय नसहे रै अधिक मिलल दुल मोर म

:ड : मक्तवत्सल मीक जानि ।

व: यन मोहि वानये नाहि पतिश्रावा, कहलो सत्य सत्य सुन जाया।

: व: नाहि उहि दुल मोहि जीव यव याह ।

ज: जारि विवास्त्र सेलजिश यह मोहि मांगे देहु ।

:भा: सुंदर मुल मी हिं देला उ इच्छा बति मीरे।

:फ: मोको विध्युवदन विलोकन दी जै।

ट: मैं तुम पे ब्रजनाथ पठायी । श्रातम ज्ञान सिलावन श्रायो ।

१- तु०मा० ६५

२- प्रामा- १७७-१७⊏

३- श्वा- ७८

४- वडी १११

⁻ वही

७- वही

प- वडी

६- वही

१०- त्वामाक- वर्ष

:ठ: केहि कारन हमकी मरमावत ।

ड: तुम पावहु मो हिं कहां तरन कीं।

: इ. तुम मोकों काहे विसरायों।

३- करण कारक: शंकरदेव तथा माध वदेव ने केवल -त- तो प्रत्थय का प्रयोग इस कारक में किया है। करण कारक के अंतर्गत प्रमुख रूप से मीं मो हि सन, मो पहिं, मो पाहीं, मो हि पाहीं, मोपे, हमसो, बीर हमसन उल्लेखनीय हैं। करणकारकीय विभावतार्थों में पांच कों, तें, पें, सीं बीर हिं का प्रयोग सूरदास ने अधिकता से किया है।

क: शमात रोषों बागर गावे लागे माटि।

:त: हामात कि बात पूछ्ह i

म: हे स्वामी हामौती पावे हान्छि पारये नाहि।

म: मोहि सन करहिं विविध विधि क्रीड़ा

: इ. मुल इबि कहि न जाह मौहि पार्हा ।

: इमर्ते चूक कहा परी तिय गर्व गहीता ।

छ: करे नेद्र हमतें क्षु सेवा न मई।

.ज: तुम सन विधी सहाह मयो तब कार्ज मोते ।

४- संप्रदान कारक: शंकर्देव ने हाभाकुं, हामाकं, मोहिं श्रादि प्रमुख
मूख रूपों का प्रयोग इस कारक में किया है। संप्रदान कारक के रूपों के निर्माण
में उत्तमपुरु व्यवस्थ सर्वनाम के शंतर्गत एक क्वन में भी अध्वा मोहि के साथ यथा क
स्थान को, कहुं लिंग, सा नि, निति शादि प्रस्ता का व्यवसार हुआ है। बहुतवन
में स्माहं, हमकहं, हमकहं रूप मिसते हैं। पुरु व्यवस्थ सर्वनामों के संप्रदान कारकीय

१- सू०मा० १७८ ई- वही १४६ २- तु०मा० ई७ छ- तु०मा०- ई८ ३- सू०मा० १७६ म्- सू०मा०- १७६ ४- मं०ना० १६० ६- वही १८० ५- वही छ१ १०- तु० मा० ई७

रूपों की संख्या अधिक नहीं है और उनके जो रूप इस कारक में प्रयुक्त हुए हैं, वे करणकारकीय रूपों से बहुत कुछ मिल्रो जुल्ते हैं। विमक्ति रहित रूपों के संप्रतान कारकीय प्रयोग बहुत कम मिल्रो हैं।

कः देहु हरि मीहि उहि शिला

: से अपराध्ने वांघव श्रीकृष्ण हामान हारि कोन मिति गेल ।

श: हामानु तेजल प्राणनाथे।

घ: मोहि निति पिता तजे भगवाना ।

: इम कर्व दुलेंभ दरस तुम्हारा ।

व: पांच बान मोहिं संकर दीन्ते।

क: मोहूं की प्रमु बाजा दी व

५- अपादान कारक: शंकरदेव ने इस कारक में कुछ ही रूपों का प्रयोग किया है,

दे- संबंध कारक: कंगरेव तथा माखवदेव ने इस कारक में मोरेशेश मेरि, नेरा मोडि, मोडे, हामाकु हामाकेरि, रूप का प्रयोग किया है। एक वचन में मो, मोर, मोरा, मोरि, मोरे, मोरें, मेरी, मेरे, मेरो, तथा मम: संस्कृत तत्सम रूप: बौर् बहुबका में :कहीं कहीं एक वचन में भी हमार, हमारा, हमारि, हमारी, हमारें, हमारें हमारों तथा अस्मव: संस्कृत: की बाब्धी विमिन्ति का विकृत बहुवचन रूप असमार्क है। सूर का व्य में इस का रक के मम, मेरी, मेरे मोर, मोरि, मोह आदि

```
स्प उपलब्ध हैं।
कः दूर कर हरि कुमति मीर ।
.ल: देहू मेरि सोदर दान
रस र ८ मेर रख ८ मेस्टर सर सङ्ग्रे हेस र सर ४ सड़े हैं ८ स
भ: मेरा गुरुक चनुमंग क्य तीहा काहे पाव ।
मः तौहारि प्रयम पतनी परम स्वामी जानि पूरह मोहि शाृशा।
ड : धिक अब जीवन यौवन मोहे अभागिनी करत विलाप।
व: ऐवन इन्द्रक हामाकु श्रागे बतामह ।
 : धिकरुण वाणी वाण मर्म हानि दारल हामाकेरि हुद्या ।
ज: जनिह मोर् बल निज बल ताही।
:भा: देत सिल सिलयों न मानत मूढ़ती असि मोरि।
:फा: ए धन ससा सुनहु मुनि मेरे ।
ट: जीवन घन मौर ।
:ठ: विनती की जो मोरि।
: इसी मी हिं अपराष्ट्र ।
: द: स्वामि मेरी जागि है ।
```

ध्य अपादानकारक: शंकरदेव ने केवल भोर भोरे- मोहे भोहि रूप का प्रयोग इस कारक में किया है। अधिकरण कारक में प्रयुक्त रूपों के ऋंगित मी पर्मी प्र

```
१- गं०ना० १ ६१
२- वही ० ६३
३- वही ४६
४- वही १३६
५- वही १४९
६- वही १५७
७- वही १०६
६- तु०ना०- ६६
६- तु०ना०- ७९
१०- सू०ना- १६५
```

मो हि पा हों, तथा हम पर उत्सेखनीय हैं कुछ विशिष्ट स्थलों पर मोरे जैसा संबंध कारक रूप भी व्यवहृत हुआ है। इस कारक के विभावत रहित विवृत प्रयोगों में दो रूप प्रधान हैं- मेरें और हमारें। एक वचन अप्रधान रूपों में भो हिं का प्रधोग अपवाद स्वक्ष्म दिसायी देता है।

कः तोहारि परम प्रेम पेरिक मकति रहत घार मोहे गो पिनी ।

ख: अन प्राणानाथ माथे मिलाक्य मौहि उहि कुलुम परिजात ।

म: से बाइ लक्तु सानि मीरे केने लंग

घः र तिनि प्रभाद मौर मैल रक्वारे।

ह : प्रीति प्रतीत मीहि पर तौरे।

: सपनेहु साचेहुं मो हि पर जीं हरि गाँर पसाउ ।

: वो तुम सजह मर्जी न बान प्रमु यह प्रमान पन मोरे।

:जः वन मोहिं कृपा की जिमे सोई।

:मा: कृपा करि मोहिं पर।

:भा: कियी नृहस्मति मी पर कोहु ।

मध्यम पुरु ज

१- क्यांकारक: शंकर्षेव ने इस कारक में 'तोड', 'तोडो' तमों 'तुम', तुड़ाँ, तुड़ु, तोडोखन, तुड़ुं रूप का प्रयोग किया है। क्तांकारक के सं अंतर्गत एक वचन में तें, तू

१- मेन्स- १२०

र- वहीं १३६

३- वही १६०

४- वडी १म्ह

५- त्राभाग ७३

क् बुवमाक- श्रम्

७- तु०मा- ७३

घ- बू०मा० १**६**४

```
किहीं किहीं रेते का अनुनासिक रूप तूं मिलता है: तुम तथा तुम्ह का और बहुवबन
में रैजल तुम्ह का व्यवसार सुधा है। इस कारक मैं कवि ने प्रधिकारत: पूल रूपों-
तूर्त ती कीर तुम :इक वनन: के सामान्य और बलात्मक प्रयोग किये हैं।
शः शोधर गुण शुनि मुनि मुते माधव साध्य ऋषे तोइ मान ।
ताः तुषु जगजन गुरु देवक देवा
म: हे कृष्ण तो हो परम पुरुष नारायणा ।
मः समीर घरे कोन तुमि बीख्य गीवासा ।
: ब : को टि मका हैरि लाज्र तुहाँ नका रुणी प्रथान i
पः तुहुं सुकुमार सपे नोष-हीन
खं: तोष्टी सब बिने ना कि बंध्यु शमारि।
.ज: तै मम प्रिय लिखनन तै दूना ।
कः तू प्यान्त वीन नौं तू वानि नौं मिलारी
.फ: निज घर की बलात विलोकहु हो तुम् परम स्थानी i
ट: ज्ञान तुर्धिं क्में तुर्धिं विस्वक्मा तुर्धा ।
:ठ: तुशी न लेत जगाय।
 : इत् उठित कार्चे नाची ।
:ढ: तेबूं जो चरि क्लि तम करिहै ।
```

१- तु०मा- ख २- शु०मा ० १६४

३- गंजना १३६

४- वडी १३७

५- वही १३७

⁴⁻ वहीं सर्

७ वहीं ६४

क्र वाशी **३**६

ध- वही १२९

SO OTHOR -08

११- वही ७४

१२- यू०मा०- १६५

र- कमीकारक: शंकरिव ने इस कारक में 'तो हा ', तो हाक, तो हाक, तो राक, रूप का प्रयोग किया है। कम कारक के बंतर्गत प्रयुक्त होने वाले रूपों में तुम हि, तो हि सां प्रें तो हिं , तुम्ह हिं, तुम्ह हि, तो कों बोर तुम कहुं प्रधान रूप से तथा तू बोर तुम गौणा रूप से उत्सेकनीय हैं। इस कारक में प्रयुक्त मध्यम पुरुष्ण एक क्वन सर्वनाम रूप मुख्यत: वो प्रकार के हैं - विभक्ति रहित और विमक्ति सहित। वूसरे प्रकार के प्रयोगों में हिं और कों वो विभक्तियों का बाब्य किया के बिया है।

:कः केशव हे नुजलोहे तोही।

सःतोशक माय्याक चादु बुलिते सन दिवस गेल ।

गः भार जनमे शीराम रूपे तोहोक विवाह करवा।

म: सब तौराक मेट न पाइ परम विंतित हुमाहे ।

: इनि मातु में ऋष धपन सुनावरं ती हि।

:व: तुलसिदास प्रभु सर्न सबद श्रुनि अभय करेंगे तो हिं।

: बारि फल त्रिपुरारि तोको दिये कर नृप घरनि ।

:ज: जो तुष्टिं मंगे,तहां में जाउं ।

:मा: पिता जानि तीकों नाहि मारों।

:फा: सप्तम दिन तो हिं तच्छक साह ।

१- तु०मा ०- ७५

र- बु०मा०- १६५

३- शं०ना०- १४३

४- वही १४६

प− वही **२**६

⁴⁻ वही १०५

७- तु०मा०- अ

क- युक्ता - १६६

करण कारक: शंकरवेव ने इस कारक में केवल कुछ रूपों का प्रयोग किया है-के, विके तो हात ही प्रधान हैं। करण कारक रूपों के अंतर्गत तो सों, तो हि सो, तुम सों, तुम्ह सों, तुम्ह सों, तुम्ह सें, तुम्ह सें, तुम्ह सें, तथा तुम्ह पाईं। प्रधान रूप से उल्लेखनीय हैं। तुम्हें और तोह- ये दो रूप ही करण कारक में विभावत रहित मिलते हैं। एक वचन विकृत रूप तो और एक वचन रूप में प्रयुक्त बहुवचन रूप तुम के साथ कीं, तें, पे, सन और सों जादि विभवितयों और प्रस्था हिं या इसके दी घान्त रूप हीं के संयोग से निर्मित अनेक करणकारकीय रूप सूरसागर में मिलते हैं।

कः करल गरव नाथ तोह हामु पापिनी श्रंथा।

:ब: तब तोहात बद्ध किये हामी प्राण हाड़वा ।

म: श्री कृष्ण तोशत पारिजात सोजत ।

धः वौसाँ हों फिरि फिरि हित सत्य क्वन कहत ।

: हा ती कहा न होय हा हा सी बुकेये मोहि हैं हों ही रहीं मीन हुने बयो सी जानि हानिये।

नः तति वह इव ह में जानत ।

:हा: बन्दत न डरती तोतें।

ज: बरे मब्युप, बाते ये ऐसी ,क्यों कि भावति तोह ।

४- संप्रदान कारक: रौकर्देव तथा माश्रवदेव ने इस कारक में 'तुहि', तो हो क, तो के रूप का प्रयोग किया है। संप्रदान कारक रूपों का निर्भाण प्राय: कर्म कारक रूपों की पद्धति पर हुआ है, इनमें 'तो हि', तो हीं, तुम्हिं, तो को, तुम कहं, तुम्द कहुं का उत्केख किया जा सकता है। तुम एक क्वन और तो के साथ कीं और

१- तु०मा०- ७६

र- बुक्पाक- १६७

३- वंश्ना०-११६

४- वही ध्र

५- वही १५३

⁴⁻ त्वार ७६

७- सु०मा० १६७

E- तु०मा० ७६

हिं या हीं के संयोग से सूरदास ने जो संप्रदान कारकीय रूप बनार हैं उनमें चार-तुमकों तुमहिं, तोकों और तो हि प्रमुख हैं।

. सः से पापी तौहाक श्रीकृष्णत विवाह दिते निक्षेत्र ।

:सः तोक एक शत पारिणात देवव

श: है है प्राणाप्रिये शुन बात देलही नाहि तुहि पारिजात ।

धः तुल्सी तोहि विसेषा वूफिये एक प्रतीत प्रीति एके वल ।

. तोको मोसे मति सुगम गुयाई i

.प: एक रात तोकों सूख देशों ।

छ: में वर देले तो हिं सो लेखि।

५- अपादान कारक:

६- संबंध कारक: शंकर्षेव माधावदेव ने इस कारक में अनेक रूपों का व्यवहार किया है -- तेरि, तो हाक, तेरा, तव, तथु, तो ह, तुहु, तो हारा, तो हि, तुया, तो यि, तो हार, तो हारि। संबंध कारक के अंगीत बहुत अधिक संख्या में रूपों का मिलना स्वामा विक ही है, हममें प्रमुख रूप हैं-- तुअ, तुन तौर, तौरा, तौरि, तौरी, तौरे, तौरें,

१- सु०भा०- १६=

र- शं०ना०- ६⊏

३- वही १४२

४- वहीं १३४

⁴⁻ तुक्मा०- हर्द

^{4- 40}HTO- 8 8E

³³⁸ हिंह य

```
तुन्हारा।

क: तो हि महिमान करत ना हि संत ।

क: तो हारि नरण शरण देलों हिरे ।

ग: तो हार आजा पालिते लाग्य ।

भ: विधि मिलावल आनि तेरि मनोरथ जानि ।

क: कमल नयन ए कृज जीवन तौर मृत्य क्षे डाको ।

क: मोहल मन तुया माया ।

क: मोहल मन तुया माया ।

क: आजु जानल मित तो ह ।

क: पति सुल क्ष अब छो हि परल नाथ तव पन्पंकज आग ।

फ: ता के जुा पह कमल मनावर्ड ।

क: वेद विदित ते हि दशरथ ना उं ।

क: तेना ता सु घरनि घर त्रिमुवन तियमिन ।

क: तव दरकन । तव विरह तव राज ।

क: तुव दास । तुव पितु ।

ढ: दासी है तेरी ।

का दुवाई तोर । ते ते नाम बुलाकत तोर ।
```

१- तु०मा० ७७ ह- वही १४३ २- तू०मा० २००- २०१ ३- मं०ना- ६१ ४- वही ७२ ११- तु०मा०- ह्ह १ ५- वही ७६ १२- तू०मा० २०० ६- वही ४० १३- वही २०१ ७- वही १६

७- विषयण कारक : कैवल एक स्तप - 'तोइत' का प्रयोग शंकरदेव ने किया है। अधिकरण के रूप अपादान कारक की मांति ही बहुत अत्य मात्रा में व्यवकृत हुए हैं। इस संबंध में तुम्ह पर्शीर तुम में का उत्सेख किया जा सकता है। सूरदास ने इस नारक में विमन्ति रहित रूप- तिहार् तुम्हार् तेरें का प्रयोग किया है । पर पे और में इन तीन विमक्तियों के संयोग से प्रमुख चार रूप- तुव रूपर, तौपूर, तीप और तीम धूरदास ने बनाये हैं जिनके प्रयोग बहुत कम पदी में मिलते हैं।

कः हिः तोस्त पुरुष तेज किहा नाहि।

:ब: राजि तुम्ह पर बहुत सनेहु।

गः जो कल बात बनाइ कहीं तुलसी तुममें तुमहुं हर माधी ।

भ: राष्ट्रे,कह जिय नितृर तिहारैं।

ड : प्यारी में तुम,तुम में प्यारी।

तः प्यारी मेजज मध्य सुधा हे तुन पै।

कः तो पर वारी हीं नेदलाल ।

पुरु भवानक जन्यपुरु श और निरूप वानक दूरवर्ती की रूप रवना

१- त्यांनारन : शैनर्षेव तथा भाषावदेव ने सेष्ठि, थे, शोष्ठि, तेष्ठी, रूप पा प्रयोग इस का (क में किया है। क्ताका (क में प्रमुखत: इसके छूप एक कान के इंतर्गत सी

१- तु०भा० प्र

र- युव्या ०- २०३

३- वही

ध- वै0ना०- १५६

५- तु०मा० स

⁴⁻ प्रवमात २०३

७- वही

तेषूं भा तिष्ठिं, सोह. सोई भीर वह मिली हैं। सूरतास ने विमनित रिक्त एक क्वन रूप - वह- सो भीर सु का प्रभोग किया है। विमनित रिक्त बहुवक्त के विकृत रूप- उन, उनि, तिन भीर तिनि- इन चार रूपों का प्रभोग सूर काव्य के भनेक पर्दों में किया गया है।

क्षः उद्दि ईश्चर तारक मारक कारक समें संसार।

क्षः से अनन्तवीय्रं कालि महा फोत्कार कीये कृष्णक समुते मरमय।

क्षः से अनन्तवीय्रं कालि महा फोत्कार कीये कृष्णक समुते मरमय।

क्षः से राजमहिणी शिष्पुमा, तेही स्वामीक बोलत।

क्षः तेहिं दोड बंध्रु विलोके जाह।

क्षः तेहिं कांड बंध्रु विलोके जाह।

क्षः तेहिं अनुराग लागु चितु सोह हिंसु आपन।

कां तेड न जानहिं मरम सुम्हारा।

कां तेड न जानहिं मरम सुम्हारा।

कां किक्यसुता सुमित्रा दोका। सुंदर सुत जनमत मह भोकं।

काः गाह चरावन कों सो गयाँ।

दें वे करता वेह हैं हरता।

:ठ: नगर इवार तिन सबै गिराये।

: के दिन मेरी हाई सुचि तान्हीं।

१- तु०मा० =२

^{305 -30}E 0.1hold -2

३- घै०ना० ३

४- वडी ११

५- वही २६

६- वडी ६६

७- वडी ६२

म्न तु०मा० म्ब

६- वही 🚭

१०- युव्नाव २०=

११- वहीं २०६

- क्मेंबार्क: शंक्रदेव ने इस कारक में ता, ताहेक, उहिक, ताहे, तह रूपों का 297 व्यवधार विया है। वर्ग वार्व के अंतर्गत प्रमुक्त होने वाले रूप प्याप्त संस्था में उपलब्ध होते हैं। इनमें सी,सी,ताहि,ताही,तेहि,तेही,श्रीरा,सोह,सोह, धीं :श्रीतम तीन वलात्मक रूप हैं। एक क्वन के श्रंतर्गत तथा ते, निन्हिंह, तिन्द्रीं, तिन्द्रं, तिन्द क्दं, तिन्द क्दं तिन्द्रं अंतिम तीन में से प्रथम दी परसम्युक्त हैं तथा तीसरा बलात्मक रूप है: बहुवचन के ऋंगीत उत्सेखनीय हैं। पूर ने भी हि, उहिताहि तिहिं वाहि और सौ का प्रयोग किया है। इसके मितिरिन्त उन्होंने विभवित्युक्त रूप-उनकाँ, उनिष्क्रिताको, तिनकाँ, तिनिष्क्रिं, तिष्क्रिं, तेष्टि, वाकों का प्रयोग कर्म कारक में किया है।

क: पेने विलाप कमल ता देशह शुनह ।

तः ताहेक मारीच सुवाहु दोहो रापास बहुत विश्विति शाचरय।

श: ता है पेखि बत्यमामा पिकत पूछत ।

भ : वाचक त्रामु पाइ येने हाग घरत गीपाल पाइ तह लाग ।

: समुचित उष्टिक क्यांति देव दंढ ।

:व: काह बैठन कहा न शोहू।

: मा जा बद कर्ब में सौह ।

:ज: छोरत काहे न श्रोहि ।

कः मायो ताहि प्रवारि ह हरि।

१- तु०मा०- म्४

रू पुज्मा - रहेश

३- वही

४- वं**०ना० ३**२

५- वडी

SYO

क वहां १५

क्ष्मा - नाम्

१०- ब्रामिट २१२

३- करणकारक: शंकरित ने इस लारक के संतर्गत कम प्रयोग किये हैं जिनमें प्रमुख स्त में नि-तारे ता स्नात ताहातों। करण कारक के स्तपों में प्रमुखत: ते हिं ते हि सन :परसर्ग युक्त रूप: तथा तेज संस्कृत रूप: एक वचन के संतर्गत और तिन्ह हिं तथा तिन्ह तें :परसर्ग युक्त रूप: बहुनकन के संतर्गत उत्तेखनीय हैं। सूर ने करण कारक में ताहि, तिनहिं और वाहि तथा विभिन्तयुक्त उनत, तातें, ताही तें के ताही तें का प्रयोग किया है।

:पः: तासंवात केवा जामि जासिवार कथा।

:स: उपरे उरव पासि तारे पूरे कानु ।

शः तेषि सन नाथ मयत्री किषे ।

च: नाथ क्यर कीचे ताकी की ।

: द : तातें प्रथमधिं मस्तत्व दपायौ ।

न: नामि जन्म ताहीं तैं लगे।

४- संप्रतान कारक: शंकर्देव ने संप्रतान कारक के अंतर्गत ताकु, ताहेक रत्यों का प्रयोग किया है। तुल्हीदास द्वारा प्रयुक्त रूपों के अंतर्गत विशेषा रूप से ताहि, ताकी, ताकां, तेषि लिंग, तेषि लिंग, ताहि लिंग एक वचन में और तिन्हकरं, और तिन्ह कहुं वहुनका में उत्लेखनीय हैं। इस कारक में सूरदास ने उन, ताहि, तिन्हें, तिष्ठिं, तेषि, उनकों ताकों, ताहुं कों, तिनकों, वाकीं, उनिह, उनकों ताकों, वाकों, हन बारह-तेरह रूपों का प्रयोग किया है।

बुक्र- बुज्मा० म्

र- युव्याव सर

FOR TOTTON TOR

४- वहीं १८६

५- वु०ना०- ६७

६- पुरुपार रहे

७- बुल्या वर्ष

व्- बुक्मा - राष्ट्र

कः वृक्षा रावे जानि रक्ती केम, ताबु क्षम्य पूत-माथे ।

कः पेरित तालेक हरि करि जायाल, कंगल कुल हानि तर शास ।

कः तालेक राषासक दिते नाव ।

धः एड़ाइते नामारि माइ दिला जनि तारे ।

हः जयपि ताको सोइ भारम प्रिम जाहि जहां बनि आई ।

कः गरु हुमेरु तेनु सम ताही ।

कः ताहि दे राण वेबुंठ सिक्षाए ।

कः तिसि माती दोड हाथ दर्ध तिहिं ।

फः विन देशें तामां सुत मयो ।

फः

५- अपादान कारक: इसकारक में केवल ताहातो शब्द रूप शंकर के काव्य में उपलब्ध है। तुल्ही दास ने अपादान कारक में करणा कारक से ही मिलते जुलते कुछ रूपों का व्यवहार बन्न तन्न किया है जिनमें तेहि सन, तेहि तें, तिन्ह ते: बहुत्वन रूप: तथा ताहू तें : बतात्वक रूप: वेसे परसक्ष्यक्त रूप उल्लेखनीय हैं। सूरदास ने इस कारक की तें विभाजत के साथ मुख्य पांच रूपों का व्यवहार किया है--उनतें, उनहूं, तातें, ताहूं तें और वातें।

भ: भाटक मुक्षे देवन रूप गुणा ज्ञान सामाति ताहाती त्रध्यक देवल ।

ति हैं तें डबर शुमट सोह मारी

शाः राजा काथा कंगू हैं तार्त यह मुरली प्यारी।

घः कुलटी उनतें को है

१- जंग्ना १२७

स् क्या १स

३- वडी ३२

४- वही १६२

५- वुव्यात- मर्व

६- पुल्पा- २९५

७- तुं०मा० मध

क- रूवमा०- सद

८ वेंगा०- म्ध

१०- तु०मा० ८७

११- युक्सा०- २९६

```
६- संबंध कारक: लंकरदेव ने इस कारक में ताहेर, उतिकर, ताहे, ताकर, ताहेक,
ता है रि,तनुसर तिनकर रूपों का प्रयोग विधा है। सम्प्रदान कारक के रूपों के
अंतर्गत विशेषा रूप ता हि, ता ही , ता ही , ता ही ता है ते हि लगि, ता हि लगि एक ववन में
और तिन्दक में बहुवचन में उत्सेखनीय हैं। पूर ने संप्रदान कारक के रूपों के अंतर्गत
विशेष रूप से ता, उनकी, तासु के, ताके, तासु के, तेहि के जादि उ लेखनीय हैं।
:क: रेजन परम धुकुमार कुमार याचेर गृहे ताचेर माग्यक महिमा कि कहन i
:ब: शोरि मल्लमाट उनिकर् ननपूरिये वहुविश्व प्रताद देश ।
गः ताहे बिएह कत सहिव ।
भ : ब्रह्मा महेस्वर नाकर याकर ताकर गुण मुंह तेहु ।
: इ : वसुमती परम संतापे ताधेक पुत्र मगदच शिशुक त्राणि करिकहु कृष्णा
      पर्शन निर्मित येने वलि ।
वः कृष्ण नरणे तारीर परम मक्ति बाह्व ।
: इ: जयगोपाल रजन निलास तनुकरू काल है
:ज: त्रीकृष्ण तनिकार वस्य हुआ गृह गृहिणी क्यल i
:भा: धुनि मुनि मोड 4 होड मन तार्के ।
:फ: नृप डचानपाद श्रुव तासू।
हः वेद विदित तेषि दस्य नाकं ।
: छ: सुनि ताकरि विनती मृतु वानी ।
```

```
१- तु०गा०- मर्व

२- तु०गा०- स्थ

३- ग्रं०गा०- ३म

४- यशी     ६४

५- यशी     १२म

६- यशी     १४६

म्- यशी     १६५

म्- यशी     १६५

१०- यशी     १६५

१०- यशी     १६५

१०- यशी     १६म

१२- तु०गा० म्म
```

:6: गुण ताके । ताके तंदुल ।
:ढ: तुरंग रथ तासु के सब संघारे ।
:ण: तुम सारिसे बसीठ पठार, कहिस कहा बुद्धि उनकेरी ।
:त: उदिध- सुता-मित ताकर बाहन ।
थ: तासु क्रिया ।
:द: पहिसे रित करिके शारत करि, ताही रंग रंगाई ।

७ मिकरण कारक: इस कारक के मंतर्गत ताहे, तनु माभे रूप शंकरदेय की रननाओं में उपलब्ध हैं। मधिकरण कारक के रूपों में, तापर तेहि पर, मोर तेहि माही एक वक्त के मंतर्गत और तिन्ह पर, तिन्ह महं और तिन्ह महुं कहुववन के मंतर्गत व्यवहृत हुए हैं। सूर काव्य में इस कारक के ताहूं, वाहीं, ताके, ताही कें, तिनकें, ताही पर, तापर तिनपर, उनपे, तापे, ताही पे, तिनपें, तामें, ताहू में तामहें, ताहि माभि शादि रूप मिलते हैं।

काः ताहे मजोक मन शंकरे बोल।

काः समिनव सूर उगत तनु माभे।

शः तासु माने नंद सुत विराजित मंकल केशर समाना।

शः तापर हरिया चढ़ी वेदेश।

इः तिन्ह महं प्रथम रेस का मोरी।

इः रिवकर मीर बसे शति दारुन मकर रूप तेहि माहीं।

काः सुरदास की एक श्रीति है ताहू में कहु कानी।

काः स्वाद परे निमानहं नहिं त्यागत ताहीं माभ्य समाने।

१- सू०मा० २८७ २- वही २८ । ३- वही २८ । ४- तु०मा० ६० । ५- सू०मा०- २८६- २२ । ६- सं०ना०- १४७ । ७- वही० १३२ । इ- तु०मा० ६० । १- क्तां कारक: शंकादेव ने इस कारक में थोड़े रूपों का प्रयोग विया है। वे हैं -- इहा, इ. एहं, एहं, इह । तुक्सी दास ने क्तांकारक के क्रंतर्गत एक वचन में इसके रूप यह, यह, एहा, एहिं, इहें :कलात्मक रूप: तथा बहुतचन एवं बादरार्थ में ये क्रयवा ए, उन्ह, एउ, इनहिं बोर इन्हीं :बंतिम तीनों बलात्मक रूप हैं: उल्लेखनीय हैं। सूर ने बारह, तेरह रूपों का प्रयोग विथा है - वे हैं - इन, इहिं, ए यह, ये, इनहिं, इनहीं एउ, येह, येहं, येका

:कः: इहा जानि निरंतरे हरि बोल हार ।

ख: इ कथा रहीक।

:गः रहु कृष्णक वरण परायण कंतरे हरिगुण गान ।

धः एकि बुलि कृष्णमुल निरेति येने विलाप करल ।

ड : वह संसार सार नाहि बार चिंतहु चरण मुरारि।

तः ए पापीक प्राण रासक ।

क् : ए परमार्थ रूप नृष्मम्य बाला ।

ल: क्विं लेख एवं जीवन लाडू।

:मा: जाना जर्ठ जटायू एहा ।

.भा: ये प्रिय सन्धिं जहां ती प्राणी ।

द्ध: कोटि चंद वारों मुख इकि पर ए हैं साहु के चीर ।

:ठ: इहिं मौसीं करा छिठाई।

: इंग्ट-पट वका डांपि, वाईं इन :यह नारि: राख्यों :री:

१- तु०मा० हर

२- यू०मा० २३०- २३१

३- मैं ना १०४

४ वही स

ए- वही रह

⁴⁻वही व

[&]quot; ७- वही ३

क वही ध

६ तु०मा०- ध

१०- स्वमा०- २३०

न क्षेति एक : शैनरदेव के नाटक तथा वर्गीत में केवल इहाक, इहाको रूप प्रयोग मिलता है। तुलि दास ने क्षेता एक रूपों में यह, एहि, एही, या हि, एहि कहं :पर्सर्ग युक्त रूप: तथा इहै :कतात्मक रूप: एक वचन के अंतर्गत और ये, ए, इन्हें, इन्हों है इनकों तथा इनकों कहुवचन के अंतर्गत महत्त्व पूर्ण हैं। तूरदास ने इस कारक में तेरहन्ती कर्षों का प्रयोग किया है। यह रूप हैं- इन्हें, इहिं, यह, या हि, इनकों, इनहीं और याकों, इनहीं, यहहें, यह यो है। यह रूप हैं- इन्हें, इहिं, यह, या हि, इनतें, इनहीं, या सीं।

:क: विहिला इहाक हरि समुचित दंड 1

.ल: इहाक तनपान कराये पठायाँ।

गः इहाको थि बकार धिक I

घः अस स्वामी एषि करं मिलिषि परी इस्त अस रेल ।

: ड : याही भी बीजित समें ,यह रही नहां री ।

के नरण नारक: इस नारक में प्रयुक्त नेवल एक रूप आहेत उपलब्ध हैं। शंकर के के नाव्यों में इस नारक के अंतर्गत अधिक रूप नहीं मिलते हैं। तुल्सी नास की रचनाओं में भी करण नारक के रूप अपेना कृत कम मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इ इनमें एडि ते, एडि सन, इन ते तथा इन्ह सन उल्लेखनीय हैं। सूर्दास ने इस नारक के अंतर्गत इनि, याहि, इनतें, इनसीं, इनहिं यासों, इनहिं तें, इनहीं तें, इनहीं पे, याही तें याही सीं, रूपों का प्रयोग किया है।

१- तु०भा० ६२

र- बैंग्सा० ४३१-४३ ४

ब्राध्यक्ष १६३

३- र्जं०ना- १३

४- वही - १६६

५- वही - १७८

६- तु०मा० ६२

७- बु०मा- २३२

म्- प्रमा- हर

^{8- 40-11- 53} S

3114

कः परम गुरु नारायण शिकृष्ण बाहेत हामु युद्ध क्यल ।

ा: इन्तें मह सित की रति त्रति त्रमिराम्।

:ग: जिन्ह कर मन इन्ह सन नहि राता i

भ: इनतें हम मर सनाथा ।

: इ: कान्ड कड़्यों कह मांगह इनसीं I

४- संप्रदान कारक : शंकर्षेव ने देशक रूप का ही प्रयोग इस कारक में किया है। तुल्सी दास संप्रदान कारक के रूपों के शंतर्गत, यहि लागि, एहि कहं, इन्ह कहं, इन्ह के लिए तथा इन्हों को :बलात्मक रूप: उत्सेंसनीय हैं। इस कारक में प्रयुक्त मुख्य तीन रूप सूर का व्य में मिलते हैं --- इन्हें, इहिं, और याकों।

.स: किन्तु इहाक एक शास्ति करव ।

अ: एवि करं सिव ति वृत्तर नाहीं।

गः अमी शुजर प्रमु तुम्ह कों इन्ह कहं श्रति कत्यान ।

भः का माग याकों नहिं दी व ।

: ह : एक इहिं :मृपश्टिं: दर्सन के I

५- घपादान कार्क:

६- पंजंब कारक: शंकर्तिव की रचनाओं में इस कारक के प्रमुख रूप, इहार, इहाक, जा हेर जा हैक प्रयुक्त हुए हैं। तुल्ही दास ने संबंध कारक के रूप अन्य सर्वनाम रूपों की मांति इस सर्वनाम के अंतर्गत मी अन्य कारकों की अपेदाा अध्यक संख्या में प्रयोग विधा है इनमें प्रमुखत: एहि, याकी, याके, याको एहि कें, और एहिन्स : अंतिम दो परसर्गयुक्त रूप हैं: एक ववन के अंतर्गत तथा इनकी, इनके, इनको, इन्ह्के, और इन्ह्किश:

१- तु०भा० ध्र

२- पु०मा०- २३२

३- तुं०मा० ध्र

४- पूर्वा - रव

५- चंक्नाक- ६४

६३ ०गा० ६३

G- GOALO 533

वधुक्वन में जादरार्थ में उपक्रकाते हैं। सूरवास ने इस कारक के अंतर्गत सी को सादे नार्ड रूपों का प्रयोग किया है, जिनमें की, के, और को के योग से संबंध कारकीय रूप बनाए गए हैं। इनके जिति रिका जपवाद स्वरूप 'कोरी का प्रयोग एक दो पनों में दिलायी देता है।

जः इहार दोषा मर्षा गोसामि

ख: एहाक दोषा बारेक मर्ष गोसात्र।

श: पारिजात दरण बाहेर नाम ।

मः श्राहेक रजा करहाँ

: ड: एक कर नाम सुमिरि संसारा ।

न: रामनरित मानस एकि नामा

: शुरु जारथ इहि की I

जः याच् के मुन ।

:मा: अन्य कथा याकी ।

७- अधिकरण कार्क: शंकरदेव के नाटकों में इयात तथा इहात द्वप इस कारक के शंकरित उपलब्ध होते हैं। तुलसादास ने इस कारक के द्वपों में या महिं, एहि महं, एहि माहीं का एकववन के शंकरित और इन महं का बहुवबन के शंकरित प्रयोग किया है। इस कारक में आठ-नौ रुप मिलते हैं -- इन, इन पर, इन माहिं इन माहिं, इहि यहिमां, याकें, यापर, यामें, यही पर ।

१- तु०मा०- ६४

२- स्०मा०- २३३

³⁸ OTFOF -E

४- वही १६

५- वही १३३

⁴⁻ वहीं १४६

७- तु०मा०- ६४

क्ष्मा व्याप

१ न्याम क

१०- प्रान्त २३४

:क: इशात किंदू शंग नाहि करवि

:त: ह्यात विक् शंता नाहि।

ता: मेरे कहा थाकु गीर्स की नवनिधि मंदिर या माहि।

श: राम प्रताप प्रगठ एवि माहीं।

: अ पर में रीमि शैं भारी।

इं : क्नल भार याची पर ताचीं।

्धः ये तौ मर मानते हरि के, सदा रहा इन माहीं।

ांबंध कानन

१- क्तावारक: शंतर्वेव ने इस जारक में जिन रूपों का प्रयोग किया है। वे हैं -- ये यो यो हि। तुल्की पास ने क्ताकारक के अंतर्गत जिन रूपों का प्रयोग प्रमुरता से किया है, उनमें एक वचन के अंतर्गत जो , जोड़ , जोड़ , जेहि और जेहिं तथा बतात्मक रूपों में जेल बहुतवन एवं शादरार्थ में के, जिन और जिन्ह उत्सेवनीय हैं। जिन, जिनहिं, जिनि जिहिं जु, जोड़, जोई और जीन, हन नो रूपों का प्रयोग सूर काव्य में प्राप्त है।

: शा व ये दान मानह, तो हो क सत्थे सत्ये सत्ये देवनो ।

सः यो हि भूमि वहुं भार उत्तरत निज का पूरिया काम ।

श: यो हरिक द्रोह कर्य।

भः जी निर्धं कर्ह राम गुन गाना ।

ड़ : रुप न जाइ बला नि जान जोइ जोइइ ।

न: संग तिस विश्वेनी वध्यू एति को बेहि रंचक रूप दियों है ।

क्: प्रहलाद हित जिहिं बद्युर मास्यौ ।

ज: मन बानी की अगम अगोज्र सो जाने को पावे।

: भात बैल ये नाथ जोई

त्वमित्रास : शंकरदेव के नाटकों में केवल 'याहे रूप इस कारक में प्रमुक्त हुआ है।
तुलसी पास ने इस कारक के संतर्गत विशेषा रूप से जाहि, जाही, जेहि, जेही, जोह, जा
कहुं तथा ने और जिन्ह हैं : शंतिम दो बहुवचन रूप हैं: का प्रयोग किया है।
सूरपास ने इस कारक में जाहिं, जिहिं, जो, जोह, जाकों और जिनकों रूपों का प्रयोग
किया है।

:क: या है नेहरि सुर रमणी मूरिव परे।

: सुमिरत जाहि मिटह बग्याना ।

ता: जो विलोकि रिके तव मेसे ज्यमाल ।

ब्र: नंद घरनी जाहि बांच्यौ ।

: इं : व्यास क्यों जो , सुन से गाई ।

३- करण कारक :

अ- संप्रदान नारक: शंकर्षेव ने इस कारक के श्रंतर्गत याक, याहे, रूपों का प्रयोग विधा है ।तुलसी दास ने प्रमुखत: जा कहं, जा कहं, जेहि लगे, जेहि लाग, जेहि लागी, जेहि हेतु, जेहिं हेतु जिन्हां , जिन्हां , जिन्हां , जिनको और जिन्हा लगि : श्रंतिम पांच बहुवचन रूप हैं: रूपों ना प्रयोगिक्या है । सूरदास ने जाकों, जाहि और जिहिं-केवल तीन रूपों ना प्रयोगिक्या है । जा: गंचमुहे याहे तृति जुलि शिर हर अर पद्भूति । जा: श्रंममुहे याहे तृति जुलि शिर हर अर पद्भूति ।

१- पु०मा०- २४१ - पु०मा०- ६६ - पु०मा०- १४१- २४२ - पु०मा०- १४१- २४२ - पु०मा०- १४१ गः जा वर्षं सनकादि संमुनारदादि कुल मुनीन्द्र, करत विविध जीग काम श्रीध लोग जारी।

म: दुर माथ केरि रतिनाथ जेरि वहुं कोपि कर अनुसर अरा ।

: ड : जाकी राजरीय कफ व्यापत ।

ंत: त्रति शुकुमार डोला रस मीनों सो रस जाहि पियावै व हो ।

५- अपादान कार्क:

६- संबंध कारक: शंकरदेव ने इस कारक में अनेक रूपों का व्यवहार किया है,
जिनमें याकेरि, याकर यार, याहेर, याहेरि, याहारु, याकु उत्लेखनीय हैं तुलसीवास ने संबंध कारक के रूपों में एक कवन के अंतर्गत जा, जिसु, जासु, जेहि के, जेहि
कर, तथा बहुक्वन एवं बादरार्थ के अंतर्गत जिनकी, जिनके, जिन्ह की, जिन्ह के, जिन्ह
के, जिन्ह के, जिसका दूसरा रूप जिन्ह वह भी रामचित मानस में कहीं कहीं
व्यवहृत हुआ है: तथा जिन्ह कर का प्रयोग किया है । पूर काव्य में प्रयुक्त रूपों
के अंतर्गत जा, जासु, जाहि, जाकी, जाहि की, जिनकी, जाके, जिनके, जा केरी, जाको,
जिनकों, जिनकों उत्सेखनीय हैं।

कः नन्दकु नन्दन वंदन देवक सेवक याकेरि सर्व ।

ता: जुड़मा महेश्वर नाकर याकर ताकर गुण मुख लेखु ।

श: नाहि जादि केंद्र मध्य परिच्छिन यार्।

भः याहेर स्मरणे जनतके पाप हरे ।

: ड : याहे शुरासुरा कर सेवा भी हि मी हि मति देव देवा ।

भः यादेरि केश ककति वार्वार मूमिक मार इस्य।

१- तु०मा०- १०० ६- वही ३ २- तु०मा०- १४२ ७- वही १४ ३- तु०मा०- १४१ म- वही ११७ ४- तु०मा०- २४३ १- वही ५६ ५- वं०ना०- २ :: जाजन तारण चरण याहार वंचल केवन कृष्ण वर्लमहामारा।

: प्रकृता, रुष्ट्र शादि विक्पाल याकु करत नित्य सेव ।

कः वाकु नाम थारि मुनिवर पामर वृही स्तु गति पाइ ।

:फ: बंड समान मयड जस जाका ।

:ट: जाकर नाम सुनत सुम शोह ।

:ठ: जाकरि ते दासी सो मिकाशी इमरेउ तोर सहाई ।

ड: वैविकर मन रम जाहि सन तेहि तेही सन काम ।

द्ध: इम कह जोग जानें जियत जाकी रीन ।

:ण: जिनि पासनि को मुकुर बनायों, सिर घरि नंदिक्सीर ।

त: जिनमें मन ।

याधिकरण कारक:

²⁻ MOTTO- 48

२- वहीं १०१

प्रश्नवाचन रूपों ने कारकीय प्रयोग

१- क्ताकारक: के,कोने,केव,कोन,क्मन,केवो रूपों का प्रयोग केर्देव ने इस कारक के अंतर्गत किया है। तुलकी पास ने क्लाकारक के अंतर्गत प्रधान रूप से कोउ कोइ ,कोई ,कोय ,काइ ,स्क ,श्क ,कोउ और काइ ,श्विम दोनों बलात्मक रूप हैं: का प्रयोग किया है। कहा, काहूं, किन, किनि, किहि, केहि को, कीन होए कीन-ये रूप पूर काव्य में उपलब्ध होते हैं। कः हामार पुत्रक के लिया याह ल: जादि कतं नपावंत कैव । श: श्रीहि कौन व्यवहार है धः है धती । कमन उत्पात गोकुले मिलल डि: विक्वल मावे केही कर यूरि बोलल में च : हरिको मकर बुंडल लेला का हु। .ए: कोउ सप्रेम बीली मुझुवानी । ज: निरगुन रूप शुलम बति स्गुन जानि निष्टं कोंड । :भा: बाहु न की न्हों धुकूत सुनि मुनित मुनित नृपष्टि बलानहीं :भा: राम कवन प्रमु पूछतं तीही । ट: कहु के तारे फाल खाल बनुर वीज बफ्त i :o: शुनहु सवी में वृकाति तुमकों का हूं हरि कों देते हैं। . चौ विस चातु चित्र के कि कीन ।

१- तुल्मा०- १०३ २- तुल्मा- स्पूप ३- बेल्मा० १० ७- वही प्र ७- वही ० १२१ ५- वही० १२१ ५- वही० १२१ १- वही० १२१ १- वही० १२१

छ: ऐसी की करी करा मक्त कार्च ।

र- वर्मशास्तः साहु नाहुक नाहेल- इन तीन रूपों का प्रयोग शंकरदेव ने इस कारक के अंतर्गत किया है तुलसीदास द्वारा प्रयुक्त कर्मकारक रूपों में विशेषातः का कहा काह, काहा, काहि, काही, केहि और कौन उल्लेखनीय हैं। कहि कहांश रूपों का कर्काशास्त्र रूपों के साथ साम्य ध्यान देने योग्य है। कह, कहा, का, काकों, काहिं किहिं, को, कोड, और कोना, इन रूपों का व्यवसार सुदास ने किया है।

कः वेदि काहु काहु शांचीरे विवे ।

त: काहाकु हरि हासि कर मान/काहाकु चुंकन चट्कन दान ।

श: लाईक भूता भारि नुके वांचि कोले चरव ।

द्रभ: कहा करे केहि मांति सराहे नहिं करतूति नहं।

: ड : नोक्बं का च कहन रसुराथा ।

तः मन्श्र कारि कलंक न लावा ।

.ए: काकों ब्रज पठवीं।

ज: वाचि मर्जी ही दीन।

:फ: ना जानौं वियनिष्टं का म्यो ।

३- नर्ण नार्क :

४- संप्रान कारक: शंकरदेव के गीतों और नाटकों में इस कारक के अंतर्गत का हा कुरुप उपलब्ध है। तुल्ही दास ने इस कारक के अंतर्गत के कि लगि, के हि हैतु का प्रयोग किया है। सूरदास ने का कों, का हि का कू की कि शोर कोने का

१- तु०मा०- हर्द ५- वही १० २- तु०मा०- रप्द ६- तु०मा०- हर्द

३- मैं०ना० १२५

७- सुक्मा ०- स्पर्द

⁻ वचा १०६ - तु०मा०- ६७

प्रमीग दिया है।

:श: वाहाकु कुंकर बनमाती लागि मुल । खिट जीव नित्य केहि लगि तुमरोवा । श: विभिन अकेलि फिरह केहि हेतू ।

भः उरहा दिन के वाहि ।

क : जोग जुगुति जयपि इम ली न्हीं लीला कार्की देशीं।

५- अपादान कार्क:

4- संबंध कारक: काहेर, काहेक, काहुक काहाकु- रूप शंकर्तेव के नाटकों में उपलब्ध में । संबंधकारक के रूप भी इस सर्वनाम में अन्य सर्वनामों की अपेता संख्या में कम हैं और जो रूप मिलते भी हैं उनके अन्तर्गत के, का आदि परसर्गों की सहायता से बने हुए रूप बहुत जल्प मात्रा में आए हैं। इनमें विशेषा रूप से उल्लेखनीय रूप ये हैं - काके, काकों, कासु, केहि केहिं, केहि के, और केहि कर, विशेष कर । सुरदास ने इस कारक के संतर्गत काकी, काकों, काकों, किन्की, किर्दि के किर्दि के कि की की कीन की रूपों का प्रयोग किरा है।

कः कारेर कुमार/किवा दैव किवा मनुष्य !

ल: बी वि कारेक ब्लाल ।

ग: काहुक बाहु कंवा केवल I

म: नारान समति कृष्णान विवाह देवन

ड़ : वाचाबु तैत हरि मैनरु शोड़ि।

व: नेहि के वल घालेडि वन बीसा ।

.ख: गालु करन नेहि कर बलु पार्छ।

जः लोहन हो ह मल का सु मलाई।

:भा: काको नाम पतित पानन है जा केहि अति दीन पियारे।

फ : बाकी ध्वजा बेठि।

टः साधामुग तुम किहि के तात ।

: विश्विं मा दुरका हरिहें

७ विकरण कारक:

१- तु०मा०- धः

⁻ gorro- que

किया पद में वर्तमान, भूत और मविष्यत तीन काल हैं, तीन पुरुषों की किया और के मिन्न मिन्न रूप हैं। ऋसिया में एक वचन तथा बहुतचन के रूपों में पार्थवय नहीं है। वर्तमान और भूतकाल में प्रत्येक पुरुषा के एक से अधिक प्रत्यय हैं।

वर्तमान काल

प्रथम पुरुषा : शंकारेव तथा माथ वदेव की माणा में प्रथम पुरुषा के प्रत्यय- शो शहु- शही - श्रीहो ,श्रीर- ।ो हैं । ये समस्त रूप संस्कृत के शह + हउ से विकसित हुए हैं । यथा ;-

:क: करहु अतये करुणा गोसिम । :तः पुद्धतको माथव बांधव मध्युसोदन । :तः को किल कुहु कुछु तेहु मेरि प्राणा ।

गः निशि सन वंबीहु जागि

:धः नारायण चरणे करोहो गोहारि ।

:व: मजिलोहों मवसिंग्रु तौमाक जनाजि । क: नारायण मांगी चरण रित तेरा ।

जः मागों शीकर तुवा पद मकरंदा ।

तुल्सी की माना में उत्तम पुरुषा के रूप एक वनन के अंतर्गत मूल जातु के साथ उं, कं भी, - त श्रीर-ति के योग से तथा शादरार्थ एवं बहुववन में 'हिं) की के योग से बना ए गए हैं। श्रुरवास की भाषा में वर्तमान का लिस कृदंत रूपों का व्यवहार किया गया है शीर कहीं- शों प्रत्यय लगा कर प्रयुक्त रूप बनाए गए हैं।

१- वंशी ० २१ ७- वंशी पृ० २६ २- वंशी पृ ३३ ६- तु०मा० पृ ३- वंशी पृ ३४ ६- सू०मा० पृ० ४- वंशी पृ ६ ५- वंशी पृ० १= ६- वंशी पृ० २=

```
क: सल तव किटन क्या एवं सहके ।

ख: पद कमल घोड़ चढ़ाइ नाघ न नाघ उतराई वहीं ।

ग: हों गंतर की जानों ।

ध: चरन कमल बंदों हिर राइ ।

द: तातें देकं तुम्दें में साप ।

क: में जायों हों सरन तिहारि ।
```

मध्यम पुरुषा : शंकरदेव तथा माधावदेव ने `स्न- इस्न- इन्न प्रत्यय का प्रयोग मध्यम पुरुषा की मूल धातु के साथ हुता है। प्राचीन असमिया -स-इ का संबंध मठ माठबाठमाठ सि हि से है और यूह का निर्वेत रूप कहां था सकता है : अन् हि: यूह स्प्रा प्राठमाठशाठमाठ-सि-मठमाठशाठमाठ-सि-इत्याठशाठमाठ-स-इन्ह प्राठमाठशाठमाठ-थ-मठमाठशाठमाठ-इन्ड प्राठमाठशाठमाठ-थ-मठमाठशाठमाठ-इन्ड से शाका होगा।

कः केले करिस दासिक रोज रे । कः उठक उठक प्रिया तेरि घरि हाते ।

:ग: अति केल्न कहिस मायि I_

म: तोशें मथान दंह होड़ह ।

तः त्राजु काहा जासि बोल्य गौनालि।

: इामाकु बौर बौलिस टांदि श्रापुनि दिया दुग्थ लाया ।

१- तु०मा० पृ०

२- यू०मा० पृ० ३।=

३- वहीं पु० ३२२

४- ए०एफ व्हा प्र

^{¥-} शं०ना० पु० ७⊏

⁴⁻ वहीं पु०१६२

७- वही पु० २२१

क्न वहीं पुरु रव्य

e वही पु**० ३१**०

१०- वही पु० ३१२

तुल्सीदास की माना में सामान्य क्तमान काल के रूप मध्यम पुरुषा के अंतर्गत दोनों लिंगों में एक वक्त में मूल घातु के साध 'सि, सी, कि, की, हुं हू,त और भी के योग से तथा बहुदबन में प्राय: 'हु तथा 'हू के योग से बनाए गए हैं। सूरदास की भाषा में ई, ऐ,त, ति तिं और हि विशेष रूप से इन प्रत्ययों के योग से इस वर्ग के रूप बनाए गए हैं।

कः महामंद मन सुल वहसि स्से प्रभुष्टिं विसारि।

:त: मांगु मांगु पे कहा पिय कवहूं न देखु न ते हु।

ग: कोटे बदन बात बाह कहिस ।

: प्र: तनक दिथ कारन जसीदा इती रिसाहि।

श्रन्य पुरुषा : इस पुरुष का प्रत्यय रे है, प्राचीन श्रसिया में न्त-ति प्रत्यय का प्रयोग हुशा है।

कः काला कानू नाचे चरण् चलाह ।

:ब: हासि हासि नले माइ।

ता: मलन मधे जबाोमति माइ ।

थः गरि गातर विलपति परि नारी ।

तुलकी की माजा में अन्य पुरुष के कंतरित प्राय: मूल बातु मैं-इ-ई, रे और त प्रत्थवाँ के योग से एक कान में और हिं, की तथा रे के योग से लागान्य करियान के रूस बनार गर हैं। पूर की भाषा में इस वर्ग के रूप इ,ई, रें रे,त, ति, तिं हिं, की और की के संयोग से बनार गर हैं।

कः मूक छोड बाबाल फंतु बढ़ा गिर्वर बहन।

तः सुजापन करि मूक कि स्वाद बताने ।

श: करति बारती सासु मगन सुस सागर ।

मः तुष्ना नाव करति ।

नः नृपकुल जस गावै।

कः गरनराम् कर पानि गरावति ।

१- तु०मा० पु० १३२ ६- वही पु० ३६ ११- तु० मा० पु० १२६ - तु०मा० पु० ३१६ ७- वही पु० २०३ १२- तु०मा० ३१६ - तु०मा० पु० १३२ ६- वही० पु० १६ - तु०मा० पु० ११६ ६- तु०मा० पु० १२६ - तु०मा० पु० ११६

विधि

उत्तम पुरुषा : शंकरदेव की भाषा में उत्तम पुरुषा के प्रत्यय वर्तभान संभाव्य के डी इसमें प्रमुक्त होते हैं।

मध्यम पुरुष : क्षेत्रदेव की माजा में मध्यम पुरुष के प्रत्यथ- श्र,-स, जीर श्रादर सूचक- श्रा,- श्रह- श्रहा हैं।

कः दरसन देहु दशाल मेरि बंधा मधाह ।

.सः तेतु हरि नरण सरन सब बराज ।

गः तो चारि प्रथम पतनी परमस्वामि जानि पूर्ह मौहि त्राशा

धः मुनि मुनि किस्यो किस्यो कपट परिहरि

तुल्सी की भाजा में विधि काल के रूप मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष में भिल्ते हैं इनमें भी प्रधानता मध्यम पुरुष के रूपों की है। सूर की भाजा में इस काल में मुख्य रूप मध्यम और अन्य पुरुष के ही होते हैं - इनमें इ,इर,इरे,ईजी,धी,धी, उ,औ,औ,व,इ,हिं,हि,हूं,हू प्रत्थय के प्रयोग हुए हैं।

कः उठ्ड राम मंज्डु मन नापा ।

.ल: मातु मुदित मन शायसु देहू ।

शः तुम जाहु ।

धः तुम सुनहु जसोदा गोरी ।

व: एक बेर इहिं दरसन देह ।

१- बारा पूर एट

र वही पु०१७५

३- वही पु० १००

४- वही पुर १८६

४- तुव्माव पृव १५६-५७

६- व्लाप-पृत ३३६-३३७

७- तु०भा० पृ० १५७

क्- ब्राज्या पुर ३३७

अन्य पुरुषा : प्राचीन असमिया में उ- श्रोक प्रत्यय मिलते हैं । यथा - श्र्णो, असोक, मिलोक श्रादि ।

:क: इह संसारे सार बार निह चिंतह चरण मुरारि।

: सं: मकतिक साधा धुनहु सब लोइ

म: भीता भीति भजीक तुया पाने ।

: प्: तुवा पद सुमरि रहोक मन थिर ।

तुलसी दास की माजा में अन्य पुरुष के रूप मूल घातु के साथ- 'उ अथवा 'क के योग से बने हैं।

कः करु अनुग्रह सोइ बुदि रासि सुम गुन सदन ।

:ब: । इरड मगत मन में कुटिलाई ।

:ग: तिन्ह के गति मोहि संकर देख ।

५- तु०मा० पु० १२६

१- ग्रं० ना०- पृ०- ३ २- वही पृ०- १७५ ३- वही पृ० २४४ ४- वही पृ० ३००

मृतका ल

मूल घातु में अल :ल: प्रत्थय का योग होता है शंकरदेव की भाष्मा में- अल प्रह प्रत्थय के अतिरिक्त इ प्रत्थय का योग हुआ है ,यह संस्कृत कि से आया है। यह प्रत्थयांत मूतकाल के किया पद के तीनों पुरु वा में प्रयुक्त होता है। मूल का लिक-ओ प्रत्थयांत हिन्दी से शंकरदेव की भाषा में आया है तथा उ प्रत्थय पश्चिमी अपभंश से आया है।

उत्तम पुरुषा : शंकरदेव की माणा में- इल- इलग्रो -इलो हो त्रादि रूप मिल मिलते हैं।

कः तौहाक पुत्र पावली ।

: ख: सुहुद सोदर जन पेसि क्सि सम मन तेज लों हो नारायण

गः पावलु पहु बहु पुष्ये हामु रके।

तुलसीदास की भाषा में इस काल के अनेक रूप मिल्ती हैं जिनमें से कुछ प्रमुख रूपों के उदाहरण यहां दिये जाते हैं। मूल घातु के साथ 'आ', हें, हें, 'हें यो 'ओ' - एउ, यह, हयो, एसि, न्ह, न्हा, न्हि, न्हीं का योग हुआ है।

कः जो मैं सुना सो सुनहु मवानी।

: ल: नाथ न में समुफे मुनि बेना ।

मध्यम पुरुष : शंकर्देव की भाषा में मध्यम पुरुषा के प्रत्यय-इल-इलि-इले-इलिहि

:क: गोपाल तेरि के टूटल नव अनुराग।
अस्त: निधि विधिन जानि के तेजलि मधाइ।

१- गंवनाव पृव ११

र- बंबना पृब्ध

३- वही पु० १<u>५</u>१

४- तुल्मा०- पृ० १३५-१४२

५- वही पु० १४१

६ र्वंगा० पृ० ६३

७ वही पु० दर

तुलसी दास की माजा में मध्यम पुरुष के निम्नलिखित रूप मिलते हैं:-

कः तुम्ह पितु सिंस मलेहि मौहि मारा।

:ल: काहे ते हरि मोहि विसारो ।

:ग: तुम्ह जो हमें बढ़ि बिनय धुनाई ।

अन्य पुरुष : शैन्यदेव ने अवर्गक तथा सकर्मक किया के अनुसार प्रत्ययों का प्रयोग किया है। प्राचीन असमिया में इस, - इलो क, इले प्रत्यय मिलते हैं, इलोक का व्यवहार दोनों प्रकार की क्रियाओं में होता है।

:न: वत्स वत्सपाल सब स्वापर जागि जैने उठि बैठल ।

:ल: उच्चाया पंतम गाइला गीत i

श: परि परणाम क्यति भुनु नाइ ।

म: डाके रे गोपाल प्राण गयो काहा लागि।

तुलसी दास की माजा में त्रन्यपुरुष के निम्नलिखत रूप प्राप्त होते हैं :-

क: ऋस कहि को पि गगन पर घायल।

: इमर्षि दिख्ल कर् कुटिल कर्मचंद ।

ग: विप्रन्ह क्हेउ विदेह सन जानि स्गुन अनुकूल ।

१- तु०मा० पृ० १३६

२- घं०ना० पू० प

३- यही पृ० ५८

४- वही पु० १६५

ए- वही पृ० **६**

६- तु०भा० पृ० १३८

गविमावनाव

जािमा तथा पूर्वी तिसं में मिष्या नास में उत्, तट प्रया ना संयोग रिया

उत्तम् हा

शंतरिय तथा शाक्षा देव की माणा में - बन्, -बनो, इसी, -कनो तथा -वब प्रत्यम की योग कर बन कास की क्रिया की रुना हुई है। तुंसियान ने भी उस ढंग का प्रयोग दिया है। जना-

- क- लामो लेमने बीचन राखनी ।
- ल- लागो स्तमागे महव।
- ग- लामार माण्यक महिला कि बहुव i
- .घ- कि राज्य समागीक रूप पर**स्ट्रा**।
- ह गोला तत्य वला वला वयनो ।

मधान पुरा प

प्राचीन अविधा में गर्भन्दुंक्ष के भविष्यत काल की प्रकट तर्भ है लिए -एवं, -एवं, -एवं, -एवं प्रत्यय का जीन किया जाता था - क्या:

त- तुह भग नाति वरिषे । त- तुह पिर हुआ रहव ।

बन्य पुरुष

प्राचीन अविष्णा में इस पूरित के लिए -इन,-इवा,-उदे का प्रकार का योग दिया में किया गया है। यथा- क- गरु है कि वाल गाडि। स- महेशक की ये गूंजा दिन गारव। प- शीकृष्ण औरि समामध्ये रुक्तिमुगीहरूम विहार नृत्य परम को तुँ परता।

शबाई- बंब्सा० पृष्टे १६ ७- वडी पृष्ट १९ १- बंब्सा० पृष्ट १६ २- वडी पृष्ट ३० ३- वडी पृष्ट ५८ ल- इसके योग से निष्यन्न शब्द पूलिंग एवं स्त्री लिंग में पाये जाते हैं -यथा वाचक , नाटक

लती- ती पूत्यव दा सम्बन्ध सह प्रत्यव त ते + भावताचक -४ -ई ते है । यथा-विलमति पूलत

अत - यथा धानत**ए**, जानत टूटन नावत

वन, - न प्रत्थय के योग से मानवाचन द्रियामूनर - विश्वापर रानत हैं। यथा-सेलन । तारन वंदन, गहन ।

बन्त - इस प्रत्यय की उत्पत्ति संस्कृत -अंत :इतृ: मे है। इसके उदाहरण इस प्रभार है - बुक्तिने, करिनेत

ना- यह प्रताय - जन- न के तिस्तार है और उनमें -ता के तीग से निष्यन्त हुए हैं -यशा: मायना, सब स्ताना, ठगना

नी- यह मी बन न के निस्तार है तथा इनो निष्यत्व शब्द वस्तु का लघु क्य प्रवट करते हैं यथा- गोवानी ।

6-	मा० वा०	≂ \$ _.	१०- वही	पृ० २ ६२
2-	वही	१०१	११- वही	835
3-	वर्षी	६ त	१२- वही	₹5
8-	70	84	१३- वही	359
Y -	वही	300	१४- वही	630
4-	वही	303	१५- वही	00 \$
10-	वही	980	१६-न० ना०	8८
C-	वही	309	१७- वही	85
-3	- वही	782	१८- वही	ξo

ा-यह प्रत्यय भिन्न भिन्न भी प्रण्ड वस्ता है। - ात्म स्वार्ण प्रयोग भी होता है, गुरु ला प्रवट करने है जिल भी उनका प्रयोग निया गया है। यता- तोपा, जंजूला

वाइ-इस प्रतान के योग से मंत्रा इनं शिक्षण प्रवर्ग से मानगावक संशापद तथा दियाणात तिश्च्य पत विष्यान तीते के वया-मेदाई, पालटाई, मिलाए, मेदाई, तोवाह

शार-हम प्रत्येय से ब्युवाचन गुंलपन ित लोग है जना- जोसीर, हिरार, टंपोर, कनकीर

इयप्रत्या ने मानवाचन संतासं तन कि तथा : विकासी। alti-

-जारि-जारी इन प्रत्युयों में ज्युवाचक तंता पव निष्यना होते हैं जशा-क्तिर्देश मंग हैं

का प्रलान से गुणावाचक पत िल लोगे के -लगा: १५ १६ वयाल, गुणाल। -आस

१- माञ्च० पृ०२६३ E- MONTO GO NO २- वही १०- यही 8.35 21 ११- वती ३- वही €0 5.35 ४- वही १२- वही 630 ५- वही २६० १३- मनावा० 618 ६- वही १४- वही 935 CP वही १५- वही éo. 613 १६- लंबना द नहीं \$0\$ 88

- वाली इन्ले पून्याकी गंतायह विष्यन तीत के तथा- गोवाली
- -इन-इनी हा प्रत्या से स्वीतिय का तथा है। ज्या- नंकिती, नाहिती, विभाविती दुखिती जातियी।
- -क-त्व, इक इस प्रत्य के, वात ते संज्ञा पद नाम के लग- तायके, सांबद गांगिक
- ट किसे गोग से भावगायल क्या गरूप वस्तु तोयल वंशारं वसती है-त्या: पाट, ज्यार, जोल
- -त इस प्रत्यय ो भाववापक संज्ञा- **यह** वनते हैं वशा- लानत, जानत, रूप १५ टूटन, शावत
- -ति धने प्रोग् य पार्तुकों ने नहेंपान का दिवा हुमंत रूप वृत्ति प्रथा-विकास
- -स इस प्रत्यय से कुछ संसा स्वं विश्वाम पद ानते हैं यथा: हर एहं २० धायल, भारत, उपारत

°- ITOTTO	The ser	
१- गा०वा०	-	११- वही पु० ३३
२- वाही डांवन	ार्णा० २५	१२ वही ३३
३- वही	पु० ३६	१३- मा०ना० पृ० ३००
४- नती	yo 44	१४- वर्ती पृ० ३०३
५- नही	पु० ७	१५- वली पु० २६०
र्क गरी	पृ० ६	३०१ व्यान्ति स्टेन
७- वही	पृ० २६	१७- वटी पृ० १५
८- तभी	पु० २६	१६- माव्वा० पृ० ४६
६- माठवाठ	पु० २६८	१६- वती पृ० ४६
१०- वंब्नाव	पृ० २⊏	२०- अंग्ना० पृ० ६६

- गौर

प्राचीन आभिया में प्राणी त्यून के तिह -गौट प्रत्यय हा

पिका प्रयोग होता था । गौट ग पंत्रेष तं० गौक ते है ।

यगा- चारि गौटा ।

- जाक न्यूड व्यवत करने के लिए -जाक की घोग मंता शब्द में किया जाता था - यथा - एपिजार ।

१- मा० वा० मृ० १३२

२- वशी पृ० १३१

उप तं हा र

संस्कृतिक एकता

वैदिक धर्म और संस्कृति के साथ साध विष्णाव धर्म का प्रवेश असम में हुता।
रामायणा, महामारत आदि प्राचीन गृन्धों में इस देश में प्रचित्त धर्मी तथा संप्रदायों का विशेषा विवरण प्राप्त नहीं है। नरळ, मगदन, मी ष्मक, वाण आदि इस देश के राणा थे, जिनका उल्लेख संस्कृत साहित्य में मिलता है। यदि हम परश्राम जारा ब्रह्मपुत्र अवतरण की कथा को सत्य मान सक्ते हं, तो असर यह स्पष्ट प्रमाणित होगा कि असम में आये सम्यता तथा संस्कृति का प्रसार हो गया था।

प्राण्योतिषा-कामक्य प्राचीन काल से ही उस महादेश का लत्यन्त प्रसिद्ध स्थान था, जिसका उल्लेख महामारत के समा पर्व, प्राणा पर्व, तथा अञ्चमेघपर्व में गिलता है। कालिदास कृत रेष्ट्रवंश महाकाच्य में प्राण्य्योतिषा-कामक्य नाम का उल्लेख है स्वयं कृमार जज ने कामक्येश्वर का अमिनंदन किया। हर्णवर्धन ने काम-क्येश्वर माध्यरवर्धी का अत्यन्त वादर किया लीर दौत्य संबंध स्थापित किया। हर्णविरित में माष्यर वर्धी का विश्व चित्रण हुआ है। उत्तर मारत के जनेक राज्यों के पतन के पश्चात् वहां के आर्य निवासी असम आर्थ और यहां आकर उत्तर मारत के समस्त तीथों की स्थापना की, जिनका दर्शन समस्त तीथों के फल को प्रदान करता है। ह वीं शती के बनमाल देव को लद्यीपति, गोपीवल्लम श्रीकृष्ण को राजा हजीरवर्धी के उपमान रूप में उपस्थित किया गया है। राजा रत्यपाल के ताम शासन में विष्णों को पुरु जीत्तम तथा जनादेन कहा गयाहि। जभी तक प्राप्त ताम पत्रों आरा यह प्रमाणित होता है कि चौथी शती से व लेकर १५ वीं शती तक असम देश में विष्णों कम से विष्णों पूजा चल रही थी।

गौलाघाट जनपद के बन्तर्गत देवोपानी के निकट विष्णुं की एक पाणाण मूर्ति पार्थ गई है जिसके दूसरी और मगवंत नारायणार शिलामूर्ति लिसा है। पुरातत्वर्शिक बनुसार यह मूर्ति ध्वीं शती की है। डिब्राइ के निकट एक प्राचीन मंदिर में विष्णुं की पीतल की मूर्ति पार्ड गई है। अञ्चकांत गों हाटी की अनंतश्यन विष्णु मृति १० वीं शती की है। इनके अधिरा अतिरिक्त विष्णुं की अनंक

लनेक प्रतिमारं इस प्रदेश के विभिन्न स्थानों से प्राप्त हुई हैं। चरित युक्तवों के बनुसार शंकरदेव जिस समय बरदीवा में कीर्तन घर की नींच बुद्धा रोष्ट के उन्हें चतुर्मुंज विष्णुं की मूर्ति प्राप्त हुई।

का तिका पुराण तथा यो गिनी तंत्र में जैनक देवी-देव की पूजा का क्रम दिया गया है। किन्तुं दीनों ही गुन्थों के अन्त में विष्णुं का ग्रेस्डस्थ स्वीणार विधा गया है। महापुरुष शंकादेव की दृष्टि से का तिका पुराणा में विष्णुं महात्म्य का प्रतिपादन हुंवा है।

योगिनी तंत्र के रचियता ने वश्वक्रान्त तीर्थ बीर व्यूणिमव, रीत्र, का अत्यन्त निव्य वर्णन क्या है बीर गूंध में कई स्थतों पर विष्णु की कामरूप का प्रवित्र के देवता स्वीकार किया है। विष्णु की पूजा गणेश, सूर्य, हिन, दुर्गी तथा लक्षी-सरस्वती के साथ कामरूप प्रदेश में होती रही। उनकी पूजा के उपरांत पृथ्वी, ग्राम, देवता, लोक्साल उन्दू, व्यंत, लिंग, नवगृह, दिक्साल, वष्टवसु, श्लादश रुद्र, मरुद्रगण वप्रादि वस्य मत्स्यादि व्यतार सर्व देवी-देव बादि चराचर ज्ञात की पूजा होती थी। ये देवतागण मगवान विष्णु की विमूति के क्या-प्रत्यंग स्वरूप हैं -विष्णु के जितिस्वत इनकी पृथक सवा नहीं है, वत: ये विष्णु से मिन्न विता नहीं है। शंतरदेव ने वन्य देवी-देवता की पूजा की निर्णय किया है - कृष्णा से मिन्न वन्य कियी देवता की पूजा नहीं करनी चाहिए।

विष्णु-पूजा का कालिका पुराण में विश्वेषण किया गया है, जिकि बर्नुवार विष्णु के विश्वे राम, कृष्ण, ब्रह्म, श्रेम जार गौरी की पूजा करनी चाहिए, किसी भी दशा में श्रेम जीर गौरी के पूजा की कालेका नहीं की जा वक्ती है। करम में प्रचित्व के विष्णाव पत में वासुदेव की पूजा में पंचेदवताओं की पूजा की जाती थी जिस पर मातृ की हाया थी। शंकरदेव द्वारा प्रचारित सौतहवीं श्री का नय विष्णाव धर्म बन्य दवी-देवताओं के प्रमाव से पूजांत्वा अप्रभावित है। मागवत पुराण ही स्केश्चर वादी करमियां विष्णावों का जाधार है। यदुंबुल नंदन कृष्णा, गौपाल, गौचिन्द की हस संप्रदाय के सर्वस्व थे। असमियां विष्णाव सम्प्रदाय में राधा अथवा नरनारी को कोई वादरणीय स्थान नहीं दिया गया है।

रक शरण वर्म

शंकरदेव द्वारा प्रवर्तित वैष्णव मत एक शरण नाम से प्रसिद्ध है। प्रियतम कृष्ण ही युग में क्वतीण होते हैं। कृष्ण की जर्मना ही विष्णू की उपासना है। एक शरणीया ईश्वर के शरणागत हो जात्मलमपेण करते हैं। वे जन्य देव-देवी की पूजा नहीं करते हैं। शंकरदेव ने स्वयं कहा है कि वैष्णामों को विष्णू से मिन्न देवता की पूजा नहीं करनी चाहिए, उन्हें अन्य देवता के मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए तथा अन्य देवता को समर्पित नेवेथ उन्हें न गृहण करना चाहिए। यदि किसी ने हस नियम का पालन न किया तो मिक्त दूषित होगी। असमिया वैष्णव मत में विष्णू पूजा तथा अन्य देव-देवी की पूजा के संबंध में पूजक मत व्यक्त किया गया है। एक शरणीया मत के पौष्णकमट्टिंव नामक विद्यान ब्रावण ने भी पंचयक्त का विरोध किया है, यदि इस प्रकार का निवदन किया गया तो उससे एक शरण धर्म क्लुष्णित होगा, केवत विष्णू की उपासना द्वारा समस्त देवतागण संतुष्ट होंग

दीदाा

वल्लम संप्रदाय की मांति शंकरदेव के लनुयायी 'शरण' प्राप्त करते हैं। नाम लेने के समय राम कृष्ण नारायण हरि नाम का मंत्र दिया जाता है - मूल से लेने के बार नाम उच्चारण कर हुदय में ईश्वर का ध्यान करना ही प्रार्थना का नियम है। शंकरदेव चार नाम का मंत्र - रामानुंज के नारायण' और विष्णूं स्वामी के तीन नाम के मंत्र राम-कृष्ण-हरि का सम्मित्रण जान पड़ता है।

शंक्रदेव ने विच्णा मिनत के लिए अपने शिष्यों को अविवाहित रहने की आशा नहीं दी क्यों कि वे स्वयं दो बार विवाह कर चुके थे। उनकी मृत्यु के उपरान्त माध्यदेव इस संप्रदाय के घमेंगुरु हुए और उन्होंने केवलिया नामक सन्यासियों के पंथ की सुष्टि की। सत्रों के निकट होटे होठे घरों का निर्माण कर केवलिया रहने लगे। उचेर भारत के कतिपय संप्रदायों में इस प्रकार सन्यासी थे। असम के वेष्णाव मत में तुलसीदास जी की मांति दास्य च मिनत का समर्थन किया गया है। शंकरदेव ने अनक ग्रंथ में अपने लिए कृष्णार किकर का प्रयोग किया है। एक शरण घर्म में मृति-पूजाकी प्रधानता नहीं है। प्रत्येक घार्मिक अवसर पर ह शंकरदेव द्वारा रूपांत रित मागवत को गद्दी :बंटा: पर स्थापित कर उसे नेवेष तथा मिकत बादि निवेदित की जाती है। इसी प्रकार वल्लम संप्रदाय में भी मागवत को उच्चतम स्थल पर प्रतिष्ठित कर शिष्यों को शरण दी जाती है।

शंकरदेव शूड थे तथापि उन्होंने जनक ब्राह्मण शिष्यों को नाम मंत्र दिया था-इन शिष्यों ने गद्दी पर स्थापित गृंथ को ही सेवा अपित की थी। विरोधी ब्राह्मण पंहितों ने इस नियम का घोर विरोध किया। शंकरदेव ने उत्तर दिया कि प्रभु का नाम मंत्र देने में किसी प्रकार की बाघा नहीं है। स्क शरण घमें के अंतर्गत केवितया संन्यासी ही हैं सन्यासिनियों के लिस स्थान नहीं है - पुरु जो की धार्मिक समा में नारियां योगदान नहीं कर सकती हैं ,महिलाएं ह चौताल में निर्दिष्ट समय पर नाम कीतेन करती हैं। कहा जाता है कि शंकरदेव ने किसी भी स्त्री को नाम मंत्र नहीं दिया था।

एक शरण वर्ष में मनुष्य और हैश्वर के मध्य तेन दन की व्यवस्था नहीं है, इसमें विल और सहज साधना के प्रतिकार की भी आवश्यकता नहीं है। यह वर्म आत्मिक विलास पर अधिक बल देता है -जब मनुष्य ईश्वर को काल-मन समर्थित कर देता है तो उसकी आत्मा को नूतन मार्ग मिलता है। जब जीवन ईश्वर को पूर्ण क्ष्मण समर्थित हो जाता है तो सांसारिक आकर्षण और इंद्रियजनित सुस्र की बंद्या मनुष्य नहीं करता। इस पर्न की दीचा। कान में धीर से कह कर सनहीं की जाती थी। तो को-त्मा विला विज्ञा में इसकी घोषणा की जाती थी। इस वर्म के नवीन अनु- यायियों को राजाओं में इसकी घोषणा आतंक अश्वीत आमीद आदि की चिंता न थी।

वल्लम संप्रदाय में गुरु-पूजा की प्रणानता के किन्तु अतमार ने काल संप्रदाय
में बतका पूर्णतिया लगाव है। ने क्याब मत के नाना प्रचारतों के पथ्य केतल इंटरेंदव
की लगने जीवन-वाल में महापुरु का के नाम ने प्रशात को चुंते के लिए जाएण उनके
प्रचारित धर्म का नाम महापुरु किया हुंग। मारत के जि भन्न लंकों के महारक्ताओं
के लिए लम्मान्तूचक उपाधियों का प्रयोग हुंता है। जुंगी दाव क्यांकार जिल्ल जगपित
से बहंदुत किया गया। सम्मान्तूचक अर्थ में महापुरु म इन्ह वा क्याबार जिल्ल जगपित
नहीं ज्ञात होता है। बल्लमायाय ने कृष्ण की कृमा वारा ही खुने वा हान प्राप्त
किया, किसी मन्त्र को उन्होंने गुरु न स्वीकार विज्ञा, विद्धे इंटरेंग ने हुष्ण के
क चरणों का चितन करने के पश्चात् गुरु चरणों का चितन किया है। महापुरु ज
माध्वदेव के गुरु शंकरदेव थे, इस समी वैष्णाव स्वीकार वरत हैं।

राजन तिक संबंध

लसम का प्रदेश प्राचीन मारत का लुंदूर पूर्णी मान है। रामानण महामारत और लन्य पुराणों में अवना यही नाम मिलता है। निसंदेह प्रानल्यों तिल नार्य सम्यता के बाहर था। यहां के राजा मनद जो मेंतल देह हा राजा कहा गया है। महामारत के जन्य स्थल पर लसम अपूर राज्य कहा गया है गहां व है राजा नरक और मुरु थे। इसे किरात और चीन देश का सीमांत मानते थे। उसर विलार तथा उत्तर लंगा का अधिकांश मूमाग प्राचीन कामलम राज्य का अधिन लंग था। राम राज्य से तैकर मुंगत साम्राज्य का किसी मी मारतीय साम्राज्य के लन्मीत प्राचीन असम अंतर्मेंक्त न हुंखा।

शनान्त की ग्यारक्षीं शबी में जलोमांनेवर्तमान पूर्वां तर लग्न जंबल में दिली-पार लोकेन्द्र स्थिर कर नवीन राज्य की स्थापना की- नागा नरा, वाराही, बूटिया जोर कलारियों से बीच-बीच में संघर्ष होतारहा । मुख्यों के राज्य के दिलाण जलोमों और कलारियों का युंद्ध हुंखा । मुख्यों की संघीय शक्ति ल्यन्त निर्वंत की जोर उनके राज्य कोटे कोटे थे । इन युंजों का कुंग्रमाव उनके राज्यों पर भी पढ़ा, फलस्व स्थ दिलाण पार कर मुख्यां शामन समाप्त हो गया । व उत्तरपार के विशेषात: रोटा लंबल प्रतापी, वीर मुख्यों ने उलोमों की अवीनता स्वीकार की । गोड़िश्वर तथा कामश्वर उपाधि घारी अनेक प्रभावहीन राजाओं ने कामरूप में लोटे लोटे राज्यों की स्थापना की । नीलांबर के पतन के उपरान्न काम मां में हैं भी केन्द्रीय राज्यशिवत न थी। तहा उस प्रदेश के पश्चिमी मांग में हुँमों में पुन: कृतित का प्रयोग
कर राज्य स्थापन किया क्यों कि देश में त्राज्यता की स्थिति तो नवी थी। यदि
सुंख्यों ने शन्य राज्यों के साथ गठनंघन किया लोता तो मुख्यां राज्य प्रत्स क्षितशाली और अध्य राज्य हो गया लोता । किंतु कन मुख्यों में स्त्ता ता तमाय था
जितने कोच राज्य शक्ति ने वनका दमन किया । विश्वसिंह और शिवसिंह ने कामतापुर राज्य पर विजय प्राप्त दी और कामतापुर के शायत बुंतीम दो लन्य स्थान पर
ते जाकर वघ करा दिया।

वका रियों के प्रबल उपद्रव के कारण इंग्रेटन पंग्न नकी तल नहीम राज्य में रित । कोच राजवंशानती के वनुंतार निश्न सिंग्न ने लगम का लरने के क्लू गउगाऊं की बीर विभिम्स हुए किन्तू यूंब सामग्री की न्यूनता के कारण वे क्मतानगर से बीट बाए। बहोम इतिहास के बनुंबार निश्विणंह ने स्वयं बहोम राजा की निश्निता स्वीकार की। यह विश्विणंह का असम विभिन्ना काफ ल रहा ।

सीतावीं श्री में समस्त उत्तर भारत मुंगल राज्य शक्ति के लघीन हो चुंना था,
हिन्दू राजाओं ने मुंगल सम्राटों की वश्यता स्वीकार कर ली धी । किन्तुं कामरूप
राज्य पर मुंगलों का लिघलार न हो सका । मुंगलों का विश्वास था कि लसम
पर आक्रमण के लिए जितन नवाब गए उनमें से कोई जी कित न लीटा । कोई युंद्ध
में मारा गया, उस स्थान का जल लीर वायु विज्ञानत है, इनके चुंगे पर्वतों पर जुंटिल
ढंग से लो हुए हैं। मुंगल इतिहास में कामिया इंद्रजालिक प्रक्रियाओं का विश्व विश्वण
किया गया है।

त्सिया भाषा भारतिय आर्थ परिवार की माणा कोते हुए मी चारों बोर ये ब्लार्थ माणाकों से धिरी हुई है। इसकी स्थिति देखकर ऐसा व्याता है की जातिमा एक बच्चे द्वीप के समान हो और उत्तर चारों और उत्तर्य भाषाकों का उदिध हो-- तत्तर भारतीय आर्थ माणाकों की त्येपता अविभवा दन नाना देशों की माणा से अधिक प्रमावित हुई। यथिप सुदूर पूर्व देशों से बोगों ने ब्लम में प्रमेश किया, तथापि व्यक्तिया के स्वक्रण तथा पतन में कीई उत्केलनिय परिवर्तन न हुंखा। यथ्य देश में बच्चिक संख्या में जनसमुद्धार ज्यम बाया और आर्गोंक इस प्रदेश के निवाली हो गए। मौलद्धींश्वती के पूर्व निविध बोटिएर सारित्य का सुजन हुंखा। सारित्य का माणा का प्रमाव वहित्य निवर्ण माणा का प्रमाव दंत्य जनमाय पर कम पड़ा। अत्या होते इस मी गौली माणा का प्रमाव दंत्य और मूध्येन्य म्वनियों पर पड़ा- कमियां दंत्य जनारों का उच्चारण मूर्वन्य म्वनियों की मालि होता है। बहुवचन के प्रत्यय - विलाव-गिला-गंल-गा-ला का ग्रीत लनार्थ भाजाएं है।

वीनी पर्यटक ए क्षेत्रसंग के बतुतार तागरूप राज्य की माणा और मध्यदेश की माणा में अधिक साम्य था। जाज भी उत्तरी कंगाल तथा पश्चिमी असम की लोली एक दूसरे के अधिक निकट है। कंगाल तथा असम की माणाओं की उत्पत्ति माणी अप्रमंश से पुर्वे। भाजातत्व की दृष्टि के असमिना माणा का संबंध अवधी तथा विलारी से अधिक है, कंगाली माणा के प्रभाव से असमिना मुक्त है।

प्रस्त प्रबंध में शंकरित माध्यदेत सूर्वास तथा त्लसी दास की माञा का माञा-नैज्ञानिक तथा व्याकरणिक अध्ययन प्रस्तृत किया गया है। उससे असमिया तथा किंदी काव्य की भाषा का समानता प्रकट होती है।

एंतरदेत तथा माध्यदेव के अविकाश परिणों की माणा द्रवेतुंति है। द्रवित्ति का जो अब हमें अविभाग विष्णान वाजा में मिलता के तह अविगढ़/जागरा/मधुरा तथा मन्तरमुंद घोलमुंर की प्रविता द्रव बोली से किन्ति पृथक है किन्तू इतका

निश्चित है कि इस माजा का संबंध गौरीनी है विक्षित ब्रजमाना और जनशी से है। मेथिल किन विधापित की माजा को बादर्श स्वीकार कर पूर्व भारत के कवियों ने एक मित्रित माणा का प्रयोग किया। भेषित माणा की विशेषाताओं की मिनि पर क्रव्युति का विकास हुना, को त्रव तथा आई। शाष्ट्रा के भी लोक शब्द ल्प प्राप्त हुए। इस माजा में नित्तमिण कुल्या की प्रवतीला का मनमो हक चित्रण हुं । इतिलय भी इस माणा का नाम क्रजतृति प्रचरित हुं । क्रजतृति में तत्सम शब्दों का भूगोग प्रचुर परिमाण में किया गयाहै, वहीं वहीं वत्सम शब्दों के वाहुला के फलसाय विना की गार प्रवास में रामा हुँ विन्त लंद सुर और लनुप्रामों की फंकार से तरंभित हो उठे, जा तरण वन शब्दों दे वर्ध न समक ने पर मी, हकते नहीं हैं -माजा का सुनि गाष्ट्री तक मन दी वन्तूर्ण स्म वे मुंग्ध कर ोता है। ब्रन्तु ते में की तत्त्रम शब्दों का प्रमोग दे के शनकत किया गया है। नंस्कृत, प्राकृत और वप्रमंत का क्षेष्ट प्रभाव प्रवत्ति पर पड़ा । वरवी तथा फारसी है नेवल दो तीन शब्दों का प्रयोग शंकरदेव तथा भाष्यदेव ने विसा, किन्तुं सुरदास ार तुलको नाल ने सेनड़ों निदेशी शब्दों का प्रयोग सूरसागर और रामन रितमानस में किया है।

व्रजन्ति की व्यंजन घननियां ब्रजनाचा के अनुसार हैं। केवस दूक ही बातों भें भिशेषाता है - जैने ह - कार का उच्चारण कि-हीं जिन्हीं स्थलों पर -स-कार के अनुवार था, अ-वार तथा स-कार के उच्चारण में मिन्नता भी किन्तू असिया में श-कार और स-कार का उच्चारण -ह-कार देशा होता है था। लंतस्य व-कार पूर्णतमा लुप्त नहीं हुआ था। मेथिल माला में ज-कार का उच्चारण स-कार के जुनार था। प्रवृति में छा-कार का उच्चारण ख-ार के नमान था। शंकरदेव ताना माध्यदेव की माजा में शकों के वहुवचन वा अप स्तांत नहीं है। साधारणत: तव विताक, चय, जाक आदि का प्रयोग वर शत्य को ब्ल्वयन वना दिया जाता है।

शंकरदेव तथा माध्यदेव की भाषा में सात कारकों का प्रयोग हुला के। कती की निमिषत है का अधिकतर नोम देखा जाता है। हिनीया और नतुंथीं की रो को - के - कि विभवितयां है। तृतीया की विभिवत - हि -हि-से-से,

-सो, - तें हा लोप वहीं वहीं हुवाह । पंचपी की विभिवत - हि-हि-से- -ते वादि है। जाकी की निमिक्त -क। का। -कि -के -की -कर -केरि - रहें। राप्तमी की विभक्ति -ए -हि- हि-जो--मे-मि- वा प्रयोग तुला है। उत्तमपुरु वा सर्वनाम के ये ल्य शंकरंदव तथा माम्बदव की भाषा में निवते हैं - लाम, लामे मीय, मीहे, हामे, मूफ्, मोर, मोहर, हामार लमारि दौर मोड । मध्या पुरुका सर्वनाग के ये लग मिलतेहैं- तुहु,तुहु,तोड,तू तीह,तुह, तुया, तुम, तुंख्वर, तीरा तौर तोहिरि। बन्य पुरुष सर्वनाम के ये रूप मिलत हैं - से, नो, नेहि, तेह, नीय, तहु, तहि, ताहे ताह, ताय, तोक, ताकर, तलु और ताहि। निकटवरी मर्वनाम के ये अस मिलते हैं-उड, जो, औड, जोहि, उहि, उहे, उनकि, यस्क और ऊंहार । शार्वेव तथा माध्यवन के गीतों तथा नाटकों में सम्बन्धानक सर्वनाम के ये लप मिली हैं- ते, यह, यो, यह याथे, बाहार, बाहर और बाह । प्रश्नवाची तर्वनाम के लम हैं - नेह, केंह्रे, की, बीन, कि, वाहे, काह, कान, काहां, कांह्रे लीए लाई। उस बीर मध्यम पुरुष के जिमिन वर्षनामों के बतुसार द्रिया विशेषण पद निष्यन होता है जिन शब्द समूहों का प्रयोग किया गना है वस्तुत: व कारक के पद हैं। की - तें, तिमं, काह, तिये गादि । ब्रज्तुलि में -श्नी :श्नि: स्वं है- :ह: दी स्त्री प्रत्या हैं। जैसे बलौरिनी तथा गलामनी । ज़जलुलि में -स्त्री खिंग व्याक्रणान्यत न नौकर स्वामानु-वानुगत होता है। स्त्री लिंग के बति रिन्ध एमी एव्य पुलिंग हैं।

शंगप्रेय तथा माध्यवेव की भाषा में किया के तीन काल- वर्तमान मूल, भविष्य-हं स्वयम और बहुंबबन के रूपों में पार्थवय नहीं । यतियान और मूलकाल में प्रत्येक पुरुष्य के यह ने विधिक प्रत्येष हैं। वर्तमान काल के उत्तम पुरुष्य के प्रत्येष हुं, कं, वो हं - इस बात के वंतर्गत मध्यम पुरुष्य के प्रत्येष निस्त पुरुष्य के प्रत्येष निस्त के वंतर्गत मध्यम पुरुष्य के प्रत्येष निस्त निस्त पुरुष्य के प्रत्येष निस्त निस्त पुरुष्य के प्रत्येष निस्त निस्त के विश्व पुरुष्य के प्रत्येष निष्ठ निस्त पुरुष्य के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्य पुरुष्य के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्य पुरुष्य के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष निष्ठ के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष निष्ठ के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष नाम निष्ठ निष्ठ के प्रत्येष निष्य निष्ठ के प्रत्येष निष्ठ के प्रत्येष निष्ठ के प्रत्य निष्ठ के प्रत्येष न

हंशरदेव ही भाषा में घातू में अल प्रत्यय का यौग करने से वह अतीत काल की ज़िया हो जाती थी। -अल प्रत्यय मूलत: विश्वष्यणा प्रत्यय है। जल के पति रिक्त इस भाषा में स्व और प्रत्यय था- इ - यह संस्कृत - क्ते प्रत्यय से विकसित हुंगा ने। मित्रकृत काल में केवल -ब तथा वि प्रत्यय का योग घातु में होता था। शंतरित तथा माध्व देव की माधा का वैज्ञानिक तथ्ययन करनेके उपरान्त यह निष्या निकाला जा सकता है कि इन लोगों की माधा तूरदास की माधा से भी ही तुक दूर हो किंतु तुलकीदास की माधा के लिधक निवट है।

सा हित्य

शंगरेन ने मागवत के जिति रिन्त मार्केण्डयपुराण का जाधार हरिश्नंद्र उपास्थान की रचना की । भिन्त प्रदीप की विषय वस्ते गरु हुपराण श ती गयी है । कीर्तन घोषा का 'उरेषा वर्णने खंड ब्रह्म पुराण का पदानुवाद मात्र है । उन्होंने व सिमणिहरण काव्य की कथा में मागवत रचं हरिजंशपुराण का निम्मण किया है । शेषा रचनालों का जाधार मागवत में विणित घटनाएं में देवल राशायण का उ रकाण्य वात्मिक रामायण का पदानुवाद है ।

्रिसंद्र उपारणान तथा रु विमणी हरण काव्य में इंशरदेव ने काव्य के लोंदर्य तृति हेलिए जपनी उपस्त करमना ज्ञालित का प्रयोग विद्याहे। अनिमया विष्णावों की प्रामक घारणा है कि शंकरदेव ने हरिष्टंद्र उपारणान द्वारा की घम के चार स्तंग दिया किया। जनाणित उपार्थान, गजन्द्रोपार्थान, लमून मंधन और मनम्बन प्रतिकालन और दशम रहंच मागनत का कुरु दोन्न उपारथान को टि के काव्य है।

भिक्त प्रदीप, तनादि पतन तथा निमिन्तसिद्ध संवाद में मिन्त तत्व का निरूपण हुता है। जनादि पतन से गुष्टि केलादि के प्रलय का वर्णन है। जनादि पतन के निमान प्राप्त लंस्करण में वामन प्राण का प्रमान क्ल्यन्त लल्प मात्रा में दिखायी देता है। निमिन्न सिद्ध संवाद में निष्णु की माया का स्वरूप, माया से मुन्ति पान के जपाय, परमात्मा में निष्ठा, कर्मयोग, ईश्वर के अनतार तथा मगवान की पूजा विधि का वर्णन है। शंकरदेव का अनतार वर्णन काव्य की दृष्टि से अधिक मुन्दर है। शंकरदेव की कीर्तन घोषा मुक्तक रजना है, प्रत्येक ज़ंड में शताधिक कीर्तन के पर मिलते हैं। धर्म प्रवार, धर्म शिक्षा, जोर घार्मिक जीवन के गठन के निमिच इस सर्वांग सुंदर गृंध की रचना हुई। पौराणिक साहित्य का सबसे अधिक उपयोग इस गृंध में किया गया है। ब्रह्मराण से कीर्तन घोषा का उरेणावर्णन, पद्म-

पुराण से नामापराघ संह की रचना हुई। माजा का लालित्य, इंदों की मंकार सुर का लावण्य, माव की महारता, मिवत की वृद्धता आदि का संयोग की तैनघो जा गृंध में हुं हो। महापुरु जिया संप्रदाय की चार पौष्णियों में की तैनघो जा को सम्मानित स्थान दिया जाता है।

भारतीय वैष्णाव जान्दोलनों को प्रमुख कवियों ने गीतिकाच्य की रचना की। असम में भी इस प्रकार के गीतों की रचना आरम हुई जिससे वैष्णाव मत के प्रचार में लियक सनायता मिली और वैष्णाव मत का प्रचार लियक विस्तृत हुआ। जगमिया गीति काव्य की दी प्रमुख घाराएं- दरगीत और मटिमा है। न्रवीतों की रचना के पूर्व ही असम में भारतीय संगीत शास्त्र की चर्चाहोतीथी। शंकरदेव तथा माभवदेव केपूर्व पीताम्बर कवि तथा दुर्गावर ने अतिमया में विभिन्न रागी में गीत रचना की थी। वल्लमसम्प्रदाय की अष्ट्याम की तैन की मांति इन बर-गीतों का व्यवहार अशिया मकत गण निर्घारित अनगर पर करते हैं। शंगरदेव ने दो सी चालीस वरगीतों की रचना की थी किन्तू आज उनके तीस पतीस ही वरगीत प्राप्त होते हैं। वरगीत मासारिक प्रेमव्यापार स पूर्णतया मुंबत, बाध्या-त्मिक उपासना फ्रांग का गीत है। केवल शंकारदेव तथा माध्यदेव छारा रचित वधीर गीतों को ही बरगीत की संज्ञा दी म गई है। सूरदास तथा तुलसीदास तथा अन्य भवत कविवाँ के कतिपय गीत क्सम में प्रचलित हैं। सूरदास के सूरसागर तथा तुलनी दारा की विनवम जिला के पदों के साथ शंकरदेव तथा माध्यदेव के बर-गीतों की तुलना की जा सक्ती है। इन गीतों में वंदना, स्तुति, उपदेश, जागरण तीली, मोजा के गीत, भूषणा हरण के गीत और दिधमंथन का वर्णन है। वाणिया सत्रपारियों सत्राधिकारों के बनुसार उत्थान, वायन, स्वान, और नृत्य-- चार विशिष्ट **घाराएं हैं।** शंकरदेन की मटिया पहत्त्वपूर्ण रचना है। प्रधम तीथी-नात्रा करते समय अनेक माट शंकरिव से मिले थे - व्या गुरु चरित सं क्तका प्रमाण मिलता है। शंवरदेव द्वारा रचित रु विभागी हरण नाटक में पुरिम तथा हरिदास नामक दी भाटों का वर्णांग मिलता है। शंकरिव ने देव मटिमा, राज मटिमा तथा नाटकीय मटिमा की रचना की । लंद तथा शब्द याजना, गामीय, जनुप्रासों की प्रतिष्वनि इन मेरिमालों का निशिष्ट लंदाण है। बर्गीतों की माना में ही मिटमाओं की भी का रचना हुई है।

शंकारित के नाटकों के प्रमुख लंग - गीत, श्लोक, मटिमा, क्योपक्थन और नृत्य ो। नाटकों में दी प्रकार के गीतों का सन्निवेश हुआ है - साधारण पयार तथा भारतीय राग संगीत के गीत । नाटकों के प्रवेश गीत का जारंम सिंदूरा राग से हुआ है तीर मध्य में सोल त्रमण ताल का व्यवहार हुआहै। करुण द्रंदन जधना निलाय के लिए पयार का योग नाटकों में विया गया है। नांदी पाठ के अतिरितत कथा का आशय प्रकट करने के लिए रांस्कृत श्लोकों का प्रयोग शंकर्षेव ने क्या है। नांदीपाठ के दो श्लोकों में परम पुरुष राम कावा श्रीहुल्या की रहाति की गयी है। गीत बौर मटिमालों के सदृश शंहरी नाटकों के वशी-पक्षान की माना क्रज्नुति है। त्रीकृष्ण तथा गतित वर्ग का गुणनान ही शंदरिव के नाटकों का प्रमुख उन्तश्य है।

लोक मानस

प्राक संसरी वृंग में ब्रालण धर्म का विस्तार तसम में विषक था - माध्व बंदलि, हेम तरस्वती तथा कविरत्न वरस्वती न तंस्कृत मं लिख्ति मौराणिक वाहित्य का जन्माद अवनिया भाषा दें किया - दिन्तुं धार्मिक एउता पर कियी कवि ने बल न दिया। शंकरदेव ने वर्वशाधारण के हेतुं वोष्णास्य वाष्टा में चितानद-धन-स्वरूप के रूप की प्राकृतजनों के सम्मुल प्रकाहित किया जिलेक कालस्वरूप ब्राह्मण थां वा प्रभाग जाम में वम हो गया । शीमद्वागनत के संगुण हम श्रीकृष्ण की लीयाधारण के सम्मूल प्रस्तुत किया गया - उनकी विविध लीलाओं का अभिनय भी संही भी प्रवार का रक मुख्य सामन था। निरनारों लोगों ने बाध्यात्मिकता लीर जीनन वहींन की सनकान की नेप्टा की । नाम-धरों की स्थापना डारा भी वरिया जातीय जीवन को लिक उत्साह और नलमिला। अतम प्रदेश के अनेक प्रसिद्ध सत्रों में अन भी लादशै तथा बनुशायन अनुप्रणा स्म में वर्तमान है - इन्हें देल का ही जातीय जीवन की स्वता और श्रृंखला का अनुमान दिव्या जा सकता है।

शंक देव ने मिवत का बार प्रत्येव प्राणी के लिए खुला रखा था, किन्तु कालात र प्रतिदिया शील शिवतयां ने उनके इस उच्च आदर्श की वनहेलनाकी -- वसम की जनाय जातियों ने शंक दिव के मत को ग्रहण किया। माध्य देव ने नामधी जा ग्रंथ में

गारों, मोट, यवनी बादि जातियों का उल्लेख किया है जिन्होंने शंतरदेव द्वारा प्रचारित मिनत धर्म की अंगीकार किया - पूर्वोत्तर तसम के मिरि असम : अहोम: तथा कहारियों ने भी शंकरी मत को स्वीकार किया।

शंकरदेव तथा माध्यदेव के गीत आज भी आम के प्रामों में गाय जाते हैं। इनके नाटकों का अभिनय, नृत्य-गीत आदि द्वारा अवकाश के समय गांचों तथा नगरों में किया जाता है। शंकरदेव ने चिहन मात्रा अभिनय के लिए सात वैकुंठे का चित्र वस्त्र पर चित्रित किया - इसके अतिरिक्त श्रीकृष्ण की वृंदावन लीला, वस्त्र में जुनवाया, नामधर-मणिकूट तथा सत्र की लघु कृटियों में शंकरदेव की चित्रकला का नमूना प्राप्त हो सकता है।

म वित

माध्यदेव मिनत को परम निर्मल, वानंद रसम्य, घन, जन, साधन, फल बादि का मूल कहा है, हरिनाम की तेन पर समस्त प्राणियों का विध्वार है, मिनत सब धर्मी से अच्छ है। नाम स्मरण ए करने से व्यंख्य महापाप का दो चा नष्ट होता है। मनत तथा ज्ञानी कमी भी पाप मार्ग की बार अग्रसर नहीं होते हैं यदि प्रमादवश उनसे पाप कमें हो भी बाय, तो हरि नाम का उच्चारण करत करत उस पाप बासना का मूल दग्ध हो जायगा। जब तक मनत प्रभु के नाम का चितन करता रहेगा द्विता उसके समीप न वा सकेशी। है इनर का निरन्तर चितन करने से प्रेम लिंगणा मिनत का उदय होता है और संसार से विरन्तित होती है। प्रेम की प्रगादुता के पश्चात् कृष्ण के स्वस्थ का ज्ञान प्राप्त होता है।

शंकरदेत ने गीता से एक शरण, भागवत पुराण से सत्संग तथा पद्मपुराण से नाम धर्म ले असम प्रदेश में मणित का प्रचार किया । शंकरदेव के नाम धर्म में नवधा मित के अंतर्गत अवण तथा की तैन को अच्छ स्थानदिया गया है। नारायण के जिति रिक्त अन्य देवता की उपासना जड़ की उपासना समभी जाती है। गोपी बल्लम कुच्या की अवण-की तैन द्वारा विशेषा रूप से उपासना करनी चाहिए। पुष्टि मनित के खेळा श्रीकृष्ण हैं। सूरदास ने मनित में अनन्यता को सर्वा विक महत्व दिया है। सूरदास बादि मनतों की रचना में युगल स्वरूप तथा राधा के स्तुति के अनेक पद प्राप्त होते हैं। सूरदास ,प्रमानन्द तथा तुलसीदास ने सगुणा हैश्वर की उपासना का मंतव्य अपनी रचनाओं में प्रकट किया है। सूर ने अपने अनेक पदों में ज्ञान तथा योग मार्क का सण्डन कर विधिनविहारी कृष्ण की मनौरम लीला की महिमा का प्रतिपादन किया है। मनित द्वारा ही मनुष्य परमात्मा के समीप हो सकता है। बात्मसम्पेण के पश्चात् मनित का सगुण माव लुप्त हो जाता है। निर्मुण वादी मनत सदैव श्रवण, कीतेन और स्मरण कर सकता है। शंकरदेव ने मनित रत्नाकर में सख्य तथा बात्मनिवदन मनित का प्रतिपादन नहीं किया है। असमिया तथा हिंदी वैष्णव कवियों ने केजल मनित का समर्थन किया है, उन्हें मुनित की कामना नहीं है। जो मनत काय-वाक्य और मन से ईश्वर की प्रनित करता है उसे मोद्या प्राप्त होता है। मगवान के लिए जिसके मन प्रेम लदाणा मनित है उसे प्रमु

निर्मुण मिनत विष्णु से बिमन्न रहने के कारण बनिन्धनती बच्चिमिचारिणी होगी। बच्चिमिचारिणी मिनत के बन्तगैत बन्ध देव-देवी की उपासना विजेत है। संसार में मिनत ही संन्धे छ धर्म है। सूर्वास के उपास्य देव श्रीकृष्ण हैं। बच्छाप के मनत कवि हैश्वर के समुण तथा निर्मुण और चौबीस लीला बवतारों में विश्वास करते हैं किन्तु किशीर लीलाधारी कृष्ण ही उनके उपास्य देव थे-- कृष्ण के सहित हमकी रस -शन्ति राधा की मी उपासना की जाती है। बरु मिया वैष्णाव किया ने राधा-कृष्ण की बाल सुलम कृष्टाओं का वर्णन बत्यन्त संविष्य क्य में किया है। माधवदेव ने राधा तथा कृष्ण की कृष्टा के कितमय विश्व बर्गीतों में बंकित किया है। बसमिया वैष्णाव मत की यह विशेषाता है कि उनके नाम घरों में कृष्णा की प्रतिमान तो स्थापित की जाती है न उसकी उपासना ही होती है- राधा वसमियां वैष्णाव काव्य में कृष्णा की ससी नहीं है। शंकरदेव की किसी मी रसाम राधा का नाम नहीं मिलता है।

प्रम मनित की प्रथम सीढ़ी वात्सत्य मनित है। मनित की प्रथम अवस्था में इसी माव से मनवान की सेवा करनी चाहिए। असमिया विष्णाव साहित्य में शृंगारादि रस क्यवा माव द्वारा मगवद् मिनत तथा शांत रस की पुष्टि की गर्ह है। शंकरदेव ने किल्युग में श्रवण-कीतन को मिनत का अच्छ साधन कहा है, बन्य युगों में ध्यान,यज्ञ,पूजा बादि से जिस फल की प्राप्त होती है। वह किल्युग में मखनान के नाम का स्त्रारण करने मात्र से प्राप्त होती है। मागवत ध्ये का मूल नाम-कीतन या शेषा बाचार बादि केवल मिनतके अंग मात्र थे। कमें की निंदा कर हिस्कीतन की अच्छता को प्रकाशित किया गया है। किल्युग में हैर राम हैर राम ही मूल मंत्र है - कीतन के लिस विशेषा विधान की बावश्यकता नहीं है। हिर नामयुक्त यज्ञादि द्वारा समस्त क्तेव्य कर्मों का प्रतिपादन किया गया है।

मायवदेव के अनुसार प्रेमा त्मिका निर्मुण-पिनत अथवा रसमयी पिनत-रसमयो रसस्वरूपा -वर्थोत् मगवत्स्वरूपमूता मिनत है। रसमयो पिनत काव्य, नाटक बादि कलावां द्वारा अभिव्यंजित पारिमा जिक नवरसां से भी अधिक मधुर अधिक देवी प्य-मान तथा परिपूर्ण है। कांतादि विकायक जो रस अथवा माव उत्पन्न होता है उसके पीतर पूर्ण वानन्द की वृद्धि नहीं होती है- किन्तु व कृष्णाकी मिनत सुबसागर है उसका स्वाद अपृत से भी मधुर है जिस मनत को मिनत रस का स्वाद प्राप्त हो जाता है, कृष्ण न चरणों की प्रीति ही उसका स्वा से कह है।

शंकरदेव के इब केलिगोपाल नाटक में गोपी-कृष्ण के संगोग तथा विरह में श्रृंगार रस व्यंजित हुवा है। इस नाटक में श्रीकृष्ण श्रृंगार रस के नायक के रूप में नहीं उपस्थित हुए हैं वे परम पुरुषा जगत के रचयिता परमेश्वर हैं ,उनका रूप, कार्य, शक्ति लोकातीत है ,गोपियां श्रृंगार रस की सामान्य नायिका न होकर वानंदस्वरूप, बानंदपन की स्वरूप मात्र हैं। केलिन्नोपाल नाटक मोदा का साधन था। वसपिया वैष्णाव काव्य में नाना रसों की बारा प्रवाहित हो रही है किन्तु उनके जपर शांत रस का प्रमाव विषक है। किवयों ने विष्णाव धमें के बादिश को शांत कब रस शंकरदेव तथा माध्वदेव ने जनसाधारण की बाध्यात्मिक तथा ग्रामाजिक उन्नित के लिए ही गृंभें की रचना की, किसी भी गृंध में दाशिनिक जालीचना की प्रवृत्ति नहीं दिखायी देती है। माध्वदेव ने उपनिष्यदों और मागवत में मर्म को गृहण किया है बौर हन गृंधों के अनुदूत ही ईश्वर के रूप गृंण की व्याख्या की है। शंकरदेव के मागवत और माध्वदेव के नामधोष्मा पर श्रीधर स्वाभी का अधिट प्रभाव परिलिशात होता है। इनकी खेंडावादी मिका का प्रभाव शंकरदेव तथा गाध्वदेव के दर्शन परपड़ा। शंकरदेव के समसामियक वरत्तमाचार्य शुद्धाद्वेत मत का प्रतिपादन बारम्भ किया।रामानुंच सम्प्रदाय और महापुरु विषया संप्रदाय के दाशिनिक सिकान्तों में अधिक समानता है।

शंकरदेव के देश्वर एवं शक्तिमान, सर्वेश, सत्य स्वरूप लानंद स्वरूप, सर्वेवती, मृचि स्थिति तय ता वाषार है, काल माता बादि तनसे पृथक नहीं हैं।नंददास के ईश्वर क्ल-मा हं तराको किती ने उत्पन्न नहीं किया, वह अनंत स्म होते हुए भीरक हैं। तुंबसीदास की के राम कात प्रकाशक ाखिल क्रवांच नायक, विराट् व्य द्रव हैं। इनके राम कुछ नचा स्वरूप, बेतन्य व्यापक द्रवा हैं, वे मूर्तिमान लोकर नर्लीला करने के बिए साकार रूप में प्रकट हुए। सूरदात के कृष्ण ही अंश और कला स्प में अनेक स्प पारण करते हैं जीव जगत और सम्पूर्ण देवतागण तन्हीं की के अंश हं। बूर ने ज़ल, प्रकृति, पुरुषा बादि बहैतता स्वीकार की है। नंददास वे पर्वत कृष्णा गोलून तथा गोलोक में रत रूप में नित्य लीला मन्न रहते हैं। जिस मात्रा शक्ति ने सृष्टि की खनावी है वह कृष्ण से समिन्न है। कृष्ण गुण रिक्ति तथा समुण है ने पालक हैं। शंकरदेव ने समस्त जगत में ईश्वर का प्रकाश देखा है केवल प्रमाश कीन इन्द्रियों सक्ति थिणय भीग करता है और मायायुक्त शरीर को बात्मा समफता है। पुरवाय नेजीव को मगवान की नेतन श्वित का ही स्वरूप माना है। जीन घट घट में व्याप्त ईश्वर के अंतर्यामी स्वरूप से अनिभन्न रहता है। नंददास के मतानुसार है इन र ही जड़-चेतन का कारण है, समस्त प्राणी उसी है इनर के रूप हैं जीन का शरीर पाप-पुण्य वर्मों से निर्मित है और वह काल, कर्म तथा गाया के बयीन है, ईश्वर उनके प्रमाय के सुँ गुनत है। तुलसीदान के बनुसार जीव

माया के अधीन है और माया ईश्वर के वश क में हैं, जीव माया ते प्रेरित होकर काल, कमें, स्त्रमान तथा गुणां के महमात में भ्रमता रहता है जीव माया का स्वामी नहीं है। जीव-दैश्वर के मेद की स्वष्ट हरी हुए शूंकरदेव ने कहा कि मगवान वास्तव में िजील, निष्ण्य शांत अविकारी रूप होने पर मी मलीन, सक्रिय विकारी अंत:करण में प्रशिविधित होने के कारण विदृत दिलायी देता है जिस प्रकार आकाश घट घट में व्याप्त है। वैसे ब्रह्म मी समस्त प्राणियों से प्रकाशित होरहा है। सूखान ने तम्पूर्ण वृष्टि की प्रमु की रचना कहा है। यह जगत माणा के प्रम हारा निर्मित ननीं हुआ है। उनके अनुसार जीव स्वरूप स्वयं प्रम तथा जिल्ला के पास में वंदना है। ब्रह्म की मांति ब्रह्म का अंश जीव भी नित्य तथा गुट्य है। माध्यदेन का मत है कि ईश्वर की सेवामात्र करने से जीत का माला प्रय नष्ट होताहै, जूल पत शुद्ध जीव को हैश्वर परब्रह्म कहते हैं। शंकरदेन ने ब्रह्म को जगत प्रमंतक धीर गुष्टि स्थिति लख का कारण क्या ईश्वर कहा है। नंबदास ने ईश्वर लोह जीव की अदितता स्वीकार की है। परमानन्द दारा ने भी ईश्वर और जीव के संबंध को अंशी-वंश का सम्बन्ध माना है। हीतस्वामी ईश्वर और जीव की सकता को मानते थे। इंकरदेव ने आत्मा को नित्य निरंजन स्वप्नकाशित वहा है। वहमाया तथा उपाधि द्वारा अनेक रूपों में दिलायी देता है। तूरदास ने माया के विधान का कंत न पाया। उन्होंने विषया गाया को तथा इस मायायुक्त संसार को प्रमात्मक प्रमाणित किया है। तुलर्श दाय की के अनुनार आदि सकति सीता विश्व ही गृष्टि स्थिति के ननुस्तर संहार कारिणी हैं, गाया प्रमु के संवेती के बनुसार निर्माण करती है। अविया का प्रमान प्रमु के मक्तों पर नहीं होता है। जब तक प्रमुं की हुमा प्राप्त न होगी माया वारिधि को पार करना दुरुष्ठ एवं जटिल वार्य है। इंह रेडन के मतानुवार जागरण तथा स्वप्न बुद्धि की वृत्तियां है। नाना प्रकार क्य जिन्हें इस देतते हैं तह तब मायासय है। जैसे मुनुट कुंदलादि स्वर्ण रे मिन्न नहीं है उत्तवा नाम रूप मात्र मिथ्या है क्सी प्रकार अल्लार तथा पंचमूत हैं स्वर से पृथक नहीं है। नंदवास के अनुसार सम्पर्ण जड़ तथा नेतन सुष्टि के मूल में एक ही शुद्ध तत्व है जो नाम और

हम के मेद के कारण जनेक हमों में प्रकाशित होता है - क्रम ही जगत का निर्मित और उपादान कारण है। जगत के लमस्त गुंण क्रम में प्रतृत हुए हैं। पंच पहामूत अट्ठाइस तत्वों के द्वारा रिन्त मुच्टि मात्रा हा ही परिणाम है। राथ पंचाध्यायी में नंददास ने कृष्ण की मूरती की ज़ुंलना तादि हासित योगमाना है किया है। वस्तुत: ईश्वर समुंण है उसते गुंणों की जाना माना दर्मण में पढ़ रही है

तुंलसीदास के मतानुसार जीव प्रम्वश ही इस क्सत्य जगत हो पत्य मान लेता है, जब तक मनुष्य हो तान प्राप्त नहीं होता है, वब इस संसार के आकर्षण से जिमोहित हो सहता है। शाहि दती निराकार परशात्मा न माया की मिलि पर स्थे विचित्र चित्र वंदित हिस है जो नस्ट नहीं होते हैं, वस्तुत: यह जगत न नत्य है, न मिश्या है, न सत्य और थियूना दा किएण ही है।

मल्यूल्येव के मतानुतार प्रमुं का स्वल्प निराकार है, तथा मक्त के बनुगृह पर वे कभी लगी तीला विश्वत घारण करते हैं स्वान्त ज्ञानी मवतों के हेते प्रमुं की तीला विहार आदि जान-प्रवायक है - जिले समस्त शास्त्र नित्य, शुद्ध, बुद्ध निरंपन तथा निराकार कहते हैं, वनी प्रमुं गोप शिशुलों के जरित केलता था। विश्व में ह शांति स्थापनार्थ भवतों के आगृह पर प्रमुं लीला-विश्वत घारण करते हैं। सूरवास ने ब्रुख के सगुण तथानिर्मुण क्यों की ज्ञात्था की है - त्रीकृष्ण जापात परब्रह थे। परमानन्द की दृष्टि से ब्रुल प्राप्त गुणां से शून्य निर्मुण स्वरूप है, वहीं इस लोक में असतार घारण कर सगुण लीला करता है। नंदवास ने कृष्ण के बौबीय असतार घारण कर सगुण लीला करता है। शंकरदेव ने जंद्रत वाद का प्रतिपादन अपनी रचनाओं में विया है किन्त अपनिया महापुरु िष्या मतावलिक्यों के मतान्तार उनका सम्पर्क शंकराचार्य के मायावाद से न था। शंकरदेव ने जीव को ईश्वर का जंश घोष्टित किया है। अतः उन्होंने जेंक को देखाद का भी समर्थन नहीं किया। डा० महश्वर नेजीग ने शंकरदेव के दाशिनिक मत को भेदाभेदवाद की संज्ञा देन की चेष्टा की है। निस्सन्देह शंकरदेव तथा माध्वदेव का सिद्धान्त उपनिषदों के जंद्रत ब्रह्माद पर स्थिर है - श्रीधर स्वामी तथा विष्णु-पुरि के दाशिनिक सिद्धान्तों का विश्लेषणा शंकरदेव तथा माध्यदेव ने अपनिया माष्ट्रा में विश्रा है।

असमिया संस्कृति पर शंकरदेव का प्रमाव

जरिया साहित्य का नव अम्युद्य सोलहवीं शती में हुता। शंकरिव ने असिया जाति के घार्मिक और सामाजिक जीवन को एक नवीन स्फूर्ति तथा चेतना प्रदान की। लसम प्रदेश के कितने लघू राज्यों का विनाश हुआ, उनका अवशेषा आजनहीं मिलता है। शंकरिव की दूरदर्शिता के फलस्वरूप ही वेष्णव धर्म का प्रचार असम में उस समय हुआ जब देश मर में देवी-पूजक कों, शिव पूजकों तथा तांत्रिक साधकों का आध्यात्मिक शासन प्रवत और शक्तिशाली था।

000000

प रिशिष्ट

सहायक हिन्दी-गृंथों की तालिका

The state of the s			
ग्रंध का नाम	विशेष विवरण		
१- सूरसागर	डा॰ घीरेन्द्र व र्मा		
२- बूर्सागर	साहित्य मनन्यलाहाबाद सं० २०१५ नागरी प्रचारिणी समा -तृ०सं०		
३- ाष्ट्रहाप एवं वल्लम संप्रदाय	सं० २०१५ डा० दीनदयाल गुप्त		
४- बूरदास	हिंदी साहित्य सम्मतन्, सं०२००४ वृजेश्वर् वमा,		
४- सूर विनयपत्रिका ६- सूर की माजा	हिंदी परिषाद्रप्रयाग-विश्वविधालय गीताप्रेल,गौरलपुर, तृ०सं० सं०२०१४ प्रेमनारायणा टंडन,		
७-तुलसीदास की भाषा	लखनऊ विश्वविद्यालय् नव म्बर् १६ ५७		
 राघावल्लम संप्रदाय सिद्धान्त और साहित्य : 	त्त्वनङ विश्वविद्यालय,सं०२०१४ विजयेन्द्र स्ना वतक , दिल्ली -विश्वन विद्यालय		
६- त्लसीदास	चंद्रवली पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी समा, काशी		
१०- त्लसीदास	सं० २०१४ माताप्रसाद गुप्त, खिंदी परिषद् सं०क्षि० सं० १६४६		
११- अप्रमंश व्याकरण	वाचार्य हैमचन्द्र,भाषा परिषद् वाराणसी- सन् १६५८ हैं		

संपादक :शालिग्राम उपाच्याय

१२- गुजराती और व्रजमाणा कृष्ण-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन

१३- प्राकृत माणाओं का व्याकरण

१४- श्रीकृष्ण बालमाधूरी

१५- श्रीकृष्ण माध्री

१६- बनुराग पदावली

१७- वस्काप

१८- तुलसीदास और उनका युग

१६- रामचरितमानस

२०- हिन्दी और नंगली वैष्णव कवि

२१- हिन्दी साहित्य का इतिहास

२२- हिंदी साहित्य का जालीचनात्मक इतिहास

२३- क्टिंग माणा का उद्भव और विकास

२४- तुलही दशैन

२५- नंददास:दी भाग

२६- विनयपित्रका

डा॰ कादीश गुप्त, हिन्दी परिषद् विश्वविणालय -प्रयाग १६५८ विहार राष्ट्रभाषा परिषड् पटना, तं० २०१५ गीता प्रेस, गौरलपुर सं० २०१५ वही सं० २०१४ सूरवास, गीताप्रेस, गार्बुपुर सं० २०१५ सं धीरेन्द्र वर्मा, रामनारायण लाल, इला हा बाद सं० १६५० छा० राजपति दी दितत्र ज्ञानमण्डल, लिमिटेड बनारस, सं० २००६ तुंलवीदास, गीताप्रेस,गौरसपुर डा॰ रत्नकुमारी, भारतीय साहित्य मंद्रीर, पिल्ली। रामनंद्र शुनल, छ०सं० सं०२००७ डा॰ रामकुमार वर्गी, रामनारायण ताल, नतु व्यूं ० १६ ५ ८ डा॰ उदयनारायण तिवारी, मारती मंडार प्रयाग, सं० २०१२ बलंदव प्रसाद मिश्र, हि०सा०स० प्रयाग्रसं० १६६५ सं० उमाशंकर शुक्ल, प्र० प्रयाग विश्वविद्यालग, १६४२ वियोगी हरि,सेवासदन,काशी

सं० द्वि० १६८७ वि०

२७- निम्बार्क माधुरी - सं० विद्यारिशरण, वृन्दायन ३५॥
२८- ब्रजमाधा व्याकरण - धीरेन्द्र वर्मा, रामनारायण बाल, १६३७
२६- ब्रजमाधुरीसार - वियोगी हरि, हिल्साल्सल प्रवणंत्रं०२००२ वि०
३०- मीराबाई की पदावली - परश्रराम चतुर्वेदी, हिल्साल्सल प्रयाग विलंध २००१ वि०
३१- उत्तरी मास्त की संत परंपरा : परश्रराम चतुर्वेदी, मास्त दर्पण ग्रंथमाला, प्र० सं० २००४

सहायक असमिया गृंथों की तालिका

१- कथा गुरु चरित सं उपेन्द्र चंद्र तैलार दत्त बरुवा १६५२ र- श्री गुरु चरित रामानंद दिल - सं० नेलोग, दत्त बरुवा-१६५७ ३- श्री शंकरदेव वा रु देत्यारि ठाकुर माघवदेव चरित प्र० हरिनारायण दत्त वरुवा, ५०६ शंकराक 8-५- भटुदेव यादवदेव शर्मा, कामख्या प्रेत, टिहू, १६५४ ६- गुरुलीला रामराय -सं० शरतचंद्रदेव गोस्वामी ,सवक प्रेस, बरपेटा ७-पुर्नि असमिया साहित्य वाणीकांत काकति -लायासं व्य स्टाल गौहाटी, प तृ० सं० १६५८ अकावली शंकरदेव, माध्वदेव, सं० का लिराम मेचि, जयंती पुस, गौहाटी १६५० ६- वरगीत शंकरदेव तथा माध्वदेव रचित -प्रवहरि ना० दत्त बरुवा द्वि०सं० सन् १६५५ माध्वदेव - सेठ सं० डा० नेजीग, लायार्स बुक १०-नामघोषा स्टाल १६५५ प्रवसंव ११- असमर विच्याव दश्नेर रूपरेला: मनोरंजन शास्त्री, वालोक प्रकाशन,गृह

नलवा री

			351
\$5-	पुरिन कामरुपर धर्मरधारा	4700	डा॰ वा॰ काकृति -वाणी प्रकाश मंदिर
83-	अंकीया नाट	gleste	डा० वि० बु० वरुवा,
			ही वरमवर वस्तवाताम्, १६५४
	श्री शंकर वाक्यामृत	40000	हरि ना॰वत वरुवा, सन् १६५३
४ ५-	श्री माध्वदैवर वाक्यामृत	enga.	पूर्ण चंद्र गोस्वामी,
			ज्योति प्रवाश, गौहाटी, तन् १६४६
84-	श्री श्री श्रमादेव	we.	डा॰ मेहस्वर नेशोग, ला का री बुक स्टाल
			तन् १६५२
80-	लनादि पतन	1010	श्री शंकरदेव
\$E-	आए कनकलता चरित	-	श्रीयुत् रमाकांत लाटे
-38	कथा मागवत	ete	श्री मटुदेव
50-	कामल्प शासनावली	-	मं पद्मनाध मट्टाचार्य
5 %-	का लिका पुराण	****	
55-	की तैन	410-	श्करदेव
23-	कुरुपीत्र	agine.	शक्र देव
53-	केलि गौपाल नाट	***	शंकरदेव
5ñ-	गुरुचरित	WHOM	मूषण दिल
-35	दशम	***	श्री शंकरदेव
70-	द्वादश स्कंघ मागवत	-	11
5 ⊆-	बितीय स्कंघ मागवत	water	"
-35	नाम घोषा	****	माध्यदेव
30-	निमि नवसिद्धसंवाद	•	श्री शंकरदेव
3 8-	पा रिजात हरण	***	
35-	प्रहलाद चरित		हम सरस्वती
3 3-	प्रथम स्कंघ मागवत	***	श्री शंकर्देव
3%-	भितरत्नाकर	•	
34-	भ जित विवेक	-	मट्रेंब
36-	रत्नावली	***	माम्बदेव
30-			श्री शंतरदेव
•			Contract of the contract of th

३८ - योगिनी तंत्र

३६- रामविज्य नाट

- श्री शंसरदेव

४०- रामायण

- माध्व कंद लि

४१- रुविमणी हरण

- भी शंकादेव

१२- श्री वंशीगौपालदेव चरित

- रामानंद द्विज

४३- हरिश्वंद्र उपाखान

- श्री शंतादेव

44

सहायक केंग्रेजी गुंघों की लाखिका

- १- हिस्ट्री बाव वासाम : तर एउन्हें गेट, दितीय संस्करण-यत् १६२६
- र- हिस्ट्री जान वासाम : श्रीकलवताल वरुवा- वन् १६३३
- ३- बल्बरल हिस्ट्री वाच असम : ला० चिरिचिक्नार वरुना वरू
- ४- **एस्पेन्**व वान नहीं वनिष्ण निर्देश : प्रधान संपादक -डा॰ वाणिकांत काकति प्रधासन गोहाटी विश्वविद्यालय
- ५- असमिन प्रदेश फारिनेशन सं नेयलपाँछ : छा० नामिनांत काकति ही ० स्व स्व प्रथम गंस्करण १६४१
- ६- शंगरदेव : ला॰ वाणीकांत राजित सन् १६२६
- ७- मदर गाउस कामारला : ला॰ वाणीकांत काकति , तत् १६४८
- ८- वतिभव ग्रामर एंड लोर्चन तानिह लाचिन तांगडनेच : स्व०का लिराम भेषि
- ६- दिस इव शासाम : विश्वनारायण शास्त्री तथा प्रमोदचंद्र मट्टाचाये प्राप्तान जनम साहित्य समा- सन् १६ ५८
- १०- दि बोरिज एंड देवलपेमंट बाव हेगाली लागाउवेज : डा० स्स० के० चटजी तन् १६२६



शंकार्देव के गीत

राग बनाज़-परिवाल

ण तिंदि जल मह देश महुराचा वालके पहि, वंशी वजाया ।।
नील जनुं जिम भीज मिनोरि नवधन येथे कावे निलुरि ।।
कौस्तुम कंठ कोटि नव सूर कुंडल मालमल फलके केसूरा।
जल माण दुंहु वाहुं आस्फाति ।
प्रिड़ा करतुं वारि वनमाली ।
उपि उठलि हुद वरु रोल।
पृष्ण किंकर शंकर बोल ।।

राग सुहाइ- एक्ताल

जय जग जीवन राम।

वाली पिछ परणाम।।

याहे नाम गुंणा मुहे गाउ।

पापी परम पर पाछ।।

बीहि भवताप बमारा।

याहे स्मरणे करु पारा।।

अज्ञाव मजनकारी

पावल जनक्कुमारी।।

नुम्सव हेदल बाणे।

कृष्णा किंकर एहं भाणे।।

जार वशरण पृतिनीताण।
टुटे नवमर हा यह गण।।
दुर्जंग बीर परिंग शर वाप।
वांप रिपु तव चारे प्रतान।।
चिसुन हैस्वर राभक वाप।
माहे निर दूर होवय पाप।।

राग कल्याण- सस्मान

ए कर रमया, कर रमया रहा केलि ।

कांचुरि हूरि फूरे हुंच कुंच रति कौतुं करा जालि।

नवघर घरिये अघर मधु चंचल
लोचन मूदि रहु माड ।

करत सुरत मत मातंगगा मिनी

का मिनी या मिनी याह ।

चंगर चितुंर निकर कर कंकण

फनल रतनकु माला ।

अभजल विन्दु इंदु मूह सोह ।

मोहे पड़ल वरवाला ।

परम रिवक गुरू भी शुंचल ब्ला

राजा नुपति प्रधान ।

जयतुं जयतुं नित्य ईंग्लर कुष्णाक

किल केलि तीला रहा जान ।

वैसे केशन दरशा लोड । हरि विने िफाल जनम एव मोडा।! वर्डी दिगंतर राष्ट्र ज्यारु। मेंट केसने होड प्लामी हुँरारु । जम्मुकिंगरी तरि नाथ हामार। यह शंकर राजिपणक वेवहार ।।

राग-विलावल-परिताल

लर नि ना हिं आ कुल प्रिये। धरि का मिनीक धानुं तो घ हिंगे। कि करन सिंग्क शूकर सब आया। हामाकुं श्रमत ताप तेजहुं जाया। मौचत मूल प्रियाक पतिवासे। कह शंकर रस कश्म दारो।

राग गौरी-यतिमान

पूंचतउ माध्वी बांध्य म्झूदन ।

कतिनो रहिल हरि गौ पिनी-जीवन।।

बकुल बंदुलि कदंब वक तुल्सी

तोहोसब पर-उपकारी ।

कह काहे गेह बंघु नघाड हामारि

विरहिण जीवन घरर नपारि।।

बंपक चुंत बाचीर माति मागी

प्राण बंघु देउ देलाइ

पहुँ बिन तनुं मन धारण नमाइ

रहल वाण कृष्ण गाइ।।

रामकांव - उस्त

भेज रे हरि तीतिनी कता। सरा गोर बातुरी हेता। परमानंत जीका परवादी। बहुरंग रंका गोर्नुह्वाति। शब सा सागर नंद्युताल। सस्य माध्य गीर्म मुक्कुटि गोपील।

राग वासावरी -परिवात

नाचतुं गोविंद गोपिनी हारे। वर पानि पानि तबनुं मारे। यो कर कमल भद्य भगहारी। सो हि क्रपानि मारे तबनुं मूरारि। गोबारि बोलम निक नाच गोपाला। तब तोह दलनुं देवन हामूं भासा।।

राग असावरी

सेतत गीविंद यशोवाक लेंगे।

मानवी मान देवावत रों।।

पृष्टि स्थिति तथ कारण योध।

याकर तीला जानत निह कोंछ।।

तौहि महेश्वर गीप कुमारा।

लोक तारण हेतुं करत विहारा।।

मोहि कुमाम्य देवक देवा।

मुंकुति विखंन याकर सेवा।।

नानन रसे सेले सोहि दयासा।

कह्य माध्व गति वाल गोपाला।।

हरिको आगुँ राधा आजरि मोहि मागे।

तोहारि अधर मधुँ पान जिन्नेरि हरि

हामाकुँ आजरि नाहि लागे।।

देवल दूंलीम देव तुंना पद पंक्स

तामाकेरि कुँच युंग हारा।

ताहेक लाशे दासी तेरा

वचित नाहि ल्यारा।।

सबातुँ बाणी शूनिय चिर हासत

माणत नचन गोविंदे।

वहम माध्मदीन गेरि मन मिल रह

हरि-पद-युंग जरितिंदे।।

राग- कनाड़ा-परिवाल

तवन चौरा बुलि उद्योग मार ।
गौकं पाश गंध्य गुँरार ।।
पूर्वापर की नाहि याहार ।
सी ि परम गुरु जात वाधार ।
वाहिर भीतर वाकेरि नार ।
गौवारी वाके जानू चौरा पार ।।
गाव संधान यणवा रज़ टान ।
जोड़्य नाहि जांगुल दुंडु माने ।
पुनु पुनु रज़ विवार क्य जानि ।
उदर महार बांध्य सती टानि ।।
तब हो नोजोर जांगुल दोहो पाश ।
धिस्य गोप रमणीसव हासे ।
हरि कही तत्व जान्य नाहि कोई ।
माध्य कह गति गोवंद मोर ।।

व्रव मंगल रग रावे रित्तक गुरु त्रत तनंग रा देखि । राधा पूरत मन बाधु तमर मृष्टुं पाने मौक्ति मति मिलि ।। धन धन मुल्दोनों मेलि लातिंगत चुंका जलन मिलाय । हरिक्हुं को लिलिंग रहुं राधि नयो तमन धिलाय ।। परमानंद जनंग रस सागर तथिये निध रहें गाय । हरिको परश राथे विस्ति रत्न तम्

शंकरदेव के नाटकों के जंबाद की माजा

सूत्र - तदनन्तर से समा समामध्ये सासिक्हुँ राविमणीक ज्येष्ठ प्राता स्वमी नाम मंदमति से पापी परम देपे करो क्या बोलस ।

र वमी- ता हागार मिनि। र विमणीय काताक शकति कृष्णाक विवाह देवव ? रो वादय वाताचार गोवध, प स्विधि, मालूंबव्य व्य पाप तम्सपिक, से हामार संवधक पोग्य हम नाहि। शो दृष्णराज तृतो विषो वुंज्ये नाहि। ये महाराज शिशुंपाल से रु विभणीय योग्य वर एवं, निष्ट नाहेक विवाह देवन। हामो क्वीकार क्य चौल्ला।

-- रु विमणी करण नाट

त्रीकृष्ण- हे प्रिये, पापी नरकासुरे देवतासका जिनिये गर्नेस्व कानल । जामु ताहक नारि देव कार्य ताली । पाचे पारिजात वाली । सर्विभामा - वा: स्वामी उच्चित कथ्न, वानू देनकार्य वाधि वेटि नामाने पारिणात वानह हामू तौहारि शंग थनयो ।

--पारिजात हरण

थीकृष्ण - वे तदी तव । त्यन वत्याच भोतूने विक्ति, वि निमीन रणी जनरिस्हुं वन मध्य एका जावत ?

भोषी गर - े परोश्वर, नाति नाति हिं होता।

रीकृष्ण- : कितिम गोतः वसी यग कुशेत अस्तत ३ हामात वयन प्रशोजनिधक ३ स्विर कत तासाधी।

-- देलिगोपाल